सच्ची शिक्षा

गांधीजी

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

प्रकाशकका निवेदन

दूसरी आवृत्ति

अिस पुस्तकके हिन्दी संस्करणकी पहली आवृत्ति जुलाअी, १९५० में प्रकाशित हुअी थी। अब यह दूसरी आवृत्ति अपने पाठकोंके हाथमें रखते हुअे हमें बड़ी खुशी होती है। गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी विचार १९२० में असहयोगके निमित्तसे देशके सामने पेश हुअे थे। अिसके बाद १९३८ में फिरसे वे सारे देशमें अूपर आये। अिसका कारण बनी कांग्रेस द्वारा प्रान्तीय स्वराज्यकी जिम्मेदारी हाथमें लेनेकी अैतिहासिक घटना। अुस समय गांधीजीने 'बुनियादी तालीम' के अपने विचार मंत्रियों और देशके सामने रखे। पुस्तककी पहली आवृत्तिमें गांधीजीके १९३८ से पहलेके विचारोंका संग्रह किया गया था। अब दूसरी आवृत्तिका मौका आने पर अिसमें गांधीजीके १९४८ तकके शिक्षा-विषयक लेखोंमें से संग्रह करने योग्य लेख या अुनके अंश ले लिये गये हैं।

अिस आवृत्तिमें पहली आवृत्तिका तीसरा भाग 'राष्ट्रभाषा प्रचार' निकाल दिया गया है, क्योंकि अिस विषयसे सम्बन्ध रखनेवाले गांधीजीके सारे लेख 'राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी' नामक पुस्तकमें आ जाते हैं। परन्तु अिसका अर्थ यह नहीं कि अिस विषयका निर्देश ही पुस्तकमें से निकल जाता है। दूसरी चर्चाओंमें सामान्यतः शिक्षणमें राष्ट्रभाषाके स्थानके बारेमें विचार किया गया है।

जो लोग गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंका अध्ययन करना चाहते हैं, अुन्हें अिस पुस्तकके साथ गांधीजीकी अन्य हिन्दी पुस्तकें — शिक्षाकी समस्या, नअी तालीमकी ओर तथा बुनियादी शिक्षा — भी पढ़नी चाहिये, जो नवजीवन प्रकाशन मंदिरसे प्रकाशित हो चुकी हैं। अब समय आ गया है जब प्राथमिक और माध्यमिक अध्यापन-मन्दिरोंमें गांधीजीकी अिन पुस्तकोंका व्यवस्थित रूपमें अध्ययन आरम्भ हो जाना चाहिये। क्योंकि अिस बारेमें अब शायद ही कोअी आपत्ति अुठा सके कि भविष्यमें

हमारे राष्ट्रकी शिक्षाका पुनर्गठन करनेके सिद्धान्त हमें राष्ट्रपिता महात्मा गांधीसे ही प्राप्त हुअे हैं।

अिस आवृत्तिमें जो नये लेख शामिल किये गये हैं, अुन्हें अनुक्रमणिकामें तारक चिह्नोंके साथ दिया गया है।

२०-९-'५६

पहली आवृत्तिके निवेदनसे

आज जब भारतकी विधान-सभाने हिन्दीको राष्ट्रभाषा मान्य कर लिया है, तब संपूर्ण गांधी-साहित्यको राष्ट्रभाषामें जनताके सामने रखनेकी हमारी जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है। हम पाठकोंके समक्ष वर्ण-व्यवस्था, गोसेवा, प्राकृतिक चिकित्सा और रामनाम, खुराककी कमी और खेती, तथा रचनात्मक कार्यक्रम सम्बन्धी गांधीजीके महत्त्वपूर्ण विचार हिन्दीमें रख चुके हैं। अब हमने गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी सर्वथा मौलिक और क्रांतिकारक विचार राष्ट्रभाषामें देशके सामने रखनेका काम हाथमें लिया है।

महात्माजीके ये विचार आज भी अुतने ही नये और ताजे हैं, जितने कि वे पहले थे। भारतके स्वाधीन हो जानेके बाद शिक्षा कैसी हो, अुसका आदर्श क्या हो, शिक्षाका योग्य माध्यम क्या हो, शिक्षामें अंग्रेजीका क्या स्थान होना चाहिये, धार्मिक शिक्षाको शिक्षण-संस्थाओंमें स्थान दिया जाय या नहीं — वगैरा अनेक प्रश्नों पर देशमें काफी चर्चा चल रही है। आजके अिन सब प्रश्नोंका सही अुत्तर जनता और सरकारोंको अिस पुस्तकमें संग्रह किये गये लेखोंमें मिलेगा। अिसलिये अिस पुस्तककी अुपयोगिता दुगुनी हो जाती है।

वैसे तो जीवनमात्र गांधीजीकी दृष्टिमें व्यापक शिक्षा ही था। जब १९१५ में वे दक्षिण अफ्रीकासे भारत लौटे, तभीसे वे हमारे देशके अेक समर्थ लोकशिक्षक बन गये थे। अुनके लेखों और भाषणोंमें हर जगह हमें शिक्षाकी झलक मिल ही जाती है। अिस पुस्तकके लेख शिक्षाकी अिस व्यापक व्याख्याके आधार पर नहीं, बल्कि साधारण तौर पर जिसे शिक्षा कहा जाता है अुसे ध्यानमें रखकर ही चुने गये हैं। पुस्तकको [illegible] भागोंमें बांटा गया है। पहले भागमें शिक्षाके आदर्शसे सम्बन्ध रखने-

वाले लेख हैं, दूसरेमें विद्यार्थियोंके प्रश्नोंकी चर्चा करनेवाले लेख दिये गये हैं, और तीसरे भागमें राष्ट्रभाषा प्रचार सम्बन्धी लेख संग्रह किये गये है। पुस्तकके अन्तमें विस्तृत सूची भी दी गओ है।

शिक्षाके क्षेत्रमें महात्माजीने देशव्यापी काम भी बहुत बड़े पैमाने पर किया था। हमारे देशकी शिक्षाकी समस्या हल करनेके लिअे अुन्होंने काफी मेहनत अुठाअी थी। अिस विषयसे सम्बन्ध रखनेवाले गाधीजीके लेख 'शिक्षाकी समस्या' नामक पुस्तकमें दिये जायेंगे।

असहयोग आन्दोलनमें केवल खण्डनात्मक ही लगनेवाले काममें से अुन्होंने राष्ट्रीय शिक्षाका मण्डन और अुसके विचारका विकास किया था। और सच्ची शिक्षाकी शोध करनेवाले प्रयोग भी वे पहलेसे ही करते रहे थे। अिन सब राष्ट्रव्यापी प्रयोगोंके फलस्वरूप ही गांधीजी देशकी शिक्षाके लिअे अेक क्रान्तिकारी योजना — वर्धा शिक्षा योजना — हमारे सामने रख सके थे। अिस योजनासे सम्बन्ध रखनेवाले लेख 'बुनियादी शिक्षा' नामक दूसरी पुस्तकमें संग्रह किये गये हैं, जिसे जल्दी ही पाठकोंके हाथमें रखनेकी हम अुम्मीद करते हैं। वर्तमान पुस्तकको पढ़कर गाधीजीकी वर्धा-शिक्षा-योजनाकी विचार-भूमिका पाठक अच्छी तरह समझ सकेंगे।

आशा है गाधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी लेखोंका यह हिन्दी संस्करण पाठकोंको पसन्द आयेगा और शिक्षाके महत्त्वपूर्ण विषयमें देशका सही मार्गदर्शन करेगा।

२०–७–'५०

पाठकोंसे

[यहां हम अिस पुस्तकका अध्ययन करनेवालों और शिक्षाके प्रश्नमें रस लेनेवालोंके सामने गांधीजीकी वह चेतावनी रखना चाहते हैं, जो अुन्होंने अपने प्रत्येक लेखका अध्ययन करनेवालेको दी है।]

मेरे लेखोंका मेहनतसे अध्ययन करनेवालों और अुनमें दिलचस्पी लेनेवालोंसे मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे हमेशा अेक ही रूपमें दिखनेकी परवाह नहीं है। सत्यकी अपनी खोजमें मैंने बहुतसे विचारोंको छोड़ा है और अनेक नअी बातें मैं सीखा भी हूं। अुमरमें भले मैं बूढ़ा हो गया हूं, लेकिन मुझे अैसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास होना बन्द हो गया है या देह छूटनेके बाद मेरा विकास बन्द हो जायगा। मुझे अेक ही बातकी चिन्ता है, और वह है प्रतिक्षण सत्यनारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता। अिसलिअे जब किसीको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा लगे, तब अगर अुसे मेरी समझदारीमें विश्वास हो, तो वह अेक ही विषयके दो लेखोंमें से मेरे बादके लेखको प्रमाणभूत माने।

हरिजनबन्धु, ३०–४–'३३

मेरी मान्यता

शिक्षाके बारेमें मेरी मान्यता* यह है :

पहला काल

१. लड़कों और लड़कियोंको अेकसाथ शिक्षा देनी चाहिये। यह बाल्यावस्था आठ वर्ष तक मानी जाय।

२. अुनका समय मुख्यत: शारीरिक काममें बीतना चाहिये और यह काम भी शिक्षककी देखरेखमें होना चाहिये। शारीरिक कामको शिक्षाका अंग माना जाय।

३. हर लड़के और लड़कीकी रुचिको पहचानकर अुसे काम सौंपना चाहिये।

४. हरअेक काम लेते समय अुसके कारणकी जानकारी करानी चाहिये।

५. लड़का या लड़की समझने लगे, तभीसे अुसे साधारण ज्ञान देना चाहिये। अुसका यह ज्ञान अक्षरज्ञानसे पहले शुरू होना चाहिये।

६. अक्षरज्ञानको सुन्दर लेखनकलाका अंग समझकर पहले बच्चेको भूमितिकी आकृतियां खींचना सिखाया जाय; और अुनकी अंगुलियों पर अुसका काबू हो जाय, तब अुसे वर्णमाला लिखना सिखाया जाय। यानी अुसे शुरूसे ही शुद्ध अक्षर लिखना सिखाया जाय।

७. लिखनेसे पहले बच्चा पढ़ना सीखे। यानी अक्षरोंको चित्र समझकर अुन्हें पहचानना सीखे और फिर चित्र खींचे।

८. अिस तरह जो बच्चा शिक्षकके मुंहसे ज्ञान पायेगा, वह आठ वर्षके भीतर अपनी शक्तिके अनुसार काफी ज्ञान पा लेगा।

९. बच्चोंको जबरन् कुछ न सिखाया जाय।

१०. वे जो सीखें अुसमें अुन्हें रस आना ही चाहिये।

---

* ता० २७-६-'३२ से १०-७-'३२ के अरसेमें गांधीजीने ये विचार 'सत्याग्रह आश्रमका अितिहास' में प्रकट किये थे।

११. बच्चोंकी शिक्षा खेल जैसी लगनी चाहिये। खेल-कूद भी शिक्षाका अंग है।

१२. बच्चोंकी सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा होनी चाहिये।

१३. बच्चोंको हिन्दी-अुर्दूका ज्ञान राष्ट्रभाषाके तौर पर दिया जाय। अुसका आरम्भ अक्षरज्ञानसे पहले होना चाहिये।

१४. धार्मिक शिक्षा जरूरी मानी जाय। वह पुस्तक द्वारा नहीं, बल्कि शिक्षकके आचरण और अुसके मुहसे मिलनी चाहिये।

दूसरा काल

१५. नौसे सोलह वर्षका दूसरा काल है।

१६. दूसरे कालमें भी अन्त तक लड़के-लड़कियोंकी शिक्षा साथ-साथ हो तो अच्छा है।

१७. दूसरे कालमें हिन्दू बालकको संस्कृतका और मुसलमान बालकको अरबीका ज्ञान मिलना चाहिये।

१८. अिस कालमें भी शारीरिक काम तो चालू ही रहेगा। पढ़ाअी-लिखाअीका समय जरूरतके अनुसार बढ़ाया जाना चाहिये।

१९. अिस कालमें माता-पिताका धंधा यदि निश्चित हुआ जान पड़े, तो बच्चेको अुसी धंधेका ज्ञान मिलना चाहिये; और अुसे अिस तरह तैयार किया जाय कि वह अपने बापदादाके धंधेसे जीविका चलाना पसन्द करे। यह नियम लड़की पर लागू नहीं होता।

२०. सोलह वर्ष तक लड़के-लड़कियोंको दुनियाके अितिहास और भूगोलका तथा वनस्पतिशास्त्र, खगोलविद्या, गणित, भूमिति और बीज-गणितका साधारण ज्ञान हो जाना चाहिये।

२१. सोलह वर्षके लड़के-लड़कीको सीना-पिरोना और रसोअी बनाना आ जाना चाहिये।

तीसरा काल

२२. सोलहसे पच्चीस वर्षके समयको मैं तीसरा काल मानता हूँ। अिस कालमें प्रत्येक युवक और युवतीको अुसकी अिच्छा और स्थितिके अनुसार शिक्षा मिले।

२३. नौ वर्षके बाद आरम्भ होनेवाली शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिये। यानी विद्यार्थी पढते हुअे अैसे अुद्योगोंमें लगे रहें, जिनकी आमदनीसे शालाका खर्च चले।

२४. शालामें आमदनी तो पहलेसे ही होने लगे। किन्तु शुरूके वर्षोंमें खर्च पूरा होने लायक आमदनी नहीं होगी।

२५. शिक्षकोंको बड़ी-बड़ी तनखाहें नहीं मिल सकती, किन्तु वे जीविका चलाने लायक तो होनी ही चाहिये। शिक्षकमें सेवाभावना होनी चाहिये। प्राथमिक शिक्षाके लिअे कैसे भी शिक्षकसे काम चलानेका रिवाज निन्दनीय है। सभी शिक्षक चरित्रवान होने चाहिये।

२६. शिक्षाके लिअे बड़ी और खर्चीली अिमारतोंकी जरूरत नहीं है।

२७. अंग्रेजीका अभ्यास भाषाके रूपमें ही हो सकता है और अुसे पाठ्यक्रममें जगह मिलनी चाहिये। जैसे हिन्दी राष्ट्रभाषा है, वैसे ही अंग्रेजीका अुपयोग दूसरे राष्ट्रोंके साथके व्यवहार और व्यापारके लिअे है।

* * *

स्त्री-शिक्षा

२८. स्त्रियोंकी विशेष शिक्षा कैसी और कहासे शुरू हो, अिस विषयमें मैंने सोचा और लिखा है, तो भी अिस बारेमें मैं किसी निश्चय पर नहीं पहुंच सका हूं। यह मेरा दृढ़ मत है कि जितनी सुविधा पुरुषको मिलती है, अुतनी स्त्रीको भी मिलनी चाहिये। और विशेष सुविधाकी जरूरत हो वहा विशेष सुविधा भी मिलनी चाहिये।

प्रौढ़-शिक्षण

२९. प्रौढ़ अुम्रवाले निरक्षर स्त्री-पुरुषोंके लिअे वर्गोंकी जरूरत है ही। किन्तु मैं अैसा नहीं मानता कि अुन्हें अक्षरज्ञान होना ही चाहिये। अुनके लिअे भाषण वगैरा द्वारा साधारण ज्ञान मिलनेकी सुविधा होनी चाहिये; और जिसे अक्षरज्ञान लेनेकी अिच्छा हो, अुसे अुसकी पूरी सुविधा मिलनी चाहिये।

१९३२ गांधीजी

दूसरा भाग : विद्यार्थी-जीवनके प्रश्न

सच्ची शिक्षा

पहला भाग

शिक्षाका आदर्श

१

शिक्षाका अर्थ क्या है?

शिक्षाका अर्थ क्या है? अगर अुसका अर्थ केवल अक्षरज्ञान ही हो, तो वह अेक हथियार-रूप बन जाती है। अुसका सदुपयोग भी हो सकता है और दुरुपयोग भी हो सकता है। जिस हथियारसे आपरेशन करके रोगीको अच्छा किया जाता है, अुसी हथियारसे दूसरोंकी जान भी ली जा सकती है। अक्षरज्ञानके बारेमें भी यही बात है। बहुतसे लोग अुसका दुरुपयोग करते हैं। यह बात ठीक हो तो यह साबित होता है कि अक्षरज्ञानसे दुनियाको लाभके बजाय हानि होती है।

शिक्षाका साधारण अर्थ अक्षरज्ञान ही होता है। लोगोंको लिखना, पढना और हिसाब करना सिखाना मूल या प्रारम्भिक शिक्षा कहलाती है। अेक किसान अीमानदारीसे खेती करके रोटी कमाता है। अुसे दुनियाकी साधारण जानकारी है: माता-पिताके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, अपनी पत्नीके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, लड़के-बच्चोंके साथ किस तरह रहना चाहिये, जिस गांवमें वह रहता है वहां कैसा बरताव रखना चाहिये — ये सब बातें वह अच्छी तरह जानता है। वह नीति यानी सदाचारके नियम समझता है और पालता है। अुसे अपनी सही करना नहीं आता। अैसे आदमीको आप अक्षरज्ञान किसलिअे देना चाहते हैं? अक्षरज्ञान देकर अुसके सुखमें और क्या बढ़ती करेंगे? क्या अुसकी झोपड़ी या अुसकी हालतके प्रति अुसमें आपको असन्तोष पैदा करना है? अैसा करना हो तो भी आपको अुसे पढ़ाने-लिखानेकी जरूरत नहीं। पश्चिमके तेजसे दबकर हम यह सोचने लगते हैं कि लोगोंको शिक्षा देनी चाहिये, पर अिसमें हम आगे-पीछेका विचार नहीं करते।

अब अुच्च शिक्षाको लें। मैंने भूगोलविद्या सीखी। बीजगणित भी मुझे आ गया। *भूमितिका ज्ञान मैंने हासिल किया। भूगर्भशास्त्रको भी रट डाला।* पर अुससे हुआ क्या? मेरा क्या भला हुआ और मेरे आसपासवालोंका मैंने क्या भला किया? अिससे मुझे क्या लाभ हुआ? अंग्रेजोंके ही अेक विद्वान हक्सलेने शिक्षाके बारेमें यह कहा है:

१

शिक्षाका अर्थ क्या है?

शिक्षाका अर्थ क्या है? अगर अुसका अर्थ केवल अक्षरज्ञान ही हो, तो वह अेक हथियार-रूप बन जाती है। अुसका सदुपयोग भी हो सकता है और दुरुपयोग भी हो सकता है। जिस हथियारसे आपरेशन करके रोगीको अच्छा किया जाता है, अुसी हथियारसे दूसरोंकी जान भी ली जा सकती है। अक्षरज्ञानके बारेमें भी यही बात है। बहुतसे लोग अुसका दुरुपयोग करते हैं। यह बात ठीक हो तो यह साबित होता है कि अक्षरज्ञानसे दुनियाको लाभके बजाय हानि होती है।

शिक्षाका साधारण अर्थ अक्षरज्ञान ही होता है। लोगोंको लिखना, पढ़ना और हिसाब करना सिखाना मूल या प्रारम्भिक शिक्षा कहलाती है। अेक किसान श्रीमानदारीसे खेती करके रोटी कमाता है। अुसे दुनियाकी साधारण जानकारी है: माता-पिताके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, अपनी पत्नीके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, लड़के-बच्चोंके साथ किस तरह रहना चाहिये, जिस गांवमें वह रहता है वहां कैसा बरताव रखना चाहिये — ये सब बातें वह अच्छी तरह जानता है। वह नीति यानी सदाचारके नियम समझता है और पालता है। अुसे अपनी सही करना नहीं आता। अैसे आदमीको आप अक्षरज्ञान किसलिअे देना चाहते हैं? अक्षरज्ञान देकर अुसके सुखमें और क्या बढ़ती करेंगे? क्या अुसकी झोंपड़ी या अुसकी हालतके प्रति अुसमें आपको असन्तोष पैदा करना है? अैसा करना हो तो भी आपको अुसे पढ़ाने-लिखानेकी जरूरत नहीं। पश्चिमके तेजसे दबकर हम यह सोचने लगते हैं कि लोगोंको शिक्षा देनी चाहिये, पर अिसमें हम आगे-पीछेका विचार नहीं करते।

अब मुख्य शिक्षाको लें। मैंने भूगोलविद्या सीखी। बीजगणित भी मुझे आ गया। भूमितिका ज्ञान मैंने हासिल किया। भूगर्भशास्त्रको भी रट डाला। पर अुससे हुआ क्या? मेरा क्या भला हुआ और मेरे आसपासवालोंका मैंने क्या भला किया? अिससे मुझे क्या लाभ हुआ? अंग्रेजोंके ही अेक विद्वान हक्सलेने शिक्षाके बारेमें यह कहा है:

१

शिक्षाका अर्थ क्या है?

शिक्षाका अर्थ क्या है? अगर अुसका अर्थ केवल अक्षरज्ञान ही हो, तो वह अेक हथियार-रूप बन जाती है। अुसका सदुपयोग भी हो सकता है और दुरुपयोग भी हो सकता है। जिस हथियारसे आपरेशन करके रोगीको अच्छा किया जाता है, अुसी हथियारसे दूसरोंकी जान भी ली जा सकती है। अक्षरज्ञानके बारेमें भी यही बात है। बहुतसे लोग अुसका दुरुपयोग करते हैं। यह बात ठीक हो तो यह साबित होता है कि अक्षरज्ञानसे दुनियाको लाभके बजाय हानि होती है।

शिक्षाका साधारण अर्थ अक्षरज्ञान ही होता है। लोगोंको लिखना, पढ़ना और हिसाब करना सिखाना *मूल या प्रारम्भिक शिक्षा कहलाती है।* अेक किसान अीमानदारीसे खेती करके रोटी कमाता है। अुसे दुनियाकी साधारण जानकारी है: माता-पिताके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, अपनी पत्नीके साथ कैसा बरताव करना चाहिये, लड़के-बच्चोंके साथ किस तरह रहना चाहिये, जिस गांवमें वह रहता है वहां कैसा बरताव रखना चाहिये — ये सब बातें वह अच्छी तरह जानता है। वह नीति यानी सदाचारके नियम समझता है और पालता है। अुसे अपनी सही करना नहीं आता। अैसे आदमीको आप अक्षरज्ञान किसलिये देना चाहते हैं? अक्षरज्ञान देकर अुसके सुखमें और क्या बढ़ती करेंगे? क्या अुसकी झोंपड़ी या अुसकी हालतके प्रति अुसमें आपको असन्तोष पैदा करना है? अैसा करना हो तो भी आपको अुसे पढ़ाने-लिखानेकी जरूरत नहीं। पश्चिमके तेजसे दबकर हम यह सोचने लगते हैं कि लोगोंको शिक्षा देनी चाहिये, पर अिसमें हम आगे-पीछेका विचार नहीं करते।

अब अूंची शिक्षाको लें। मैंने भूगोलविद्या सीखी। बीजगणित भी मुझे आ गया। भूमितिका ज्ञान मैंने हासिल किया। भूगर्भशास्त्रको भी रट डाला। पर अुससे हुआ क्या? मेरा क्या भला हुआ और मेरे [illegible] मैंने क्या भला किया? अिससे मुझे क्या [illegible]? [illegible] विद्वान हक्सलेने शिक्षाके बारेमें

"अुस आदमीको सच्ची शिक्षा मिली है, जिसका शरीर अितना सधा हुआ है कि अुसके काबूमें रह सके और आराम व आसानीके साथ अुसका बताया हुआ काम करे। अुस आदमीको सच्ची शिक्षा मिली है जिसकी बुद्धि शुद्ध है, शान्त है और न्यायदर्शी है। अुस आदमीने सच्ची शिक्षा पाअी है, जिसका मन कुदरतके कानूनोंसे भरा है और जिसकी अिन्द्रियां अपने वशमें है, जिसकी अन्तरवृत्ति विशुद्ध है और जो नीच आचरणको धिक्कारता है तथा दूसरोंको अपने जैसा समझता है। अैसा आदमी सचमुच शिक्षा पाया हुआ माना जाता है, क्योंकि वह कुदरतके नियमों पर चलता है। कुदरत अुसका अच्छा अुपयोग करेगी और वह कुदरतका अच्छा अुपयोग करेगा।"

अगर यही सच्ची शिक्षा हो, तो मैं सौगन्ध खाकर कह सकता हूं कि अूपर मैंने जो शास्त्र गिनाये हैं, अुनका अुपयोग मुझे अपने शरीर या अिन्द्रियों पर काबू पानेमें नहीं करना पड़ा। अिस तरह प्रारम्भिक शिक्षा लीजिये या अुच्च शिक्षा लीजिये, किसीका भी अुपयोग मुख्य बातमें नहीं होता; अुससे हम मनुष्य नहीं बनते।

अिससे यह नहीं मान लेना चाहिये कि मैं अक्षरज्ञानका हर हालतमें विरोध करता हूं। मैं अितना ही कहना चाहता हूं कि अुस ज्ञानकी हमें मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिये। वह हमारे लिअे कोअी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह शोभा पा सकता है। और वह जगह यह है कि जब मैंने और आपने अिन्द्रियोंको वशमें कर लिया हो और जब हमने नैतिकताकी नींव मजबूत बना ली हो, तब यदि हमें लिखना-पढ़ना सीखनेकी अिच्छा हो, तो अुसे सीखकर हम अुसका सदुपयोग जरूर कर सकते हैं। वह गहनेके तौर पर अच्छा लग सकता है। लेकिन यदि अक्षरज्ञानका यह अुपयोग हो, तो हमें अिस तरहकी शिक्षा लाजिमी तौर पर देनेकी जरूरत नहीं रह जाती। अुसके लिअे हमारी पुरानी पाठशालाअें काफी हैं। अुनमें सदाचारकी शिक्षाको पहला स्थान दिया गया है। वह प्रारंभिक शिक्षा है। अुस पर जो अिमारत खड़ी की जायगी, वह टिक सकेगी।

२

हमारी शिक्षाके महत्त्वके मुद्दे

[दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषदका भाषण*]

प्यारे भाअियो और बहनो,

अिस परिषदका सभापति बनाकर आप सबने मुझे आभारी बनाया है। मैं जानता हूं कि अिस पदको सुशोभित करने लायक विद्वत्ता मुझमें नहीं है। मुझे अिस बातका भी खयाल है कि देशसेवाके दूसरे क्षेत्रोंमें मैं जो हिस्सा लेता हूं, अुससे मुझे अिस पदकी योग्यता नहीं मिल जाती। मेरी योग्यता अेक ही हो सकती है; और वह है गुजराती भाषाके प्रेमकी। मेरी आत्मा गवाही देती है कि गुजरातीके प्रेमकी होड़में पहले दरजेसे कममें मुझे संतोष नहीं हो सकता; और अिसी मान्यताके कारण मैंने यह जिम्मेदारीका पद स्वीकार किया है। मुझे आशा है कि जिस अुदार वृत्तिसे आपने मुझे यह पद दिया है, अुसी वृत्तिसे आप मेरे दोषोंको दरगुजर करेंगे; और आपके और मेरे अिस काममें पूरी मदद देंगे।

यह परिषद अभी अेक बरसकी बच्ची है। जैसे पूतके पांव पालनेमें दिखाअी देते हैं, वैसे ही अिस बालकके बारेमें भी मालूम होता है। पिछले सालके कामकी रिपोर्ट मैंने पढ़ी है। वह किसी भी संस्थाको शोभा देनेवाली है। मंत्रियोंने समय पर परिषदकी कीमती रिपोर्ट छपवाकर बधाअीका काम किया है। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें अैसे मंत्री मिले हैं। जिन्होंने यह रिपोर्ट न पढ़ी हो, अुन्हें अिसे पढ़ने और अिस पर मनन करनेकी मैं सिफारिश करता हूं।

श्री रणजितराम वावाभाअीको पिछले साल यमराजने अुठा लिया, अिससे हमारा बड़ा नुकसान हुआ है। अुनके जैसा पढ़ा-लिखा आदमी जवानीमें चल बसा, यह शोचनीय और विचारणीय बात है। भगवान अुनकी आत्माको शांति प्रदान करे और अुनके कुटुम्बको अिस बातसे सान्त्वना मिले कि हम सब अुनके दुःखमें भागीदार हैं।

---

* यह भाषण १९१७ में भड़ौचमें हुअी दूसरी .. अध्यक्षपदसे दिया गया था।

"*अुस आदमीको सच्ची शिक्षा मिली है, जिसका शरीर अितना सधा हुआ है कि अुसके काबूमें रह सके और आराम व आसानीके साथ अुसका बताया हुआ काम करे। अुस आदमीको सच्ची शिक्षा मिली है, जिसकी बुद्धि शुद्ध है, शान्त है और न्यायदर्शी है। अुस आदमीने सच्ची शिक्षा पाअी है, जिसका मन कुदरतके कानूनोंसे भरा है और जिसकी अिन्द्रियां अपने वशमें हैं, जिसकी अन्तरवृत्ति विशुद्ध है और जो नीच आचरणको धिक्कारता है तथा दूसरोंको अपने जैसा समझता है। अैसा आदमी सचमुच शिक्षा पाया हुआ माना जाता है, क्योंकि वह कुदरतके नियमों पर चलता है। कुदरत अुसका अच्छा अुपयोग करेगी और वह कुदरतका अच्छा अुपयोग करेगा।*"

अगर यही सच्ची शिक्षा हो, तो मैं सौगन्ध खाकर कह सकता हूं कि अूपर मैंने जो शास्त्र गिनाये हैं, अुनका अुपयोग मुझे अपने शरीर या अिन्द्रियों पर काबू पानेमें नहीं करना पड़ा। अिस तरह प्रारम्भिक शिक्षा लीजिये या अुच्च शिक्षा लीजिये, किसीका भी अुपयोग मुख्य बातमें नहीं होता; अुससे हम मनुष्य नहीं बनते।

अिससे यह नहीं मान लेना चाहिये कि मैं अक्षरज्ञानका हर हालतमें विरोध करता हूं। मैं अितना ही कहना चाहता हूं कि अुस ज्ञानकी हमें मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिये। वह हमारे लिअे कोअी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह शोभा पा सकता है। और वह जगह यह है कि जब मैंने और आपने अिन्द्रियोंको वशमें कर लिया हो और जब हमने नैतिकताकी नींव मजबूत बना ली हो, तब यदि हमें लिखना-पढ़ना सीखनेकी अिच्छा हो, तो अुसे सीखकर हम अुसका सदुपयोग जरूर कर सकते हैं। वह गहनेके तौर पर अच्छा लग सकता है। लेकिन यदि अक्षरज्ञानका यह अुपयोग हो, तो हमें अिस तरहकी शिक्षा लाजिमी तौर पर देनेकी जरूरत नहीं रह जाती। अुसके लिअे हमारी पुरानी पाठशालाअें काफी हैं। अुनमें सदाचारको शिक्षाको पहला स्थान दिया गया है। वह प्रारंभिक शिक्षा है। अुस पर जो अिमारत खड़ी की जायगी, वह टिक सकेगी।

हिन्द स्वराज्य

२

हमारी शिक्षाके महत्त्वके मुद्दे

[दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषदका भाषण*]

प्यारे भाअियो और बहनो,

अिस परिषदका सभापति बनाकर आप सबने मुझे आभारी बनाया है। मैं जानता हूं कि अिस पदको सुशोभित करने लायक विद्वत्ता मुझमें नहीं है। मुझे अिस बातका भी खयाल है कि देशसेवाके दूसरे क्षेत्रोंमें मैं जो हिस्सा लेता हूं, अुससे मुझे अिस पदकी योग्यता नहीं मिल जाती। मेरी योग्यता अेक ही हो सकती है; और वह है गुजराती भाषाके प्रेमकी। मेरी आत्मा गवाही देती है कि गुजरातीके प्रेमकी होड़में पहले दरजेसे कममें मुझे संतोष नहीं हो सकता; और अिसी मान्यताके कारण मैंने यह जिम्मेदारीका पद स्वीकार किया है। मुझे आशा है कि जिस अुदार वृत्तिसे आपने मुझे यह पद दिया है, अुसी वृत्तिसे आप मेरे दोषोंको दरगुजर करेंगे; और आपके और मेरे अिस काममें पूरी मदद देंगे।

यह परिषद अभी अेक बरसकी बच्ची है। जैसे पूतके पांव पालनेमें दिखाअी देते हैं, वैसे ही अिस बालकके बारेमें भी मालूम होता है। पिछले सालके कामकी रिपोर्ट मैंने पढ़ी है। वह किसी भी संस्थाको शोभा देनेवाली है। मंत्रियोंने समय पर परिषदकी कीमती रिपोर्ट छपवाकर बधाअीका काम किया है। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें अैसे मंत्री मिले हैं। जिन्होंने यह रिपोर्ट न पढ़ी हो, अुन्हें अिसे पढ़ने और अिस पर मनन करनेकी मैं सिफारिश करता हूं।

श्री रणजितराम वावाभाअीको पिछले साल यमराजने अुठा लिया, जिससे हमारा बड़ा नुकसान हुआ है। अुनके जैसा पढ़ा-लिखा आदमी जवानीमें चल बसा, यह शोचनीय और विचारणीय बात है। भगवान अुनकी आत्माको शांति प्रदान करे और अुनके कुटुम्बको अिस बातसे सान्त्वना मिले कि हम सब अुनके दुःखमें भागीदार हैं।

* यह भाषण १९१७ में भड़ौंचमें हुअी दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषदके अध्यक्षपदसे दिया गया था।

जिस संस्थाने यह परिषद की है, अुसने तीन अुद्देश्य अपने सामने रखे हैं:

१. शिक्षाके प्रश्नोंके बारेमें लोकमत तैयार करना और जाहिर करना।
२. गुजरातमें शिक्षाके प्रश्नोंके बारेमें सदा हलचल करते रहना।
३. गुजरातमें शिक्षाके व्यावहारिक काम करना।

अिन तीनों अुद्देश्योंके बारेमें अपनी बुद्धिके अनुसार मैंने जो विचार किया है और राय कायम की है, अुसे यहां पेश करनेकी कोशिश करूंगा।

यह सबको साफ समझ लेना चाहिये कि शिक्षाके माध्यमका विचार करके निश्चय करना अिस दिशामें हमारा पहला काम है। अिसके बिना और सब कोशिशें लगभग बेकार साबित हो सकती हैं। शिक्षाके माध्यमका विचार किये बिना शिक्षा देते रहनेका नतीजा नींवके बिना अिमारत खड़ी करनेकी कोशिश जैसा होगा।

अिस बारेमें दो रायें पाअी जाती हैं। अेक पक्ष कहता है कि शिक्षा मातृभाषा (गुजराती) के जरिये दी जानी चाहिये। दूसरा पक्ष कहता है कि वह अंग्रेजीके द्वारा दी जानी चाहिये। दोनों पक्षोंके हेतु पवित्र हैं। दोनों देशका भला चाहते हैं। लेकिन पवित्र हेतु ही कामकी सिद्धिके लिअे काफी नहीं होते। दुनियाका यह अनुभव है कि पवित्र हेतु कअी बार अपवित्र जगह ले जाते हैं। अिसलिअे हमें दोनों मतोंके गुण-दोषोंकी जांच करके, संभव हो तो अेकमत होकर, अिस बड़े प्रश्नको हल करना चाहिये। अिसमें कोअी शक नहीं कि यह प्रश्न महान है। अिसलिअे अिसके बारेमें जितना विचार किया जाय अुतना ही थोड़ा है।

यह प्रश्न सारे भारतका है। पर हरअेक प्रान्त भी स्वतंत्र रूपसे अपने लिअे निश्चय कर सकता है। अैसी कोअी बात नहीं कि भारतके सारे भाग अेकमत न हो जायं, तब तक अकेला गुजरात आगे कदम नहीं बढ़ा सकता।

फिर भी दूसरे प्रान्तोंमें अिस बारेमें क्या हलचल हुअी है, अिसकी जांच करनेसे हम कुछ मुश्किलें हल कर सकते हैं। बंगभंगके समय जब स्वदेशीका जोश अुमड़ रहा था, तब बंगालमें बंगलाके जरिये शिक्षा देनेकी कोशिश हुअी। राष्ट्रीय पाठशाला भी खुली। रुपयोंकी वर्षा हुअी। पर यह प्रयोग बेकार गया। मेरी यह नम्र राय है कि व्यवस्थापकोंको अपने प्रयोगके बारेमें श्रद्धा नहीं थी। वैसी ही [illegible] शिक्षकोंकी भी थी। बंगालमें शिक्षित लोगोंको अंग्रेजीका बड़ा मोह है। अैसा सुनाया गया है कि बंगला

साहित्य जो बढ़ा है, अुसका कारण बंगालियोंका अंग्रेजी भाषाका काबू है। लेकिन हकीकत अिस दलीलका खंडन करती है। सर रवीन्द्रनाथ टागोरकी चमत्कारिक बंगला अुनकी अंग्रेजीकी अृणी नहीं है। अुनके चमत्कारके पीछे अुनका स्वभाषाका अभिमान है। गीतांजलि पहले बंगला भाषामें ही लिखी गअी। यह महाकवि बंगालमें बंगलाका ही अुपयोग करते हैं। अुन्होंने हालमें भारतकी आजकी हालत पर कलकत्तेमें जो भाषण दिया था, वह बंगला भाषामें दिया था। बंगालके प्रमुख स्त्री-पुरुष अुसे सुनने गये थे। सुननेवालोंने मुझे कहा है कि डेढ़ घंटे तक अुन्होंने श्रोताओंको लावण्यकी धारासे मंत्रमुग्ध कर रखा था। अुन्होंने अपने विचार अंग्रेजी साहित्यसे नहीं लिये। वे कहते हैं कि मैंने ये विचार अिस देशके वातावरणसे लिये हैं, अुपनिषदोंमें से निचोड़ कर निकाले हैं। भारतके आकाशमें अुन पर विचारोंकी वर्षा हुअी है। यही हालत बंगालके दूसरे लेखकोंकी मैंने मानी है।

हिमालयकी तरह गंभीर और भव्य दिखाअी देनेवाले महात्मा मुन्शीरामजी जब हिन्दीमें अपने भाषण देते हैं, तब बच्चे, स्त्रियां और बड़े सभी अुनका सुन्दर भाषण सुनते हैं और समझते हैं। अुन्होंने अपनी अंग्रेजी अपने अंग्रेज दोस्तोंके लिअे ही सुरक्षित रख छोड़ी है। वे अंग्रेजी शब्दोंका अनुवाद करके अपना भाषण नहीं करते।

कहते हैं कि गृहस्थाश्रमी होते हुअे भी देशके लिअे अपनेको अर्पण करनेवाले महामना मदनमोहन मालवीयजीकी अंग्रेजी चांदी-सी चमक अुठती है। वे जो कुछ बोलते हैं, अुस पर वाअिसरॉयको सोचना पड़ता है। अगर अुनकी अंग्रेजी चांदी-सी चमकदार है, तो अुनकी हिन्दी गंगाके प्रवाह जैसी है। जैसे मानसरोवरसे अुतरते समय गंगा सूर्यकी किरणोंसे सोनेकी तरह चमकती है, वैसे अुनके हिन्दीके भाषणोंका प्रवाह शुद्ध सोनेकी तरह चमकता है।

अिन तीन वक्ताओंमें यह शक्ति अुनके अंग्रेजीके ज्ञानके कारण नहीं, बल्कि अुनके स्वभाषाके प्रेमके कारण आअी है। स्वामी दयानंदने जो हिन्दी भाषाकी सेवा की है, वह कोअी अंग्रेजी ज्ञानके कारण नहीं की थी। तुकाराम और रामदासने मराठी भाषाको जिस तरह अुज्ज्वल बनाया था, अुसमें अंग्रेजीका कोअी हाथ न था। ... और बिलकुल आजके समयमें ... अुनका यश अंग्रेजी

अपरके अुदाहरणोंसे यह साबित होता है कि मातृभाषाके विकासके लिअे अंग्रेजी भाषाकी जानकारीसे मातृभाषाके प्रेमकी — अुस पर श्रद्धाकी — ज्यादा जरूरत है।

भाषाओंका विकास कैसे होता है, यह विचार करने पर भी हम अिसी निर्णय पर पहुंचेंगे। भाषायें अुनके बोलनेवालोंके चरित्रका प्रतिबिम्ब है। दक्षिण अफ्रीकाके सीदी लोगोंकी भाषा जाननेसे हम अुनके रीत-रिवाज वगैराकी जानकारी कर लेते हैं। गुण-कर्मके अनुसार भाषा बनती है। हम निःसंकोच होकर कह सकते हैं कि जिस भाषामें बहादुरी, सचाअी, दया वगैरा लक्षण नहीं होते, अुस भाषाके बोलनेवाले बहादुर, दयावान और सच्चे आदमी नहीं होते। अैसी भाषामें दूसरी भाषाओंसे वीररस या दयाके शब्द तोड़-मरोड़ कर लानेसे अुस भाषाका विस्तार नहीं होता, अुस भाषाके बोलनेवाले वीर नहीं बनते। शौर्य किसीमें बाहरसे पैदा नहीं किया जा सकता, वह तो मनुष्यके स्वभावमें होना चाहिये। हां, अुस पर जंग लग गया हो, तो जंगके छूटते ही वह चमक अुठता है। हमने बहुत समय तक गुलामी भोगी है, अिसलिअे हममें विनयकी अतिशयता बतानेवाले शब्दोंका भंडार बहुत ज्यादा पाया जाता है। अंग्रेजी भाषामें नावके लिअे जितने शब्द हैं, अुतने और किसी भाषामें शायद ही होंगे। कोअी साहसी गुजराती वैसी पुस्तकोंका अनुवाद गुजरातियोंके सामने रखे, तो अुससे हमारी भाषामें कोअी वृद्धि नहीं होगी और हमें नावकी ज्यादा जानकारी नहीं मिलेगी। पर जब हम जहाज वगैरा बनाने लगेंगे और जलसेना भी खड़ी करेंगे, तब नाव-सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द अपने-आप बन जायेंगे। यही विचार स्व० रेवरेण्ड टेलरने अपने व्याकरणमें दिया है। वे कहते हैं:

"कभी-कभी यह विवाद सुनाअी पड़ता है कि गुजराती पूरी है या अधूरी। कहावत है कि यथा राजा तथा प्रजा, यथा गुरुस्तथा शिष्यः। अिसी तरह कहते हैं कि यथा भाषकस्तथा भाषा — जैसा बोलनेवाला वैसी बोली। अैसा नहीं मालूम होता कि शामल भट्ट आदि कवि अपने मनके विचार प्रकट करते समय यह जानकर रुके हों कि गुजराती भाषा अधूरी है। नये-पुराने शब्दोंकी रचनामें अुन्होंने अैसा विवेक बताया कि अुनके बोले हुअे शब्द भाषामें प्रचलित हो गये।

"अेक विषयमें तो सभी भाषाअें अधूरी हैं। मनुष्यकी छोटी बुद्धिमें न आनेवाली बातों, जैसे ीश्वर या अनन्तताके बारेमें कहें तो सभी भाषाअें अधूरी हैं। भाषा मनुष्यकी बुद्धिके सहारे चलती है, अिसलिअे जब किसी विषय तक बुद्धि नहीं पहुंचती, तब भाषा अधूरी होती है। भाषाका साधारण नियम यह है कि लोगोंके मनमें जैसे विचार भरे होते हैं, वैसे ही अुनकी भाषामें बोले जाते हैं। लोग समझदार होंगे तो अुनकी बोली भी समझदारीसे भरी होगी; लोग मूढ़ होंगे तो अुनकी बोली भी वैसी ही होगी। अंग्रेजीमें कहावत है कि मूर्ख बढ़अी अपने औजारोंको दोष देता है। भाषाकी कमी बतानेवाले कभी-कभी अैसे ही होते हैं। जिस विद्यार्थीको अंग्रेजी भाषा और अुसके साथमें अंग्रेजी विद्याका थोड़ा ज्ञान हो गया है, अुसे गुजराती भाषा अधूरी-सी लगती है, क्योंकि अंग्रेजीसे अनुवाद करना मुश्किल होता है। अिसमें दोष भाषाका नहीं, लोगोंका है। चूंकि नया शब्द, नया विषय या भाषाकी कोअी नअी शैलीका अुपयोग करने पर अुसे विवेकके साथ समझ लेनेका अभ्यास लोगोंको नहीं होता, अिसलिअे बोलनेवाला रुक जाता है, क्योंकि 'अंधेके आगे रोये तो अपने भी नैन खोये'। और जब तक लोग भला-बुरा, नया-पुराना परख कर अुसकी कीमत नहीं लगा सकते, तब तक लिखनेवालेका विवेक कैसे प्रफुल्लित हो सकता है?

"अंग्रेजीसे अनुवाद करनेवालोंमें कोअी-कोअी अैसा समझते दीखते हैं कि हमने गुजराती भाषाका ज्ञान तो माके दूधके साथ पिया है और अंग्रेजी सीखी है, अिसलिअे साक्षात् द्विभाषी बन गये हैं। गुजरातीका अध्ययन किसलिअे करें! लेकिन परभाषाका ज्ञान प्राप्त करनेमें जो श्रम किया जाता है, अुससे स्वभाषामें प्रवीणता प्राप्त करनेका अभ्यास ज्यादा महत्त्व रखता है। शामल आदि गुजराती कवियोंके ग्रंथ देखिये। अुनमें जगह-जगह अभ्यासका सबूत मिलता है। मनसे प्रयत्न करनेके पहले गुजराती कच्ची दीखेगी, परन्तु बादमें सचमुच पक्की जान पड़ेगी। प्रयत्न करनेवाला अधूरा होगा, तो अुसकी भाषा भी अधूरी होगी; पर अुपयोग करनेवालेका प्रयत्न पूरा होगा, तो गुजराती भी पूरी होगी। जितना ही नहीं, सजी हुअी भी दिखाअी देगी। गुजराती आर्य कुलकी, संस्कृतकी बेटी और बहुत ही अुत्कृष्ट भाषाओंकी सगी ठहरी! अुसे कोअी नीच कैसे बता सकता है?

गुजरातमें मातृभाषाके जरिये शिक्षा देनेकी हलचल शुरू हो गओी है। अिस बारेमें हम रा० ब० हरगोविन्ददास कांटावालाके लेखोंमें जान सकते हैं। प्रो० गज्जर और स्वर्गीय दी० ब० मणिभाओी जसभाओी अिस विचारके नेता माने जा सकते हैं। यह विचार करना हमारा काम है कि अिन लोगोंके बोये हुअे बीजका पालन-पोषण करना चाहिये या नहीं। मुझे तो लगता है कि अिसमें जितनी देर हो रही है, अुतना ही हमारा नुकसान हो रहा है।

अंग्रेजी द्वारा शिक्षा पानेमें कमसे कम सोलह वर्ष लगते हैं। वे ही विषय मातृभाषा द्वारा पढ़ाये जाय, तो ज्यादासे ज्यादा दस वर्ष लगेंगे। यह राय बहुतसे प्रौढ़ शिक्षकोंने प्रकट की है। हजारों विद्यार्थियोंके छह वर्ष बचनेका अर्थ यह होता है कि अुतने हजार वर्ष जनताको मिल गये।

विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पानेमें जो बोझ दिमाग पर पड़ता है वह असह्य है। यह बोझ हमारे ही बच्चे अुठा सकते हैं, लेकिन अुसकी कीमत अुन्हें चुकानी ही पड़ती है। वे दूसरा बोझ अुठानेके लायक नहीं रह जाते। अिससे हमारे ग्रेज्युअेट अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही, रोगी और कोरे नकलची बन जाते हैं। अुनमें खोजकी शक्ति, विचार करनेकी ताकत, साहस, धीरज, बहादुरी, निडरता आदि गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं। अिससे हम नअी योजनाअें नहीं बना सकते। बनाते हैं तो अुन्हें पूरा नहीं कर सकते। कुछ लोग, जिनमें अुपरोक्त गुण दिखाओी देते हैं, अकाल मृत्युके शिकार हो जाते हैं। अेक अंग्रेजने लिखा है कि असल लेख और स्याहीसोख कागजके अक्षरोंमें जो भेद है, वही भेद यूरोप और यूरोपके बाहरकी जनतामें है। *अिस विचारमें जितनी सचाओी होगी, वह कोओी अेशियाके लोगोंकी स्वाभाविक अयोग्यताके कारण नहीं है।* अिस नतीजेका कारण शिक्षाके माध्यमकी अयोग्यता ही है। दक्षिण अफ्रीकाकी सीदी जनता साहसी, शरीरसे कद्दावर और चारित्र्यवान है। बाल-विवाह आदि जो दोष हममें हैं वे अुनमें नहीं हैं। फिर भी अुनकी दशा वैसी ही है जैसी हमारी है। अुनकी शिक्षाका माध्यम डच भाषा है। वे भी हमारी तरह डच भाषा पर फौरन काबू पा लेते हैं और हमारी ही तरह वे भी शिक्षाके अन्तमें कमजोर बनते हैं, बहुत हद तक कोरे नकलची निकलते हैं। असली चीज अुनमें भी मातृभाषाके साथ गायब हुओी दीखती है। अंग्रेजी शिक्षा पाने

हुअे हम लोग खुद अिस नुकसानका अन्दाज नहीं लगा सकते। यदि हम यह अन्दाज लगा सकें कि सामान्य लोगों पर हमने कितना कम असर डाला है, तो कुछ खयाल हो सकता है। हमारे माता-पिता जो हमारी शिक्षाके बारेमें कभी-कभी कुछ कह बैठते हैं, वह विचारने लायक होता है। हम बोस और रायको देखकर मोहांध हो अुठते हैं। मुझे विश्वास है कि हमने ५० वर्ष तक मातृभाषा द्वारा शिक्षा पाअी होती, तो हममें अितने बोस और राय होते कि अुनके अस्तित्वसे हमें अचंभा न होता।

यदि हम यह विचार अेक तरफ रख दें कि जापानका कुछाह जिस ओर जा रहा है वह ठीक है या नहीं, तो हमें जापानका साहस स्तब्ध करनेवाला मालूम होगा। अुन्होंने मातृभाषा द्वारा जन-जागृति की है, अिसीलिअे अुनके हर काममें नयापन दिखाअी देता है। वे शिक्षकोंको सिखानेवाले बन गये हैं। *अुन्होंने स्याहीसोख कागजकी अुपमा गलत साबित कर दी है।* जनताका जीवन शिक्षाके कारण अुमंगें मार रहा है और दुनिया जापानका काम अचरजभरी आखोंसे देख रही है। विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पानेकी पद्धतिसे अपार हानि होती है।

माके दूधके साथ जो संस्कार मिलते हैं और जो मीठे शब्द सुनाअी देते हैं, अुनके और पाठशालाके बीच जो मेल होना चाहिये, वह विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा लेनेसे टूट जाता है। अिसे तोड़नेवालोंका हेतु पवित्र हो, तो भी वे जनताके दुश्मन हैं। हम अैसी शिक्षाके शिकार होकर मातृद्रोह करते हैं। *विदेशी भाषा द्वारा मिलनेवाली शिक्षाकी हानि यहीं नहीं रुकती।* शिक्षित वर्ग और सामान्य जनताके बीचमें भेद पड़ गया है। हम सामान्य जनताको नहीं पहचानते। सामान्य जनता हमें नहीं जानती। हमें तो वह साहब समझ बैठती है और हमसे डरती है; वह हम पर भरोसा नहीं करती। यदि बहुत दिन तक यही स्थिति रही, तो लार्ड कर्जनका *यह आरोप सही होनेका समय आ जायगा कि शिक्षित वर्ग सामान्य जनताके* प्रतिनिधि नहीं हैं।

सौभाग्यसे शिक्षित वर्ग अपनी मूर्च्छासे जागते दिखाअी दे रहे हैं। आम लोगोंके साथ मिलते समय अुन्हें अूपर बताये हुअे दोष स्वयं दिखाअी देते हैं। अुनमें जो जोश है वह जनताको कैसे दिया जाय? अंग्रेजीसे तो यह काम हो नहीं सकता। *गुजराती द्वारा देनेकी शक्ति नहीं है या*

बहुत थोड़ी है। अपने विचार मातृभाषामें जनताके सामने रखनेमें बड़ी कठिनाअी होती है। अैसी-अैसी बातें मैं हमेशा सुनता हूं। यह रुकावट पैदा हो जानेसे प्रजा-जीवनका प्रवाह रुक गया है। अंग्रेजी शिक्षा देनेमें मैकालेका हेतु शुद्ध था। अुसके मनमें हमारे साहित्यके प्रति तिरस्कार था। अुस तिरस्कारकी छूत हमें भी लग गअी। हम अपनेको भूल गये। 'गुरु गुड़ चेला शक्कर' वाली हालत हमारी हो गअी। मैकालेका यह अुद्देश्य था कि हम पश्चिमी सभ्यताका जनतामें प्रचार करनेवाले बन जाय। अुसकी कल्पना यह थी कि हममें से कुछ लोग अंग्रेजी सीखकर, अपने चारित्र्यमें वृद्धि करके जनताको नये विचार देंगे। वे देने लायक थे या नहीं, अिस बातका विचार करना यहां अप्रासंगिक होगा। हमें तो सिर्फ शिक्षाके माध्यमका ही विचार करना है। हमने अंग्रेजी शिक्षामें धनप्राप्ति देखी, अिसलिअे अुसके अुपयोगको हमने प्रधान पद दिया। कुछ लोगोंमें अपने देशका अभिमान पैदा हुआ। अिस तरह मूल विचार गौण रहा और अंग्रेजी भाषाका प्रचार मैकालेकी धारणासे भी ज्यादा बढ़ गया। अिससे हम घाटेमें ही रहे।

हमारे हाथमें सत्ता होती, तो हम अिस दोषको तुरन्त देख लेते। हम मातृभाषाको आजकी तरह छोड़ते नहीं। सरकारी नौकरोंने अुसे नहीं छोड़ा। बहुतोंको शायद मालूम नहीं होगा कि हमारी अदालती भाषा गुजराती मानी जाती है। सरकार कानून गुजरातीमें भी बनवाती है। दरबारोंमें पढ़े जानेवाले भाषणोंका गुजराती अनुवाद अुसी समय पढ़ा जाता है। हम देखते हैं कि चलनके नोटोंमें अंग्रेजीके साथ गुजराती आदिका भी अुपयोग किया जाता है। जमीनकी पैमाअिश करनेवालेको जो गणित वगैरा विषय सीखने पड़ते हैं वे कठिन होते हैं। पर यह काम अंग्रेजीमें होता, तो माल-महकमेका काम बहुत खर्चीला हो जाता। अिसलिअे पैमाअिशवालोंके लिअे पारिभाषिक शब्द बनाये गये हैं। वे शब्द हममें आनन्द और आश्चर्य पैदा करनेवाले हैं। हममें भाषाके लिअे सच्चा प्रेम हो, तो हमारे पास जो साधन हैं अुनका हम आज भी अुपयोग कर सकते हैं। वकील अपना काम गुजराती भाषामें करने लग जायं, तो मुवक्किलोंका बहुतसा रुपया बच जाय, मुवक्किलोंको कानूनकी जरूरी शिक्षा मिले और वे अपने हक समझने लगें। दुभाषियेका खर्च बचे। भाषामें कानूनी शब्दोंका प्रचार हो।

अिसमें वकीलोंको थोड़ा प्रयत्न जरूर करना पड़ेगा। मुझे विश्वास है, मेरा अनुभव है कि अिससे अुनके मुवक्किलोंको नुकसान नहीं पहुंचेगा। यह डर रखनेका जरा भी कारण नहीं कि गुजरातीमें दी हुअी दलीलका असर कम पड़ेगा। हमारे कलेक्टरों वगैराके लिअे गुजराती जानना अनिवार्य है। परन्तु हमारे अंग्रेजीके झूठे मोहके कारण हम अुनके अज्ञानको अंग चढ़ाते हैं।

अैसी शंका की गअी है कि रुपया कमाने और स्वदेशाभिमानके लिअे अंग्रेजीका जो अुपयोग हुआ, अुसमें कोअी दोष नहीं था। यह शंका शिक्षाके माध्यमका विचार करते समय सच्ची नहीं मालूम होती। रुपया कमाने या देशकी भलाअीके लिअे कुछ लोग अंग्रेजी सीखें, तो हम अुन्हें सादर प्रनाम करेंगे। परन्तु अिस परसे अंग्रेजी भाषाको शिक्षाका माध्यम तो नहीं कर सकते। यहां सिर्फ यही बताना है कि अूपरकी दो घटनाओंके कारण अंग्रेजी भाषाने माध्यमके रूपमें भारतमें जो घर कर लिया, यह अुसका दुःखद परिणाम हुआ है। कोअी कहते हैं कि अंग्रेजी जाननेवाले ही देशभक्त हुअे हैं। परन्तु थोड़े महीनोंसे हम दूसरी ही बात देख रहे हैं। फिर भी अंग्रेजीका यह दावा मानते हुअे अितना कहा जा सकता है कि औरोंको अंग्रेजी शिक्षा पानेका मौका ही नहीं मिला। अंग्रेजी स्वदेशाभिमान आम जनता पर असर नहीं डाल सका। सच्चा स्वदेशाभिमान व्यापक होना चाहिये। यह गुण अिसमें नहीं पाया गया।

अैसा कहा गया है कि अूपरकी दलीलें चाहे जैसी हों, फिर भी आज वे अव्यावहारिक हैं। "अंग्रेजीके खातिर दूसरे विषयोंकी कुछ भी हानि हो, तो यह दुःखकी बात है। अंग्रेजी पर काबू पानेमें ही हमारा अधिकतर मानसिक बल खर्च हो जाय, तो यह बहुत बुरी बात है। परन्तु अंग्रेजीके संबंधमें हमारी जो स्थिति है, अुसे ध्यानमें रखते हुअे मेरा यह नम्र मत है कि अिस नतीजेको सह कर ही रास्ता निकालनेके सिवा और कोअी अुपाय नहीं है।" यह बात किसी अैसे-वैसे लेखककी कही हुअी नहीं है। ये वचन गुजरातके शिक्षित वर्गमें पहली पंक्तिमें बैठनेवालेके हैं, स्वभाषा-प्रेमीके हैं। आचार्य आनन्दशंकर ध्रुव जो कुछ लिखते हैं, अुस पर हम विचार किये बिना नहीं रह सकते। अुन्होंने जो अनुभव प्राप्त किया है वह बहुत थोड़ोंके पास है। अुन्होंने साहित्यकी और शिक्षाकी बहुत बड़ी सेवा की है। अुन्हें सलाह देने और टीका करनेका पूरा अधिकार है।

अैसी स्थितिमें मेरे जैसेको बहुत सोचना पडता है। फिर, ये विचार अकेले आनन्दशंकर भाअीके ही नही है। अुन्होने मीठी भाषामें अंग्रेजी भाषाके हिमायतियोंके विचार रखे है। अुन विचारोका आदर करना हमारा फर्ज है। अिसके अलावा, मेरी स्थिति कुछ विचित्र-सी है। अुनकी सलाहसे, अुनकी निगरानीमें मैं राष्ट्रीय शिक्षाका प्रयोग कर रहा हू। वहां मातृभाषामें ही शिक्षा दी जाती है। जहा अितना पासका सबध हो, वहां टीकाके रूपमें कुछ भी लिखते समय मैं हिचकिचाता हू। सौभाग्यसे आचार्य ध्रुवने अंग्रेजी भाषा और मातृभाषा द्वारा दी जानेवाली शिक्षा, दोनोंको प्रयोगके रूपमें देखा है। दोनोमें से अेकके बारेमें भी अुन्होने पक्की राय नही दी। अिसलिअे अुनके विचारोंके विरुद्ध कुछ कहनेमें मुझे कम सकोच होता है।

अंग्रेजीके सबंधमें हम अपनी स्थिति पर जरूरतसे ज्यादा जोर देते हैं। यह बात मेरे ध्यानसे बाहर नही है कि अिस परिषदमें अिस विषय पर पूरी आजादीके साथ चर्चा नहीं हो सकती। जो राजनीतिक मामलोंमें नही पड़ सकते, अुनके लिअे भी अितना विचारना या कहना अनुचित नही कि अंग्रेजी राज्यका सबध केवल भारतकी भलाअीके लिअे है। और किसी कल्पनासे अिस संबधका बचाव नही किया जा सकता। अेक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर राज्य करे, यह विचार दोनोके लिअे असह्य है, बुरा है और दोनोको नुकसान पहुचानेवाला है। यह बात अंग्रेज अधिकारियोंने भी मानी है। जहा परोपकारकी दृष्टिसे विवाद हो रहा हो, वहा यह बात सिद्धान्तके रूपमें मानी जाती है। अैसा होनेके कारण राज्य करनेवालों और प्रजा दोनोंको यदि यह साबित हो जाय कि अंग्रेजी द्वारा शिक्षा देनेसे जनताकी मानसिक शक्ति नष्ट होती है, तो अेक पलके लिअे भी ठहरे बिना शिक्षाका माध्यम बदल देना चाहिये। अैसा करनेमें जो जो रुकावटें हों, अुन्हें दूर करनेमें ही हमारा पुरुषार्थ है। यदि यह विचार मान लिया जाय, तो आचार्य ध्रुवकी तरह मानसिक बलकी हानि स्वीकार करनेवालोको दूसरी दलील देनेकी जरूरत नही रह जाती।

मैं यह विचार करनेकी जरूरत नही मानता कि मातृभाषा द्वारा शिक्षा देनेसे अंग्रेजी भाषाके ज्ञानको धक्का पहुचेगा। सभी पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानियोंको अिस भाषा पर प्रभुत्व पानेकी जरूरत नहीं। अितना ही नही, मेरी तो यह

भी मेरा मान्यता है कि यह प्रमुख प्राप्त करनेकी रुचि पैदा करना भी जरूरी नहीं है।

कुछ भारतीयोंको अंग्रेजी जरूर सीखनी पड़ेगी। आचार्य ध्रुवने केवल अूंची दृष्टिसे ही अिस प्रश्न पर सोचा है। परन्तु हम सब दृष्टियोंसे सोचने पर देख सकेंगे कि दो वर्गोंको अंग्रेजीकी जरूरत रहेगी:

१. स्वदेशाभिमानी लोग, जिनमें भाषा सीखनेकी अधिक शक्ति है, जिनके पास समय है, जो अंग्रेजी साहित्यमें से शोध करके अुनके परिणाम जनताके सामने रखना चाहते हैं या राज्य करनेवालोंके साथके संबंधमें अुनका अुपयोग करना चाहते हैं; और

२. वे लोग जो अंग्रेजीके ज्ञानका रुपया कमानेके काममें अुपयोग करना चाहते हैं।

अिन दोनोंके लिअे अंग्रेजीको अेक वैकल्पिक विषय मानकर अिस भाषाका अच्छेसे अच्छा ज्ञान देनेमें कोअी हर्ज नहीं। अितना ही नहीं, अुनके लिअे अिसकी सुविधा कर देना भी जरूरी है। पढ़ाअीके अिस क्रममें शिक्षाका माध्यम तो मातृभाषा ही रहेगी। आचार्य ध्रुवको डर है कि हम यदि अंग्रेजी द्वारा सारी शिक्षा नहीं पायेंगे और अुसे परभाषाके रूपमें सीखेंगे, तो जैसा हाल फारसी, संस्कृत आदिका होता है वैसा ही अंग्रेजीका भी होगा। मुझे आदरके साथ कहना चाहिये कि अिस विचारमें कुछ दोष है। बहुतसे अंग्रेज अपनी शिक्षा अंग्रेजीमें पाकर भी फ्रेन्च आदि भाषाओंका अूंचा ज्ञान रखते हैं और अुनका अपने काममें पूरा अुपयोग कर सकते हैं। भारतमें अैसे भारतीय मौजूद हैं, जिन्होंने अंग्रेजीमें शिक्षा पाअी है, पर फ्रेन्च आदि भाषाओं पर भी अुनका अधिकार अैसा-वैसा नहीं। सच तो यह है कि जब अंग्रेजी अपनी जगह पर चली जायगी और मातृभाषाको अपना पद मिल जायगा, तब हमारे मन जो अभी रुंधे हुअे हैं कैदसे छूटेंगे और शिक्षित और सुसंस्कृत होने पर भी ताजा रहे हुअे दिमागको अंग्रेजी भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेका बोझ भारी नहीं लगेगा। और मेरा तो यह भी विश्वास है कि अुस समय सीखी हुअी अंग्रेजी हमारी आजकी अंग्रेजीसे ज्यादा शोभा देनेवाली होगी; और बुद्धि तेज होनेके कारण अुसका ज्यादा अच्छा अुपयोग हो सकेगा। लाभ-हानिके विचारसे यह मार्ग सब अर्थोंको साधनेवाला मालूम होगा।

जब हम मातृभाषा द्वारा शिक्षा पाने लगेंगे, तब हमारे घरके लोगोंके साथ हमारा दूसरा ही संबंध रहेगा। आज हम अपनी स्त्रियोंको अपनी सच्ची जीवन-सहचरी नहीं बना सकते। अुन्हें हमारे कामोंका बहुत कम पता होता है। हमारे माता-पिताको हमारी पढ़ाओकी कुछ खबर नहीं होती। यदि हम अपनी भाषाके जरिये सारा अूचा ज्ञान लेते हों, तो हम अपने *धोबी, नाओ, भंगी, सबको सहज ही शिक्षा दे सकेंगे।* विलायतमें हजामत कराते-कराते हम नाओसे राजनीतिकी बातें कर सकते हैं। यहां तो हम अपने कुटुम्बमें भी अैसा नहीं कर सकते। अिसका कारण यह नहीं कि हमारे कुटुम्बी या नाओ अज्ञानी हैं। अुस अंग्रेज नाओके बराबर ज्ञानी तो ये भी हैं। अिनके साथ हम महाभारत, रामायण और तीर्थोंकी बातें करते हैं, क्योंकि जनताको अिसी दिशाकी शिक्षा मिलती है। परन्तु स्कूलकी शिक्षा घर तक नहीं पहुंच सकती, क्योंकि अंग्रेजीमें सीखा हुआ हम अपने कुटुम्बियोंको नहीं समझा सकते।

आजकल हमारी धारासभाओंका सारा कामकाज अंग्रेजीमें होता है। बहुतेरे क्षेत्रोंमें यही हाल हो रहा है। अिससे विद्याधन कंजूसकी दौलतकी तरह गड़ा हुआ पड़ा रहता है। अदालतोंमें भी यही दशा है। न्यायाधीश हमेशा शिक्षाकी बातें कहते हैं। अदालतोंमें जानेवाले लोग अुन्हें सुननेको तैयार रहते हैं, *परंतु अुन्हें न्यायाधीशकी आखिरी शुष्क आज्ञा सुननेके सिवा* और कोओ ज्ञान नहीं मिलता। वे अपने वकीलों तकके भाषण नहीं समझ सकते। अंग्रेजी द्वारा चिकित्सा-शास्त्रका ज्ञान पाये हुओ डाक्टरोंकी भी यही दशा है। वे रोगीको जरूरी ज्ञान नहीं दे सकते। अुन्हें शरीरके अवयवोंके गुजराती नाम भी नहीं आते। अिसलिओ अधिकतर दवाका नुसखा लिख देनेके सिवा रोगीके साथ अुनका और कोओ संबंध नहीं रहता। अैसा कहते हैं कि भारतमें पहाड़ोंकी चोटियों परसे चौमासेमें पानीके जो प्रपात गिरते हैं, अुनका हम अपने अविचारके कारण कोओ लाभ नहीं अुठाते। हम हमेशा लाखों रुपयेका सोने जैसा कीमती खाद पैदा करते हैं और अुसका अुचित अुपयोग न करनेके कारण रोगोंके शिकार बनते हैं। अिसी तरह अंग्रेजी भाषा पढ़नेके बोझसे कुचले हुओ हम लोग दीर्घदृष्टि न रखनेके कारण अूपर लिखे अनुसार जनताको जो कुछ मिलना चाहिये वह नहीं दे सकते। अिस वाक्यमें अतिशयोक्ति नहीं है। यह तो मेरी तीव्र भावनाको बतानेवाला है।

मातृभाषाका जो अनादर हम कर रहे हैं, अुसका हमें भारी प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। अिससे आम जनताका बड़ा नुकसान हुआ है। अिस नुकसानसे अुसे बचाना मैं पढ़े-लिखे लोगोंका पहला फर्ज समझता हूं।

जो नरसिंह महेताकी भाषा है, जिसमें नदशंकरने अपना 'करणघेलो' अुपन्यास लिखा, जिसमें नवलराम, नर्मदाशंकर, मणिलाल, मलबारी आदि लेखकोंने अपना साहित्य लिखा है, जिस भाषामें स्व० राजचन्द्र कविने अमृत-वाणी सुनाओ है, जिस भाषाकी सेवा कर सकनेवाली हिन्दू, मुसलमान और पारसी जातियां हैं, जिसके बोलनेवालोंमें पवित्र साधुसन्त हो चुके हैं, जिसका अुपयोग करनेवालोंमें अमीर लोग है, जिस भाषाके बोलनेवालोंमें जहाजों द्वारा परदेशोंमें व्यापार करनेवाले व्यापारी हो चुके हैं, जिसमें मूळू माणिक और जोधा माणिककी बहादुरीकी प्रतिध्वनि आज भी काठियावाड़के बरड़ा पहाड़में गूजती है, अुस भाषाके विस्तारकी सीमा नहीं हो सकती। अैसी भाषाके द्वारा गुजराती लोग शिक्षा न लें, तो अुनसे और क्या भला होगा? अिस प्रश्नको विचारना पड़ता है, यही दुःखकी बात है।

अिस विषयको बन्द करते हुअे मैं डाक्टर प्राणजीवनदास महेताने जो लेख लिखे हैं, अुनकी तरफ आप सबका ध्यान खींचता हूं। अुनका गुजराती अनुवाद प्रकाशित हो चुका है और अुन्हें पढ़ लेनेकी मेरी आपसे सिफारिश है। अुनमें अूपरके विचारोंका समर्थन करनेवाले बहुतसे मत मिलेंगे।

मातृभाषाको शिक्षाका माध्यम बनाना अच्छा हो, तो हमें यह सोचना चाहिये कि अुस पर अमल करनेके लिअे क्या अुपाय किये जायं। दलीलें दिये बिना ये अुपाय मुझे जैसे सूझते हैं, वैसे यहां बताता हूं:

१. अंग्रेजी जाननेवाले गुजराती जान या अनजानमें आपसके व्यवहारमें अंग्रेजीका अुपयोग न करें।

२. जिन्हें अंग्रेजी और गुजराती दोनोंका अच्छा ज्ञान है, अुन्हें अंग्रेजीमें जो जो अच्छी अुपयोगी पुस्तकें या विचार हों, वे गुजरातीमें जनताके सामने रखने चाहिये।

३. शिक्षा-समितियोंको पाठ्यपुस्तकें तैयार करानी चाहिये।

४. धनवान लोगोंको जगह-जगह गुजराती द्वारा शिक्षा देनेवाले स्कूल खोलने चाहिये।

५. अूपरके कामके साथ ही परिषदों और शिक्षा-समितियोंको सरकारके पास अर्जी भेजनी चाहिये कि सारी शिक्षा मातृभाषामें ही दी जाय। अदालतों

और धारासभाओंका सारा कामकाज गुजरातीमें होना चाहिये और जनताका सब काम भी अिसी भाषामें होना चाहिये। आज यह जो रिवाज पड़ गया है कि अंग्रेजी जाननेवालेको ही अच्छी नौकरी मिल सकती है, अुसे बदल कर भाषाका भेदभाव रखे बिना योग्यताके अनुसार नौकरोंको चुना जाय। सरकारको यह अर्जी भी देनी चाहिये कि अैसे स्कूल खोले जायं, जिनमें सरकारी नौकरोंको गुजराती भाषाका जरूरी ज्ञान मिल सके।

अूपरकी योजनामें अेक आपत्ति पाओ जायगी। वह यह है कि धारासभामें मराठी, सिंधी और गुजराती सदस्य हैं और किसी समय कर्नाटकके भी हो सकते हैं। *आपत्ति बड़ी तो है, परन्तु अनिवार्य नहीं है।* तेलगू लोगोंने अिस विषयकी चर्चा शुरू की है और अिसमें शक नहीं कि किसी न किसी दिन भाषाके अनुसार नये प्रान्त बनाने ही होंगे। परन्तु जब तक अैसा न हो, धारासभाके सदस्योंको हिन्दीमें या अपनी मातृभाषामें बोलनेका अधिकार मिलना चाहिये। यह सुझाव आज हंसीके लायक मालूम हो, तो माफी मांग कर मैं अितना ही कहूंगा कि बहुतसे सुझाव शुरूमें हंसीके लायक ही मालूम होते हैं। मेरा यह मत है कि देशकी अुन्नतिका आधार शिक्षाके माध्यमके शुद्ध निर्णय पर है। अिसलिअे मुझे अपने सुझावमें बड़ा रहस्य मालूम होता है। जब मातृभाषाकी कीमत बढ़ेगी और अुसे राजभाषाका पद मिलेगा, तब अुसमें वे शक्तियां देखनेको मिलेंगी, जिनकी हमें कल्पना भी नहीं हो सकती।

जैसे हमें शिक्षाके माध्यमका विचार करना पड़ा, वैसे ही हमें राष्ट्रभाषाका भी विचार करना चाहिये। यदि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बननेवाली हो, तो अुसे अनिवार्य स्थान मिलना चाहिये।

अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है? कुछ विद्वान स्वदेशाभिमानी कहते हैं कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है या नहीं, यह प्रश्न ही अज्ञानता बताता है। अंग्रेजी तो राष्ट्रभाषा बन ही चुकी है। हमारे माननीय वाअिसरॉय साहबने जो भाषण दिया है, अुसमें तो अुन्होंने केवल अैसी आशा ही प्रकट की है। अुनका अुत्साह अुन्हें अूपर बतायी श्रेणीमें नहीं ले जाता। वाअिसरॉय साहब मानते हैं कि अंग्रेजी भाषा दिन-दिन अिस देशमें फैलेगी, हमारे घरोंमें घुसेगी और अन्तमें राष्ट्रभाषाके अूंचे पद पर पहुंचेगी। आज तो अूपर-अूपरसे देखने पर अिस विचारको समर्थन मिलता है। हमारे पढ़े-

लिखे लोगोंकी दशाको देखने हुअे अैसा मालूम पड़ता है कि अंग्रेजीके बिना हमारा कारबार बन्द हो जायगा। अैसा होने पर भी जरा गहरे जाकर देखेंगे, तो पता चलेगा कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा न हो सकती है, न होनी चाहिये।

तब फिर हम देखें कि राष्ट्रभाषाके क्या लक्षण होने चाहिये।

१. वह भाषा सरकारी नौकरोंके लिअे *आसान होनी चाहिये।*

२. अुस भाषाके द्वारा भारतका आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक कामकाज हो सके।

३. अुस भाषाको भारतके ज्यादातर लोग बोलते हों।

४. वह भाषा राष्ट्रके लिअे आसान हो।

५. अुस भाषाका विचार करते समय क्षणिक या कुछ समय तक रहनेवाली स्थिति पर जोर न दिया जाय।

अंग्रेजी भाषामें अिनमें से अेक भी लक्षण नहीं है।

पहला लक्षण मुझे अन्तमें रखना चाहिये था। परन्तु मैंने पहले अिसलिअे रखा है कि यह लक्षण अंग्रेजी भाषामें दिखाओ पड़ सकता है। ज्यादा सोचने पर हम देखेंगे कि आज भी राज्यके नौकरोंके लिअे वह आसान भाषा नहीं है। *यहांके शासनका ढांचा अिस तरहका सोचा गया है कि अंग्रेज कम होंगे,* यहां तक कि अन्तमें वाअिसरॉय और दूसरे अंगुलियों पर गिनने लायक अंग्रेज रहेंगे। अधिकतर कर्मचारी आज भी भारतीय हैं और वे दिन-दिन बढ़ते ही जायंगे। यह तो सभी मानेंगे कि अिस वर्गके लिअे भारतकी किसी भी भाषासे अंग्रेजी ज्यादा कठिन है।

दूसरा लक्षण विचारते समय हम देखते हैं कि जब तक आम लोग अंग्रेजी बोलनेवाले न हो जायं, तब तक हमारा धार्मिक व्यवहार अंग्रेजीमें *नहीं हो सकता। अिस हद तक अंग्रेजी भाषाका समाजमें फैल जाना असम्भव* मालूम होता है।

तीसरा लक्षण अंग्रेजीमें नहीं हो सकता, क्योंकि वह भारतके अधिकतर लोगोंकी भाषा नहीं है।

चौथा लक्षण भी अंग्रेजीमें नहीं है, क्योंकि सारे राष्ट्रके लिअे वह अितनी आसान नहीं है।

पांचवें लक्षण पर विचार करते समय हम देखते हैं कि अंग्रेजी [illegible] स्थिति तो यह है

कि भारतमें जनताके राष्ट्रीय काममें अंग्रेजी भाषाकी जरूरत थोड़ी ही रहेगी। अंग्रेजी साम्राज्यके कामकाजमें अुसकी जरूरत रहेगी। यह दूसरी बात है कि वह साम्राज्यके राजनीतिक कामकाज (डिप्लोमेसी) की भाषा होगी। अुस कामके लिअे अंग्रेजीकी जरूरत रहेगी। हमें अंग्रेजी भाषासे कुछ भी वैर नहीं है। हमारा आग्रह तो अितना ही है कि अुसे हदसे बाहर न जाने दिया जाय। साम्राज्यकी भाषा तो अंग्रेजी ही होगी और अिसलिअे हम अपने मालवीयजी, शास्त्रीजी, बनरजी आदिको यह भाषा सीखनेको मजबूर करेंगे और यह विश्वास रखेंगे कि ये लोग भारतकी कीर्ति विदेशोंमें फैलायेंगे। परन्तु राष्ट्रकी भाषा अंग्रेजी नहीं हो सकती। अंग्रेजीको राष्ट्रभाषा बनाना 'अेस्पेरेण्टो' दाखिल करने जैसी बात है। यह कल्पना ही हमारी कमजोरी बताती है कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है। 'अेस्पेरेण्टो' के लिअे प्रयत्न करना हमारी अज्ञानताका सूचक होगा। तो फिर कौनसी भाषा अिन पांच लक्षणोंवाली है? यह माने बिना काम नहीं चल सकता कि हिन्दी भाषामें ये सारे लक्षण मौजूद हैं।

हिन्दी भाषा मैं अुसे कहता हूं, जिसे अुत्तरमें हिन्दू और मुसलमान बोलते हैं और देवनागरी या अुर्दू (फारसी) लिपिमें लिखते हैं। अिस व्याख्याका थोड़ा विरोध किया गया है।

अैसी दलील दी जाती है कि हिन्दी और अुर्दू दो अलग भाषाअें हैं। यह दलील सही नहीं है। अुत्तर भारतमें मुसलमान और हिन्दू दोनों अेक ही भाषा बोलते हैं। भेद पढ़े-लिखे लोगोंने डाला है। यानी हिन्दू शिक्षित वर्गने हिन्दीको केवल संस्कृतमय बना डाला है और अिसलिअे कितने ही मुसलमान अुसे समझ नहीं सकते। लखनअूके मुसलमान भाअियोंने अुर्दूको फारसीसे भरकर अैसा बना दिया है कि हिन्दू अुसे समझ न सकें। ये दोनों केवल पण्डितोंकी भाषाअें हैं। आम जनतामें अुनके लिअे कोअी स्थान नहीं है। मैं अुत्तरमें रहा हूं, हिन्दू-मुसलमानोंके साथ खूब मिला-जुला हूं और मेरा हिन्दी भाषाका ज्ञान बहुत थोड़ा होने हुअे भी मुझे अुन लोगोंके साथ व्यवहार रखनेमें जरा भी कठिनाअी नहीं पड़ी। जो भाषा अुत्तरी भारतमें आम लोग बोलते हैं, अुसे अुर्दू कहिये या हिन्दी, दोनों अेक ही हैं। फारसी लिपिमें लिखिये तो वह अुर्दू भाषाके नामसे पहचानी जायगी और वही वाक्य नागरी लिपिमें लिखिये तो वह हिन्दी कहलायेगी।

अब रहा लिपिका झगड़ा। अभी कुछ समय तक तो मुसलमान लड़के अुर्दू लिपिमें लिखेंगे और हिन्दू अधिकतर देवनागरीमें लिखेंगे। 'अधिकतर' अिसलिअे कहता हूं कि हजारों हिन्दू आज भी अपनी हिन्दी अुर्दू लिपिमें लिखते हैं और कितने ही तो देवनागरी लिपि जानते भी नहीं हैं। अन्तमें जब हिन्दू-मुसलमानोंमें अेक-दूसरेके प्रति शंकाकी भावना नहीं रह जायगी और अविश्वासके सारे कारण दूर हो जायंगे, तब जिस लिपिमें ज्यादा जोर रहेगा, वह लिपि ज्यादा लिखी जायगी और वही राष्ट्रीय लिपि हो जायगी। अिस बीच जिन मुसलमान भाअियों और हिन्दुओंको अुर्दू लिपिमें अर्जी लिखनी होगी, अुनकी अर्जी राष्ट्रीय जगहोंमें स्वीकार करनी पड़ेगी।

ये पांच लक्षण रखनेमें हिन्दीकी होड़ करनेवाली और कोअी भाषा नहीं है। हिन्दीके बाद दूसरा दर्जा बंगलाका है। फिर भी बंगाली लोग बंगालके बाहर हिन्दीका ही अुपयोग करते हैं। हिन्दी बोलनेवाले जहां जाते हैं, वहां हिन्दीका ही अुपयोग करते हैं और अिससे किसीको अचंभा नहीं होता। हिन्दीके धर्मोपदेशक और अुर्दूके मौलवी सारे भारतमें अपने भाषण हिन्दीमें ही देते हैं। और अपढ़ जनता अुन्हें समझ लेती है। जहां अपढ़ गुजराती भी अुत्तरमें जाकर थोड़ी-बहुत हिन्दीका अुपयोग कर लेता है, वहां अुत्तरका 'भैया' बम्बअीके सेठकी नौकरी करते हुअे भी गुजराती बोलनेसे अिनकार करता है और सेठ 'भैया' के साथ टूटी-फूटी हिन्दी बोल लेता है। मैंने देखा है कि ठेठ द्राविड़ प्रान्तमें भी हिन्दीकी आवाज सुनाअी देती है। यह कहना ठीक नहीं कि मद्रासमें तो अंग्रेजीसे ही काम चलता है। वहां भी मैंने अपना सारा काम हिन्दीसे चलाया है। सैकड़ों मद्रासी मुसाफिरोंको मैंने दूसरे लोगोंके साथ हिन्दीमें बोलते सुना है। अिसके सिवा, मद्रासके मुसलमान भाअी तो अच्छी तरह हिन्दी बोलना जानते हैं। यहां यह ध्यानमें रखना चाहिये कि सारे भारतके मुसलमान अुर्दू बोलते हैं और अुनकी संख्या सारे प्रान्तोंमें कुछ कम नहीं है।

अिस तरह हिन्दी भाषा राष्ट्रभाषा बन चुकी है। हमने वर्षों पहले अुसका राष्ट्रभाषाके रूपमें अुपयोग किया है। अुर्दू भी हिन्दीकी अिस शक्तिसे ही पैदा हुअी है।

मुसलमान बादशाह भारतमें फारसी-अरबीको राष्ट्रभाषा नहीं बना सके। अुन्होंने हिन्दीके व्याकरणको मानकर अुर्दू [illegible] काममें ली और फारसी

शब्दोंका ज्यादा अुपयोग किया। परन्तु आम लोगोंके साथका व्यवहार अुनसे विदेशी भाषाके द्वारा न हो सका। यह हालत अंग्रेज अधिकारियोंसे छिपी हुअी नहीं है। जिन्हें लडाकू वर्गोंका अनुभव है, वे जानते हैं कि सैनिकोंके लिअे चीजोंके नाम हिन्दी या अुर्दूमें रखने पड़ते हैं।

अिस तरह हम देखते हैं कि हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है। फिर भी मद्रासके पढ़े-लिखोंके लिअे यह सवाल कठिन है।

दक्षिणी, बंगाली, सिंधी और गुजराती लोगोंके लिअे तो वह बड़ा आसान है। कुछ महीनोंमें वे हिन्दी पर अच्छा काबू करके राष्ट्रीय कामकाज अुसमें कर सकते हैं। तामिल भाषियोंके लिअे यह अुतना आसान नहीं। तामिल आदि द्राविड़ी हिस्सोंकी अपनी भाषायें हैं और अुनकी बनावट और अुनका व्याकरण संस्कृतसे अलग है। शब्दोंकी अेकताके सिवा और कोअी अेकता संस्कृत भाषाओं और द्राविड भाषाओंमें नहीं पाअी जाती। परन्तु यह कठिनाअी सिर्फ आजके पढ़े-लिखे लोगोंके लिअे ही है। अुनके स्वदेशाभिमान पर भरोसा करने और विशेष प्रयत्न करके हिन्दी सीख लेनेकी आशा रखनेका हमें अधिकार है। भविष्यमें तो यदि हिन्दीको अुसका राष्ट्रभाषाका पद मिले, तो हर मद्रासी स्कूलमें हिन्दी पढाअी जायगी और मद्रास और दूसरे प्रान्तोंके बीच विशेष परिचय होनेकी संभावना बढ जायगी। अंग्रेजी भाषा द्राविड जनतामें नहीं घुस सकी। पर हिन्दीको घुसनेमें देर नहीं लगेगी। तेलगू जाति तो आज भी यह प्रयत्न कर रही है। यदि यह परिषद अिस बारेमें अेक विचार बना सके कि राष्ट्रभाषा कैसी होनी चाहिये, तब तो कामको पूरा करनेके अुपाय करनेकी जरूरत मालूम होगी। जैसे अुपाय मातृभाषाके बारेमें बताये गये हैं, वैसे ही, जरूरी परिवर्तनके साथ, राष्ट्रभाषाके बारेमें भी लागू हो सकते हैं। गुजरातीको शिक्षाका माध्यम बनानेमें तो खास तौर पर हमीको प्रयत्न करना पड़ेगा। परंतु राष्ट्रभाषाके आन्दोलनमें सारा हिन्द भाग लेगा।

हमने शिक्षाके माध्यमका, राष्ट्रभाषाका और शिक्षामें अंग्रेजीके स्थानका विचार कर लिया। अब यह सोचना बाकी रहा कि हमारी पाठशालाओंमें दी जानेवाली शिक्षामें कमी है या नहीं।

अिस विषयमें कोअी मतभेद नहीं है। सरकार और लोकमत सब आजकी पद्धतिको बुरी बताते हैं। अिस बारेमें काफी मतभेद है कि क्या

ग्रहण करने लायक है और क्या छोड़ने लायक है। अिन मतभेदोंकी चर्चामें पड़ने जितना मेरा ज्ञान नहीं है। मैंने जो विचार बनाये हैं, अुन्हें अिस परिषदके आगे रख देनेकी धृष्टता करता हूं।

शिक्षा मेरा क्षेत्र नहीं कहा जा सकता। अिसलिअे मुझे अिस विषयमें कुछ भी कहते संकोच होता है। जब कोअी अनधिकारी स्त्री या पुरुष अपने अधिकारसे बाहर बात करता है, तो मैं अुसका खंडन करनेको तैयार हो जाता हूं और अधीर बन जाता हूं। वैद्य वकील बननेका प्रयत्न करे, तो वकीलको गुस्सा आना ठीक ही है। अिसी तरह मैं मानता हूं कि शिक्षाके बारेमें जिसे कुछ भी अनुभव न हो, अुसे अुसकी टीका करनेका कोअी अधिकार नहीं है। अिसलिअे दो शब्द मुझे अपने अधिकारके बारेमें कहने पड़ेंगे।

आधुनिक शिक्षा पर मैं पच्चीस वर्ष पहलेसे ही विचार करने लगा था। मेरे और मेरे भाअी-बहनोंके बच्चोंकी शिक्षाकी जिम्मेदारी मेरे सिर आअी। हमारे स्कूलोंकी कमियां मुझे मालूम थीं, अिसलिअे मैंने अपने लड़कों पर प्रयोग शुरू किये। मैंने अुन्हें भटकाया भी जरूर। किसीको कहीं, तो किसीको कहीं भेजा। मैंने स्वयं भी किसी किसीको पढ़ाया। मैं दक्षिण अफ्रीका गया। वहां भी मेरा असंतोष ज्योंका त्यों बना रहा और मुझे अिस बारेमें विशेष विचार करना पड़ा। वहां 'भारतीय शिक्षा-समाज' का कामकाज बहुत समय तक मेरे हाथमें रहा। मैंने अपने लड़कोंको स्कूलमें शिक्षा नहीं दिलवाअी। मेरे सबसे बड़े लड़केने मेरी अलग अलग अवस्थाअें देखी थीं। मुझसे निराश होकर अुसने कुछ समय तक अहमदाबादके स्कूलमें शिक्षा पाअी। परन्तु अुसे ऐसा नहीं लगा कि अिससे अुसे लाभ हुआ। मैं ऐसा मानता हूं कि जिन्हें मैंने स्कूल नहीं भेजा, अुनका नुकसान नहीं हुआ और अुन्हें अच्छी शिक्षा मिली है। अुनकी कमियोंको मैं देख सकता हूं, परन्तु अिसका कारण यही है कि वे मेरे प्रयोगोंकी शुरुआतमें फलस्वरूप बड़े हुअे। अिसलिअे सारे प्रयोगोंका सिलसिला भंग होने पर भी वे लोग अुसमें होनेवाले परिवर्तनोंके शिकार हो गये। दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रहके समय मेरे साथ लगभग पचास लड़के पढ़ते थे। अिस स्कूलको अधिकतर रखना मेरे हाथों हुअी थी। अुसका दूसरे स्कूलों या सरकारी पद्धतिके साथ कोअी संबंध न था। यहां भी ऐसा ही प्रयत्न चल रहा है और आदर्श स्कूल

और दूसरे विद्वानोंका आशीर्वाद लेकर अहमदाबादमें अेक राष्ट्रीय स्कूल खोला है। अुसे पांच महीने हुअे हैं। गुजरात कालेजके भूतपूर्व प्रो० साकलचंद शाह अुसके आचार्य हैं। अुन्होंने प्रो० गज्जरकी देखरेखमें शिक्षा पाअी है और अुनके साथ दूसरे भी भाषाप्रेमी लोग हैं। अिस योजनाके लिअे खास तौर पर मैं जिम्मेदार हूं। परन्तु अुसमें अिन सब शिक्षकोंकी सम्मति है और अुन्होंने अपनी जरूरतके लायक वेतन लेकर अिस कामके लिअे अपना जीवन अर्पण किया है। परिस्थितिवश मैं स्वयं अिस स्कूलमें पढ़ानेका काम नहीं कर सकता, परंतु अुसके काममें मेरा मन हमेशा डूबा रहता है। अिस तरह मेरा काम तो सिर्फ ढांचा बनानेवालेका है, पर मैं मानता हूं कि वह बिलकुल विचार-रहित नहीं है। मैं चाहता हूं कि यह बात ध्यानमें रखकर आप लोग मेरी टीका पर विचार करेंगे।

मुझे सदा अैसा लगता रहा है कि आजकी शिक्षामें हमारी कौटुम्बिक व्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया गया। अुसकी रचना करनेमें हमारी जरूरतोंका विचार नहीं किया गया यह स्वाभाविक था।

अंग्रेजोंने हमारे साहित्यका तिरस्कार किया, हमें वहमी समझा। जिन लोगोंने हमारी शिक्षाकी योजना बनाअी, अुनमें से अधिकांशको हमारे धर्मके बारेमें गहरा अज्ञान था। कितनों ही ने अुसे अधर्म समझा। हमारे धर्मग्रंथ वहमोंके समूह माने गये। हमारी सभ्यता दोषोंसे भरी मालूम हुअी। यह समझा गया कि चूंकि हम गिरी हुअी प्रजा हैं, अिसलिअे हमारी व्यवस्थामें खूब दोष होने चाहिये। अिससे शुद्ध भाव होते हुअे भी अुन्होंने गलत विधान बनाया। नअी रचना करनी थी, अिसलिअे योजकोंने आसपासके वातावरण पर ही ध्यान दिया। नअी रचना अिस विचारसे की गअी कि राज्य करने-वालोंकी मददके लिअे वकील, डाक्टर और क्लर्कोंकी जरूरत होगी, हम सबको नये ज्ञानकी जरूरत होगी। अिसलिअे हमारे जीवनका विचार किये बिना ही पुस्तकें तैयार की गअीं और अंग्रेजी पढ़ाअीके अनुसार पोथेके पोथे लादी रख दी गअी।

समझदारोंने कहा है कि अितिहास-भूगोल पढ़ाना हो, तो पहले बच्चोंको घरका अितिहास-भूगोल सिखाना चाहिये। मुझे याद है कि मेरे बचपनमें अिंग्लैंडकी 'काअुंटियां' रटना पड़ा था। जो विषय बड़ा मजेदार है, वही मेरे लिअे जहरके बराबर हो गया था। अितिहासमें मुझे कुछ

दिलानेवाली कोअी बात नहीं जान पड़ी। अितिहास स्वदेशाभिमान सिखानेका साधन होता है। हमारे स्कूलके अितिहास सिखानेके ढंगमें मुझे अिस देशके बारेमें अभिमान होनेका कोअी कारण नहीं मिला। अुसे सीखनेके लिअे मुझे दूसरी ही किताबें पढ़नी पड़ी हैं।

अंकगणित आदि विषयोंमें भी देशी पद्धतिको कम ही स्थान दिया गया है। पुरानी पद्धति लगभग छोड़ दी गअी है। हिसाब सिखानेकी देशी पद्धति मिट जानेसे हमारे बुजुर्गोंमें हिसाब कर लेनेकी जो फुरती थी वह हममें नहीं रही।

विज्ञान रूखा है। अुसके ज्ञानसे हमारे बच्चे कोअी लाभ नहीं अुठा पाते। खगोल जैसे शास्त्र, जो बच्चोंको आकाश दिखाकर सिखाये जा सकते हैं, सिर्फ पुस्तकोंसे पढ़ाये जाते हैं। मैं नहीं जानता कि स्कूल छोड़नेके बाद किसी विद्यार्थीको पानीकी बूंदका पृथक्करण करना आता होगा।

स्वास्थ्यकी शिक्षा कुछ भी नहीं दी जाती, यह कहनेमें अतिशयोक्ति नहीं। साठ सालकी शिक्षाके बाद भी हमें हैजा, प्लेग आदि रोगोंसे बचना नहीं आया। मैं अिसे हमारी शिक्षा पर सबसे बड़ा आक्षेप समझता हूं कि हमारे डाक्टर अिन रोगोंको दूर नहीं कर सके। हमारे सैकड़ों घर देखने पर भी मुझे यह अनुभव नहीं हुआ कि अुनमें स्वास्थ्यके नियमोंने प्रवेश किया है। सांप काटने पर क्या किया जाय, यह हमारे ग्रेज्युअेट बता सकेंगे अिसमें मुझे पूरा शक है। यदि हमारे डाक्टरोंको छोटी अुमरसे डाक्टरी सीखनेका मौका मिला होता, तो आज अुनकी जो दीन स्थिति हो रही है वह न होती। यह हमारी शिक्षाका भयंकर परिणाम है। दुनियाके दूसरे सब हिस्सोंके लोगोंने अपने यहांसे महामारीको निकाल बाहर किया है, पर हमारे यहां वह घर कर रही है और हमारे भारतीय बेमौत मरते जा रहे हैं। यदि अिसका कारण हमारी गरीबी बताया जाय, तो अिस बातका जवाब भी शिक्षा-विभागकी तरफसे मिलना चाहिये कि साठ सालकी शिक्षाके बाद भी जनतामें गरीबी क्यों है।

अब अिन विषयोंकी शिक्षा बिलकुल नहीं दी जाती, अुनका विचार करें। शिक्षाका मुख्य हेतु चारित्र्य होना चाहिये। धर्मके बिना चरित्र कैसे बनता है, यह मुझे नहीं सूझता। हमें आगे चलकर पता चलेगा कि 'अतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः' होते जा रहे हैं। अिस बारेमें मैं ज्यादा नहीं

लिख सकता। परंतु सैकड़ो शिक्षकोसे मैं मिला हू। अुन्होंने अुसासे लेकर मुझे अपने अनुभव सुनाये हैं। अिसका गभीर विचार अिस परिषदको करना ही पड़ेगा। यदि विद्यार्थियोकी नैतिकता चली गअी, तो सब कुछ चला गया समझिये।

अिस देशमें ८५ से ९० फीसदी स्त्री-पुरुष खेतीके धधेमें लगे हुअे है। खेतीके धंधेका ज्ञान जितना हो अुतना ही थोड़ा समझना चाहिये। फिर भी अुसका हमारी हाअीस्कूल तककी पढ़ाअीमें स्थान ही नही है। अैसी विषम स्थिति यही निभ सकती है।

बुनाअीका धंधा नष्ट होता जा रहा है। किसानोके लिअे यह फुर-सतका धंधा था। अिस धंधेका हमारी पढ़ाअीमें स्थान नहीं है। हमारी शिक्षा सिर्फ क्लर्क पैदा करती है। और अुसका ढंग अैसा है कि सुनार, लुहार या मोची जो भी स्कूलमें फस जाय, वह क्लर्क बन जाता है। हम सबकी यह कामना होनी चाहिये कि अच्छी शिक्षा सभीको मिले। परंतु शिक्षित होकर सभी क्लर्क बन जायं तब?

हमारी शिक्षामें **क्षत्रिय कलाका** स्थान नहीं है। मेरे खुदके लिअे यह दुःखकी बात नही। मैंने तो अिसे अपने-आप मिला हुआ सुख समझ लिया है। लेकिन जनताको हथियार चलाना सीखना है। जिसे सीखना हो अुसे अिसका मौका मिलना चाहिये। परंतु यह तो शिक्षाक्रममें भुला ही दिया गया दीखता है।

संगीतके लिअे वही स्थान नही दीखता। संगीतका हम पर बहुत असर होता है। अिसका हमें ठीक-ठीक खयाल नही रहा, नही तो हम किसी न किसी तरह अपने बच्चोंको संगीत जरूर सिखाते। वेदोकी रचना संगीतके आधार पर हुअी पाअी जाती है। मधुर संगीत आत्माके तापको शात कर सकता है। हजारों आदमियोंकी सभामें हम कभी-कभी खलबलाहट देखते हैं। वह खलबलाहट हजारो कठोंसे अेकस्वरमें कोअी राष्ट्रीय गीत गाया जाय तो बन्द हो सकती है। यदि शौर्य पैदा करनेके लिअे हजारों बालक अेकस्वरसे वीररसकी कविता गा सकें, तो यह कोअी छोटी-मोटी बात नहीं है। खलासी और दूसरे मजदूर 'हरिहर', 'अल्लाबेली' जैसे नारे अेक आवाजसे लगाते है और अुनके सहारे अपना काम कर सकते है। यह संगीतकी शक्तिका सबूत है। अंग्रेज मित्रोको मैंने गाना गाकर अपनी ठण्ड अुड़ाते

देखा है। हमारे बालक नाटकके गाने चाहे जैसे और चाहे जब सीख लेते हैं और बेसुरे हारमोनियम वगैरा बाजे बजाते हैं। जिससे अुन्हें नुकसान होता है। अगर संगीतकी शुद्ध शिक्षा मिले, तो नाटकके गाने गानेमें और बेसुरे राग अलापनेमें अुनका समय नष्ट न हो। जैसे गवैया बेसुरा या बेसमय नहीं गाता, वैसे ही शुद्ध संगीत सीखनेवाला गन्दे गाने नहीं गायेगा। जनताको जगानेके लिअे संगीतको स्थान मिलना चाहिये। जिस विषय पर डाक्टर आनन्द कुमारस्वामीके विचार मनन करने योग्य हैं।

व्यायाम शब्दमें खेल-कूद वगैराको शामिल किया गया है। परंतु अिसका भी किसीने भाव नहीं पूछा। देशी खेल छोड़ दिये गये हैं और टेनिस, क्रिकेट और फुटबॉलका बोलबाला हो गया है। यह माननेमें कोअी हर्ज नहीं कि अिन तीनों खेलोंमें रस आता है। परंतु हम पश्चिमी चीजोंके मोहमें न फंस गये होते, तो अितने ही मजेदार और बिना खर्चके खेलोंको, जैसे गेंदबल्ला, गिल्लीडंडा, खो-खो, साततालो, कबड्डी, हुतूतूतू आदिको न छोड़ते। कसरत, जिसमें आठों अंगोंको पूरी तालीम मिलती है और जिसमें बड़ा रहस्य भरा है, तथा कुश्तीके अखाड़े लगभग मिट गये हैं। मुझे लगता है कि यदि किसी पश्चिमी चीजकी हमें नकल करनी चाहिये, तो वह 'ड्रिल' या कवायद है। अेक मित्रने टीका की थी कि हमें चलना नहीं आता। और अेक साथ ठीक ढंगसे चलना तो हम बिलकुल नहीं जानते। हममें यह शक्ति तो है ही नहीं कि हजारों आदमी अेकताल और शान्तिसे किसी भी हालतमें दो-दो चार-चारकी कतार बनाकर चल सकें। अैसी कवायद सिर्फ लड़ाअीमें ही काम आती है सो बात नहीं। बहुतेरे परोपकारके कामोंमें भी कवायद बहुत अुपयोगी सिद्ध हो सकती है; जैसे आग बुझाने, डूबे हुओंको बचाने, बीमारोंको डोलीमें ले जाने आदिमें कवायद बहुत ही कीमती साधन है। जिस तरह हमारे स्कूलोंमें देशी खेल, देशी कसरतें और पश्चिमी ढंगकी कवायद जारी करनेकी जरूरत है।

जैसे पुरुषोंकी शिक्षाकी पद्धति दोषपूर्ण है, वैसे ही स्त्री-शिक्षाकी भी है। भारतमें स्त्री-पुरुषोंका क्या संबंध है, स्त्रीका आम जनतामें क्या स्थान है, अिन बातोंका विचार नहीं किया गया।

प्रारंभिक शिक्षाका बहुतसा भाग दोनों वर्गोंके लिअे अेकसा हो सकता है। जिसके सिवा और सब बातोंमें बहुत असमानता है। पुरुष और स्त्रीमें

जैसे कुदरतने भेद रखा है, वैसे ही शिक्षामें भी भेदकी आवश्यकता है। संसारमें दोनों अेकसे हैं। परन्तु अुनके काममें बटवारा पाया जाता है। घरमें राज करनेका अधिकार स्त्रीका है। बाहरकी व्यवस्थाका स्वामी पुरुष है। पुरुष आजीविकाके साधन जुटानेवाला है, स्त्री संग्रह और खर्च करनेवाली है। स्त्री बच्चोंको पालनेवाली है, अुनकी विधाता है, अुस पर बच्चोंके चरित्रका आधार है, वह बच्चोंकी शिक्षिका है, अिसलिअे वह प्रजाकी माता है। पुरुष प्रजाका पिता नहीं। अेक खास अुम्रके बाद पिताका असर पुत्र पर कम रहता है। परन्तु मा अपना दरजा कभी नहीं छोड़ती। बच्चा आदमी बन जाने पर भी माके सामने बच्चेकी तरह व्यवहार करता है। पिताके साथ वह अैसा संबंध नहीं रख सकता।

यह [illegible] क हो, तो स्त्रीके लिअे स्वतंत्र कमाअी [illegible] ाजमें स्त्रियोंको तार-मास्टर या टाअिपिस्ट [illegible] हो, अुसकी व्यवस्था बिगड़ी हुअी [illegible] त्तिका दिवाला निकाल दिया है और [illegible] लगी है अैसी मेरी राय है।

[illegible] रेमें और नीच दशामें रखें तो [illegible] ो पुरुषका काम सौंपना निर्बल- [illegible] बराबर है।

[illegible] लिअे दूसरी ही तरहकी [illegible] स्थाका, गर्भकालकी सार- [illegible] नेकी जरूरत है। यह योजना [illegible] नया विषय है। अिस बारेमें [illegible] नवान स्त्रियों और अनुभवी [illegible] जना बनवानेकी जरूरत है।

[illegible] वाली समिति कन्याकालसे शुरू होने- [illegible] गा। परंतु जो कन्याअें बचपनमें ही ब्याह दी [illegible] संख्याका भी तो पार नहीं है। फिर, यह संख्या प्रतिदिन [illegible] जा रही है। शादीके बाद तो अुनका पता ही नहीं चलता। अुनके बारेमें मैंने अपने जो विचार 'भगिनी समाज पुस्तक-माला' की पहली पुस्तककी प्रस्तावनामें दिये हैं, वे ही यहां अुद्धृत करता हूं :

जैसे कुदरतने भेद रखा है, वैसे ही शिक्षामें भी भेदकी आवश्यकता है। संसारमें दोनों अेकसे हैं। परन्तु अुनके काममें बटवारा पाया जाता है। घरमें राज करनेका अधिकार स्त्रीका है। बाहरकी व्यवस्थाका स्वामी पुरुष है। पुरुष आजीविकाके साधन जुटानेवाला है, स्त्री संग्रह और खर्च करनेवाली है। स्त्री बच्चोंको पालनेवाली है, अुनकी विधाता है, अुस पर बच्चोंके चरित्रका आधार है, वह बच्चोंकी शिक्षिका है, अिसलिअे वह प्रजाकी माता है। पुरुष प्रजाका पिता नहीं। अेक खास अुम्रके बाद पिताका असर पुत्र पर कम रहता है। परन्तु मा अपना दरजा कभी नहीं छोड़ती। बच्चा आदमी बन जाने पर भी माके सामने बच्चेकी तरह व्यवहार करता है। पिताके साथ वह अैसा संबंध नहीं रख सकता।

यह योजना कुदरती हो, ठीक हो, तो स्त्रीके लिअे स्वतंत्र कमाओी करनेका प्रबंध नहीं होगा। जिस समाजमें स्त्रियोंको तार-मास्टर या टाअिपिस्ट या कम्पोजिटरका काम करना पड़ता हो, अुसकी व्यवस्था बिगड़ी हुआी होनी चाहिये। अुस जातिने अपनी शक्तिका दिवाला निकाल दिया है और वह जाति अपनी पूंजी पर गुजर करने लगी है अैसी मेरी राय है।

अिसलिअे अेक तरफ हम स्त्रीको अंधेरेमें और नीच दशामें रखें तो यह गलत है। अिसी तरह दूसरी तरफ स्त्रीको पुरुषका काम सौंपना निर्बलताकी निशानी है और स्त्री पर जुल्म करनेके बराबर है।

अिसलिअे अेक खास अुम्रके बाद स्त्रियोंके लिअे दूसरी ही तरहकी शिक्षाका प्रबंध होना चाहिये। अुन्हें गृह-व्यवस्थाका, गर्भकालकी सार-संभालका, बालकोंके पालन-पोषण आदिका ज्ञान देनेकी जरूरत है। यह योजना बनानेका काम बहुत कठिन है। शिक्षाके क्रममें यह नया विषय है। अिस बारेमें खोज और निर्णय करनेके लिअे चरित्रवान और ज्ञानवान स्त्रियों और अनुभवी पुरुषोंकी समिति कायम करके अुससे कोअी योजना बनवानेकी जरूरत है।

अूपर बताअी हुअी काम करनेवाली समिति कन्याकालसे शुरू होनेवाली शिक्षाका अुपाय खोजेगी। परंतु जो कन्याअें बचपनमें ही ब्याह दी गअी हों, अुनकी संख्याका भी तो पार नहीं है। फिर, यह संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शादीके बाद तो अुनका पता ही नहीं चलता। अुनके बारेमें मैंने अपने जो विचार 'भगिनी समाज पुस्तक-माला' की पहली पुस्तककी प्रस्तावनामें दिये हैं, वे ही यहां अुद्धृत करता हूं:

जैसे कुदरतने भेद रखा है, वैसे ही शिक्षामें भी भेदकी आवश्यकता है। संसारमें दोनों अेकसे हैं। परन्तु अुनके काममें बटवारा पाया जाता है। घरमें राज करनेका अधिकार स्त्रीका है। बाहरकी व्यवस्थाका स्वामी पुरुष है। पुरुष आजीविकाके साधन जुटानेवाला है, स्त्री संग्रह और खर्च करनेवाली है। स्त्री बच्चोंको पालनेवाली है, अुनकी विधाता है, अुस पर बच्चोंके चरित्रका आधार है, वह बच्चोंकी शिक्षिका है, अिसलिअे वह प्रजाकी माता है। पुरुष प्रजाका पिता नहीं। अेक खास अुम्रके बाद पिताका असर पुत्र पर कम रहता है। परन्तु मां अपना दरजा कभी नहीं छोड़ती। बच्चा आदमी बन जाने पर भी माके सामने बच्चेकी तरह व्यवहार करता है। पिताके साथ वह अैसा संबंध नहीं रख सकता।

यह योजना कुदरती हो, ठीक हो, तो स्त्रीके लिअे स्वतंत्र कमाअी करनेका प्रबंध नहीं होगा। जिस समाजमें स्त्रियोंको तार-मास्टर या टाअिपिस्ट या कम्पोजिटरका काम करना पड़ता हो, अुसकी व्यवस्था बिगड़ी हुअी होनी चाहिये। अुस जातिने अपनी शक्तिका दिवाला निकाल दिया है और वह जाति अपनी पूंजी पर गुजर करने लगी है अैसी मेरी राय है।

अिसलिअे अेक तरफ हम स्त्रीको अंधेरेमें और नीच दशामें रखें तो यह गलत है। अिसी तरह दूसरी तरफ स्त्रीको पुरुषका काम सौंपना निर्बल-ताकी निशानी है और स्त्री पर जुल्म करनेके बराबर है।

अिसलिअे अेक खास अुम्रके बाद स्त्रियोंके लिअे दूसरी ही तरहकी शिक्षाका प्रबंध होना चाहिये। अुन्हें गृह-व्यवस्थाका, गर्भकालकी सार-संभालका, बालकोंके पालन-पोषण आदिका ज्ञान देनेकी जरूरत है। यह योजना बनानेका काम बहुत कठिन है। शिक्षाके क्रममें यह नया विषय है। अिस बारेमें खोज और निर्णय करनेके लिअे चरित्रवान और ज्ञानवान स्त्रियों और अनुभवी पुरुषोंकी समिति कायम करके अुससे कोअी योजना बनवानेकी जरूरत है।

अूपर बताअी हुअी काम करनेवाली समिति कन्याकालसे शुरू होने-वाली शिक्षाका अुपाय खोजेगी। परन्तु जो कन्याअें बचपनमें ही ब्याह दी गअी हों, अुनकी संख्याका भी तो पार नहीं है। फिर, यह संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शादीके बाद तो अुनका पता ही नहीं चलता। अुनके बारेमें मैंने अपने जो विचार 'भगिनी समाज पुस्तक-माला'की पहली पुस्तककी प्रस्तावनामें दिये हैं, वे ही यहां अुद्धृत करता हूं :

व्यायाम शब्दमें खेल-कूद वगैराको शामिल किया गया है। परंतु अिसका भी किसीने भाव नहीं पूछा। देशी खेल छोड़ दिये गये हैं और टेनिस, क्रिकेट और फुटबॉलका बोलबाला हो गया है। यह माननेमें कोअी हर्ज नहीं कि अिन तीनों खेलोंमें रस आता है। परंतु हम पश्चिमी चीजोंके मोहमें न फंस गये होते, तो अितने ही मजेदार और बिना खर्चके खेलोंको, जैसे गेंदबल्ला, गिल्लीडंडा, खो-खो, सातताली, कबड्डी, हुतूतूतू आदिको न छोड़ते। कसरत, जिसमें आठों अंगोंको पूरी तालीम मिलती है और जिसमें बड़ा रहस्य भरा है, तथा कुश्तीके अखाड़े लगभग मिट गये हैं। मुझे लगता है कि यदि किसी पश्चिमी चीजकी हमें नकल करनी चाहिये, तो वह 'ड्रिल' या कवायद है। अेक मित्रने टीका की थी कि हमें चलना नहीं आता। और अेक साथ ठीक ढंगसे चलना तो हम बिलकुल नहीं जानते। हममें यह शक्ति तो है ही नहीं कि हजारों आदमी अेकताल और शान्तिसे किसी भी हालतमें दो-दो चार-चारकी कतार बनाकर चल सकें। अैसी कवायद सिर्फ लड़ाअीमें ही काम आती है सो बात नहीं। बहुतेरे परोपकारके कामोंमें भी कवायद बहुत अुपयोगी सिद्ध हो सकती है; जैसे आग बुझाने, डूबे हुओंको बचाने, बीमारोंको डोलीमें ले जाने आदिमें कवायद बहुत ही कीमती साधन है। अिस तरह हमारे स्कूलोंमें देशी. [illegible] कसरतें और पश्चिमी ढंगकी-कवायद जारी करनेकी

देता है। हमारे बालक नाटकके गाने चाहे जैसे और चाहे जब सीख ले
हैं और बेसुरे हारमोनियम वगैरा बाजे बजाते हैं। अिससे अुन्हें नुकसा
होता है। अगर संगीतकी शुद्ध शिक्षा मिले, तो नाटकके गाने गानेमें औ
बेसुरे राग अलापनेमें अुनका समय नष्ट न हो। जैसे गवैया बेसुरा
बेसमय नहीं गाता, वैसे ही शुद्ध संगीत सीखनेवाला गन्दे गाने नहीं गायेगा
जनताको जगानेके लिअे संगीतको स्थान मिलना चाहिये। अिस विषय प
डाक्टर आनन्द कुमारस्वामीके विचार मनन करने योग्य हैं।

व्यायाम शब्दमें खेल-कूद वगैराको शामिल किया गया है। परंतु अिस
भी किसीने भाव नहीं पूछा। देशी खेल छोड़ दिये गये हैं और टेनिस
क्रिकेट और फुटबॉलका बोलबाला हो गया है। यह माननेमें कोअी हर्ज
नहीं कि अिन तीनों खेलोंमें रस आता है। परंतु हम पश्चिमी चीजों
मोहमें न फंस गये होते, तो अितने ही मजेदार और बिना खर्चके खेलोंको
जैसे गेंदबल्ला, गिल्लीडंडा, खो-खो, सातताली, कबड्डी, हुतूतू आदिको
छोड़ते। कसरत, जिसमें आठों अंगोंको पूरी तालीम मिलती है और जिस
बड़ा रहस्य भरा है, तथा कुश्तीके अखाड़े लगभग मिट गये हैं। मुझे लग
है कि यदि किसी पश्चिमी चीजकी हमें नकल करनी चाहिये, तो वह 'ड्रि
या कवायद है। अेक मित्रने टीका की थी कि हमें चलना नहीं आता। औ
अेक साथ ठीक ढंगसे चलना तो हम बिलकुल नहीं जानते। हममें यह शक्ति
तो है ही नहीं कि हजारों आदमी अेकताल और शान्तिसे सिपाही
हालतमें दो-दो चार-चारकी कतार बनाकर चल सकें। अैसी कवायद सि
लड़ाअीमें ही काम आती है सो बात नहीं। बहुतेरे परोपकारके कामोंमें भी
कवायद बहुत अुपयोगी सिद्ध हो सकती है; जैसे आग बुझाने, डूबे हुओंको
बचाने, बीमारोंको डोलीमें ले जाने आदिमें कवायद बहुत ही कीमती साबित
है। अिस तरह हमारे स्कूलोंमें देशी खेल, देशी कसरतें और पश्चिमी ढंगकी
कवायद जारी करनेकी जरूरत है।

जैसे पुरुषोंकी शिक्षाकी पद्धति दोषपूर्ण है, वैसे ही स्त्री-शिक्षाकी भी
है। भारतमें स्त्री-पुरुषोंका क्या सबंध है, स्त्रीका आम जनतामें क्या स्थान है,
अिन बातोंका विचार नहीं किया गया।

प्रारंभिक शिक्षाका बहुतसा भाग दोनों वर्गोंके लिअे अेकसा हो सकता
है। किन्तु शिक्षा और सब बातोंमें बहुत असमानता है। पुरुष और स्त्री

"स्त्री-शिक्षाको हम केवल कन्या-शिक्षासे ही पूरा नहीं कर सकेंगे। हजारों लड़कियां बारह सालकी अुम्रमें ही बाल-विवाहका शिकार बनकर हमारी दृष्टिसे ओझल हो जाती हैं। वे गृहिणी बन जाती हैं! यह पापी रिवाज जब तक हममें से नहीं मिटेगा, तब तक पुरुषोंको स्त्रियोंका शिक्षक बनना सीखना पड़ेगा। अुनकी अिस विषयकी शिक्षामें हमारी बहुतसी आशायें छिपी हुअी हैं। हमारी स्त्रियां हमारे विषयभोगकी चीज और हमारी रसोअिन न रहकर हमारी जीवन-सहचरी, हमारी अर्धांगिनी और हमारे सुख-दुःखकी साझीदार न बनेंगी, तब तक हमारे सारे प्रयत्न बेकार जान पड़ते हैं। कोअी कोअी अपनी स्त्रीको जानवरके बराबर समझते हैं। अिस स्थितिके लिअे कुछ संस्कृतके वचन और तुलसीदासजीका यह प्रसिद्ध दोहा बहुत जिम्मेदार है। तुलसीदासजीने अेक जगह लिखा है: 'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़नके अधिकारी।' तुलसीदासजीको मैं पूज्य मानता हूं। परन्तु मेरी पूजा अंधी नहीं है। या तो अूपरका दोहा क्षेपक है, अथवा यदि वह तुलसीदासजीका ही हो, तो अुन्होंने बिना विचारे केवल प्रचलित रिवाजके अनुसार अुसे जोड़ दिया होगा। संस्कृतके वचनोंके बारेमें तो अैसा वहम फैला हुआ पाया जाता है कि संस्कृतमें लिखे हुअे श्लोक मानो शास्त्रके वचन ही हों। अिस वहमको मिटाकर हममें स्त्रियोंको नीची समझनेकी जो प्रथा पड़ी हुअी है, अुसे जड़से अुखाड़ फेंकना होगा। दूसरी तरफ हममें से कितने ही विषयान्ध बनकर स्त्रीकी पूजा करते हैं और जैसे हम ठाकुरजीको हर समय नये आभूषणोंसे सजाते हैं, वैसे स्त्रीको भी सजाते हैं। अिस पूजाकी बुराअीसे भी हमें बचना जरूरी है। अन्तमें तो जैसे महादेवके लिअे पार्वती, रामके लिअे सीता, नलके लिअे दमयंती थी, वैसे ही जब हमारी स्त्रियां हमारी बातचीतमें भाग लेनेवाली, हमारे साथ वाद-विवाद करनेवाली, हमारी कही हुअी बातोंको समझनेवाली, अुन्हें बल पहुंचानेवाली और अपनी अलौकिक प्रेरणा-शक्तिसे हमारी बाहरी मुसीबतोंको अिशारेमें समझकर अुनमें भाग लेनेवाली और हमें शीतलतामय शान्ति पहुंचानेवाली बनेंगी, तभी हमारा अुद्धार हो सकेगा। अुससे पहले नहीं। अैसी स्थिति तुरन्त कन्या-पाठशालाओं द्वारा पैदा होनेकी बहुत कम संभावना है। जब तक बाल-विवाहका फंदा ...रे गलेमें पड़ा रहेगा, तब तक पुरुषोंको अपनी स्त्रियोंका शिक्षक बनना ... । और यह शिक्षा केवल अक्षरोंकी ही नहीं होगी, बल्कि धीरे-धीरे

अुन्हें राजनीति और समाज-सुधारके विषयोंकी शिक्षा भी दी जा सकती है। अैसा करनेसे पहले अध्यापनकी जरूरत नहीं मालूम होगी। अैसे पुस्तकी तरीके कामोंमें अलग समय बचाना पड़ेगा। यदि बालिग न हो जाय तब तक दूसरे विद्यार्थीकी हालतमें रहे और अुनके साथ बरताव करे, तो हम शहरी (सिविलियन) को दर्जेके दलालों जैसे नहीं बनेंगे, और हम बाहर का यह मालकी लड़की पर अुसकी बरदाश्तका बोझ हरगिज नहीं डालेंगे। अैसा विचार करनेमें भी हमें बचनेकी सूझी चाहिये।

“कहीं हुई चिन्ताके लिये काफी लोग बाते हैं अुनके लिये मालूम होते हैं। यह सब अच्छा है। यह काम करनेवाले अपने समयका त्याग करते हैं। यह हमारे लोगोंमें बचपनसे बाजूमें लिया जाता है। परन्तु अिसके साथ ही अुपर बताया हुआ पुरुषोंका फर्ज पूरा न हो, तब तक अैसा मालूम होता है कि हमें बहुत अच्छे नतीजे देखनेको नहीं मिलेंगे। गहरा विचार करने पर यह बात सबको स्वयंसिद्ध मालूम होगी।”

जहां-जहां नजर डालते हैं, वहां-वहां बच्चों पीठ पर भारी किताबका बोझ ही हुआ दीखता है। प्रारंभिक शिक्षाके लिये चुने हुए शिक्षकोंको सम्भवतः लिये भले ही शिक्षक कहा जाय, परन्तु यथार्थमें अुन्हें यह अुपमा देना शिक्षक शब्दका दुरुपयोग करना है। विद्यार्थीका बाल्यकाल सबसे महत्त्वका समय है। अुस समयका मिला हुआ ज्ञान वह कभी भूलता नहीं। अुसी समय अुसे कमसे कम अवधि मिलती है। और चाहे जैसी कामचलाअू पाठशालामें डाल दिया जाता है। मैं मानता हूं कि कालेज, हाअीस्कूल आदिकी सजावटमें जितना खर्च किया जाता है, जो अिस गरीब देशमें सहा नहीं जा सकता। अुसके बजाय यदि प्रारंभिक शिक्षा सुशिक्षित, प्रौढ़ व सदाचारी शिक्षकों द्वारा और अैसी जगह दी जाती हो जहां सृष्टि-सौन्दर्यका ख्याल रखा गया हो और स्वास्थ्यकी संभाल रखी जाती हो, तो थोड़े समयमें हम बहुत बड़े नतीजे देख सकते हैं। अैसा परिवर्तन करनेके लिये आजके शिक्षकोंका माहवारी वेतन दुगुना कर दिया जाय, तो भी हेतु पूरा नहीं होगा। बड़े परिणाम अैसे छोटे परिवर्तनोंसे नहीं पैदा हो सकते। प्रारंभिक शिक्षाका स्वरूप ही बदलना चाहिये। मैं जानता हूं कि यह विषय बड़ा कठिन है, अुसमें दरारें भी बहुत हैं। फिर भी अिसका हल 'गुजरात शिक्षामंडल' की शक्तिके बाहर न होना चाहिये।

यहां यह कहना शायद जरूरी है कि मेरा हेतु प्राथमिक स्कूलोंके शिक्षकोंके दोष बतानेका नहीं है। मैं मानता हूं कि ये लोग जो अपनी शक्तिसे बाहर नतीजे दिखा सकते हैं, वह हमारी सुन्दर सभ्यताका फल है। यदि अिन्हीं शिक्षकोंको पूरा प्रोत्साहन मिले, तो जो नतीजा निकले अुसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

शिक्षा मुफ्त और अनिवार्य होनी चाहिये या नहीं, अिस बारेमें मैं कुछ भी कहना ठीक नहीं समझता। मेरा अनुभव थोड़ा है। अिसके सिवा, जब किसी भी तरहका फर्ज लोगों पर लादना मुझे ठीक नहीं मालूम होता तब यह अतिरिक्त फर्ज कैसे डाला जाय, यह विचार खटकता रहता है। अिस समय हम शिक्षाको मुफ्त और अैच्छिक रखकर अुसके प्रयोग करें, तो वह समयके ज्यादा अनुकूल होगा। जब तक हम 'जो हुकुम' के जमानेसे गुजर नहीं जाते, तब तक शिक्षाको अनिवार्य करनेमें मुझे कअी रुकावटें दिखाअी देती हैं। यह विचार करते समय श्रीमान गायकवाड़की सरकारका अनुभव कुछ मददगार साबित हो सकता है। मेरी जांचका नतीजा अनिवार्य शिक्षाके खिलाफ आया है, परन्तु वह जांच नहींके बराबर होनेके कारण अुस पर जोर नहीं दिया जा सकता। मैं यह मान लेता हूं कि अिस विषय पर परिषदमें आये हुअे सदस्य हमें कीमती जानकारी देंगे।

मेरा यह विश्वास है कि अिन सब दोषोंको दूर करनेका राजमार्ग अर्जी नहीं है। महत्त्वके परिवर्तन राज्य करनेवालोंसे अेकदम नहीं हो सकते। यह साहस जनताके नेताओंको ही करना चाहिये। अंग्रेजी विधानमें जनताके अपने साहसका खास स्थान है। यदि हम यही सोचेंगे कि सरकारके किये ही सब कुछ होगा, तो हमारा सोचा हुआ काम करनेमें सम्भवतः युग बीत जायेंगे। अिंग्लैण्डकी तरह यहां भी सरकारसे प्रयोग करानेके पहले हमें करके बताना चाहिये। जिसे जिस दिशामें कमी दीखे, वह वहीं कमी दूर करके और अच्छा नतीजा दिखाकर सरकारसे परिवर्तन करा सकता है। अैसे साहसके लिअे देशमें शिक्षाकी कअी खास संस्थायें कायम करना जरूरी है।

अिसमें अेक बहुत बड़ी रुकावट है। हमें 'डिग्री' का बड़ा मोह है। हम परीक्षामें पास होने पर अपने जीवनका आधार रखते हैं। अिससे जनताका बड़ा नुकसान होता है। हम यह भूल जाते हैं कि 'डिग्री' सिर्फ सरकारी नौकरी करनेवाले लोगोंके ही कामकी चीज है। परन्तु जनताकी अिमारत

कोओ नौकरीपेशा लोगों पर थोड़े ही खड़ी करती है। हम अपने चारों तरफ देखते हैं कि नौकरीके बिना सब लोग बहुत अच्छी तरह धन कमा सकते हैं। यदि अपढ़ लोग अपनी होशियारीसे करोड़पति हो सकते हैं, तो पढ़े-लिखे लोग क्यों नहीं हो सकते? यदि पढ़े-लिखे लोग डर छोड़ दें, तो अनमें अपढ़ लोगोंके बराबर सामर्थ्य तो जरूर आ सकती है।

यदि 'डिग्री' का मोह छूट जाय तो देशमें खानगी पाठशालायें बहुत चल सकती हैं। कोओ भी शासक जनताकी सारी शिक्षाको नहीं चला सकते। अमेरिकामें तो यह मुख्यतः गैरसरकारी साहस ही है।

अिंग्लैण्डमें भी कभी संस्थायें निजी साहससे चलती हैं। वे अपने ही प्रमाणपत्र देती हैं।

अिस शिक्षाको अच्छी बुनियाद पर खड़ा करनेके लिये भगीरथ प्रयत्न करना पड़ेगा। अिसमें तन, मन, धन और आत्मा सब कुछ लगाना पड़ेगा।

मुझे अैसा लगा है कि अमेरिकासे हम थोड़ा ही सीख सकते हैं। परन्तु अेक चीज तो अनुकरणीय है; वहांकी शिक्षाकी बड़ी-बड़ी संस्थायें अेक बड़े ट्रस्टके जरिये चलती हैं। अुसमें धनवान लोगोंने करोड़ों रुपया जमा कराया है। अुस ट्रस्टकी तरफसे कभी गैरसरकारी पाठशालायें चलती हैं। अुसमें जैसे रुपया अिकट्ठा हुआ है, वैसे ही शरीर-सम्पत्तिवाले स्वदेशाभिमानी विद्वान लोग भी अिकट्ठे हुअे हैं। वे सारी संस्थाओंकी जांच करते हैं और अुनकी रक्षा करते हैं। अुन्हें जहां जितना ठीक लगता है, वहां अुतनी मदद देते हैं। अेक निश्चित विधान और नियमोंको माननेवाली संस्थाओंको यह मदद सहज ही मिल सकती है। अिस ट्रस्टकी तरफसे अुत्साहके साथ हलचल की गओ, तब अमेरिकाके बूढ़े किसानोंको खेतीकी नओ खोजवाला ज्ञान मिल सका है। अैसी ही कोओ योजना गुजरातमें भी हो सकती है। यहां धन है, विद्वत्ता है और धर्मवृत्ति भी अभी मिटी नहीं है। बच्चे विद्याकी राह देख रहे हैं। अैसा साहस किया जाय, तो थोड़े वर्षोंमें हम सरकारको बता सकते हैं कि हमारा प्रयत्न सच्चा है। फिर सरकार अुस पर अमल करनेमें नहीं चूकेगी। हमारा करके दिखाया हुआ काम हजारों अर्जियोंसे ज्यादा चमकेगा।

अूपरकी सूचनामें 'गुजरात शिक्षामंडल' के दूसरे दो अुद्देश्योंका अवलोकन आ जाता है। अिस तरहके ट्रस्टकी स्थापनासे शिक्षा-प्रचारका लगातार आन्दोलन होगा और शिक्षाका व्यावहारिक काम होगा।

परन्तु यह काम हो जाय तो समझिये कि सब कुछ हो गया। अिसलिये यह काम आसान नहीं हो सकता। सरकारकी तरह धनवान लोग भी छेड़नेसे ही जागते हैं। अुन्हें छेड़नेका अेक ही साधन है। वह है तपस्या। तपस्या धर्मका पहला और आखिरी कदम है। मैं यह मान लेता हूं कि 'गुजरात शिक्षामंडल' अिस तपस्याकी मूर्ति है। अुसके मंत्रियों और सदस्योंमें जब परोपकार-वृत्ति ही रहेगी और विद्वत्ता भी वैसी होगी, तब लक्ष्मी अपने-आप वहां चली आयेगी। धनवान लोगोंके मनमें हमेशा शंका रहती है। शंकाके कारण भी होते हैं। अिसलिअे यदि हम लक्ष्मीदेवीको खुश करना चाहते हैं, तो हमें अपनी पात्रता सिद्ध करनी पड़ेगी।

अिसके लिअे बहुतसा धन चाहिये। फिर भी, अुस पर जोर देनेकी जरूरत नहीं। जिसे राष्ट्रीय शिक्षा देनी है, वह सीखा हुआ न होगा, तो मजदूरी करते हुअे सीख लेगा। पढ़-लिखकर अेक पेड़के नीचे बैठेगा और जिन्हें विद्यादान चाहिये अुन्हें देगा। यह ब्राह्मण-धर्म है; जिसे पालना हो वह अिसे पाल सकता है। अैसे ब्राह्मण पैदा होंगे, तो अुनके आगे धन और सत्ता दोनों सिर झुकायेंगे।

मैं चाहता हूं और परमात्मासे मांगता हूं कि 'गुजरात शिक्षामंडल' के पास अितनी अटल श्रद्धा हो।

शिक्षामें स्वराज्यकी कुंजी है। राजनीतिक नेता भले ही मान्टेग्यू साहबके पास जायं। यह क्षेत्र भले ही अिस परिषदके लिअे खुला न हो। परन्तु शुद्ध शिक्षाके बिना सब प्रयत्न बेकार हैं। शिक्षा अिस परिषदका खास क्षेत्र है। अिसमें हमारी जीत हुअी, तो सब जगह जीत ही जीत समझिये।

'विचार-सृष्टि'

३
शुद्ध राष्ट्रीय शिक्षा

१

खास कठिनाओी यह है कि लोग शिक्षाका सही अर्थ नहीं समझते। अिस जमानेमें जैसे हम जमीन या शेयरोंके भाव जाचते हैं, वैसे ही शिक्षाकी कीमत लगाते हैं — अैसी शिक्षा देना चाहते हैं जिससे लड़का ज्यादा कमाओ कर सके। यह विचार ज्यादा नहीं करते कि लड़का अच्छा कैसे बने। लड़की कोओ कमाओी तो करेगी नहीं, अिसलिओ असे शिक्षाकी क्या जरूरत? अैसे विचार जब तक रहेंगे, तब तक हम शिक्षाका मूल्य नहीं समझ सकेंगे।

अिडियन ओपीनियन

२

. . . जब तक देशमें चरित्रवान शिक्षकों द्वारा विद्या नहीं दी जायगी, जब तक गरीबसे गरीब भारतीयको अच्छीसे अच्छी शिक्षा मिलनेकी स्थिति पैदा नहीं होगी, जब तक विद्या और धर्मका सपूर्ण सगम नहीं होगा, जब तक विद्याका हिंदकी परिस्थितिके साथ सबंध नहीं जुड़ेगा, जब तक विदेशी भाषामें शिक्षा देनेसे बच्चों और नौजवानोंके मन पर पड़नेवाला असह्य बोझ दूर नहीं कर दिया जायगा, तब तक अिसमें शक नहीं कि प्रजाका जीवन कभी अूंचा नहीं अुठेगा।

शुद्ध राष्ट्रीय शिक्षा हर प्रान्तकी भाषामें दी जानी चाहिये। शिक्षक अूंचे दरजेके होने चाहिये। स्कूल अैसी जगह होना चाहिये, जहा विद्यार्थीको साफ हवा-पानी मिले, शाति मिले और मकान व आसपासकी जमीनसे स्वास्थ्यका सबक मिले। शिक्षण-पद्धति अैसी होनी चाहिये, जिससे भारतके मुख्य धंधों और खास-खास धर्मोंकी जानकारी मिल सके।

अिस तरहके स्कूलका सारा खर्च अुठानेकी अेक मित्रने तैयारी बताओी है। अुनका अुद्देश्य यह है कि अहमदाबादके बच्चोंको अिस स्कूलमें प्रारंभिक शिक्षा मुफ्त दी जाय। हमारे मित्रकी अिच्छा है कि अैसे स्कूल अहमदाबादमें अेक नहीं, अनेक हों। हम मानते हैं कि अहमदाबादके पासमें जमीन मिल

सकती है, मकान बन सकते हैं; परन्तु हम जानते हैं कि अच्छी शिक्षा पाये हुअे चरित्रवान शिक्षक मिलना मुश्किल हो सकता है। गुजरातके शिक्षित लोगोंको हम बताना चाहते हैं कि अुन्हें अिस रास्तेकी तरफ़ नजर घुमानी चाहिये। महाराष्ट्रका शिक्षित वर्ग जितना त्याग करता है, अुसका चतुर्थांश भी गुजरातका शिक्षित वर्ग नहीं करता। हमारे मित्रकी योजनामें अैसा तो कहीं नहीं है कि वेतन बिलकुल न दिया जाय। अिस योजनामें यह सहूलियत रखी गअी है कि शिक्षकको अपने गुजारेके लायक रुपया मिलता रहे। परन्तु जो शिक्षक अपनी कमाअीकी हद नहीं बांध सकता, वह अैसे स्कूलमें ओतप्रोत नहीं हो सकता।

नवजीवन, २१-९-'१९

२

आजकल हिन्दुस्तानमें स्वराज्यकी पुकार हो रही है। केवल पुकार करनेसे ही स्वराज्य मिलनेवाला हो, तब तो अभी तक कभीका मिल गया होता। पुकारकी जरूरत तो है, परन्तु केवल पुकारसे *काम नहीं बन* सकता। जहां-जहां स्वराज्य मिला है, वहां-वहां स्वराज्यकी पुकार करनेसे पहले अिस विषयकी हलचल भी समाजमें हुअी मालूम देती है। लोगोंमें *स्वतंत्र विचार करने और स्वतंत्र ढंगसे रहनेका निश्चय और* अुसी तरहका बरताव भी देखा गया है। लोगोंकी शिक्षाका प्रबंध लोगोंको ही सौंपा हुआ दीखता है और लोग खुद ही अुसे करते आये हैं। अैसा शक होता है कि यहां हम अिससे अुलटे रास्ते पर चलते आये हैं। आज स्वराज्यकी पुकार तो है, परन्तु आम लोगोंमें स्वतंत्र विचार बहुत नहीं दिखाअी देता। स्वतंत्र वृत्तिका रहन-सहन कहीं नहीं दीखता। दीखता भी है *तो बहुत कम।* हमारी शिक्षा पूरी तरह विदेशी है। अिस लेखमें अिस विदेशी शिक्षाका ही विचार करना है। राष्ट्रीय शिक्षाके बिना सब व्यर्थ है। स्वराज्य आज *मिले या कल, परन्तु राष्ट्रीय शिक्षाके बिना वह टिक न सकेगा।* आजकल भारतमें मिलनेवाली शिक्षा विदेशी मानी गअी है। पहले पांच सालको छोड़कर बाकीकी सारी शिक्षा विदेशी भाषामें दी जाती है। शुरूके पांच वर्षोंमें, जो सबसे ज्यादा अुपयोगी और महत्त्वके हैं, चाहे जैसे शिक्षकों द्वारा शिक्षा दी जाती है। और अुसके बाद अंग्रेजी शुरू होती है। अुस शिक्षामें बच्चोंको अेक अलग ही दुनियाकी कल्पना दी जाती है। बच्चोंकी शिक्षाका

अुनके घरके साथ — घरकी परिस्थितियों के साथ कोअी सबंध नहीं होता। आज तक बच्चे जमीन पर बैठकर सुनीते पढ़ते थे, परन्तु अब वे बड़ी पाठशालामें आ गये; अब अुन्हें बेन्चे चाहिये। घर पर तो अभी तक जमीन पर बैठनेका रिवाज है। आज तक लड़का हिन्दू होता, तो धोती, कुरते और अंगरखेसे और मुसलमान होता तो धोतीके बजाय पाजामेसे ही सन्तोष मानता था, परन्तु अब अुसके लिअे ज्यादातर कोट-पतलून ही चाहिये। आज तक अुसका काम नरसलकी कलमसे चलता था, परन्तु अब 'स्टील-पेन' चाहिये। अिस तरह अुसके बाहरी जीवनमें फेरफार हुअे। घरके और स्कूलके रहन-सहनमें फर्क पड़ा। धीरे-धीरे परन्तु निश्चित रूपमें अुसके भीतरी जीवनमें भी परिवर्तन होने लगता है। अुसके जीवनमें जो परिवर्तन हुआ है, अुससे अुसके घरमें या घरके रहन-सहनमें क्या परिवर्तन होनेवाला है? मां-बापको तो अिसकी कल्पना भी नहीं कि बच्चोंको क्या शिक्षा मिल रही है। और अुसके विषयमें अुनकी श्रद्धा तो और भी कम है।

मां-बाप अितना ही जानते हैं कि अिस शिक्षामें रुपया पैदा किया जा सकता है। और अितनेसे अुन्हें संतोष होता है। यह स्थिति बहुत दिन रही, तो हम सब विदेशी हो जायंगे। हम जो आन्दोलन करते हैं, अुससे मिलनेवाले स्वराज्यके भी विदेशी हो जानेका डर है। आज देश जिस चीजमें दब गया है, वही चीज स्वराज्य मिल जानेके बाद भी जारी रह सकती है। अिस डरसे छूटनेका अेक ही अुपाय है, और वह है शिक्षाकी पद्धति बदलनेका। राष्ट्रीय शिक्षामें:

१. शिक्षा मातृभाषामें दी जाय।

२. शिक्षा और घरकी स्थितिके बीच आपसमें मेल रहे।

३. शिक्षा अैसी होनी चाहिये, जिससे ज्यादातर लोगोंकी जरूरतें पूरी हों।

४. प्राथमिक शालाके शिक्षक ठेठ पहली कक्षासे चरित्रवान होने ही चाहियें।

५. शिक्षा मुफ्त दी जानी चाहिये।

६. शिक्षाकी व्यवस्था पर जनताका अंकुश होना चाहिये।

शिक्षा मातृभाषामें दी जानी चाहिये — यह चीज हमें साबित करनी पड़ती है, यही हमारे लिअे शर्मकी बात है।

हम अंग्रेजी भाषाके प्रभावसे यदि चौंधिया न गये होते, तो हमें अिस स्वयंसिद्ध चीजको सिद्ध करनेकी जरूरत ही नहीं रह जाती। अंग्रेजी भाषाके हिमायती कहते हैं :

१ अंग्रेजी भाषा द्वारा ही देशमें जागृति हुआी है।

२. अंग्रेजी साहित्य अितना विशाल है कि अुसे छोड़ना दुर्भाग्यकी बात होगी। अुस साहित्यको हमारी भाषामें नहीं लाया जा सकता।

३. अंग्रेजी भाषाके द्वारा ही हम अपनी अेकताकी भावनाको प्राप्त कर सकते हैं। भारतकी कअी भाषाओंके पोषण और वृद्धिका प्रयत्न करना अूपर कही हुअी अेकताकी दृष्टिको संकुचित करनेके बराबर है; और हम अेक राष्ट्र हैं, अिस बड़ी हुअी भावनाको पीछे हटाने जैसा है।

४. अंग्रेजी शासकोंकी भाषा है।

अंग्रेजीके हिमायतियोंके मुख्य विचार ये हैं। अुनके और भी विचार और कथन हैं, परन्तु अुनमें अूपर कही हुअी बातोंसे ज्यादा कुछ भी सार या महत्त्व नहीं है।

यह कहना कि अंग्रेजी भाषामें ही जागृति हुअी है अर्धसत्य है। देशमें आजकल जो शिक्षा दी जाती है, वह सारी ही अंग्रेजी भाषामें दी जाती है। हिन्दू जनता कोअी नामर्द नहीं। अिसलिअे अुसे जो कुछ अुनमें से मिला अुसका अुसने अुपयोग किया। अितना होने पर भी कुल मिलाकर जो नतीजा निकला, वह निराशा ही पैदा करता है। यह सभी मानते हैं कि आजकी शिक्षामें बहुत बड़े दोष हैं। पचास सालकी शिक्षासे जिन परिणामोंकी आशा रखनेका हमें अधिकार था, अुतना फल नहीं मिला। यह क्यों हुआ? यदि शुरूमें ही मातृभाषा द्वारा शिक्षा दी जाती, तो आज अुसके सुन्दर परिणाम दिखाअी देते। जो बात अंग्रेजी जाननेवाले मुट्ठीभर लोगोंको ही मालूम है, वही बात करोड़ों आदमियोंमें फैली होती। जो जोश या शक्ति अंग्रेजी पढ़े थोड़ेसे लोग दिखा सकते हैं, वही जोश और शक्ति आज करोड़ों लोग दिखा सके होते। और हमारे नौजवान आज जो कालेजसे निस्तेज होकर निकलते हैं और नौकरी ढूंढ़ते फिरते हैं, अुसके बजाय रटाअीसे बचनेके कारण अुनका शरीर और बुद्धि ज्यादा बलवान होते, और नौकरीको ... चीज समझकर अुन्होंने अुसका तिरस्कार किया होता।

... साहित्य छोड़ देनेके लिअे किसीने नहीं कहा। अुस साहित्यका ... भाषाओंमें अनुवाद किया होता। जिस तरह जापान,

दक्षिण अफ्रीका आदि देशोंमें होता है, वैसा ही हमने भी किया होता। जापानमें कुछ लोगोंको अुत्तम जर्मन और कुछको अुत्तम फ्रेंच भाषा सिखाअी जाती है। अिनका काम अुन-अुन भाषाओंमें से अच्छे-अच्छे रत्न ढूंढ़कर अुन्हें जापानी भाषाके द्वारा जापानमें लाना होता है। अैसा नहीं है कि जर्मनीको अंग्रेजी भाषासे कुछ भी लेनेका नहीं होता। परन्तु अिससे सारे जर्मन थोड़े ही अंग्रेजी पढ़ने लगते हैं। अेक भी जर्मन अपनी शिक्षा अंग्रेजी भाषामें नहीं लेता। थोड़ेसे ही जर्मन अंग्रेजी सीखकर अुसमें से नअी-नअी बातें जर्मन भाषामें अुतारते हैं और अपनी मातृभाषाकी सेवा करते हैं। हमें भी अैसा ही करना चाहिये।

हमें अेकताकी भावना अंग्रेजी भाषासे मिली है, अिस बारेमें सच्ची बात यह है कि अंग्रेजी भाषा हमारे यहां दाखिल हुअी, अुसके बाद ही हममें अैसा भ्रम पैदा हुआ कि हम अलग-अलग हैं और बादमें हमने अेक होनेका प्रयत्न किया। हम बहुतसे देशोंमें देखते हैं कि भाषाकी अेकता जनताकी अेकताका अनिवार्य चिह्न नहीं है। दक्षिण अफ्रीकामें दो भाषाअें हैं। परन्तु स्वार्थ अेक होनेके कारण जनता अेक होने लगी है। कनाडामें भी अैसा ही है। अिंग्लैण्ड, स्कॉटलैण्ड और वेल्समें आज भी तीन भाषाअें बोली जाती हैं। वेल्सकी भाषाकी जागृतिके लिअे मि० लायड जार्ज बहुत प्रयत्न कर रहे हैं। फिर भी अिन तीनों देशोंमें यह भावना जोरोंसे फैल रही है कि हम अेक ही राष्ट्र हैं। अलग-अलग भाषाका विकास करनेसे लोगोंमें जागृति पैदा होगी। अुन्हें अपनी स्थिति समझमें आयेगी। वे यह समझ सकेंगे कि हम अलग-अलग प्रान्तोंके लोग अेक ही नावमें बैठे हैं। अिस तरह भाषाका भेद भूलकर और अपना स्वार्थ समझकर ये सब लोग नावकी गति बढ़ानेके लिअे और अुसे सुरक्षित रखनेके लिअे तैयार होंगे और तैयार रहेंगे। और सुशिक्षित लोगोंके लिअे हिन्दी भाषाको सर्वसामान्य मानना पड़ेगा। हिन्दी सीखनेका प्रयत्न अंग्रेजी सीखनेके प्रयत्नके सामने कुछ भी नहीं है।

अंग्रेजी ही शासकोंकी भाषा है, अिससे अितना ही तो सिद्ध होता है कि हममें से कुछ लोगोंको अंग्रेजी सीखनी चाहिये। मैं जो कुछ कहता हूं, अुसमें मेरा अंग्रेजी भाषासे कोअी द्वेष नहीं, सिर्फ अुसे अपनी जगह पर रखनेका ही आग्रह है। अपनी जगह पर वह अच्छी लगेगी और सब अुसकी जरूरत समझेंगे। वह शिक्षाका माध्यम नहीं हो सकती। वह हमारे आपसी व्यव-

हारकी भाषा नहीं बन सकती। हमारे स्कूलोंमें अूंचोसे अूंची शिक्षा हर प्रान्तकी भाषाके द्वारा ही देनेकी जरूरत है।

शिक्षा और घरकी दुनियामें मेल होना चाहिये; यह बात स्वतःसिद्ध है। आज दोनोंमें यह अेकता नहीं पाओ जाती। राष्ट्रीय शिक्षामें यह बात ध्यानमें रखनी ही पड़ेगी।

शिक्षा अधिकतर जनताकी जरूरतें पूरी करनेवाली होनी चाहिये, अिस तीसरी बात पर विचार करें। जनताका बहुत बड़ा भाग किसानोंका है। दूसरे लोगोंका नंबर अुनके बाद आता है। यदि हमारे लड़कोंको शुरूसे ही खेती और बुनाओका ज्ञान होता, यदि वे अिन दोनों वर्गोंकी जरूरतें समझते होते, यदि अिन वर्गोंको अपने धंधेका शास्त्रीय ज्ञान मिला होता, तो आज किसान खुशहाल होते। हमारे ढोर दुबले और निकम्मे न दीखते। हमारे किसान गरीबीके कारण कर्जेके बोझसे दब न गये होते। हमारे लोग लगभग नामशेष न बन गये होते। हमारी पैदावार कच्चे मालके रूपमें ही परदेश जाकर, वहांके कारीगरोंके हाथों तैयार होकर, हमारे देशमें लौटकर हमें शर्मिंदा न करती। और हम हर साल सूती कपड़ेके बदलेमें अिंग्लैंडको ८५ करोड़ रुपया न देते होते। अिस शिक्षाने हमें मालिक न बनाकर गुलाम बना दिया है।

नीचेके प्राथमिक दर्जोंके शिक्षक जरूर चरित्रवान होने चाहिये, अब अिस चौथी बात पर हम आते हैं। अंग्रेजीमें कहावत है कि 'बालक मनुष्यका पिता है।' अिसी तरह हम लोगोंमें भी अेक कहावत है कि 'पूतके पाव पालनेमें झलकते हैं।' कोमल बाल्यावस्थामें हम अपने बच्चोंको चाहे जैसे शिक्षकोंके हाथों सौंप दें और यह आशा रखें कि वे शक्तिशाली निकलेंगे, तो यह कौंचके बीज बोकर मोगरेके फूलोंकी आशा रखने जैसी बात होगी। छोटे बच्चोंके लिअे अुत्तमसे अुत्तम शिक्षक रखनेमें हमें रुपयेकी रत्ती भर परवाह न करनी चाहिये। हमारे पुरखोंके समयमें हमारे बच्चोंको ऋषि-मुनियोंसे शिक्षा मिलती थी।

शिक्षा मुफ्त मिलनी चाहिये, यह हमने पांचवीं चीज गिनी है। विद्यादानका संबंध रुपयेसे न होना चाहिये। जैसे सूर्य सबको अेकसा प्रकाश देता है, बरसात जैसे सबके लिअे बरसती है, अुसी तरह विद्यावृष्टि सब पर समान होनी चाहिये।

अन्तमें जिस बात पर पहुंचें कि शिक्षाकी व्यवस्था पर जनताका अंकुश होना चाहिये। अिसी अंकुशमें प्रजा-शिक्षण भी रहा हुआ है। यह अंकुश हाथमें होगा, तभी लोगोंको अपने बच्चोंकी शिक्षाके बारेमें भरोसा होगा और अपनी जिम्मेदारी महसूस होगी। और जब शिक्षाको अैसा स्थान मिलेगा, तब स्वराज्य मांगते ही मिल जायगा।

अैसी शिक्षा जारी करना हमारा फर्ज है। अिस प्रकारकी शिक्षाकी मांग सरकारसे करनेका हमारा अधिकार है। परन्तु जब हम स्वयं अुसे शुरू करेंगे, तभी सरकारसे अुसकी मांग कर सकेंगे। परन्तु अिस लेखका विषय यह नहीं कि हमें राष्ट्रीय शिक्षा देनेके लिअे क्या-क्या करना चाहिये। पहले लोगों द्वारा अूपरके विचार स्वीकृत होने दीजिये।*

४

खेती और बुनाअीको शिक्षाका स्थान

यदि हम चाहते हों कि हमारे बच्चे अपने पैरों पर खड़े रहें और दूसरोंके सहारे न रहें, तो हमें अुन्हें संपूर्ण औद्योगिक शिक्षा देनी चाहिये। हमारे देशमें सौमें से पच्चासी आदमी खेती करते हैं और दस आदमी किसानोंकी जरूरतें पूरी करनेका काम करते हैं, वहां खेती और हाथकी बुनाअीको हर बालककी अच्छी व्यावहारिक शिक्षामें जरूर शामिल करना चाहिये। अैसी शिक्षा पाया हुआ विद्यार्थी जीवन-संग्राममें बेकार या किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं रहेगा। सफाअी, स्वास्थ्यके नियम और प्रजा-संगोपन शास्त्र तो जरूर सिखाने चाहिये।+

* 'आत्मोद्धार' (पु० १, पृष्ठ २१३–१६) मराठी मासिकसे।
+ 'आत्मोद्धार' (पु० १, पृष्ठ ५६)

४

शिक्षाका मर्मबिन्दु

जब शिक्षामें चरित्र-गठनको अग्रस्थान पर ज्यादा ज़ोर दिया जा रहा है, तब आचार्य जैक्सके लेखमें से नीचेका अुद्धरण देना बहुत अुपयोगी होगा

"हमारा जीवन अेक अनन्त गलियारेमें चलनेकी तरह है, जिसमें विज्ञानकी प्रगति ज्यों-ज्यों होती जाती है, त्यों-त्यों यह सवाल दूर-दूर होता जा रहा है कि विज्ञानका अुपयोग कैसे किया जाय। प्रगतिशील विज्ञान जिस हद तक पहुंचा है, अुसके अुपयोगकी जिम्मेदारी अुससे बहुत दूर चली गयी है। अिस तरह विज्ञान और जिम्मेदारीकी जो होड़ हो रही है, अुसमें जिम्मेदारी हमेशा आगे ही रहती है। विज्ञानकी अपनी जिम्मेदारी पूरी न कर सकनेकी अिस कमजोरीको ही मैं विज्ञानकी मर्यादा कहता हूं। विज्ञान सीखकर आप बन्दूक बनाना सीख जायेंगे, परन्तु विज्ञान यह नहीं सिखाता कि बन्दूक कब चलानी और किस पर चलानी चाहिये। आप कहते हैं कि यह काम नीतिशास्त्रका है। मेरा जवाब यह है कि नीतिशास्त्र जहां मुझे बन्दूकका योग्य अुपयोग सिखाता है, वहां साथ ही अुसका दुरुपयोग भी सिखाता है। और क्योंकि अुसके दुरुपयोगसे बहुत बार मेरा स्वार्थ ज्यादा अच्छी तरह सधता है, अिसलिअे मेरे नीतिशास्त्रके ज्ञानसे तो मेरे पड़ोसीका मेरे हाथसे गोली खाने और लुटनेका डर ही बढ़नेवाला है। दुष्ट आदमीके हाथमें नीतिशास्त्रका हथियार आनेसे ही तो वह शैतान कहलाता है। शैतानको लंदनकी युनिवर्सिटीकी नीतिशास्त्रकी परीक्षाका प्रश्नपत्र दिया जाय, तो वह जरूर सारे अिनाम ले जाय। अिस तरह अेक हद तक नीतिशास्त्र और भौतिक शास्त्र दोनों अेक-दूसरेके मुहमें थूकनेवाले हैं। तो जिस जिम्मेदारीको विज्ञान कभी पूरा नहीं कर सकता, अुसे हम क्या कहेंगे? मैंने अिसे यौवन कहा है, दूसरे लोग अिसे आत्मा या अन्तरात्मा कहते हैं या संकल्पशक्ति कहते हैं। अिसे हम चाहे जो नाम दें, परंतु अितना मान लेना काफी है कि अिसकी हस्ती स्वीकार करनेमें ही मानव-समाजका भविष्य समाया हुआ है। शिक्षाका फर्ज यही है। विज्ञानकी जिम्मेदारी — बस अिसी चीजके आगे शिक्षाकी सारी हिम्मत और धर्मकी सारी प्रवृत्ति रुक जाती है।

यदि और सब बातोंकी सावधानी रखते हुअे अिस चीजकी असावधानी रखेंगे, तो हमें हाथ मलकर पछताना पड़ेगा।"

नवजीवन, ३-१०-'२६

५

सत्याग्रह आश्रम*

पिछले साल बहुतसे विद्यार्थी मुझसे यहां बात करने आये थे। अुस समय मैंने अुनसे कहा था कि भारतके किसी भागमें मैं अेक संस्था या आश्रम खोलनेकी तैयारी कर रहा हूं। अिसलिअे मैं आज आपके सामने सत्याग्रह आश्रमके बारेमें बोलनेवाला हूं। मुझे लगता है और मेरे सारे सार्वजनिक जीवनमें मुझे यह महसूस हुआ है कि हमें जिस चीजकी जरूरत है, जिसकी हर राष्ट्रको जरूरत है, परन्तु दुनियाके दूसरे सब राष्ट्रोंके बनिस्बत हमें अिस समय जिसकी सबसे ज्यादा जरूरत है, वह यही है कि हम चरित्रका विकास करें। यही विचार हमारे देशभक्त गोखलेजीने प्रकट किया था। आप यह जानते होंगे कि अुन्होंने अपने बहुतसे भाषणोंमें यह कहा था कि जब तक हमारे पास अपने मनकी अिच्छाओंको सहारा देनेवाला चरित्रबल नहीं है, तब तक हमें कुछ नहीं मिलेगा, हम किसी लायक नहीं बनेंगे। अिसीलिअे अुन्होंने भारत सेवक समाज नामकी महान संस्था खोली है। आप जानते होंगे कि अुस समाजकी जो रूपरेखा बनाअी गअी थी, अुसमें श्री गोखलेने विचार-पूर्वक कहा था कि हमारे देशके राजनीतिक जीवनको धार्मिक बनानेकी जरूरत है। आप यह भी जानते होंगे कि वे बार-बार कहते थे कि हमारे चरित्र-बलका औसत यूरोपको अधिकतर जनताके चरित्रबलके औसतसे कम है। मैं अुन्हें अभिमानके साथ अपना राजनीतिक गुरु मानता हूं। परन्तु यह नहीं कह सकता कि अुनका यह कथन सचमुच आधारभूत है या नहीं। फिर भी मैं अितना तो मानता ही हूं कि शिक्षित भारतका विचार करते समय अुसके पक्षमें बहुत कुछ कहा जा सकता है; और अिसका कारण यह नहीं कि हमारे शिक्षित वर्गने भूल की है, बल्कि यह है कि हम परि-स्थितियोंके शिकार हुअे हैं। कुछ भी हो, परन्तु मैंने अिसे जीवनका सूत्र

* यह भाषण फरवरी १९१७ में मद्रासमें दिया गया था।

माना है कि कोअी भी आदमी कितना ही बड़ा क्यों न हो, जब तक अुसे धर्मका सहारा न होगा, तब तक अुसका किया कोअी भी काम सम्पूर्ण सफल नहीं होगा। परन्तु धर्मका अर्थ क्या? यह सवाल तुरन्त पूछा जायगा। मैं तो यह जवाब दूंगा कि दुनियाके सारे धर्मग्रंथ पढ़ने पर भी सच्चा धर्म नहीं मिल सकता। धर्म सचमुच बुद्धिग्राह्य नहीं, बल्कि हृदयग्राह्य है। यह हमसे अलग कोअी दूसरी चीज नहीं। यह अैसी चीज है जिसका हमें अपने भीतरसे ही विकास करनेकी जरूरत है। वह हमेशा हमारे भीतर ही है। कुछ लोगोंको अुसका पता होता है, कुछको जरा भी नहीं होता। परन्तु यह तत्त्व अुनमें भी रहता तो है। हम अपने भीतरकी अिस धार्मिक वृत्तिको बाहरी या भीतरी साधनसे जगा लें, भले ही तरीका कुछ भी हो। और यदि हम कोअी भी काम बाकायदा और चिरकाल तक टिकनेवाला करना चाहते हों, तो अिस वृत्तिको जगाना ही पड़ेगा।

हमारे शास्त्रोंने कुछ नियम जीवनके सूत्र और सिद्धान्तके रूपमें बताये हैं, जिन्हें हमें स्वयंसिद्ध सत्यके तौर पर मान लेना है। शास्त्र हमें कहते हैं कि अिन नियमों पर अमल न किया जायगा, तो हम धर्मका थोड़ा बहुत दर्शन भी नहीं कर सकेंगे। बरसोंसे मैं अिन नियमोंको पूरी तरह मानता हूं और शास्त्रकी अिन आज्ञाओं पर अमल करनेका सतत प्रयत्न करता रहा हूं। अिसलिअे सत्याग्रह आश्रम खोलनेमें मेरे जैसे विचारवालोंकी मदद लेना मैंने ठीक समझा है। जो नियम बनाये गये हैं और जिनका हमारे आश्रममें रहनेकी अिच्छा करनेवाले सभीको पालन करना है, वे मैं आपके सामने रखना चाहता हूं।

नियमोंमें से पांच यमके नामसे प्रसिद्ध हैं। सबसे पहला और बड़ा नियम सत्यव्रतका है। हम सामान्य रूपमें सत्य अिसे मानते हैं कि यथासंभव असत्यका अुपयोग न किया जाय, यानी यह समझते हैं कि 'सत्य ही सर्वोत्तम नीति है', अिस कथनका अनुसरण करनेवाली बात ही सत्य है। परन्तु सिर्फ यही सत्य नहीं है। क्योंकि अिसमें यह अर्थ भी आ जाता है कि यदि यह सबसे अच्छी नीति न हो, तो अुसे हम छोड़ दें। परन्तु जिस सत्यको मैं ... यह है कि हमें चाहे जितना कष्ट अुठा ... भी अपना ... अनुसार बिताना चाहिये। सत्यका ... प्रसिद्ध दृष्टांत दिया है।

अुन्होंने सत्यके खातिर अपने पिताका सामना करनेकी हिम्मत की थी। अुन्होंने प्रतिकार करके या अपने पिताके जैसा बरताव करके अपनी रक्षा करनेका प्रयत्न नहीं किया। परन्तु अपने पिताकी तरफसे अपने पर होनेवाले हमलों या अपने पिताकी आज्ञासे दूसरोंके किये हुअे प्रहारोंके बदलेमें प्रहार करनेकी परवाह किये बिना अुन्होंने स्वयं जिसे सत्य समझा था, अुसकी रक्षाके लिअे वे जान देनेको तैयार थे। अितना ही नहीं, अुन्होंने हमलोंसे बचना भी नहीं चाहा था। अिसके बजाय जो हजारों अत्याचार अुन पर किये गये, अुन सबको अुन्होंने हंसकर सह लिया। नतीजा यह हुआ कि अन्तमें सत्यकी जय हुअी। परन्तु प्रह्लादने ये सब अत्याचार अिस विश्वाससे सहन नहीं किये थे कि किसी दिन अपने जीतेजी ही वे सत्यके नियमकी अटलता दिखा सकेंगे। बल्कि अत्याचारसे अुनकी मौत हो जाती, तो भी वे सत्यसे चिपटे रहते। मैं अैसे सत्यका सेवन करना चाहता हूं। कल मैंने अेक घटना देखी। वह थी तो बहुत छोटी, परन्तु मैं समझता हूं कि जैसे तिनका हवाका रुख बताता है, वैसे ही ये मामूली घटनाअें भी मनुष्यके हृदयकी वृत्तिको बताती हैं। घटना यह थी: अेक मित्र मुझसे खानगी बात करना चाहते थे; अिसलिअे वे और मैं अेकान्तमें गये और बातें करने लगे। अितनेमें अेक तीसरे मित्र आये और अुन्होंने सभ्यताके नाते पूछा: "मैंने आपकी बातचीतमें बाधा तो नहीं डाली?" जिन मित्रके साथ मैं बातें कर रहा था वे बोले: "नहीं, हम कोअी खानगी बात नहीं कर रहे हैं।" मुझे थोड़ा अचंभा हुआ, क्योंकि मुझे अेकान्तमें ले जाया गया था और मैं जानता था कि हमारी बातचीत अिन मित्रसे खानगी थी। परन्तु अुन्होंने तुरन्त विनयके नाते — मैं तो अुसे जरूरतसे ज्यादा विनय कहूंगा — कहा: "हमारी बातचीत कोअी खानगी नहीं। आप (पीछेसे आनेवाले मित्र) भले ही हमारे पास आअिये।" मैं कहना चाहता हूं कि मैंने सत्यका जो लक्षण बताया है, यह व्यवहार अुसके अनुसार नहीं था। मैं मानता हूं कि अुन मित्रको यथासंभव नम्रतासे परन्तु स्पष्ट और शुद्ध मनसे सामनेवाले मित्रको — जो सज्जन होता है और जहां तक किसीका व्यवहार सज्जनताके विरुद्ध न हो, तब तक हम हरअेकको सज्जन माननेके लिअे बंधे हुअे हैं — बुरा न लगनेवाले ढंगसे यह कहना चाहिये था कि "आपके कहे मुताबिक आपके यहां आनेसे हमारी बातचीतमें बाधा पड़ेगी।"

परन्तु मुझे शायद यह कहा जायगा कि अिस तरहका व्यवहार तो लोगोंमें सयाना बनाता है। मुझे लगता है कि अैसा कहना जरूरतसे ज्यादा है। नम्रताके नाते हम अैसा करते रहेंगे तो हमारी प्रजा अवश्य ही दांभिक बन जायगी। अेक अंग्रेज मित्रके साथ हुअी बातचीत मुझे याद आती है। अुनके साथ मेरी जान-पहचान बहुत नहीं थी। वे अेक कॉलेजके प्रिंसिपल हैं और बहुत सालोंसे भारतमें रहते हैं। मेरे साथ अेक बार वे कुछ चर्चा कर रहे थे। अुस समय अुन्होंने मुझसे पूछा : "आप यह बात मानेंगे या नहीं कि जब भारतीयोंको किसी बातसे अिनकार करना चाहिये, तब भी वे अिनकार करनेकी हिम्मत नहीं दिखाते? यह हिम्मत अधिकतर अंग्रेजोंमें है।" मुझे कहना चाहिये कि मैंने तुरन्त 'हां' कह दिया; अुस बातमें मैं सहमत हो गया। जिस आदमीको ध्यानमें रखकर हम बोलते हैं, अुसकी भावनाओंकी अिज्जत करनेके लिअे हम साफ तौर पर और हिम्मतके साथ 'ना' करनेमें आनाकानी करते हैं। हमारे आश्रममें हमने अेक नियम अैसा रखा है कि हम किसी बातके लिअे अिनकार करना चाहें, तो हमें नतीजेकी परवाह न करके अिनकार कर देना चाहिये। अिस तरहका सत्य व्रत हमारा पहला नियम है।

अब हम अहिंसा व्रतका विचार करेंगे। अहिंसाका शब्दार्थ 'न मारना' है। परन्तु मुझे अिसमें बड़ा अर्थ समाया हुआ दीखता है। अहिंसाका अर्थ 'न मारना' मात्र करनेसे मैं जिस स्थानमें पहुंचता हूं, अुससे कहीं अूंचे — बहुत अूंचे — स्थानमें अहिंसामें रहा हुआ अगाध अर्थ मुझे ले जाता है। अहिंसाका सच्चा अर्थ यह है कि हम किसीको नुकसान न पहुंचायें; जो अपनेको हमारा शत्रु मानता हो, अुसके लिअे भी हम अनुदार विचार न रखें। अिस विचारके मर्यादित रूप पर जरा ध्यान दीजिये। मैं यह नहीं कहता कि 'जिसे हम अपना शत्रु मानते हों', बल्कि यह कहता हूं कि 'जो अपनेको हमारा शत्रु समझता हो'। क्योंकि जो अहिंसा धर्म पालता है, अुसके लिअे कोअी शत्रु हो ही नहीं सकता; वह किसीको शत्रु समझता ही नहीं। परन्तु अैसे लोग होते हैं जो अपनेको अुसका शत्रु मानते हैं, और जिनके लिअे वह लाचार है। परन्तु अैसे आदमियोंके लिअे भी बुरे विचार नहीं रखे जा सकते। हम अीटके बदले पत्थर फेंकें, तो हमारा बरताव अहिंसा धर्मके खिलाफ ठहरेगा। पर मैं तो अिससे भी आगे जाता हूं। हम अपने मित्रकी

प्रवृत्ति या कथित शत्रुकी प्रवृत्ति पर गुस्सा करें, तो भी हम अहिंसाके पालनमें पिछड़ जाते हैं। मैं यह नहीं कहता कि हम गुस्सा न करें, यानी हम सिर झुका दें। मैं यह कहना चाहता हू कि गुस्सा करनेका मतलब यह चाहना है कि शत्रुको किसी तरहकी हानि पहुंचे, या अुसे दूर कर दिया जाय, फिर भले ही अैसा हमारे हाथसे न होकर किसी दूसरेके हाथसे हो, या दिव्यसत्ता द्वारा हो। अिस तरहका विचार भी हम अपने मनमें रखेंगे, तो हम अहिंसा धर्ममे हट जायेंगे। जो आश्रममें शामिल होते है, अुन्हें अहिंसाका यह अर्थ अक्षरशः स्वीकार करना पड़ता है। अिससे यह न समझना चाहिये कि हम अहिंसाका धर्म पूरी तरह पालते हैं। अैसी कोअी बात नहीं। यह तो अेक आदर्श है, जिसे हमें प्राप्त करना है; और हममें शक्ति हो तो यह आदर्श अिसी क्षण प्राप्त करने जसा है। परन्तु यह कोअी भूमितिका सिद्धान्त नहीं, जिसे हम जबानी याद कर लें। अूंचे गणितके कठिन प्रश्न हल करने जैसी बात भी नहीं है। अुन प्रश्नोंको हल करनेसे यह काम कहीं ज्यादा कठिन है। हममें से बहुतोंने अिन सवालोंको समझनेके लिअे जागरण किया है। हमें यह व्रत पालना हो तो जागरणके सिवा भी बहुत कुछ करना पड़ेगा। हमें बहुतसी रातें आंखोंमें निकालनी होंगी और हम यह ध्येय पूरा कर सकें या अुसे देख भी सकें, अुससे पहले बहुतेरी मानसिक व्यथाअें और वेदनाअें हमें सहनी पड़ेंगी। यदि हम यह समझना चाहते है कि धार्मिक जीवनका क्या अर्थ है, तो आपको और मुझे यह ध्येय अवश्य प्राप्त करना होगा। अिससे ज्यादा मैं अिस सिद्धान्त पर नहीं बोलूगा। जो आदमी अिस व्रतकी शक्तिमें विश्वास रखता है, अुसे आखिरी मंजिल पर यानी जब अुसका ध्येय पूरा होनेको आता है, तब सारी दुनिया अपने चरणोंमें आकर पड़ती दीखती है। यह बात नहीं कि वह सारी दुनियाको अपने पैरोंमें गिराना चाहता है, पर अैसा होता ही है। यदि हम अपना प्रेम अपने कथित शत्रु पर अिस तरह बरसायें कि अुसका असर अुस पर हमेशा बना रहे, तो वह भी हमें चाहने लगेगा। अिसमें से अेक विचार यह भी निकलता है कि अिस नियमके अनुसार योजना बनाकर की जाने-वाली खून-खराबी और खुले आम किये जानेवाले खून नहीं हो सकते। और देशके लिअे या हमारे आश्रित प्रियजनोंकी अिज्जत बचानेके लिअे भी हम किसी तरहका जुल्म नहीं कर सकते। यह तो अिज्जतकी तुच्छ प्रकारकी

रक्षा कही जा सकती है। अहिंसा धर्म हमें यह सिखाता है कि हमें अप
आश्रितोंकी अिज्जत अधर्म करनेको तयार हुअे आदमीके आगे अप
कुरबानी करके बचानी चाहिये। बदलेमें मारनेके लिअे शरीर औ
मनकी जितनी बहादुरी चाहिये, अुससे ज्यादा बहादुरी अपनेको कुरबा
कर देनेके लिअे चाहिये। हममें किसी हद तक शरीरबल — शौर्य नहीं —
हो सकता है और अुस बलको हम काममें लेते हैं। पर जब वह खत
हो जाता है तब क्या होता है? सामनेवाला आदमी गुस्सेमें भर जाता है
और अुसकी शक्तिके साथ अपनी शक्तिका मुकाबला करके हम अुसे औ
अुकसाते हैं; और जब वह हमें अधमरा कर देता है, तब वह अपनी बचे
हुअी शक्तिका अुपयोग हमारे आश्रित लोगों पर करता है। परन्तु हम अु
पर बदलेमें वार न करें और अपने आश्रितों और शत्रुके बीचमें डट क
खड़े हो जायं और बदलेमें वार किये बिना अुसके प्रहार सहते रहें तो
क्या होगा? मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि अुसकी सारी शक्ति हम
पर खर्च हो जायगी और हमारे आश्रितोंको किसी भी तरहकी हानि नहीं
पहुंचेगी। जो देशाभिमान जिस समय यूरोपमें चल रहे युद्धको स्वीकार
करता है, अुस देशाभिमानकी जिस तरहके जीवनमें कल्पना भी नहीं की
जा सकती।

हम ब्रह्मचर्य व्रत भी लेते हैं। जो जनताकी सेवा करना चाहते हैं
या जिन्हें सच्चे धार्मिक जीवनके दर्शन करनेकी आशा है, वे विवाहित
हों या कुंवारे, अुन्हें ब्रह्मचारीका जीवन बिताना चाहिये। विवाह स्त्रीको
पुरुषके ज्यादा गहरे संबंधमें बांधता है और वे दोनों अेक विशेष अर्थमें मित्र
बनते हैं। अुनका वियोग जिस जीवनमें और अगले जन्ममें भी संभव
नहीं। परन्तु मैं नहीं समझता कि हमारी विवाहकी कल्पनामें कामको स्थान
मिलना ही चाहिये। कुछ भी हो, परन्तु जो आश्रममें शरीक होना चाहते
हैं, अुनके सामने यह बात जिस तरह रखी जाती है। मैं जिस पर विस्तारसे
बोलना नहीं चाहता।

जिसके अलावा, हम स्वादेन्द्रिय-निग्रह व्रत भी पालते हैं। जो आदमी
अपनेमें रहनेवाली पशुवृत्तिको जीतना चाहता है, वह यदि अपनी जीभको
वशमें रखता है, तो अैसा आसानीसे कर सकता है। मुझे लगता है कि
पालनेके व्रतोंमें यह अेक बहुत कठिन व्रत है। मैं अभी विक्टोरिया हॉस्टेल

देखकर आ रहा हूं। वहां मैंने जो कुछ देखा, अुससे मुझे कुछ भी अचमा नही हुआ, यद्यपि मुझे अचमा होना चाहिये था; परन्तु अब मुझे अिसकी आदत पड़ गअी है। वहां मैंने बहुतसे रसोड़े देखे। ये रसोड़े कोअी जाति-पातिके नियम पालनेके लिअे नहीं बनाये गये हैं, बल्कि अलग-अलग जगहोंसे आनेवाले लोगोंको अपने अनुकूल और पूरा स्वाद मिले अिसके लिअे अितने ज्यादा रसोड़े बनानेकी जरूरत मालूम हुअी है। अिस तरह हम देखते हैं कि स्वयं ब्राह्मणोंके लिअे भी अलग-अलग विभाग और अलग-अलग रसोड़े हैं, जहां अलग-अलग समूहोंके तरह-तरहके स्वादके लिअे रसोअी बनती है। मैं आपको यह बताना चाहता हूं कि यह स्वादका मालिक बनना नही, बल्कि गुलाम बनना है। मैं अितना ही कहूंगा कि जब तक हम अपने मनको अिस आदतसे नहीं छुड़ायेंगे, जब तक हम चाय, काफीकी दुकानों और अिन सब रसोड़ों परसे अपनी नजर नही हटायेंगे, जब तक अपने शरीरकी अच्छी तन्दुरुस्ती बनाये रखनेवाली जरूरी खुराकसे हम संतोष न करेंगे और जब तक हम नशीले और गरम मसाले, जो हम अपने खानेमें डालते हैं, छोड़ देनेको तैयार न होंगे, तब तक हमारे भीतर जो जरूरतसे ज्यादा और अुभाड़नेवाली गरमी है अुस पर हम कभी काबू नहीं पा सकेंगे। हम अैसा न करेंगे, तो अिसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि हम अपनेको गिरा देंगे। हमें जो पवित्र अमानत सौंपी गअी है, अुसका भी दुरुपयोग करेंगे और पशु तथा जड़से भी नीचे दर्जेके बन जायंगे। खाना, पीना और कामोपभोग हममें और पशुओंमें अेकसा है। परन्तु आपने कभी अैसी गाय या घोड़ा देखा है, जो हमारी तरह स्वादका लालची हो? क्या आप मानते हैं कि यह संस्कृतिका चिह्न है? क्या यह सच्चे जीवनकी निशानी है कि हम अपने खानेकी चीजें अितनी बढ़ा लें कि हमें यह खबर तक न रहे कि हम कहां हैं, अेकके बाद दूसरे पकवान ढूंढनेके लिअे पागल हो जायं, और अिन पकवानोंके बारेमें अखबारोंमें आनेवाले विज्ञापन पढ़नेको दौड़ते फिरें?

अेक और व्रत अस्तेयका है। मैं यह कहना चाहता हूं कि अेक तरहसे हम सब चोर हैं। मेरे तुरन्तके कामके लिअे कोअी चीज जरूरी न हो और अुसे मैं लेकर अपने पास रख छोड़ूं, तो मैं अुसकी किसी दूसरेके पाससे चोरी करता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं कि सृष्टिका यह अटल नियम

है कि वह हमारी जरूरतें पूरी करनेके लायक रोज पैदा करती है और यदि हर आदमी रोज अपनी जरूरतके अनुसार ही ले, ज्यादा न ले, तो अिस संसारमें गरीबी न रहे और कोओ भी आदमी भूखा न मरे। हममें जो यह असमानता है, अुसका अर्थ यह है कि हम चोरी करते हैं। मैं 'समाजवादी' नहीं हूं और जिनके पास दौलत है, अुनसे मैं अुसे छिनवा लेना नहीं चाहता। परन्तु मैं अितना तो कहूंगा कि हममें से जो व्यक्ति अंधेरेसे अुजेलेमें जाना चाहते हैं, अुन्हें तो अस्तेय व्रत पालना ही पड़ेगा। मैं किसीसे अुसका अधिकार छीनना नहीं चाहता। यदि मैं अैसा करूं तो अहिंसा धर्मसे डिग जाअूं। मुझसे किसी दूसरेके पास ज्यादा हो तो भले ही हो। परन्तु मेरे अपने जीवनको व्यवस्थित रखनेके लिअे तो मैं कहूंगा कि जिस चीजकी मुझे जरूरत नहीं, अुसे मैं अपने पास नहीं रख सकता। भारतमें तीन करोड़ आदमी अैसे हैं जिन्हें अेक समय खाकर ही संतोष करना पड़ता है; और वह भी सिर्फ रूखी-सूखी रोटी और चुटकी भर नमकसे। जब तक अिन तीन करोड़ लोगोंको पूरा कपड़ा और खाना नहीं मिलता, तब तक आपको और मुझे हमारे पास जो कुछ है अुसे रखनेका अधिकार नहीं। आप और मैं ज्यादा समझदार हैं, अिसलिअे हमें अपनी जरूरतोंमें अुचित फेरफार करना चाहिये और स्वेच्छासे भूख भी सहनी चाहिये, जिससे अुन लोगोंकी सार-संभाल हो सके, अुन्हें खानेको अन्न और पहननेको कपड़ा मिल सके। अिसमें से अपने आप ही अपरिग्रह व्रत निकलता है।

अब मैं स्वदेशी व्रतके बारेमें कहूंगा। स्वदेशी व्रत जरूरी व्रत है। स्वदेशी जीवन और स्वदेशी भावनासे आप परिचित हैं। मैं यह कहना चाहता हूं कि अपनी जरूरतें पूरी करनेके लिअे हम यदि पड़ोसीको छोड़कर दूसरेके पास जाते हैं, तो हम अपने जीवनके अेक पवित्र नियमको तोड़ते हैं। बम्बअीसे कोअी मनुष्य यहां आये और अपने पासका माल खरीदनेको आपसे कहे, तो जब तक आपके अपने आंगनमें मद्रासमें पैदा हुआ और बड़ा हुआ व्यापारी है, तब तक आप बम्बअीके व्यापारीको सहारा देंगे तो अनुचित काम करेंगे। स्वदेशीके बारेमें मेरा यह विचार है। आपके गांवमें जब तक गांवका ही नाअी है, तब तक मद्रासमें आपके पास आये हुअे होशियार नाअीको दूर रखकर अुसीको सहारा देना आपका फर्ज है। यदि आपको अैसा जान पड़े कि अपने गांवके नाअीमें मद्रासके नाअी जैसी होशियारी आनी

चाहिये, तो आप अुसे वैसी तालीम दिला सकते हैं। जरूरत हो तो आप अुसे मद्रास भेजें, ताकि वह वहा जाकर अपना हुनर सीख आवे। जब तक आप अैसा न करें, तब तक आप दूसरे नाओीके पास जाकर ठीक नही करते। अैसा करना ही सच्चा स्वदेशी धर्म है। अिसी तरह जब हमें मालूम हो कि बहुतसी चीजें अैसी है, जो हमें भारतमें नही मिल सकती, तो हमें अुनके बिना काम चलानेका प्रयत्न करना चाहिये। बहुतसी चीजें जरूरी मालूम हो, तो भी अुनके बिना हमें काम चला लेना चाहिये। विश्वास रखिये जब आपका दिल अिस तरहका हो जायगा, तब आपको अपने सिरसे अेक बडा बोझ अुतरा हुआ-सा लगेगा। अिसी तरहका अनुभव 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' नामकी अनुपम पुस्तकके यात्रीको भी हुआ था। अेक समय अैसा आया कि यात्री जो बड़ा भार अपने सिर पर लिये जा रहा था, वह अुसे मालूम हुअे बिना ही सिरसे नीचे गिर गया और यात्राके शुरूमें वह जैसा था, अुससे वह अपनेको ज्यादा स्वतंत्र समझने लगा। अिसी तरह जिस समय आप अैसे स्वदेशी जीवनको अपना लेंगे, अुसी समय आप अपनेको आजसे ज्यादा स्वतंत्र समझेंगे।

हम निर्भयताका व्रत भी पालते हैं। भारतकी मेरी यात्रामें मुझे मालूम हुआ है कि भारत, शिक्षित भारत, अैसे डरसे जकड़ा हुआ है, जो अुसे कमजोर कर रहा है। हम अपना मुह सबके सामने नही खोलते, पक्की राय हम सबके सामने व्यक्त नही करते। हम कुछ विचार रखते हों, अुनकी खानगीमें बात भी करते हो और अपने घरके कोनेमें कुछ भी करते हो, पर अुनका अुपयोग सार्वजनिक रूपसे नही करते! हमने मौनव्रत लिया होता, तो मैं कुछ न कहता। सार्वजनिक रूपमें बोलते समय हम जो कुछ कहते है, अुसमें सचमुच हमारा विश्वास नहीं होता। मुझे पता नहीं हिन्दुस्तानमें बोलनेवाले हरअेक सार्वजनिक पुरुषको अिस तरहका अनुभव हुआ है या नही। मैं यह कहना चाहता हू कि अेक ही सत्ता अैसी है—यदि हम अुसे सही अर्थमें सत्ता कह सकें तो—जिससे हमें डरना चाहिये; और वह सत्ता अेक मीश्वर है। हम परमात्मासे डरेंगे, तो कितनी ही अूची पदवीवालेसे भी नही डरेंगे। यदि हम सत्यका व्रत किसी भी तरह या किसी भी रूपमें पालना चाहते हो, तो हमें निर्भयता जरूर रखनी होगी। भगवद्गीतामें आप देखेंगे कि दैवी संपत्तिमें पहली संपत्ति 'अभय' बताओी गओी है। हम नतीजेसे

डरते हैं; अिसीलिअे हम सच बोलनेमें डरते हैं। जो मनुष्य अीश्वरसे डरता है, वह कभी सांसारिक परिणामोंसे नहीं डरता। धर्मके क्या मानी हैं, यह समझनेकी योग्यता प्राप्त करनेसे पहले और भारतको रास्ता दिखानेकी योग्यता प्राप्त करनेसे पहले क्या आपको यह नहीं महसूस होता कि हमें निडर रहनेकी आदत डालनी चाहिये? या जैसे हम दूसरोंसे धोखा खा चुके है, वैसे ही हम अपने देशभाअियोंको भी धोखा देना चाहते हैं? अिससे हमें जान पड़ेगा कि निर्भयता कितनी जरूरी चीज है।

अिसके बाद हमें अस्पृश्यता संबंधी व्रत पालना है। अिस समय हिंदू धर्म पर यह अेक अमिट कलंक है। मैं यह माननेसे अिनकार करता हूं कि यह कलंक अनादि कालसे चला आ रहा है। मेरी धारणा है कि जिस समय हम अपने जीवनके चक्रमें बहुत नीची जगह होंगे, अुस समय अस्पृश्यताकी यह कमीनी, नीच और बंधनकारी भावना हममें पैदा हुआी होगी। यह बुराअी अभी तक हमसे चिपटी हुअी है और अभी तक हममें घर किये हुअे है। मेरा मन कहता है कि यह हमारे लिअे अेक शाप है; और जब तक हम पर यह शाप है, तब तक मेरी धारणा है कि हमें यह मानना चाहिये कि अिस पवित्र भूमिमें जो जो दुःख हम पर पड़ते हैं, वे हमारे अिस असभ्य पापका अुचित दण्ड हैं। किसी मनुष्यको अुसके धंधेके कारण अछूत मानना समझमें न आनेवाली बात है। मैं आप विद्यार्थियोंसे यह कहना चाहता हूं कि आपको सारी आधुनिक शिक्षा मिलती है; अिसलिअे यदि आप भी अिस पापमें भागीदार बनें, तो बेहतर है कि आपको कोअी शिक्षा ही न मिले।

बेशक, अिस विषयमें हमें बहुत बड़ी कठिनाअीका सामना करना होता है। आपको अैसा महसूस हो सकता है कि अिस दुनियामें कोअी भी आदमी अैसा नहीं हो सकता जिसे अछूत माना जाय; फिर भी आप अपने घरवालों पर अैसा असर नहीं डाल सकते, आप अपने आसपास अैसी छाप नहीं डाल सकते, क्योंकि आपके सारे विचार विदेशी भाषामें होते हैं और आपकी सारी शक्ति अुसमें खर्च हो जाती है। अिसलिअे हमने अिस आश्रममें अैसा नियम जारी किया है कि हमें अपनी शिक्षा अपनी मातृभाषामें लेनी चाहिये।

यूरोपमें हर पढ़ा-लिखा आदमी अपनी मातृभाषा ही नहीं सीखता है, बल्कि दूसरी भाषाअें भी सीखता है — तीन-चार तो जरूर ही। जैसे यूरोपवाले करते हैं, वैसे भारतमें भाषाका प्रश्न निबटानेके लिअे हमने अिस

आश्रममें अैसा नियम रखा है कि हम भारतकी जितनी भाषाअें सीख सकते हों सीख लें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि अंग्रेजी भाषा पर काबू पानेमें हमें जितना श्रम करना पड़ता है, अुसकी तुलनामें अिन भाषाओंको सीखनेका श्रम कुछ भी नहीं। हम कभी अंग्रेजी भाषा पर काबू नहीं पा सकते। कुछ अपवादोंको छोड़कर, हमारे लिअे अैसा करना संभव नहीं हुआ। जितनी स्पष्टतासे हम अपने विचार अपनी मातृभाषामें प्रकट कर सकते हैं, अुतनी स्पष्टतासे हम अंग्रेजी भाषामें नहीं कर सकते। हम अपने बचपनके सारे साल अपने स्मृतिपट परसे कैसे मिटा सकते हैं? परन्तु हम जिसे अूंचा जीवन कहते हैं, अुसे अंग्रेजी भाषाकी शिक्षासे ही शुरू करते हैं, और तब हम अैसा ही करते हैं। अिससे हमारे जीवनकी कड़ियां टूट जाती हैं, और अिसके लिअे हमें बड़ा भारी दण्ड भोगना पड़ेगा। अब आपको शिक्षा और अस्पृश्यताका संबंध मालूम होगा। शिक्षाका फैलाव होने पर भी आज अस्पृश्यताकी वृत्ति बनी हुअी है। शिक्षासे हम अिस भयंकर पापको समझनेके योग्य जरूर बने हैं, परन्तु साथ ही हम डरसे अितने जकड़े हुअे हैं कि अिस विचारको अपने घरमें दाखिल नहीं कर सकते। हम अपने कुटुम्बकी परंपराके लिअे और घरके आदमियोंके लिअे अंध पूज्यभाव रखते हैं। आप कहेंगे: 'यदि मैं अपने पितासे कहूं कि अब मैं अिस पापमें ज्यादा समय तक भाग नहीं ले सकूंगा तो वे मर ही जायं।' मैं यह कहता हूं कि प्रह्लादने विष्णुका नाम लेते समय कभी यह नहीं सोचा था कि अैसा करनेमें मेरे पिताकी मौत हो गअी तो! अुसके बजाय वे अपने पिताकी मौजूदगीमें भी अुस नामका अुच्चार करके घरका कोना-कोना गुंजा देते थे। आप और मैं अपने माता-पिताके सामने अैसा ही कर सकते हैं। मुझे लगता है कि अिस तरहका सख्त आघात पहुंचनेसे अुनमें से कुछकी मौत भी हो जाय तो कोअी हर्ज नहीं। अिस तरहके कितने ही सख्त आघात शायद हमें करने पड़ेंगे। जब तब हम पीढ़ियोंसे चले आनेवाले अैसे रिवाजोंको मानते रहेंगे, तब तक अैसे मौके आ भी सकते हैं। परन्तु अीश्वरका नियम अिससे बढ़कर है। और अुस नियमके अधीन रहकर मेरे माता-पिताको और मुझे अुनकी कुरबानी करनी चाहिये।

हम हाथसे बुननेका काम भी करते हैं। आप कहेंगे: 'हम अपने हाथको किसलिअे काममें लें?' अिसी तरह आप कहेंगे: 'जो अनपढ़ हैं, अुन्हें

डरते हैं; अिसीलिअे हम सच बोलनेसे डरते हैं। जो मनुष्य [illegible] वह कभी सांसारिक परिणामोंसे नहीं डरता। धर्मके [illegible] समझनेकी योग्यता प्राप्त करनेसे पहले और भारतको [illegible] योग्यता प्राप्त करनेसे पहले क्या आपको यह नहीं महसूस [illegible] निडर रहनेकी आदत डालनी चाहिये? या जैसे हम दूसरोंसे [illegible] हैं, वैसे ही हम अपने देशभाअियोंको भी धोखा देना चाहते हैं? [illegible] हमें जान पड़ेगा कि निर्भयता कितनी जरूरी चीज है।

अिसके बाद हमें अस्पृश्यता संबंधी व्रत पालना है। [illegible] धर्म पर यह अेक अमिट कलंक है। मैं यह माननेसे अिनकार करता [illegible] कलंक अनादि कालसे चला आ रहा है। मेरी धारणा है कि [illegible] अपने जीवनके चक्रमें बहुत नीची जगह होंगे, अुस समय [illegible] कमीनी, नीच और बंधनकारी भावना हममें पैदा हुअी होगी। [illegible] अभी तक हमसे चिपटी हुअी है और अभी तक हममें घर किये हुअे है। [illegible] कहता है कि यह हमारे लिअे अेक शाप है; और जब तक हम [illegible] है, तब तक मेरी धारणा है कि हमें यह मानना चाहिये कि [illegible] जो जो दुःख हम पर पड़ते हैं, वे हमारे अिस असभ्य पापका [illegible] किसी मनुष्यको अुसके धंधेके कारण अछूत मानना समझमें [illegible] बात है। मैं आप विद्यार्थियोंसे यह कहना चाहता हूं कि आपको [illegible] निक शिक्षा मिलती है; अिसलिअे यदि आप भी अिस पापमें [illegible] तो बेहतर है कि आपको कोअी शिक्षा ही न मिले।

बेशक, अिस विषयमें हमें बहुत बड़ी कठिनाअीका सामना [illegible] है। आपको अैसा महसूस हो सकता है कि अिस दुनियामें कोअी [illegible] अैसा नहीं हो सकता जिसे अछूत माना जाय; फिर भी आप [illegible] पर अैसा अमर नहीं डाल सकते, आप अपने आसपास अैसी [illegible] सकते, क्योंकि आपके सारे विचार विदेशी भाषामें होते हैं और [illegible] सारी शक्ति अुसमें खर्च हो जाती है। अिसलिअे हमने अिस [illegible] नियम जारी किया है कि हमें अपनी शिक्षा अपनी मातृभाषामें [illegible]

यूरोपमें हर पढ़ा-लिखा आदमी अपनी मातृभाषा ही नहीं [illegible] बल्कि दूसरी भाषायें भी सीखता है — तीन-चार तो [illegible] है। यूरोपवाले करते हैं, वैसे भारतमें भाषाका प्रश्न निबटानेके लिअे [illegible]

चाहिये, तो आप अुसे वैसी तालीम दिला सकते हैं। जरूरत हो तो आप अुसे मद्रास भेजें, ताकि वह वहां जाकर अपना हुनर सीख आवे। जब तक आप असा न करें, तब तक आप दूसरे नाअीके पास जाकर ठीक नही करते। असा करना ही सच्चा स्वदेशी धर्म है। अिसी तरह जब हमें मालूम हो कि बहुतसी चीजें असी हैं, जो हमें भारतमें नही मिल सकती, तो हमें अुनके बिना काम चलानेका प्रयत्न करना चाहिये। बहुतसी चीजें जरूरी मालूम हों, तो भी अुनके बिना हमें काम चला लेना चाहिये। विश्वास रखिये जब आपका दिल अिस तरहका हो जायगा, तब आपको अपने सिरसे अेक बड़ा बोझ अुतरा हुआ-सा लगेगा। अिसी तरहका अनुभव 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' नामकी अनुपम पुस्तकके यात्रीको भी हुआ था। अेक समय असा आया कि यात्री जो बड़ा भार अपने सिर पर लिये जा रहा था, वह अुसे मालूम हुअे बिना ही सिरसे नीचे गिर गया और यात्राके शुरूमें वह जैसा था, अुससे वह अपनेको ज्यादा स्वतंत्र समझने लगा। अिसी तरह जिस समय आप असे स्वदेशी जीवनको अपना लेंगे, अुसी समय आप अपनेको आजसे ज्यादा स्वतंत्र समझेंगे।

हम निर्भयताका व्रत भी पालते हैं। भारतकी मेरी यात्रामें मुझे मालूम हुआ है कि भारत, शिक्षित भारत, असे डरसे जकड़ा हुआ है, जो अुसे कमजोर कर रहा है। हम अपना मुह सबके सामने नही खोलते; पक्की राय हम सबके सामने व्यक्त नही करते। हम कुछ विचार रखते हों, अुनकी खानगीमें बात भी करते हों और अपने घरके कोनेमें कुछ भी करते हों, पर अुनका अुपयोग सार्वजनिक रूपमें नही करते! हमने मौनव्रत लिया होता, तो मैं कुछ न कहता। सार्वजनिक रूपमें बोलते समय हम जो कुछ कहते हैं, अुसमें सचमुच हमारा विश्वास नहीं होता। मुझे पता नहीं हिन्दुस्तानमें बोलनेवाले हरअेक सार्वजनिक पुरुषको अिस तरहका अनुभव हुआ है या नहीं। मैं यह कहना चाहता हूं कि अेक ही सत्ता असी है—यदि हम अुसे सही अर्थमें सत्ता कह सकें तो—जिससे हमें [illegible]; और वह सत्ता अेक अीश्वर है। हम परमात्मासे [illegible] ची पदवीवालेसे भी नही डरेंगे। यदि [illegible] भी रूपमें पालना चाहते [illegible] द्गीतामें आप देखेंगे कि [illegible] है। हम मतीजेसे

डरते हैं; अिसीलिअे हम सत्य बोलनेसे डरते हैं। जो मनुष्य अीश्वरसे डरता है, वह कभी सांसारिक परिणामोंसे नहीं डरता। धर्मके क्या मानी हैं, यह समझनेकी योग्यता प्राप्त करनेसे पहले और भारतको रास्ता दिखानेकी योग्यता प्राप्त करनेसे पहले क्या आपको यह नहीं महसूस होता कि हमें निडर रहनेकी आदत डालनी चाहिये? या जैसे हम दूसरोंसे धोखा खा चुके हैं, वैसे ही हम अपने देशभाअियोंको भी धोखा देना चाहते हैं? अिससे हमें जान पड़ेगा कि निर्भयता कितनी जरूरी चीज है।

अिसके बाद हमें अस्पृश्यता संबंधी व्रत पालना है। अिस समय हिन्दू-धर्म पर यह अेक अमिट कलंक है। मैं यह माननेसे अिनकार करता हूं कि यह कलंक अनादि कालसे चला आ रहा है। मेरी धारणा है कि जिस समय हम अपने जीवनके चक्रमें बहुत नीची जगह होंगे, अुस समय अस्पृश्यताकी यह कमीनी, नीच और बंधनकारी भावना हममें पैदा हुअी होगी। यह बुराअी अभी तक हमसे चिपटी हुअी है और अभी तक हममें घर किये हुअे है। मेरा मन कहता है कि यह हमारे लिअे अेक शाप है; और जब तक हम पर यह शाप है, तब तक मेरी धारणा है कि हमें यह मानना चाहिये कि अिस पवित्र भूमिमें जो जो दुःख हम पर पड़ते हैं, वे हमारे अिस असभ्य पापका अुचित दण्ड हैं। किसी मनुष्यको अुसके धंधेके कारण अछूत मानना समझमें न आनेवाली बात है। मैं आप विद्यार्थियोंसे यह कहना चाहता हूं कि आपको सारी आधुनिक शिक्षा मिलती है; अिसलिअे यदि आप भी अिस पापमें भागीदार बनेंगे, तो बेहतर है कि आपको कोअी शिक्षा ही न मिले।

बेशक, अिस विषयमें हमें बहुत बड़ी कठिनाअीका सामना करना होता है। आपको अैसा महसूस हो सकता है कि अिस दुनियामें कोअी भी आदमी अैसा नहीं हो सकता जिसे अछूत माना जाय; फिर भी आप अपने घरवालों पर अैसा असर नहीं डाल सकते, आप अपने आसपास अैसी छाप नहीं डाल सकते, क्योंकि आपके सारे विचार विदेशी भाषामें होते हैं और आपकी सारी शक्ति अुसमें खर्च हो जाती है। अिसलिअे हमने अिस आश्रममें यह नियम जारी किया है कि हमें अपनी शिक्षा अपनी मातृभाषामें लेनी चाहिये।

यूरोपमें हर पढ़ा-लिखा आदमी अपनी मातृभाषा ही नहीं सीखता है, बल्कि दूसरी भाषायें भी सीखता है—तीन-चार तो जरूर ही। जैसे यूरोपवाले करते हैं, वैसे भारतमें भाषाका प्रश्न निबटानेके लिअे हमने अिस

आश्रममें अैसा नियम रखा है कि हम भारतकी जितनी भाषाअें सीख सकते हों सीख लें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि अंग्रेजी भाषा पर काबू पानेमें हमें जितना श्रम करना पड़ता है, अुसकी तुलनामें अिन भाषाओंको सीखनेका श्रम कुछ भी नहीं। हम कभी अंग्रेजी भाषा पर काबू नहीं पा सकते। कुछ अपवादोंको छोड़कर, हमारे लिअे अैसा करना संभव नहीं हुआ। जितनी स्पष्टतासे हम अपने विचार अपनी मातृभाषामें प्रकट कर सकते हैं, अुतनी स्पष्टतासे हम अंग्रेजी भाषामें नहीं कर सकते। हम अपने बचपनके सारे साल अपने स्मृतिपट परसे कैसे मिटा सकते हैं? परन्तु हम जिसे अूंचा जीवन कहते हैं, अुसे अंग्रेजी भाषाकी शिक्षासे ही शुरू करते हैं, और तब हम अैसा ही करते हैं। अिससे हमारे जीवनकी कड़ियां टूट जाती हैं, और अिसके लिअे हमें बड़ा भारी दण्ड भोगना पड़ेगा। अब आपको शिक्षा और अस्पृश्यताका संबंध मालूम होगा। शिक्षाका फैलाव होने पर भी आज अस्पृश्यताकी वृत्ति बनी हुअी है। शिक्षासे हम अिस भयंकर पापको समझनेके योग्य जरूर बने हैं, परन्तु साथ ही हम डरसे अितने जकड़े हुअे हैं कि अिस विचारको अपने घरमें दाखिल नहीं कर सकते। हम अपने कुटुम्बकी परंपराके लिअे और घरके आदमियोंके लिअे अंध पूज्यभाव रखते हैं। आप कहेंगे: 'यदि मैं अपने पितासे कहूं कि अब मैं अिस पापमें ज्यादा समय तक भाग नहीं ले सकूंगा तो वे मर ही जाय।' मैं यह कहता हूं कि प्रह्लादने विष्णुका नाम लेते समय कभी यह नहीं सोचा था कि अैसा करनेसे मेरे पिताकी मौत हो गअी तो! अुसके बजाय वे अपने पिताकी मौजूदगीमें भी अुस नामका अुच्चार करके घरका कोना-कोना गूंजा देते थे। आप और मैं अपने माता-पिताके सामने अैसा ही कर सकते हैं। मुझे लगता है कि अिस तरहका सख्त आघात पहुंचनेसे अुनमें से कुछकी मौत भी हो जाय तो कोअी हर्ज नहीं। अिस तरहके कितने ही सख्त आघात शायद हमें करने पड़ेंगे। जब तक हम पीढ़ियोंसे चले आनेवाले अैसे रिवाजोंको मानते रहेंगे, तब तक अैसे मौके आ भी सकते हैं। परन्तु अीश्वरका नियम अिससे बढ़कर है। और अुस नियमके अधीन रहकर मेरे माता-पिताको और मुझे अुतनी कुरबानी करनी चाहिये।

हम हाथसे बुननेका काम भी करते हैं। आप कहेंगे: 'हम अपने हाथको किसलिअे काममें लें?' अिसी तरह आप कहेंगे: 'जो अनपढ़ हैं, अुन्हें

शारीरिक काम करता है। हम तो साहित्य और राजनीतिक निबंध पढ़नेका ही काम कर सकते हैं।' मुझे लगता है कि 'मजदूरीका महत्त्व' हमें समझना पड़ेगा। अेक नाअी या मोची कालेजमें जाय, तो अुसे नाअी या मोचीका धंधा छोड़ना नहीं चाहिये। मैं मानता हूं कि जितना अच्छा धंधा अेक वैद्यका है, अुतना ही अच्छा नाअीका है।

अन्तमें जब आप ये नियम पालने लग जायंगे, तभी — अुससे पहले नहीं — आप राजनीतिक विषयोंमें पड़ सकेंगे; अुतने पड़ सकेंगे जिससे आपकी आत्माको संतोष हो। और बेशक अुस समय आप कभी गलत रास्ते नहीं जायेंगे। धर्मसे अलग की हुअी राजनीतिमें कुछ भी सार नहीं। मेरे विचारसे तो जनताकी प्रगतिकी यह कोअी खास अच्छी निशानी नहीं है कि विद्यार्थी लोग हमारे देशके राजनीतिक विषयों पर खुली सभाओंमें भाषण दें। परन्तु अिससे यह न समझना चाहिये कि आप अपने विद्यार्थी-जीवनमें राजनीतिका अध्ययन न करें। राजनीति हमारे जीवनका अेक अंग है। हमें अपनी राष्ट्रीय संस्थाओंको समझना चाहिये। हमें अपनी राष्ट्रीय प्रगति और अिस तरहकी दूसरी सब बातें जाननी चाहिये। हम अपने बचपनमें यह सब कर सकते हैं। अिसलिअे हमारे आश्रममें हर बच्चेको हमारे देशकी राजनीतिक संस्थाओंकी जानकारी कराअी जाती है, और अिसी तरह यह भी समझाया जाता है कि हमारे देशमें नअी भावनाअें, नअी अभिलाषाअें और नवजीवनके आन्दोलन किस तरह चल रहे हैं।

परन्तु अिसके साथ ही हमें धार्मिक श्रद्धा, यानी केवल बुद्धिका ही पोषण करनेवाली नहीं, बल्कि अन्तरमें स्थायी बन जानेवाली श्रद्धाके अचल और अचूक प्रकाशकी जरूरत है। पहले तो हमें धार्मिकताका अनुभव करना चाहिये; और जिस समय हम अैसा करते हैं, अुसी समयसे मुझे लगता है कि जीवनकी सारी दिशाअें हमारे लिअे खुल जाती हैं और विद्यार्थियोंको और हर व्यक्तिको सारे जीवनमें भाग लेनेका पवित्र अधिकार मिल जाता है। और जब आप बड़े होंगे और कॉलेज छोड़कर चले जायेंगे, तब जैसे जीवनसंग्रामके लिअे मनुष्य बाकायदा तैयार होकर निकल पड़ता है और अपना काम करता है, वैसे ही आप भी कर सकेंगे। आज तो यह होता है: राजनीतिक जीवनका बड़ा हिस्सा विद्यार्थी-जीवनमें ही रहता है; जबसे विद्यार्थी कॉलेज छोड़कर जाते हैं और विद्यार्थी नहीं रहते, तभीसे वे अंधेरेमें पड़ जाते हैं

और कंगाल और तुच्छ वेतनवाली नौकरी ढूंढ़ते हैं। अुनकी आशाअें बहुत अूंची नहीं जा सकती, अीश्वरके बारेमें वे कुछ नही जानते; अुन्हें पोषक तत्त्वकी — स्वतन्त्रताकी — जानकारी नही होती। और मैंने जो नियम आप लोगोंके सामने रखे हैं, अुनके पालनसे जो सच्ची बलशाली स्वतंत्रता मिलती है, अुसे भी वे नहीं जानते।

६

स्वतंत्र विकासकी शर्त

दक्षिण भारतके अेक हाअीस्कूलके अेक शिक्षकने विद्यार्थियो पर सरकारकी तरफसे लगाअी हुअी पाबंदियोंको बतानेवाले कुछ अवतरण मेरे पास भेजे हैं।* अिनमें से ज्यादातर पाबन्दियां अेक क्षणकी भी देर किये बिना दूर करनी चाहिये। विद्यार्थी हो या शिक्षक, किसीका भी मन पिंजड़ेमें बन्द न रहना चाहिये। शिक्षक तो वही रास्ता दिखा सकते हैं, जिसे वे स्वयं या राज्य सबसे अच्छा समझता है। अितना करनेके बाद अुन्हें विद्यार्थियोंके विचारो और भावनाओंको दबानेका कोअी अधिकार नही। अिसका मतलब यह नही है कि विद्यार्थी किसी भी तरहके नियमोंके वशमें न रहें। नियम पाले बिना कोअी स्कूल चल ही नही सकता। परन्तु नियम-पालनका विद्यार्थियोंके सर्वांगीण विकास पर बनावटी अंकुश लगानेसे कोअी सबंध नही है। जहां अुनके पीछे जासूस लगाये जाते हों, वहा अैसा विकास नहीं हो सकता। सच तो यह है कि आज तक वे जिस वातावरणमें रहे हैं, वह खुले तौर पर अराष्ट्रीय रहा है। यह वातावरण अब मिटना चाहिये। विद्यार्थियोंको जानना चाहिये कि राष्ट्रीय भावना रखना या बढ़ाना कोअी अपराध नहीं, बल्कि अच्छा गुण है।

---

* गांधीजीका मत पेश करनेके लिअे ये अवतरण पुस्तकमें देना जरूरी नही है, अैसा समझकर अुन्हें छोड़ दिया गया है। जिज्ञासु पाठक २५-९-'३७ के 'हरिजनसेवक' में छपे हुअे 'शिक्षा-मन्त्रियोंके प्रति' नामक लेखमें अिन्हें देख सकते हैं।

७

बुद्धिविकास बनाम बुद्धिविलास

त्रावणकोर और मद्रासके दौरेमें विद्यार्थियों और विद्वानोंके सहवाससे मुझे अैसा मालूम हुआ कि मैं जो नमूने देख रहा हूं, वे बुद्धिविकासके नहीं बल्कि बुद्धिविलासके हैं। आजकलकी शिक्षा भी हमें बुद्धिका विलास सिखाती है और बुद्धिको अुलटे रास्ते ले जाकर अुसके विकासको रोकती है। सेवाग्राममें पड़े-पड़े मैं जो कुछ अनुभव कर रहा हूं, वह अिस बातकी पुष्टि करता दीखता है। मेरा अवलोकन तो अभी जारी ही है। अिसलिअे अुस अनुभव पर अिस लेखके विचारोंकी बुनियाद नहीं है। ये विचार तो अुस समयसे हैं, जब मैंने फिनिक्स संस्था कायम की थी, यानी सन् १९०४ से हैं।

बुद्धिका सच्चा विकास हाथ, पैर, कान आदि अंगोंका ठीक-ठीक अुपयोग करनेसे ही हो सकता है, यानी समझ-बूझकर शरीरका अुपयोग करनेसे बुद्धिका विकास अुत्तम ढंगसे और जल्दीसे जल्दी हो सकता है। अिसमें भी यदि परमार्थकी वृत्ति न मिले, तो शरीर और बुद्धिका अेकांगी विकास होता है। परमार्थकी वृत्ति हृदय यानी आत्माका क्षेत्र है, अिसलिअे यह कहा जा सकता है कि बुद्धिके विकासके लिअे आत्मा और शरीरका विकास साथ-साथ और अेकसी चालसे होना चाहिये। अिसलिअे यदि कोअी यह कहे कि ये विकास अेकके बाद अेक हो सकते हैं, तो अूपरके विचारोंके अनुसार यह कहना ठीक नहीं होगा।

हृदय, बुद्धि और शरीरका आपसमें मेल न होनेसे जो दुःखदायी परिणाम हुआ है वह प्रसिद्ध है। फिर भी अुलटे रहन-सहनके कारण हम अुसे देख नहीं सकते। गांवोंके लोग जानवरोंमें पलते हैं, अिसलिअे शरीरका अुपयोग मशीनकी तरह करते हैं। वे बुद्धिको काममें लेते ही नहीं, अुन्हें बुद्धिका अुपयोग करना ही नहीं पड़ता। हृदयकी शिक्षा नहींके बराबर होती है। अिसलिअे अुनका जीवन अैसा है कि न अिधरके रहे, न अुधरके। दूसरी तरफ आजकलकी कॉलेज तककी पढ़ाअीको देखें, तो वहां बुद्धिके विलासको बुद्धिके विकासके नामसे पहचाना जाता है। अैसा माना जाता है, मानो बुद्धिके

विकासके साथ शरीरका कोओ संबंध ही नहीं। परन्तु शरीरको कसरत तो जरूर चाहिये; असलिअे बेमतलब कसरतोंसे असे टिकाये रखनेका झूठा प्रयोग किया जाता है। किन्तु चारों तरफसे मुझे अिस बातका सबूत मिलता रहता है कि स्कूलोंसे निकले हुअे लोग मजदूरोंकी बराबरी नहीं कर सकते। जरा मेहनत करें तो अुनका सिर दुखता है और धूपमें घूमना पड़े तो अुन्हें चक्कर आते हैं। यह स्थिति कुदरती समझी जाती है। न जोते हुअे खेतमें जैसे घास अुगती है, वैसे ही हृदयकी वृत्तियां अपने-आप पैदा होती और मुरझाती रहती हैं। और यह स्थिति दयाजनक मानी जानेके बदले प्रशंसनीय मानी जाती है।

अिसके खिलाफ, यदि बचपनसे बालकोंके हृदयकी वृत्तियोंको योग्य दिशा मिले, अुन्हें खेती, चरखा आदि अुपयोगी कामोंमें लगाया जाय और जिस अुद्योगसे अुनका शरीर कसे, अुस अुद्योगके फायदे और अुसमें काम आनेवाले औजारोंकी बनावटकी जानकारी अुन्हें कराओ जाय, तो बुद्धि अपने-आप बढ़ेगी और अुसकी जांच भी रोज होती रहेगी। अैसा करते हुअे गणित-शास्त्र और दूसरे शास्त्रोंके जितने ज्ञानकी जरूरत हो, वह दिया जाता रहे और विनोदार्थ साहित्य आदि विषयोंकी जानकारी भी कराओ जाती रहे, तो तीनों चीजोंका समतोल कायम हो जाय और शरीरका विकास हुअे बिना न रहे। मनुष्य केवल बुद्धि नहीं, केवल हृदय या आत्मा नहीं। तीनोंके अेकसे विकाससे मनुष्यको मनुष्यत्व प्राप्त हो सकता है। अिसीमें सच्चा अर्थ-शास्त्र है। अिस तरह यदि तीनोंका विकास अेक साथ हो, तो हमारी अुलझी हुओ समस्यायें अपने-आप सुलझ जायं। यह मानना कि ये विचार या अिन पर अमल होना स्वतंत्रता मिलनेके बादकी चीज है, गलत हो सकता है। करोड़ों आदमियोंको अैसे कामोंमें लगानेसे ही हम स्वतंत्रताके दिनको समीप ला सकते हैं।

हरिजनबंधु, ११-४-'३७

८

सच्ची शिक्षा

प्रोफेसर मलकानीने अहमदावादसे नीचे लिखा तार भेजा है:

"... कृपालानीने कहा है कि विद्यापीठके स्वयंसेवक जायेंगे।"

सर विश्वेश्वरैयाने ३ अक्तूबरको पूनामें अखिल भारत स्वदेशी बाजार और औद्योगिक प्रदर्शनीको खोलते समय नीचे लिखी बातें कही हैं:

"यदि मेरे कहनेका युनिवर्सिटियों पर कोअी असर पड़ सके, तो मैं अुनसे प्रार्थना करता हूं कि जब तक हमारी वर्तमान आर्थिक कमजोरी बनी रहे, तब तक साहित्य और तत्त्वज्ञानकी पढ़ाओमें मर्यादित संख्यामें ही विद्यार्थी लिये जायं। विद्यार्थियोंको खेती, अिंजीनियरिंग, यंत्रशास्त्र और व्यापारकी डिग्रियां लेनेके लिअे ललचाया जाय।"

हमारी आजकलकी शिक्षा अक्षरज्ञानको जो अेकांगी महत्त्व देती है वह अिसका अेक बड़ा दोष है। अिसीकी तरफ सर विश्वेश्वरैयाने हम सबका ध्यान खींचा है। मैं अिससे भी ज्यादा गंभीर अेक और दोष बताना चाहता हूं। विद्यार्थियोंके मनमें अैसा खयाल पैदा किया जाता है कि जब तक वे स्कूल-कॉलेजमें साहित्यकी पढ़ाओ करते हों, तब तक अुन्हें पढ़ाओको नुकसान पहुंचा कर सेवाके काम नहीं करने चाहिये, भले ही वे काम कितने ही छोटे या थोड़े समयके हों। विद्यार्थी यदि कष्ट-निवारणके कामके लिअे अपनी साहित्य या अुद्योगकी शिक्षा मुलतवी रखें, तो अिससे वे कुछ खोयेंगे नहीं, बल्कि अुन्हें बहुत लाभ होगा। अैसा काम आज कितने ही विद्यार्थी गुजरातमें कर रहे हैं। हर प्रकारकी शिक्षाका ध्येय सेवा ही होना चाहिये। और यदि शिक्षाकालमें ही विद्यार्थीको सेवा करनेका मौका मिले, तो अुसे अपना बड़ा सौभाग्य समझना चाहिये और अिसे अभ्यासमें बाधाके बजाय अभ्यासकी पूर्ति मानना चाहिये। अिसलिअे गुजरात कॉलेजके विद्यार्थी अपना सेवाका काम गुजरातकी हदके बाहर फैलायें, तो मैं अुन्हें दिलसे बधाअी दूंगा। थोड़े दिन पहले ही मैंने कहा था कि हममें प्रान्तीयताकी संकीर्णता न आनी चाहिये। संकट-निवारणका काम करनेवालोंको

फौज खड़ी करनेका संगठन गुजरातके बराबर सिन्धमें नहीं है। अिसलिअे गुजरातसे यह आशा रखी जाती है कि वह अपने स्वयंसेवकोंको सिन्धमें या दूसरे किसी प्रान्तमें जहां-जहां अुनकी सेवाकी जरूरत हो वहां भेजेगा। . . .

* * *

गुजरातने संकट-निवारणके लिअे जो अपील की थी, अुसका जो जवाब मिला है वह बहुत ही संतोषकारक है। जिन्होंने शुरूमें ही मदद भेजी, अुनमें दो संस्थाअें भी थीं : गुरुकुल कांगड़ी और शांतिनिकेतन। यह समझकर कि अुनके दानसे मुझे कितनी खुशी होगी, अुन्होंने दानकी खबर मुझे तारसे दी और दान सीधा श्री वल्लभभाअीके पास भेजा। गुरुकुलकी तरफसे जो दानकी चार किस्तें आअी, अुनका ब्यौरा भी आचार्य रामदेवजीने मुझे लिखा है। वे कहते हैं कि अभी और भेजनेकी आशा है। वे लिखते हैं :

> "शिक्षकोंने अपनी तनख्वाहमें से अमुक फी सदी रकम दी है। ब्रह्मचारियोंने हमेशाकी तरह अपने कपड़े धोबीसे न धुलवाते हुअे स्वयं धोकर रुपया बचाया है। कन्या गुरुकुलकी ब्रह्मचारिणियोंने अमुक समय तक दूध-घी छोड़कर बचत की है।"

गुजरातमें मदद लेनेवाले और बांटनेवाले याद रखें कि जो दान मिला है, अुसमें से कुछके पीछे कितना त्याग रहा है। जब स्वामी श्रद्धानन्दजी गुरुकुलके संचालक थे, तब दक्षिण अफ्रीकाकी सत्याग्रहकी लड़ाअीके समय गुरुकुलमें अुन्होंने त्यागकी जो प्रथा सर्वप्रथम डाली थी, अुसकी याद मुझे गुरुकुलके लड़के-लड़कियोंके आजके त्यागसे आती है। अिसलिअे गुरुकुलकी परंपरामें पले हुअे लड़के-लड़कियोंसे खास मौकों पर अिस तरहकी कुरबानीकी आशा तो हमेशा रखी ही जायगी।

नवजीवन, १६-१०-'२७

९
सेवाकी कला

[यह भाषण औसाअियोंके युनाअिटेड थियोलॉजिकल कॉलेजमें हुआ था। सारे भारतसे औसाअी नौजवान यहां आते हैं। अिस कॉलेजका ध्यान-मंत्र यह था कि 'तुम सेवा लेनेके लिअे न आना, बल्कि दूसरोंकी सेवा करनेके लिअे आना'। गांधीजीने अिस पर प्रवचन किया। अुन्होंने कहा कि जिन देशके आम लोगोंकी सेवा करनेकी जिनकी अिच्छा हो, अुनके लिअे पहली शर्त यह है कि वे हिन्दी सीख लें।]

मैं मानता हूं कि हम पर अंग्रेजीका माध्यम लादनेकी जिम्मेदारी पिछली पीढ़ीके लोगोंकी है। किन्तु यदि आप विद्यालयके अुस पारके लोगों तक पहुंचना चाहते हों, तो आपको यह चारदीवारी तोड़नी ही होगी। मुझे अिस बारेमें आपसे ज्यादा कुछ कहनेकी जरूरत नहीं मालूम होती कि आप किस तरह सेवा कर सकते हैं या आपको क्या सेवा करनी चाहिये; क्योंकि आपने मेरे चरखा-प्रचारके काममें सम्मति दिखाकर मेरा काम आसान कर दिया है। आपने दलित वर्गोंका अुल्लेख किया है। परन्तु दलित कहलानेवाले वर्गोंसे भी कहीं ज्यादा दबा हुआ अेक बहुत ही विशाल जनसमुदाय मौजूद है। यही सच्चा भारत है। जगह-जगह फैला हुआ रेलका जाल अिस समुदायके बहुत थोड़े भाग तक पहुंच सका है। यदि आप रेलका रास्ता छोड़कर जरा भीतरके हिस्सोंमें घूमेंगे, तो आपको अुस जनताके दर्शन होंगे। दक्षिणसे अुत्तर और पूर्वसे पश्चिम तक फैली हुअी ये रेलकी लाअिनें रस और कस निचोड़ लेनेवाली — लार्ड सालिसबरीके शब्द काममें लूं तो 'खून चूसनेवाली' — बड़ी-बड़ी नसें हैं; और बदलेमें अिनसे कुछ भी नहीं मिलता। हम शहरोंमें रहनेवाले अिस खून चूसनेके काममें (यह शब्द कितना ही बुरा क्यों न हो, फिर भी यह सच्ची स्थिति बताता है) शरीक होते हैं। जिस वर्गके बारेमें मैंने कुछ जानकारी प्राप्त की है। अिसकी जरूरतोंका मैंने गहरा विचार किया है। और यदि मैं चित्रकार होता तो मैं अुनकी निराशाभरी आंखोंका, जिनमें न जीवन है, न प्राण है, न नूर है, हूबहू चित्र खींच देता। अिन लोगोंकी सेवा हम किस तरह करें? टॉल्स्टॉयने ठोस शब्दोंमें कहा है कि 'हमें अपने पड़ोसियोंके कंधों परसे अुतर

ाना चाहिये।' यदि हममें से हरअेक आदमी अितना सीधा-सा काम कर ले, ो कहा जायगा कि अीश्वर अुससे जितनी सेवा चाहता है, वह सब अुसने कर ो। यह बात हमारी आंखें खोलनेवाली है। परंतु आप तो यहां सेवाकी ला सीख रहे हैं, अिसलिअे आपको अिस कथनको मथकर अुसका फलि-ार्थ निकालनेका प्रयत्न करना चाहिये। अिन लोगोंकी पीठ परसे अुतर ानेकी बात मैंने सुझाअी है, परन्तु अिसमें दूसरी कोअी तरकीब आपको ूझती हो तो मुझे बताना। मैं स्वयं जिज्ञासु हूं, मुझे कोअी स्वार्थ नहीं ाधना है; और जहां-जहां भी मुझे कुछ सचाअी दीखती है, वहींसे मैं ुसे ले लेता हूं और अुस पर अमल करनेका प्रयत्न करता हूं।

अमेरिकासे अेक पादरी मित्रने मुझे लिखा था कि यहांके आम लोगोंका ुद्धार चरखेसे नहीं होगा, बल्कि अक्षरज्ञानसे होगा। मुझे अुनके अज्ञान पर या आअी। बेचारेने यह पत्र तो सच्ची भावनासे लिखा था। मैं नहीं मानता के अीसामसीहको भी बड़ा भारी अक्षरज्ञान था। और अीसाअी धर्मके शुरूके माने में अीसाअियोंने जो अक्षरज्ञान बढाया, वह अपनी सेवाको ज्यादा अच्छी नानेके लिअे बढ़ाया था। परन्तु मैं समझता हूं कि 'नये करार' में अैसा ेक भी वाक्य नहीं, जिसमें लोगोंके मोक्ष प्राप्त करनेमें सहायक होनेवाली र्तके रूपमें केवल अक्षरज्ञान पर थोड़ा भी जोर दिया गया हो। अक्षर-ज्ञानकी कीमत मैं कम लगाता हूं सो बात भी नहीं। बात अितनी ही है कि किस चीज पर कितना जोर दिया जाय। हर चीज अपनी जगह अच्छी लगती है। शिक्षा भी अपने स्थान पर न हो तो वैसी ही निकम्मी है, जैसे जगह पर न होनेसे किसी चीजकी गिनती कचरेमें की जाती है। और जब-जब मैं किसी अच्छी चीज पर गलत जोर दिया हुआ देखता हूं, तो मेरी आत्मा अुसका विरोध करती है। बच्चेको अक्षरज्ञानसे पहले खाना और कपड़ा *मिलना चाहिये और अुसे अपने हाथसे खानेकी कला सिखानी चाहिये।* दूसरे लोग अुसे खिलायें, यह चीज मुझे पसन्द नहीं। मैं तो यह चाहता हूं कि वह अपने पैरों पर खड़ा हो। हमारे बच्चोंको पहले अपने हाथ-पैरोंका अुपयोग करते आना चाहिये। अिसीलिअे मैं कहता हूं कि आम लोगोंके लिअे चरखेका सन्देश पहली सीढ़ी है।

आपके अभिनन्दन-पत्रमें आपने अेक वाक्य काममें लिया है जो मुझे खटका है। 'खादीको आश्रय देना' अिन शब्दोंमें खराब ध्वनि है।

आप आश्रय देनेवाले बनेंगे या सेवा करनेवाले? खादीको जब तक आश्रय देंगे, तब तक वह अेक फैशनकी चीज बनी रहेगी। किन्तु जब अिसके लिअे प्रेम पैदा हो जायगा, तब खादी सेवाका प्रतीक बनेगी। आप जिस क्षणसे खादी काममें लेने लगेंगे, अुसी क्षणसे आप सेवा देना शुरू कर देंगे। गरीबोंके साथके मेरे ३५ सालके सतत सहवासमें मुझे सेवाकी कला बिलकुल सरल मालूम हुअी है। यह स्कूल-कॉलेजोंमें नहीं सिखाअी जाती। सेवाकी वृत्ति कहीं भी सीखी जा सकती है। यहां भी स्थान और अवस्थानका सवाल है; और यह सवाल है कि किस चीज पर कितना जोर दिया जाय। जिस क्रियासे सॉल संत पाल बन गया, अुस क्रियाकी तरह ही यह सेवाकी कला सीधी है। सॉलका जीवन पलभरमें बदल गया। अुसी तरह यदि आपका हृदय-परिवर्तन होगा, तो आप सच्चे सेवक बन जायंगे। अीश्वर आपको यह चीज साफ-साफ समझनेमें मदद दे।

नवजीवन, २१-८-'२७

१०

ब्रह्मचर्य*

यह मांग की गअी है कि ब्रह्मचर्यके बारेमें मैं कुछ कहूं। कुछ विषय अैसे हैं, जिन पर मैं मौके-मौकेसे 'नवजीवन' में लिखता रहता हूं और शायद ही कभी अुन पर बोलता हूं। ब्रह्मचर्य अैसा ही अेक विषय है। अिसके बारेमें मैं शायद ही कभी बोलता हूं; क्योंकि यह अैसी चीज है, जो बोलनेसे समझमें नहीं आ सकती। और मैं जानता हूं कि यह बहुत ही कठिन वस्तु है। आप जिस ब्रह्मचर्यके बारेमें सुनना चाहते हैं, वह तो सामान्य ब्रह्मचर्य है; पर अुस ब्रह्मचर्यके बारेमें नहीं सुनना चाहते, जिसकी विस्तृत व्याख्या सब अिन्द्रियोंको वशमें करना है। अिस सामान्य ब्रह्मचर्यको भी शास्त्रोंमें अत्यन्त कठिन बताया गया है। यह कहना ९९ फीसदी सही है। मैं यह कहनेकी छूट लेता हूं कि अिसमें अेक फीसदीकी कमी है। अिसका पालन अिसलिअे कठिन लगता है कि हम दूसरी अिन्द्रियोंका संयम नहीं

* भावनगरके सेवा-समाजने गांधीजीको अेक मानपत्र दिया था। अुस मौके पर सेवा-समाजके युवकोंकी खास मांग पर दिये गये भाषणका सार

करते। अुनमें से मुख्य रसनेन्द्रिय है। जो जीभको वशमें रखेंगे, अुनके लिअे ब्रह्मचर्य आसानसे आसान चीज हो जायगा। प्राणीशास्त्रके जाननेवालोंने कहा है कि पशु जितना ब्रह्मचर्य रखते हैं, अुतना मनुष्य नहीं रखते। यह सच है। असका कारण ढूंढेंगे तो पता चलेगा कि पशुओंका जीभ पर पूरा अधिकार है — जानबूझकर नहीं, बल्कि स्वभावसे ही। सिर्फ घास-चारेसे अुनका गुजारा होता है। असे भी वे पेटभर ही खाते हैं। वे जीनेके लिअे खाते हैं, खानेके लिअे नहीं जीते। परन्तु हम असिसे अुलटा करते हैं। मा बच्चेको कअी स्वाद चखाती है। वह मानती है कि ज्यादासे ज्यादा चीजें खिलाकर ही वह बच्चेके साथ प्रेम कर सकती है। अैसा करके हम चीजोंमें स्वाद नहीं भरते, बल्कि चीजोंका स्वाद निकाल लेते हैं। स्वाद तो भूखमें है। भूखी रोटी भूखेको जितनी स्वादिष्ट लगेगी, अुतना भरपेट खाये हुअेको लड्डू भी नहीं लगेगा। हम पेटको ठूस-ठूसकर भरनेके लिअे कअी मसाले काममें लेते हैं और कअी तरहकी वानगियां बनाते हैं, और फिर कहते हैं कि ब्रह्मचर्य क्यों नहीं पाला जाता? जो आंख प्रभुने देखनेके लिअे दी है, अुसे हम मैली करते हैं, और जो देखनेकी चीज है, अुसे देखना ही नहीं सीखते। मां गायत्री क्यों न सीखे और क्यों बच्चेको गायत्री न सिखावे? अुसके गहरे अर्थमें न जाकर, अितना ही समझकर कि असमें सूर्यकी पूजा है, वह सूर्यकी पूजा कराये तो भी बस है। सूर्यकी पूजा आर्यसमाजी और सनातनी दोनों करते हैं। सूर्यकी पूजा — यह तो मैंने मोटेसे मोटा अर्थ आपके सामने रखा है। अिस पूजाका अर्थ क्या? हम अपनी गरदन अूंची रखकर सूर्यनारायणके दर्शन करें और आंखोंको शुद्ध करें। अिस गायत्री मंत्रको बनानेवाले ऋषि थे, द्रष्टा थे। अुन्होंने कहा कि सूर्योदयमें जो नाटक भरा है, जो सौंदर्य भरा है और जो लीला भरी है, वह और कहीं देखनेको नहीं मिल सकती। अीश्वर जैसा सुन्दर सूत्रधार और कहीं नहीं मिल सकता। और आकाशसे ज्यादा भव्य रंगभूमि और कहीं नहीं मिल सकती। परंतु क्या मा अपने बच्चेकी आंखें धोकर अुसे आकाश दिखाती है? मांके भावोंमें तो कअी प्रपंच ही भरे रहते हैं। बड़े मकानमें जो शिक्षा मिलती है, अुसके कारण शायद लड़का बड़ा अफसर बन जाय। परंतु घर पर जाने-अनजाने जो शिक्षा बच्चेको मिलती है अुससे वह कितना सीखता है, असका विचार कौन करता है? हमारे शरीरको मां-बाप ढंकते हैं, नाजुक बनाते हैं और

सुन्दर बनानेका प्रयत्न करते हैं। किन्तु अिससे क्या शोभा बढ़ती है? कप
शरीरको ढकनेके लिअे हैं, शोभा बढ़ानेके लिअे नहीं; शरीरको सर्दी
गरमीसे बचानेके लिअे हैं। ठंडसे ठिठुरते बच्चेको अंगीठीके पास ले जाअिये
गलीमें दौड़नेको भेजिये या खेतमें धकेलिये, तो ही अुसका शरीर फौलाद
सा बनेगा। जिसने ब्रह्मचर्यका पालन किया है, अुसका शरीर वज्र जैस
होना चाहिये। हम तो बालकके शरीरका नाश करते हैं। हम अुसे घर
रखकर गरमी देना चाहें तो, अिससे अुसके शरीरमें अैसी गरमी पैदा होत
है, जिसे हम भुजलीकी अुपमा दे सकते हैं। हमने शरीरकी जरूरतसे ज्या
सावधानी रखकर अुसे नाजुक बना कर बिगाड़ा है और बेकार बना दिया है

यह तो कपड़ोंकी बात हुअी। अिसके अलावा घरमें होनेवाली बन
चीजोंसे हम बालकके मन पर बुरा असर डालते हैं। अुसके ब्याह-शादीक
बातें करते हैं, अुसे देखनेको भी अैसी ही चीजें मिलती हैं। मुझे अचर
तो यह होता है कि हम जंगलीसे जंगली ही क्यों न बन गये। मर्यादा
तोड़नेके कअी साधन होने पर भी मर्यादा बनी हुअी है। अीश्वरने मनुष्य
अैसा बनाया है कि बिगड़नेके कअी मौके आने पर भी वह बच जाता है
यह अुसकी अलौकिक कला है। ब्रह्मचर्यके पालनमें अैसी जो कअी रुका
है वे दूर कर दी जायं, तो अुसे पालना संभव हो जाय, आसान हो जाय

अैसी हालत होने पर भी हम दुनियाके साथ शारीरिक होड़ लगा
चाहते हैं। अिसके दो रास्ते हैं। आसुरी और दैवी। आसुरी यानी शरीर
बल बढ़ानेके लिअे चाहे जैसे अुपाय करना, चाहे जिस पदार्थका सेव
करना, शरीरसे मुकाबला करना, गायका मांस खाना आदि। मेरे बचपन
मेरा अेक मित्र कहता था कि मांस खाना ही चाहिये, और अैसा न क
तो अंग्रेजों जैसा कद्दावर डील-डौल नहीं बनेगा। कवि नर्मदाशंकरने
अिसी तरहकी सलाह अपनी अेक कवितामें दी है। 'अंग्रेजो राज्य करे, दे
रहे दबाअी', 'पेलो पांच हाथ पूरो'—अिन पंक्तियोंमें यही भाव भरा
नर्मदाशंकरने गुजरात पर बहुत ही अुपकार किया है, परंतु अुनके जीव
दो भाग थे—अेक स्वेच्छाचारका समय और दूसरा संयमका। यह कवि
स्वेच्छाचारके समयकी है। जापानके लिअे भी जब दूसरे देशोंका मुका
करनेका समय आया, तब वहां गोमांस-भक्षणको स्थान मिला। अिस त
राक्षसी तरीके पर शरीरको बढ़ाना चाहें तो ये चीजें खानी ही पड़ती हैं।

परंतु दैवी ढंग पर शरीरको बनाना हो, तो ब्रह्मचर्य ही असका अेक अुपाय है। मुझे जब नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहा जाता है, तब मुझे अपने पर दया आती है। *मुझे दिये गये मानपत्रमें मुझे नैष्ठिक ब्रह्मचारी बताया गया है।* मुझे अितना तो कहना चाहिये कि जिसने मानपत्र लिखा है, अुसे मालूम नहीं था कि नैष्ठिक ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं। अुसे अितना भी खयाल नहीं आया कि जो आदमी मेरी तरह ब्याह किया हुआ है और जिसके बच्चे हो चुके हैं, वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी क्योंकर कहला सकता है? नैष्ठिक ब्रह्मचारीको न कभी बुखार आता है, न कभी अुसका सिर दुखता है, न कभी अुसे खांसी होती है और न अंतडीका फोडा (अेपेंडिसाअिटिस)। डाक्टर कहते हैं कि अंतडियोंमें नारंगीके बीज भर जानेसे भी अेपेंडिसाअिटिस हो जाता है। परंतु जिसका शरीर साफ और नीरोग है, अुसके शरीरमें *बीज टिक ही नहीं सकता। जब अंतडियां शिथिल पड जाती हैं, तब वे* अैसी चीजोंको अपने-आप बाहर नहीं फेंक सकती। मेरी भी अंतडियां शिथिल हो गअी होंगी, अिसीलिअे शायद मैं अैसी कोअी चीज पचा न सका हूंगा। बच्चे अैसी कअी चीजें खा जाते हैं। अुन पर मां थोडे ही ध्यान देती है? अुनकी अंतडियोंमें कुदरती तौर पर ही अितनी शक्ति होती है कि वे अैसी चीजोंको बाहर निकाल देती हैं। अिसलिअे मैं चाहता हूं कि मुझे नैष्ठिक ब्रह्मचारी बताकर कोअी मिथ्याचारी न बने। नैष्ठिक ब्रह्मचर्यका तेज तो जितना मुझमें है, अुससे कअी गुना ज्यादा होना चाहिये। मैं आदर्श ब्रह्मचारी नहीं हूं, परंतु यह सच है कि मैं वैसा बनना चाहता हूं। *मैंने आपके सामने अपने अनुभवमें से थोड़ी-सी बातें रखी हैं, जो ब्रह्मचर्यकी मर्यादा बताती हैं।* ब्रह्मचारी होनेका यह अर्थ नहीं कि मैं किसी भी स्त्रीको न छूअूं, अपनी बहनको भी न छूअूं; परंतु ब्रह्मचारी होनेका अर्थ यह है कि जैसे अेक कागजको छूनेसे मुझमें विकार पैदा नहीं होता, वैसे ही किसी स्त्रीको छूनेसे *मुझमें विकार नहीं पैदा होना चाहिये। मेरी बहन* बीमार हो और ब्रह्मचर्यके कारण मुझे अुसकी सेवा करनेसे, अुसे छूनेसे परहेज करना पड़े, तो वह ब्रह्मचर्य धूलके बराबर है। किसी मुर्दा शरीरको छूनेसे जैसे हमारा मन नहीं बिगड़ता, वैसे ही किसी सुन्दरसे सुन्दर स्त्रीको छूनेसे भी हमारा मन न बिगड़े तो हम ब्रह्मचारी हैं। *यदि आप चाहते हैं* कि लड़के-लड़कियां ब्रह्मचारी बनें, तो आपकी पढाअीका ढांचा आप नहीं बना सकते; मेरे जैसा, अधूरा ही क्यों न हो, ब्रह्मचारी ही बना सकता है।

ब्रह्मचारी स्वाभाविक संन्यासी होता है। ब्रह्मचर्य आश्रम संन्यास आश्रमसे भी ज्यादा बढ़ा-चढ़ा आश्रम है। परंतु हमने अुसे गिरा दिया, अिसलिअे हमारा गृहस्थाश्रम बिगड़ गया, वानप्रस्थाश्रम भी बिगड़ गया और संन्यास आश्रमका तो नाम ही नहीं रहा। हमारी अैसी दीन दशा हो गअी है।

अूपर जो राक्षसी मार्ग बनाया गया है, अुस पर चलकर तो हम पांच सौ बरसमें भी पठानोंका मुकाबला नहीं कर सकेंगे। दैवी मार्ग पर हम आज ही लगें, तो आज ही पठानोंका मुकाबला हो सकता है; क्योंकि जहां दैवी मार्गसे मानसिक परिवर्तन पलभरमें हो सकता है, वहां शरीरको बदलनेमें युग-युग लगते ही हैं। अिस दैवी मार्ग पर हम तभी चल सकते हैं, जब हमारे पिछले जन्मके पुण्य होंगे और मां-बाप हमारे लिअे योग्य सामग्री पैदा करेंगे।

नवजीवन, २६-२-'२५

११

माता-पिताकी जिम्मेदारी

१

जो माता-पिता अपने बच्चोंको स्कूलों या आश्रमोंमें भेजते हैं, अुनको कुछ फर्ज पूरे करने होते हैं। ये फर्ज पूरे न हों तो बच्चोंका, अुन संस्थाओंका और स्वयं माता-पिताका नुकसान होता है। जिस संस्थामें बच्चोंको भेजना हो, अुसके नियम जान लेने चाहिये। बच्चोंकी आदतें और जरूरतें जाननी चाहिये और किये हुअे निश्चय पर कायम रहना चाहिये। बच्चोंका जो समय आश्रममें रहनेका हो, अुस समय अुन्हें अपने स्वार्थके खातिर बाहर नहीं हटाया जाय, नौकरीके लिअे न हटाया जाय; फिर ब्याह-शादीमें जानेके लिअे तो हटाया ही कैसे जा सकता है? अैसे मौकों पर बच्चोंका बुलाना ही कैसे जा सकता है? जैसे माता-पिता अपने बड़े कामकाजमें बच्चोंको नहीं घसीटते, वैसे ही ब्याह-शादी जैसे कामोंमें भी अुन्हें नहीं घसीटना चाहिये। बच्चोंकी शिक्षाका समय अैसा होता है, जब अुनका ध्यान और किसी भी चिन्ताकी तरफ नहीं खींचना चाहिये। इस

ही, शिक्षाके कालमें बच्चोंको ब्रह्मचारी रहना चाहिये। यदि अुन्हें ब्याह-शादी देखनेका रोग लग गया, तो फिर अुसमें रुकावट पैदा हो सकती है। अिसलिअे बालकोंको अैसे कामोंसे जान-बूझकर दूर रखनेकी जरूरत है। अिसके अलावा, जब विवाहकी बात ही अिस समय विपरीत लगती है, तब जो बालक अुससे दूर रहना चाहता हो, अुसे भी अिसके लिअे ललचाना तो अुस पर अत्याचार ही करना है। अिस जमानेमें जब मन कमजोर हो गये हैं और लालचोंका सामना करनेकी शक्ति बहुत घट गयी है, तब यदि कोअी नियम पालनेका अिरादा करे और कुछ भी त्याग करना चाहे, तो अुसकी अिस वृत्तिको बल पहुंचानेकी जरूरत है। अैसा न करके यदि हम स्वयं ही नियमोंको तुड़वाते रहें तो हम कमजोरीको बढ़ाते हैं। जो बात ब्याह-शादीके मोहके लिअे कही गयी है, वह दूसरे कअी मामलोंमें भी लागू होती है। विचारके साथ बच्चोंको पालनेवाले माता-पिता अैसे कअी मौके ढूंढ सकेंगे, जब अुन्होंने बच्चोंको आगे बढ़ानेके बजाय पीछे धकेला है।

नवजीवन, १५-१२-'२१

२

अेक अैसी बहनने, जो पूरी तरह समझकर लिखती हैं, लिखा है :

"जब तक हमारे विद्यार्थी वीर्यकी रक्षा करना नहीं जानेंगे, तब तक भारतको जैसे पुरुषोंकी जरूरत है वैसे कभी नहीं मिलेंगे। लगभग १७ सालसे मैं लड़कोंका स्कूल चलाती हूं। अुत्साह और अुमंगसे स्कूलमें भरती होनेवाले हिन्दू, मुसलमान और अीसाअी लड़के जब स्कूल छोड़ते हैं, तो बिलकुल खोखले शरीर लेकर निकलते हैं। यह देखकर बड़ा दुःख होता है। सैकड़ोंके बारेमें अिसका कारण हस्त-मैथुन, प्रकृतिके खिलाफ संभोग या बाल-विवाह होता है। शिक्षक और विद्यार्थियोंके पिता कहेंगे कि अैसी कोअी बात नहीं। पर जरा तरकीबसे लड़कोंसे पूछा जाय, तो गंदगी मालूम हो जायगी और बहुत कुछ तो वे कबूल ही कर लेंगे। कुछ लड़के स्वीकार करते हैं कि हमने ये बुरी आदतें पुरुषों — अपने संबंधियों — से ही सीखी हैं।"

यह काल्पनिक चित्र नहीं है। कअी शिक्षकोंने अपना अनुभव अैसा ही बताया है। मैंने अिस बारेमें पहले भी सुना है। अिस विषय पर मेरा ध्यान पहले-पहल आठ सालसे पहले दिल्लीके अेक शिक्षकने खींचा था।

परंतु अैसे लोगोंकि साथ अुपायोंकी चर्चा करनेके सिवा मैंने और कुछ
किया। यह गंदगी सिर्फ भारतमें ही नहीं है; परंतु भारतमें अिसका
ज्यादा भयंकर है, *क्योंकि बाल-विवाहकी गंदगी भी यहां है।* अिस
और नाजुक सवालकी खुली चर्चा करनेकी जरूरत आ पड़ी है, क
प्रतिष्ठित पत्रोंमें भी विषय-विकारकी बातों पर अितनी आजादीसे
जाता है, जो कुछ साल पहले अशक्य था।

विषयभोगकी क्रियाको स्वाभाविक, आवश्यक, नीतियुक्त और मन
शरीरकी तन्दुरुस्ती बढ़ानेवाली माननेका जो प्रवाह चल पड़ा है, अुसने
गंदगीको बढ़ाया है। पढ़े-लिखे लोग भी गर्भ-निरोधके साधनोंका छूटसे प्र
करनेकी खुली हिमायत करते हैं। *अिससे अैसे वातावरणको पोषण मि*
है, जिसमें विषयभोगको अुत्तेजन मिले। नौजवानोंके कच्चे और जल्दी सं
ग्रहण करनेवाले दिमाग यह नतीजा निकालते हैं कि अुनकी अनुचित
नाश करनेवाली अिच्छा भी अुचित और अच्छी है। शिक्षक अिस भयंकर प
बारेमें दयाजनक ही नहीं, सजाके लायक लापरवाही और धीरज दि
है। *समाजको पूरी तरह स्वच्छ किये बिना अिस पापको किसी भी त*
नहीं रोका जा सकता। विषय-विकारोंसे भरे हुअे वायुमण्डलका असर
और गुप्त असर देशके स्कूलोंमें जानेवाले बालकोंके मन पर हुअे बिना
रह सकता। शहरी जीवनकी परिस्थिति, साहित्य, नाटक, सिनेमा, घर
व्यवस्था, कभी सामाजिक रूढ़ियां और क्रियाअें अेक ही चीज — वि
विकार — को भड़काती हैं। जिन बच्चोंको अपने अन्दर रहनेवाले पशु
खबर लग गअी है, वे अिस वातावरणके असरका विरोध नहीं कर सक
अिस हालतके लिअे अूपरी अुपायोंसे काम नहीं चलेगा। बड़ोंको बाल
और नौजवानोंके लिअे अपना फर्ज अदा करना हो, तो अुन्हें खुद अप
ही सुधार शुरू कर देना चाहिये।

नवजीवन, १२–९–'२६

३

अेक शिक्षक लिखते हैं:

"आपने नौजवानोंके दोषके बारेमें लिखा है। अिसके लिअे मु
तो माता-पिता ही जिम्मेदार लगते हैं। बड़े बालकोंके माता-पि
बच्चे पैदा करते रहे तो क्या फल होगा? क्या अैसी शादीको

व्यभिचारका नाम देना अनुचित होगा? अेक लड़का अपनी मांके मरनेके बाद अपने बापके पास सोता था। पिताने दूसरी शादी की और नअी पत्नीके साथ दरवाजे बन्द करके सोने लगा। अिससे अुस लड़केको कुतूहल हुआ कि मेरे पिताजी मेरे साथ क्यों नहीं सोते? या मेरी माता जीती थी, तब तो हम तीनों साथ सोते थे, अब नअी मांके आने पर मेरे पिताजी मुझे साथ क्यों नहीं सुलाते? बालकका कुतूहल बढ़ा। दरवाजेकी दरारमें से देखनेका अुसे मन हुआ। दरारमें से अुसने जो दृश्य देखा, अुसका अुसके मन पर क्या असर हुआ होगा?

"अैसी बातें समाजमें हमेशा होती रहती हैं। यह अुदाहरण भी मैंने मनगढन्त नहीं दिया है। यह अेक १३-१४ सालके लड़केसे सुनी हुअी हकीकत है। जो संतानें छोटी अुम्रमें आत्मनाशके रास्ते पर चलेंगी, वे स्वराज्य कैसे ले सकेंगी या चला सकेंगी? अैसा न होने देनेकी सावधानी हरअेक माता-पिता, शिक्षक, गृहपति या स्काअुट मण्डलीके मुखिया रखें तो? अकसर ब्रह्मचर्य शब्दका अर्थ समझना छोटी अुम्रमें कठिन होता है। अिसलिअे बहुतसे लड़कोंको जमा करके ब्रह्मचर्य पर भाषण देनेके बजाय अेक-अेकको अपने विश्वासमें लेकर और अुसके सच्चे मित्र बनकर यह सावधानी रखना कि वे छोटी अुम्रमें ही सदाचारकी तरफ मुड़ जायं, ज्यादा ठीक मालूम होता है। *क्या कोअी अैसा रास्ता है कि जिससे बालकके मनमें बुरे विचारोंको घुसनेका मौका ही न मिले?*

"अब बड़ी अुम्रके मनुष्योंके बारेमें। जो समाज या जाति दूसरी जातिकी स्त्रीके हाथका खानेवालोंका बहिष्कार करती है, वह पराअी स्त्रीके साथ संग करनेवालेका बहिष्कार क्यों नहीं करती? जो जाति राजनीतिक परिषदोंमें अछूतोंके साथ बैठनेवालोंको सजा देती है, वही जाति व्यभिचारियोंको सजा क्यों नहीं देती? अिसका कारण मुझे तो यह लगता है कि यदि हर जाति आत्मशुद्धि करने लगे, तो जातिका शरीर बहुत ही कमजोर हो जाय। परंतु अुन्हें अिस बातका कहां पता है कि कमजोर शरीरमें बलवान आत्मा हो सकती है? बहुतसी जातियोंके पंच स्वयं शराब या व्यभिचारकी बुराअीमें फंसे होते हैं, अिसलिअे अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी पड़नेके डरसे अिस

मामलेमें वे ध्यान नहीं देते हैं, और दूसरोंका बहिष्कार करनेके लिअे अेक पांव पर तैयार रहते हैं। यह समाज कब सुधरेगा? जिस देशको राजनीतिक अुन्नति करना हो, वह देश यदि पहले सामाजिक अुन्नति नहीं कर लेगा, तो राजनीतिक अुन्नति आकाशमें महल बनाने जैसी होगी।"

यह सबको मानना पड़ेगा कि अिस पत्रमें बहुत तथ्य है। यह बात समझानेकी जरूरत नहीं कि लड़के बड़े हो जायं, तो फिर अुनी स्त्रीने या पहली स्त्री मर जाय तब दूसरी शादी करके बच्चे पैदा करनेसे बालकोंको नुकसान पहुंचता है। परंतु अितना संयम न रखा जा सके, तो पिताको बच्चोंको दूसरे मकानमें रखना चाहिये या कमसे कम वह स्वयं अैसे किसी अलग कमरेमें रहे, जहांसे बालक कोअी आवाज न सुन सकें और न कुछ देख सकें। अिससे कुछ सभ्यता तो जरूर बनी रहेगी। बचपन निर्दोष रहना चाहिये, अिसके बजाय माता-पिता भोग-विलासके वश होकर बच्चोंको खराब करते हैं। वानप्रस्थ आश्रमका रिवाज बच्चोंकी नैतिकताके लिअे और अुन्हें स्वतंत्र और स्वावलंबी बनानेके लिअे बहुत ही अुपयोगी होना चाहिये।

लिखनेवाले भाअीने शिक्षकोंके लिअे जो सुझाव दिया है, वह तो ठीक ही है। परंतु जहां ४०–५० लड़कोंका अेक वर्ग हो और शिक्षकका विद्यार्थियोंके साथ सिर्फ अक्षरज्ञान देने जितना ही संबंध हो, वहां शिक्षक चाहें तो भी अितने लड़कोंके साथ आध्यात्मिक संबंध कैसे पैदा कर सकते हैं? फिर जहां पांच-सात शिक्षक पांच-सात विषय सिखा जाते हों, वहां लड़कोंको सदाचार सिखानेकी जिम्मेदारी किस शिक्षककी होगी?

और आखिरमें कितने शिक्षक अैसे मिलेंगे, जो बालकोंको सदाचारके रास्ते ले जाने या अुनका विश्वास प्राप्त करनेके अधिकारी होंगे? अिसमें तो शिक्षाका पूरा सवाल खड़ा होता है। परंतु अिसकी चर्चा अिस जगह नहीं हो सकती।

समाज भेड़-बकरियोंके रेवड़की तरह बिना सोचे-समझे आगे बढ़ा जाता है और कुछ लोग अिसीको प्रगति समझते हैं। अैसी भयंकर स्थितिमें भी हमारा अपना-अपना रास्ता आसान है। जो मानते हैं वे अपने-अपने क्षेत्रमें जितना हो सके सदाचारका प्रचार करें। सच्चा प्रचार तो स्वयं

अपनेमें ही करें। दूसरेके दोष पर ध्यान देते समय हम स्वयं बहुत भले बन जाते हैं। परंतु हम अपने दोषों पर ध्यान देंगे, तो हम अपने आपको कुटिल और कामी पायेंगे। दुनियाभरके काजी बननेसे स्वयं अपना काजी बनना ज्यादा लाभकारी होता है और अैसा करनेसे हमें दूसरोंके लिअे भी रास्ता मिल जाता है। 'आप भला तो जग भला' का अेक अर्थ यह भी है। तुलसीदासजीने संत पुरुषको पारसमणिकी जो अुपमा दी है वह गलत नहीं। हम सबको संत बननेका प्रयत्न करना है। अैसा होना अलौकिक मनुष्यके लिअे अूपरसे अुतरा हुआ कोआी प्रसाद नहीं, बल्कि हर मनुष्यका कर्तव्य है। यही जीवनका रहस्य है।

नवजीवन, २६–९–'२६

१२
विषय-वासनाकी विकृति

१

कुछ वर्ष हुअे बिहार सरकारके शिक्षा-विभागने अपने स्कूलोंमें फैले हुअे 'अप्राकृतिक दोष' के सवालके बारेमें जांच करनेके लिअे अेक समिति कायम की थी। अिस समितिने बताया था कि स्कूलोंके शिक्षकोंमें भी यह बुराआी फैली हुआी है और वे अपनी अस्वाभाविक विषय-वासनाको पूरा करनेके लिअे विद्यार्थियों पर अपने पदका दुरुपयोग करते हैं। शिक्षा-विभागके संचालकने अेक गश्ती-पत्र जारी करके जिस शिक्षकमें अैसी बुराआी हो, अुस पर विभागकी तरफसे कदम अुठानेकी आज्ञा दी थी। अिस गश्ती-पत्रसे क्या नतीजा निकला — यदि कोआी निकला हो तो — यह जानना बड़ा दिलचस्प रहेगा।

अिस बुराआीकी तरफ मेरा ध्यान खींचनेवाला और यह बतानेवाला साहित्य कि यह बुराआी सारे भारतमें सरकारी और खानगी स्कूलोंमें बढ़ती जा रही है, दूसरे प्रान्तोंसे मेरे पास भेजा गया था। लड़कोंकी तरफसे मिले हुअे निजी पत्रोंसे भी यह खबर पक्की होती है।

अप्राकृतिक होने पर भी यह बुराआी हममें अनादि कालसे चली आ रही है। सभी छिपे हुअे दोषोंका अुपाय ढूंढ़ना कठिन होता है। और जब

वह विद्यार्थियोंके माता-पिता जैसे शिक्षकों तकमें फैल जाती है, तब तो अुपाय खोजना और भी कठिन हो जाता है। 'नमक ही अपना खारापन छोड़ दे, तो फिर खारापन कहांसे आयेगा?' मेरी रायमें शिक्षा-विभागकी तरफसे जो कदम अुठाये गये हैं, वे साबित हो चुके सभी मामलोंमें जरूरी हैं। फिर भी अुनसे शायद ही यह बुराअी पूरी तरह दूर हो सकेगी। जिनका मुकाबला करनेका अुपाय तो लोकमत तैयार करके अुसे जरूरी अूंची भूमिका पर ले जाना ही है। परन्तु अिस देशमें बहुतसे मामलोंमें लोकमत जैसी कोअी चीज है ही नहीं। राजनीतिक जीवनमें लाचारीकी जो भावना फैली हुअी है, अुसका असर दूसरे सब विभागों पर हुआ है। अिसलिअे हमारी आंखोंके सामने होनेवाली बहुतसी बुराअियोंको देखकर हम अुनकी अुपेक्षा करते हैं।

आजकी शिक्षा, जो साहित्यिक शिक्षाके सिवा और किसी शिक्षा पर जोर नहीं देती, अिस बुराअीको दूर करनेके लिअे योग्य नहीं है। यह तो असलमें अुसे बढ़ानेवाली है। सरकारी स्कूलोंमें जानेसे पहले जो लड़के शुद्ध थे, वे वहांकी पढ़ाअीके अन्तमें अशुद्ध, अशक्त और निकम्मे बने हुअे दीखते हैं बिहारकी अुपर्युक्त समितिने अैसी सिफारिश की है कि लड़कोंके मनमें धर्मके लिअे आदर पैदा करना चाहिये। परन्तु बिल्लीके गलेमें घंटी कौन बांधे? शिक्षक ही धर्मके लिअे आदर रखना सिखा सकते हैं। किन्तु जहां अुन्हींके मनमें धर्मका मान न हो, वहां क्या किया जाय? अिसका अेक ही अुपाय है और वह यह कि शिक्षकोंका ठीक चुनाव किया जाय। परन्तु अैसा करनेका अर्थ या तो यह है कि आजकल शिक्षकोंको जो वेतन दिया जाता है, अुससे कहीं अूंचे वेतनवाले शिक्षक रखे जायं, या यह कि शिक्षाको नौकरी न समझकर अेक पवित्र कर्तव्य मानने और अुसके लिअे जीवन अर्पण करनेकी पद्धति अपनायी जाय। यह पद्धति आज भी रोमन कैथोलिक सम्प्रदायमें जारी है। मुझे तो अैसा लगता है कि पहली पद्धति भारत जैसे गरीब देशमें नहीं चल सकती, अिसलिअे दूसरी पद्धति अपनाये बिना काम नहीं चल सकेगा। पर जिस राज्य-पद्धतिमें हर चीजकी कीमत रुपये-आने-पाअीसे आंकी जाती है और जो दुनियामें सबसे खर्चीली है, अुसमें हमारे लिअे यह रास्ता खुला नहीं है।

आम तौर पर माता-पिता अपने बच्चोंके सदाचारके बारेमें कोअी रस नहीं लेते, अिसलिअे आजकी अिस बुराअीका सामना करनेकी कठिनाअी बढ़ जाती है। माता-पिता मान लेते हैं कि लड़कोंको स्कूल भेज दिया कि अुनका

फर्ज पूरा हुआ। अिस तरह हमारे सामनेका दृश्य निराशा पैदा करनेवाला है। परन्तु सब बुराअियोंका अेक ही अिलाज है यानी सबकी शुद्धि की जाय। यह हकीकत आशाजनक है। बुराओ बहुत बड़ी है, जिससे हमें दबना नहीं चाहिये। हममें से हरअेक आत्मशुद्धिको अपना पहला काम समझे और अपने बिलकुल आसपासके क्षेत्र पर बारीक नजर रखनेके लिअे भरसक प्रयत्न करे। हम दूसरे मनुष्यों जैसे नहीं, अैसे आत्म-सतोषकी भावनासे बैठे नहीं रहना चाहिये। अप्राकृतिक दोष कोओी अलग चमत्कार नहीं। यह तो सिर्फ अेक ही रोगका अुग्र चिह्न है। हममें गंदगी हो, हम विषयी और पतित हों, तो हमें अपने पड़ोसियोंको सुधारनेकी आशा रखनेसे पहले अपने आपको सुधारना चाहिये। अपने दोषके लिअे बहुत ज्यादा अुदारता रखकर भी यदि हम दूसरोंका न्याय करने बैठें, तो व्यवहारका अतिरेक होता है। नतीजा यह होता है कि बात दुश्चक्रमें पड़ जाती है। जो मेरे अिस कहनेकी सचाओीको समझता है, अुसे अिस चक्रमें से निकल जाना चाहिये। अैसा करनेसे अुसे मालूम होगा कि प्रगति, जो आसान तो कभी नहीं होती, प्रत्यक्ष रूपसे संभव हो सकती है।

यंग अिडिया, भाग ११, पृ० २१२

२

लाहौरके सनातन धर्म कॉलेजके प्रिंसिपाल लिखते हैं:

"अिसके साथ अखबारकी कतरन और विज्ञापन वगैरा भेजता हूं। अिन्हें देख जानेकी आपसे प्रार्थना करता हूं। अिन्हींसे आप सब बात समझ जायेंगे। यहां पंजाबमें छात्र-हितकारी संघ बहुत अुपयोगी काम कर रहा है। शिक्षा-संस्थाओंका और अधिकारी वर्गका ध्यान अिसकी तरफ खिचा है और लड़कोंके संस्कारी माता-पिताओंकी दिलचस्पी भी संघने अिस काममें पैदा की है। बिहारके पंडित सीताराम दास अिस कामको शुरू करनेवाले हैं और अिस कामको सहारा देनेवालोंमें यहांके बहुतसे प्रतिष्ठित सज्जनोंके नाम गिनाये जा सकते हैं।

"यह निर्विवाद है कि भारतके दूसरे हिस्सोंसे पंजाब और अुत्तर पश्चिमी सरहदके प्रान्तोंमें छोटी अुम्रके लड़कोंको फंसानेका दुराचार ज्यादा है।

"मेरी प्रार्थना है कि आप 'हरिजन' में या किसी और पत्रमें लेख लिखकर अिस बुराअीकी तरफ देशका ध्यान खींचें।"

अिस अत्यन्त नाजुक प्रश्नके बारेमें बहुत समय पहले छात्र-हितकारी संघके मंत्रीने मुझे लिखा था। अुनका पत्र आते ही मैंने डा० गोतीचन्दके साथ पत्रव्यवहार शुरू कर दिया और अुन्होंने बताया कि संघके मंत्रीके पत्रमें लिखी हुअी सब बातें सच हैं। परन्तु अिस प्रश्नकी अिस पत्रमें या और कहीं चर्चा करनेकी मुझे स्पष्ट बात नहीं सूझती थी। अिस दुराचारका मुझे पता था, परन्तु मुझे यह भरोसा न था कि पत्रमें अिसकी चर्चा करनेसे लाभ होगा या नहीं। यह भरोसा आज भी नहीं है। परन्तु कॉलेजके प्रिंसिपालकी प्रार्थनाकी मैं अुपेक्षा नहीं कर सकता।

यह दुराचार नया नहीं है। यह बहुत फैला हुआ है। यह गुप्त रखा जाता है, अिसलिअे आसानीसे पकड़ा नहीं जा सकता। विलासी जीवनके साथ यह जुड़ा रहता है। प्रिंसिपालके बताये हुअे किस्सेमें तो यह कहा गया है कि शिक्षक ही अपने विद्यार्थियोंको भ्रष्ट करते हैं। बाड़ ही जब खेतको खाने लगे, तो शिकायत किससे की जाय? बाअिबलमें कहा है कि 'नमक ही अपना खारापन छोड़ दे, तो फिर खारापन कहांसे आयेगा?'

यह प्रश्न अैसा है कि अिसे कोअी जाच-समिति या सरकार हल नहीं कर सकती। यह तो नैतिक सुधारकका काम है। माता-पिताके मनमें अुनकी जिम्मेदारीका भान पैदा करना चाहिये। विद्यार्थियोंको शुद्ध और पवित्र रहन-सहनके निकट संपर्कमें लाना चाहिये। अिस विचारका गंभीरताके साथ प्रचार करना चाहिये कि सदाचार और निर्मल जीवन सच्ची शिक्षाका आधार है। शिक्षा-संस्थाओंके ट्रस्टियोंको शिक्षकोंके चुनावमें बहुत ही सावधानी रखनी चाहिये और शिक्षकको चुन लेनेके बाद भी अिस बातका ध्यान रखना चाहिये कि अुसका चाल-चलन ठीक है या नहीं। ये तो मैंने थोड़ेसे अुपाय बताये हैं। अिनसे यह भयानक दुराचार जड़से नहीं मिटे, तो भी काबूमें जरूर लाया जा सकता है।

हरिजनबन्धु, २८-४-'३५

३

शिक्षक अपनी विद्यार्थिनियोंके साथ छिपे सम्बन्ध रखने लगें और फिर अुनमें से कोअी-कोअी अुन सम्बन्धोंको विवाहका रूप दे दें, तो जिससे अैसे

सम्बन्ध पवित्र नहीं बन जाते। मेरी पक्की राय है कि जैसे सगे भाओी-बहनोंमें पति-पत्नीका नाता नहीं हो सकता, वैसे ही शिक्षक और शिष्यामें भी नहीं हो सकता। यदि अिस सुवर्ण नियमका पूरी तरह पालन न हो, तो अन्तमें शिक्षण-संस्था टूट जाय; कोओी लड़की शिक्षकोंसे सुरक्षित न रह सके। शिक्षककी पदवी अैसी है कि लड़के और लड़कियां सदा अुनके असरमें रहते हैं; शिक्षककी बातको वे वेदवाक्य समझते हैं। अिस कारणसे शिक्षक मर्यादा न रखे, तो अुसके बारेमें अुन्हें कोओी शंका नहीं होती। अिसलिअे जहां शरीरसे अलग आत्माका सम्मान है, वहां अिस तरहके सम्बन्ध असह्य माने जाते हैं, और माने जाने चाहिये।

हरिजनबन्धु, २९–११–'३६

१३

काम-विज्ञान

१

श्री मगनभाओी देसाओी, जिन्होंने थोड़े दिन पहले गुजरात विद्यापीठसे 'पारंगत' की पदवी ली है, अपने ७ अक्तूबरके पत्रमें लिखते हैं :

"अिस बारके 'हरिजन' के लेख परसे मेरे जीमें आया कि मैं भी अेक चर्चा आपसे कर लूं। अिस बारेमें आपने शायद ही आज तक लिखा या कहा है। यह विषय है बालकों, खास कर विद्यार्थियोंको काम-विज्ञान सिखानेका। आप तो जानते हैं कि . . . गुजरातमें अिस विषयके बड़े हिमायती माने जाते हैं। मुझे स्वयं तो अिस बारेमें हमेशा अन्देशा रहा है। अितना ही नहीं, मैंने तो यह माना है कि वे अिस विषयमें लायक भी नहीं हैं। परिणामसे तो अिसकी बुराओी दीखती जा रही है। वे तो शायद यही मानते होंगे कि काम-विज्ञानके अज्ञानसे ही मानो शिक्षा और समाजमें आजकी सड़ांध है! नया मानसशास्त्री भी मनुष्यकी प्रवृत्तिकी जड़ अिसी सोये हुअे कामको बताता है। 'काम अेष क्रोध अेष:' से आगे ये लोग जाते ही नहीं। हमारा . . . अेक दिन मुझे कहने लगा, 'आपको कहां पता है कि हममें से हरअेकमें काम नामक राक्षस छिपा हुआ है?' और अिस परसे अिसकी नैतिक

भावना जाग्रत होनेके बजाय जड़ हुआी पायी गयी। अिस त
काम-विज्ञानकी शिक्षाके नाम पर ही गुजरातमें अिसका काफी प्रच
हो रहा है। अिसकी पुस्तकें भी लिखी गयी हैं और अुनके संस्कर
हजारोंकी तादादमें खपते हैं। कैसे-कैसे साप्ताहिक अिस सम्बन्ध
चलते हैं और कितनी बड़ी अिनकी खपत है! यह सब तो ठीक ही है
जैसा समाज वैसे सिखानेवाले अुसे मिल ही जाते हैं और सुधारक
स्थिति और ज्यादा अटपटी बनाते हैं।

“परन्तु मैं तो आपसे शिक्षाके अिस सवालकी खुली चर्चा चाहता हूं: क्या सचमुच शिक्षामें कामशास्त्रकी शिक्षा जरूरी है? कौन अिसका अधिकारी है? क्या वह सबको मामूली भूगोल और हिसाबकी तरह सिखाया जाय? अुसके संबंधमें क्या सिखाया जाय? अुसकी मर्यादा क्या हो और अुसे कौन बांधे? और मूलमें मिले हुअे अिस शत्रुकी मर्यादा अुलटी दिशामें बांधना ठीक होगा या आजकी तरह शुभ नामसे अुसे बढ़ावा दिया जाय? अैसे-अैसे अनेक प्रकारके और अनेक पहलुओंवाले कअी सवाल अुठते हैं। आप अिसके बारेमें अंग्रेजीमें लिखें सो तो ठीक है, परन्तु मेरा मुख्य सवाल गुजरातके सिलसिलेमें है, अिसलिअे गुजरातीमें भी लिखिये; और यह तो हमारी अेक शिकायत है ही कि आप सीधे ‘हरिजनबन्धु’ में कुछ नहीं लिखते। आशा है आप अिस प्रश्न पर लिखेंगे, और अुसके अलावा गुजरातीमें भी कुछ लिखेंगे।

“मेरे सवालके संबंधमें अेल० पी० जैक्सका अेक अुद्धरण* देता हूं। आप तो अिनसे ऑक्सफोर्डमें मिले होंगे। अिनके पुस्तकीय परिचयने मुझे तो अिस आदमीकी दृष्टि और अनुभवके लिअे बड़ा आदर है। यह अुद्धरण भी कितना मार्मिक है!”

* * *

गुजरातमें क्या और दूसरे प्रान्तोंमें क्या, कामदेव रिवाजके मुताबिक जीतते चले जा रहे हैं। अुनकी आजकलकी जीतमें यह विशेषता है कि अुनकी शरणमें जानेवाले स्त्री-पुरुष अैसा करना अपना धर्म समझते मालूम होते हैं। जब गुलाम अपनी बेड़ीको आभूषण समझकर मुस्कराये, तब अुसके

---

* अिस प्रकरणके खण्ड २ के रूपमें यह अुद्धरण पृष्ठ ८६ पर दिया गया है।

मालिककी पूरी जीत हुअी मानी जाती है। अिस तरह कामदेवकी जीत होती देखकर भी मेरा अटल विश्वास है कि यह विजय क्षणिक है, तुच्छ है और अंतमें डंक मारनेके बाद विच्छूकी तरह निस्तेज हो जानेवाली है। परन्तु अैसा होनेसे पहले पुरुषार्थ करनेकी जरूरत तो रहेगी ही। यहां मेरे कहनेका यह मतलब नहीं कि कामदेवको अंतमें हारना पड़ेगा, अिसलिअे हमें गाफिल होकर बैठे रहना चाहिये। कामदेव पर विजय पाना स्त्री-पुरुषके परम कर्तव्योंमें से अेक है। अुसे जीते बिना स्व-राज्य असंभव है। स्व-राज्यके बिना स्वराज या रामराज होगा ही कैसे? स्व-राज्यके बिना स्वराजको खिलौनेका आम समझिये। दीखनेमें बड़ा सुन्दर और खोलें तो अंदर पोलंपोल! कामको जीते बिना कोअी सेवक हरिजनोंकी, साम्प्रदायिक अेकताकी, खादीकी, गाय माताकी और देहातियोंकी सेवा कभी नहीं कर सकता। अिस सेवाके लिअे बुद्धिकी सामग्री काफी न होगी। आत्मबलके बिना यह महान सेवा अशक्य है। और प्रभुकी कृपाके बिना आत्मबल नहीं आ सकता। कामी पर अीश्वरकी कृपा हुअी कभी देखी नहीं गअी।

तो क्या कामशास्त्रका हमारी पढ़ाअीमें स्थान है? या है तो कहां है? — यह सवाल मगनभाअीने पूछा है। कामशास्त्र दो तरहके हैं। अेक तो कामदेव पर विजय पानेका शास्त्र है। अुसका स्थान शिक्षाक्रममें होना ही चाहिये। दूसरा शास्त्र कामको भड़कानेवाला है। अिससे बिलकुल दूर रहना चाहिये। सब धर्मोंने कामको बड़ा शत्रु माना है। क्रोधका दूसरा दर्जा है। गीता तो कहती है कि कामसे ही क्रोध पैदा होता है। वहां 'काम' का व्यापक अर्थ लिया गया है। हमारे विषयका 'काम' प्रचलित अर्थमें ही प्रयुक्त हुआ है।

अैसा होने पर भी यह सवाल रहता है कि लड़कों और लड़कियोंको गुप्त अिन्द्रियों और अुनके व्यापारके बारेमें ज्ञान कराया जाय या नहीं? मुझे लगता है कि अेक हद तक यह ज्ञान जरूरी है। आज बहुतसे लड़के और लड़कियां शुद्ध ज्ञान न मिलनेसे अशुद्ध ज्ञान पाते हैं और अिन्द्रियोंका काफी दुरुपयोग करते देखे जाते हैं। आंखें होने पर भी हम न देखें तो अिससे काम पर विजय नहीं पाअी जा सकती। मैं लड़के-लड़कियोंको अुन अिन्द्रियोंके अुपयोग और दुरुपयोगका ज्ञान देनेकी जरूरत मानता हूं। मेरे हाथमें आये हुअे लड़के-लड़कियोंको मैंने अिस तरहका ज्ञान देनेका प्रयत्न भी किया है।

परन्तु यह शिक्षा दूसरी ही दृष्टिसे दी जाती है। जिस तरह अिन्द्रियोंका ज्ञान देते समय संयम सिखाया जाता है, यह सिखाया जाता है कि कामको कैसे जीता जाय। यह ज्ञान देते हुअे ही मनुष्य और पशुके बीचका भेद समझाना जरूरी हो जाता है। मनुष्य वह है जिसमें हृदय और बुद्धि है। यह 'मनुष्य' शब्दका तात्पर्य है। हृदयको जाग्रत करनेका अर्थ है, आत्माको जाग्रत करना। बुद्धिको जाग्रत करनेका अर्थ है, सार और असारका भेद सिखाना। यह सिखाते हुअे ही यह भी सिखाया जाता है कि कामदेव पर विजय कैसे पाअी जाय।

यह अच्छा शास्त्र कौन सिखाये? जैसे खगोल या ज्योतिष शास्त्र वही सिखा सकता है जो अुसमें पारंगत हो, वैसे ही कामशास्त्र वही सिखा सकता है जिसने कामको जीत लिया हो। अुसकी भाषामें संस्कार होगा, बल होगा और जीवन होगा। जिसके अुच्चारणके पीछे अनुभव-ज्ञान नहीं, अुसका अुच्चारण जड़वत् होता है, वह किसी पर असर नहीं डाल सकता। जिसे अनुभव-ज्ञान है, अुसकी बातका फल निकलता है।

आजकलका हमारा बाहरी व्यवहार, हमारा वाचन, हमारा विचार और सब कामकी जीत बतानेवाले हैं। अिसके फंदेमें से निकलनेका प्रयत्न करना है। यह कार्य अवश्य टेढ़ी खीर है। किन्तु जिन्हें शिक्षण-शास्त्रका अनुभव है और जिन्होंने कामदेवको जीतनेका धर्म अंगीकार कर लिया है, ऐसे गुजराती भले मुट्ठीभर ही हों, परन्तु यदि अुनकी श्रद्धा अटल रहेगी, वे सदा जाग्रत रहेंगे और सतत प्रयत्न करेंगे, तो गुजरातके लड़के-लड़कियोंको शुद्ध ज्ञान मिलेगा। वे कामके जालसे छूट जायेंगे और जो न फंसे होंगे वे अुससे बच जायेंगे।

हरिजनबन्धु, २२-११-'३६

२

कामशास्त्रकी शिक्षा

[अूपरके लेखमें दिये गये पत्रमें अेल० पी० जैक्सके जिस अुद्धरणका अुल्लेख किया गया है, अुसका अनुवाद नीचे दिया जाता है। यह अुद्धरण अिन लेखककी 'मनुष्यकी सर्वांगीण शिक्षा' — 'The Education of the Whole Man' नामक पुस्तकमें से लिया गया है।]

मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि यह मानना मुझे महा भयंकर भ्रम मालूम होता है कि कामशास्त्रकी पूरी और शुद्ध चर्चा करनेसे बालक और नौजवान अिसकी विकृतिसे बच जायेंगे। अिसी तरह अैसी 'पूरी और शुद्ध' चर्चा करनेकी जिम्मेदारी जिन शिक्षकों या शिक्षिकाओंके कंधों पर हो, अुनकी जगह लेनेको भी मेरा मन नहीं होगा। यह चीज अैसी है कि अिसकी चर्चा भी, विशेष कर बालकोंके साथ की जाने पर, अुनके लिअे सुझावका रूप ले लेती है और अुनके मनमें अैसी वासनाअें जाग्रत करनेका कारण बन जाती है। *अिसकी गुप्तताका कुछ हद तक यही रहस्य है।* चर्चासे कुतूहल अेक रूपमें शात होता है, तो दूसरे रूपमें जाग्रत होता है। जो नौजवान शिक्षकोंकी देखरेखमें (ये शिक्षक स्वयं भी शायद ही खतरेसे खाली होते होंगे) कामशास्त्रमें विशारद हुआ हो और जिसे पेड़के फलनेसे लगाकर यह सारा 'विषय' कण्ठस्थ हो, वह अच्छी तरह जानता है कि अुसका ज्ञान जब तक प्रयोगकी हद तक नहीं पहुंचाया जायगा तब तक वह ज्ञान बिलकुल अधूरा रहेगा; और सभव तो यह है कि वह कुछ ही समयमें अिसका प्रयोग किये बिना न रहेगा। अुसे यह भी संदेह रहता है कि शिक्षकोंने अुसे अिस बारेमें पूर्ण सत्य बताया है या नहीं। खास कर जब सदाचारके सिद्धान्तों पर बहुत जोर दिया जाता है, तब तो नौजवानको हमेशा यह शक रहता है; और जब अैसा होता है तो वह अधिक जल्दी प्रयोग करनेकी स्थितिमें पहुचेगा और यह पता लगायेगा कि शिक्षकोंने अुसे अंधेरेमें रखा है या नहीं। शायद सिद्धान्तसे प्रयोग पर, कामशास्त्रके ज्ञानसे आचरण पर, जल्दी-जल्दी पहुचनेकी यह प्रगति यूरोपके दक्षिणी भागके देशोंमें बुरी न समझी जाती हो, या शायद अिसीको ध्येय माना जाता हो; परन्तु ठंडे देशोंमें स्त्री-पुरुषके सम्बन्धमें सुधार करानेकी अिच्छा रखनेवाले जब नौजवानोंको कामशास्त्र सिखानेकी बात कहते हैं, तब अुनके मनमें यह चीज नहीं होती। विज्ञानके नामसे पहचानी जानेवाली ज्ञानकी दूसरी शाखाओंमें शिक्षा देते समय पाठ पूरा करने और अुसे विद्यार्थीके गले अुतारनेके खातिर प्रयोग जरूरी समझा जाता है। *गणितके जिस सवालका सिद्धान्त विद्यार्थीको समझाया जाता है, वह सवाल* अुसे स्वयं करके देख लेना चाहिये; जिस चीजके गुण अुसे बताये जाते हैं, अुस चीजकी अुसे जाच कर लेनी चाहिये और अुसके नमूने और नकलें तैयार करनी चाहिये। वर्गमें जो कुछ सिखाया गया हो, अुसकी जाच प्रयोग-

शालामें करके देग लेनी चाहिये, स्कूलसे बाहर भरने ज्ञानकी परीक्षा कर लेनी चाहिये, आदि। परन्तु जो विषय हमारे सामने है, अुसमें यही सवाल अैसा है जहां शिक्षकको रुक जाना पड़ता है। क्योंकि अिसका हेतु प्रयोगको अुत्तेजन देनेके बजाय प्रयोगको रोकना होता है; और सच्चा डर यह है कि जो चीज शिक्षकने अधूरी रखी है, अुसे विद्यार्थी शिक्षकके सोचे हुये समयसे जल्दी ही और वह न चाहे अैसे तरीकेसे पूरा कर लेगा। आकर्षण के गुण या पाचनकी क्रिया समझाते समय वह जब 'ठंडे खून' से काम लेता है, वैसा अिसमें नहीं होता। यहां तो गरमागरम खूनसे, प्रसंगके लिअे गरम हो रहे खूनसे, वह काम लेना है; वह आगके साथ खेलता है।

शिक्षकके लिअे जो डर रहता है, अुसे विस्तारसे बतानेकी जरूरत नहीं। काम-विकारके मामलेमें दिल खोलकर बात करना कठिन है। परन्तु यदि मनमें चोरी रखी हो, तो नौजवान अुसे जल्दी पकड़ लेते हैं; और अैसा जरा भी शक अुन्हें हो जाय कि शिक्षकने दिलमें कुछ छिपाकर बात की है, तो अच्छे नतीजेकी आशा मारी जाती है। धर्मके बारेमें भी यही बात है।

अिसलिअे मैं तो अिस निर्णय पर पहुंचता हूं कि 'काम-विकारके प्रश्नका निपटारा' जिस हद तक शिक्षकके हिस्सेमें आता है, अुस हद तक अुसका कर्तव्य यह है कि ज्ञानप्राप्ति तक ही शिक्षाका ध्येय न रख कर अुसे आगे बढ़ावे और नवसर्जनकी कुशलता तक अुसे ले जाय। सीधी भाषामें अिसका अर्थ यह है कि कलाको (यहां कलाका अर्थ विशाल यानी बहुत कुशलतासे किया हुआ कर्तव्य कर्म समझना चाहिये) पढ़ाअीमें ज्यादा महत्वका और ज्यादा केन्द्रीय स्थान मिलना चाहिये।

अिस सवालके बारेमें माता-पिताका क्या कर्तव्य है, अिसकी भी चर्चा कर लें। . . . मैंने अूपर जो कुछ कहा है, वह यहां थोड़ा मर्यादित रूपमें लागू किया जा सकता है। अिस विषयमें वाद-विवादकी गुंजाअिश ही नहीं है कि यदि कामशास्त्रका ज्ञान देना हो, तो माता-पिता अुसके अच्छेसे अच्छे शिक्षक हैं या होने चाहियें। गृह-जीवनके साधारण वातावरण पर सारा आधार है। गृह-जीवन यदि निष्प्राण या विषयभोगसे भरा हो, तो कामशास्त्र जितना दूसरी जगह खतरनाक हो सकता है, अुतना ही घरमें भी हो सकता है।

हरिजनबन्धु, २९-११-'३६

१४

शरीरश्रमकी महिमा

कुछ सवाल-जवाब*

अेक मित्रने कुछ दिन हुअे गांधीजीके साथ बातें करते समय फुरसतका सवाल अितना कठिन है, अिस बारेमें आश्चर्य प्रगट किया और पूछा : "आप यह आग्रह क्यों रखते हैं कि मनुष्यको रोज आठ घण्टे शरीरश्रम करना चाहिये? सुव्यवस्थित समाजमें क्या यह नहीं हो सकता कि कामके घंटे घटाकर दो कर दिये जायं और मनुष्यको बुद्धि और कलाके कामोंके लिअे काफी फुरसत दी जाय?"

"हम जानते हैं कि जिन्हें अैसी फुरसत मिलती है—फिर भले वे मजदूर हों या बुद्धिजीवी — वे अुसका अच्छेसे अच्छा अुपयोग नहीं करते, अुलटे हम तो देखते है कि खाली दिमाग शैतानका कारखाना बन जाता है।"

"जी नहीं; मनुष्य आलसी बनकर बैठा नहीं रहता। मान लीजिये हम दो घंटे शरीरश्रम और छह घंटे बौद्धिक श्रम, अिस तरह दिनके हिस्से करें, तो अिससे राष्ट्रको लाभ न होगा?"

"मैं नहीं मानता कि अैसा हो सकता है। मैंने अिसका हिसाब ही नहीं लगाया। परन्तु कोअी आदमी राष्ट्रके लिअे बौद्धिक श्रम न करके सिर्फ स्वार्थके लिअे करे, तो यह योजना पार नहीं पड़ सकती। सरकार अुसे दो घंटेकी मजदूरीके बदलेमें काफी रुपया दे और दूसरा काम पैसा दिये बिना करनेको मजबूर करे तो दूसरी बात है। वह बहुत सुन्दर चीज होगी। परन्तु यह बात अेक तरहकी सरकारी जबरदस्तीके बिना नहीं हो सकती।"

"परन्तु आपका ही अुदाहरण लीजिये। आपसे आठ घंटे शरीरश्रम हो ही नहीं सकता; आपको आठ घंटे या अिससे भी ज्यादा बौद्धिक काम करना पड़ता है। आप तो अपनी फुरसतका दुरुपयोग नहीं करते!"

"यह लाजिमी काम है और अिसमें फुरसत ही नहीं रहती। अुदाहरणके लिअे, मैं टेनिस खेलने जाअूं, तो कहा जा सकता है कि वह फुरसतका समय है। मेरा अुदाहरण लेकर भी मैं यह कहूंगा कि यदि हम आठ घंटे

* श्री महादेवभाअीके पत्रसे।

[illegible] करते होते, तो हमारे मन आजसे कहीं ज्यादा [illegible] विचार नहीं आता। मैं यह नहीं कह सकता [illegible] बुरे विचार आते ही नहीं। आज भी मैं जो जैसा हूं, [illegible] है कि मैंने अपने जीवनमें बहुत जल्दी शरीरश्रमकी [illegible]।"

"परन्तु यदि शरीरश्रममें अितना ज्यादा गुण हो, तो हमारे जो [illegible] करनेवाले भी ज्यादा काम करते हैं, अुनके मनकी पवित्रता या [illegible] पर अुसका कोअी खास असर क्यों नहीं दिखाअी देता?"

"जिस तरह मानसिक श्रममें ही सारी शिक्षा नहीं समा जाती, अुसी तरह शरीरश्रममें भी सारी शिक्षा नहीं समा जाती। हमारे लोग जानते नहीं। परन्तु अुनकी दृष्टिमें तो यह व्यर्थका श्रम है और अिससे मनुष्यकी सूक्ष्म बुद्धि जड़ बन जाती है। सवर्ण हिन्दुओंके खिलाफ मेरी यही तो सबसे बड़ी शिकायत है। अिन्होंने मजदूरोंके कामको बिना लाभका काम बना दिया है। अिससे अुन लोगोंको न तो कुछ आनन्द मिलता है और न अुनकी अिसमें कोअी दिलचस्पी होती है। यदि हमने अुन्हें समाजके समान दर्जेवाले सदस्य माना होता, तो अुनका स्थान समाजमें सबसे ज्यादा गौरवपूर्ण होता। यह कलियुग माना जाता है। मैं मानता हूं कि सतयुगमें समाज आजसे अधिक सुव्यवस्थित था। हमारा देश बहुत पुराना है। अिसमें कभी संस्कृतियां पैदा हुअी और मिट गअी, और किस युगमें हम कैसे थे, यह निश्चयपूर्वक कहना कठिन है। परन्तु अिस बारेमें जरा भी शक नहीं कि हमने बहुत लम्बे अर्से तक शूद्रोंकी जो अुपेक्षा की, अुसीके कारण हमारी आज यह दुर्दशा हुअी है। आजकी गांवोंकी संस्कृति — यदि अुसे संस्कृति कह सकते हों तो — भयानक संस्कृति है। गांवोंके लोग पशुओंसे भी बुरा जीवन बिताते हैं। कुदरत पशुओंको काम करने और स्वाभाविक जीवन बितानेको मजबूर करती है। हमने अपने मजदूर वर्गोंका अैसा बुरा हाल किया है कि वे कुदरती तौर पर न तो काम कर सकते हैं, न जी सकते हैं। हमारे लोगोंने बुद्धियुक्त आनन्दभरा शरीरश्रम किया होता, तो आज हमारी [illegible] होती।"

[illegible] है म कि श्रम और संस्कारिताको अलग नहीं कर

"नहीं कर सकते। प्राचीन रोममें अैसा करनेका प्रयत्न किया गया था, परन्तु वह बिलकुल निष्फल गया। श्रम किये बिना मिली हुअी संस्कारिता किसी भी कामकी नहीं। रोमन लोगोंने मौज करनेकी आदत डाली और वे बरबाद हो गये। सारे समय मनुष्य सिर्फ लिखकर, पढकर या भाषण करके ही मनका विकास नहीं कर सकता। मैंने जो कुछ पढा है, वह जेलमें फुरसतके समय पढा है और मुझे अुससे लाभ हुआ है। क्योंकि यह सब वाचन चाहे जैसे नहीं, बल्कि अेक निश्चित हेतुसे किया गया था। और मैंने दिनों और महीनों तक आठ आठ घंटे रोज काम किया है, फिर भी मैं नहीं मानता कि मेरा दिमाग खाली हो गया है। मैं बहुत बार रोज चालीस-चालीस मील चला हूं, फिर भी मुझे दिमागकी जड़ताका अनुभव नहीं हुआ।"

"किन्तु आपको तो मनकी अितनी तालीम जो मिली हुअी थी!"

"नहीं भाअी, आपको पता नहीं कि मैं स्कूलमें और विलायतमें कैसा मध्यम बुद्धिका था। वाद-विवादकी सभाओंमें या अन्नाहारियोंकी सभाओंमें कभी बोलने तककी मेरी हिम्मत नहीं होती थी। यह न समझिये कि जन्मसे ही मुझमें कोअी असाधारण शक्ति थी। मैं मानता हूं कि अीश्वरने जान-बूझकर ही मुझे अुस समय बोलनेकी शक्ति नहीं दी थी। आपको मालूम होना चाहिये कि हमारे समूहमें सबसे कम वाचन मेरा ही है।"

हरिजनबन्धु, २–८–'३६

१५

मेरी कामधेनु

मैंने चरखेको अपने लिअे मोक्षका द्वार बताया है। मैं जानता हूं कि अिस पर कुछ लोग हंसते हैं। परन्तु जो आदमी मिट्टीका गोला बना कर अुसे पार्थिवेश्वर चिंतामणिका बड़ा नाम देता है और फिर अुसी पर ध्यान लगा-कर अुसीमें परमात्माके दर्शन करनेकी सुन्दर आशा रखता है, अुसकी बुराअी मूर्तिकी महिमा न जाननेवाले जरूर कर सकते हैं। जिससे कोअी अिस तरह आत्म-दर्शन करनेके लिअे पागल होनेवाले अपना ध्यान थोड़े ही छोड़ देंगे? और जहां निन्दा करनेवाला जहांका तहां रह जायगा, वहां ये तो अीश्वरके दर्शन करके ही छोड़ेंगे। अिसी तरह यदि चरखेके लिअे मेरी भावना शुद्ध

होगी, तो मेरे लिअे तो यह चरखा जरूर मोक्ष देनेवाला सिद्ध होगा। रामनामकी गूंज सुनते ही हिन्दूके कान तुरन्त अूपर घूम जायेंगे। अुनकी धुन सच्ची होगी, अुस समय तो वह जरूर विकार-रहित होगा। अिस धुनका असर दूसरे धर्मवालों पर न हो तो अिससे क्या? 'अल्लाहो-अकबर' की आवाज सुनकर हिन्दू पर भले ही कोअी असर न हो, परन्तु मुसलमान तो यह आवाज सुनकर जरूर होशियार हो जायगा। भावुक अंग्रेज 'गॉड' का नाम लेते ही घड़ीभर तो अपना गुस्सा ठंडा करके विकारोंको छोड़ ही देगा। क्योंकि जिसकी जैसी भावना होती है, अुसे वैसा ही फल मिलता है।

अिस तर्कके अनुसार चरखेमें कुछ भी न हो, तो भी मैंने अुसमें बेहद शक्ति मानी है। अतः मेरे लिअे तो वह जरूर कामधेनु है। मैं हर तारको कातते समय भारतके गरीबोंका ध्यान करता हूं। भारतके कंगाल लोगोंका अीश्वर परसे विश्वास अुठ गया है; फिर मध्यम वर्ग या अमीरोंका तो रहे ही कहांसे? जिसके पेटमें भूख है और जो अुस भूखको मिटाना चाहता है, अुसका तो पेट ही परमेश्वर है। जो आदमी अुसे रोटीका साधन देगा, वही अुसका अन्नदाता बनेगा; और अुसके जरिये शायद वह अीश्वरके दर्शन भी करेगा। अिन मनुष्योंके हाथ-पैर होने पर भी अुन्हें सिर्फ अन्न दे देना तो स्वयं ही दोषके भागी बनकर अुन्हें भी दोषके भागी बनानेके बराबर है। अुन्हें कुछ न कुछ मजदूरी मिलनी चाहिये। करोड़ोंकी मजदूरी चरखा ही हो सकता है। और अिस चरखे पर अुनकी श्रद्धा मैं कोरे भाषणोंसे नहीं जमा सकता, स्वयं कात कर ही जमा सकता हूं। अिसीलिये मैं कातनेकी क्रियाको तपस्या या यज्ञरूप बनाता हूं। और क्योंकि मैं यह मानता हूं कि जहां शुद्ध चिन्तन है वहां अीश्वर जरूर है, मैं हर तारमें अीश्वरको देख सकता हूं।

यह तो मैंने अपनी भावनाकी बात कही। यदि आप भी अिसे मान लें, तो फिर और क्या चाहिये? परन्तु आप अिसे न स्वीकार करें, तो भी आपके लिअे कातनेके और बहुतसे कारण हैं। अिनमें से कुछ यहां लिखता हूं:

१. आप कातेंगे तभी दूसरोंसे कतवा सकेंगे।

२. आपके कातनेसे और अपना काता हुआ सूत चरखा-संघको दे देनेसे अन्तमें खादीका भाव सस्ता हो सकेगा।

३. कातनेकी कला सीख लेंगे तो आप भविष्यमें या अभी जब चाहें तभी खादी-प्रचारके काममें मदद कर सकते हैं। क्योंकि अनुभवमें पाया गया है कि जिसे यह क्रिया कुछ भी नहीं आती वह मदद नहीं कर सकता।

४. आप कातें तो सूतकी किस्म सुधरे। रुपयेके लिअे कातनेवालोंको जल्दी रहती है। अिसलिअे वे जिस नम्बरका सूत कातते होंगे, अुसी नम्बरका कातते रहेंगे। सूतके नम्बरमें सुधार करनेका काम शोधक और शौकीनका है। यह भी अनुभवसे सिद्ध हुअी बात है। यदि आज तक सेवाकी वृत्तिसे कातनेवाले कुछ स्त्री-पुरुष तैयार न हुअे होते, तो सूतकी किस्ममें जो प्रगति हुअी है वह नहीं हो सकती थी।

५. यदि आप कातें तो आपकी बुद्धिका अुपयोग चरखेमें सुधार करनेके लिअे हो सकता है। यह बात भी अनुभवसे सिद्ध हो चुकी है। चरखेमें जो सुधार आज तक हुअे हैं और अुसकी गतिमें जो तेजी आअी है, अुसका श्रेय सिर्फ यज्ञके तौर पर कातनेवाले यांत्रिकोंकी शक्तिको ही है।

६. भारतकी पुरानी कारीगरी मिटती जा रही है। अुसका पुनरुद्धार भी कातनेकी कलाके पुनरुद्धार पर बहुत कुछ निर्भर करता है। कातनेमें कितनी कला भरी है, यह यज्ञके लिअे कातनेवाला जान सकता है। सत्याग्रहके सप्ताहमें कातनेवाले कातने-कातते थकते ही नहीं थे। चरखेके बारेमें अुनका जो भाव था, वह भी अुनके न थकनेका अेक कारण जरूर था। परन्तु कातनेमें यदि कोअी कला न होती, कातते समय होनेवाली आवाजमें संगीत न होता, तो २२॥ घंटे तक जमकर खुशीके साथ कुछ जवानोंने जो काता सो नहीं हो सकता था। यहां हमें याद रखना चाहिये कि अिन कातनेवालोंको कोअी भी आर्थिक लालच नहीं था। अुनका कातना शुद्ध यज्ञ था।

७. हमारे देशमें मजदूरी हलका पेशा माना जाता है। कवियोंने भी यह ठहरा दिया है कि सुखी मनुष्योंको यहां तक आराम रहता है कि अुन्हें चलना भी नहीं पड़ता और अुनके पैरोंके तलवेमें भी बाल अुगते हैं। अिस तरह जो अच्छेसे अच्छा कर्म है, जिस कर्मके साथ ही प्रजापतिने सब जीवोंको पैदा किया है, अुस कर्मको हम शिष्टाचारका रूप देना चाहते हैं। जिसे कोअी धन्धा नहीं मिलता, वही पेटके लिअे कातता है। अिस तरहका गलत ख्याल न फैलने देनेके लिअे भी आपका कातना जरूरी है। आप राजा हो या रंक, फिर भी यज्ञके लिअे आपको कातना ही चाहिये।

अूपर बताये हुअे सब कारण, आप लड़के हों या लड़की, आपके लिअे लागू होते हैं। परन्तु आपके लिअे (किशोर समाजके लिअे) कातनेके कुछ और भी खास कारण हैं। अुनकी तरफ मैं आपका ध्यान खींचना चाहता हूं :

१. बचपनमें आप गरीबोंके लिअे मजदूरी करें, यह कितनी बढ़िया बात है! क्योंकि कातनेकी क्रिया बचपनसे ही आपकी परोपकार बुद्धिको बढ़ायेगी।

२. आप रोज नियमित कातें, तो अिससे आपके जीवनमें नियमसे काम करनेकी आदत हो जायगी, क्योंकि कातनेके लिअे आप कोअी समय निश्चित करेंगे, तो और कामोंके लिअे भी समय नियत करेंगे। और जो हर कामके लिअे समय नियत करते हैं, वे अनियमित काम करनेवालोंसे दुगुना काम करते हैं, यह सभीका अनुभव है।

३. आपकी सुघड़ता बढ़ेगी, क्योंकि सुघड़ताके बिना सूत कतता ही नहीं। आपकी पूनियां साफ होनी चाहियें, आपके हाथ साफ और बिना पसीनेवाले होने चाहियें, आसपास धूल वगैरा न होनी चाहिये, कातनेके बाद आपको सूत सुघड़तासे अटेरन पर अुतार लेना चाहिये, अुसे फुंकारना चाहिये और अंतमें अुसकी सुंदर गुंडी बनानी चाहिये।

४. आपको यंत्र सुधारनेका मामूली ज्ञान मिलेगा। आम तौर पर भारतमें बच्चोंको यह जानकारी नहीं करायी जाती। यदि आप आलसी बनकर अपने नौकरों या बड़ोंसे चरखा साफ करायेंगे, तो आपको यह ज्ञान नहीं मिलेगा। परन्तु जो बच्चे सूत भेजेंगे या भेजते हैं, अुनमें चरखेका प्रेम है, असा मैंने मान लिया है। और जो प्रेमके साथ कातते हैं, वे अपने यंत्रके हर हिस्से पर पूरा काबू रखते हैं। बढ़अीके औजार बढ़अी ही साफ कर लेता है। जो बढ़अी अपने औजार साफ करना नहीं जानता, अुसकी बढ़अियोंमें गिनती ही नहीं होती। जो कातनेवाला अपना चरखा ठीक नहीं कर सकता, माल नहीं बना सकता, तकुअेकी साड़ी तयार नहीं कर सकता और चमरखे अपने आप नहीं बना सकता, वह कातनेवाला कहलाता ही नहीं। या यह माना जायगा कि वह बेगार टालता है।

नवजीवन, १८–४–’२६

१६

'महात्माजीकी आज्ञा है'

अेक शिक्षक लिखते हैं

"कुछ महीनेसे हमारे स्कूलके थोड़ेसे लड़के १००० गज सूत कातकर नियमसे अ० भा० चरखा-संघको भेजा करते हैं और यह छोटीसी सेवा वे सिर्फ आपके लिअे बहुत ज्यादा प्रेम होनेके कारण कर रहे हैं। अुनसे कोअी पूछता है कि तुम क्यों कातते हो तो वे जवाब देते हैं 'महात्माजीकी आज्ञा है। अिसे तो मानना ही पड़ेगा।' मुझे लगता है कि अिस तरहकी मनोवृत्ति लड़कोंमें हर तरह बढ़ानी चाहिये। गुलाम मनोवृत्ति वीर-पूजा या निःशंक होकर आज्ञा माननेकी वृत्तिसे अलग चीज है। अिन लड़कोंको अब आपकी तरफसे आपके ही हाथका लिखा हुआ कोअी संदेश चाहिये, ताकि अुन्हें प्रोत्साहन मिले। मुझे आशा है कि आप अुनकी प्रार्थना मंजूर करेंगे।"

मैं नहीं कह सकता कि अिस पत्रमें बताअी हुअी मनोवृत्ति वीर-पूजा है या अंधभक्ति है। अैसे प्रसंगोंकी कल्पना की जा सकती है, जब कुछ भी दलील किये बिना निःशंक होकर आज्ञा मानना जरूरी हो जाता है। अिस तरह आज्ञा माननेका गुण सिपाहीमें तो होना ही चाहिये; और अैसा गुण अधिकतर लोगोंमें न हो, तब तक कोअी जाति बहुत अूंची नहीं अुठ सकती। परन्तु अैसे आज्ञापालनके प्रसंग बहुत थोड़े होते हैं और किसी भी सुव्यवस्थित समाजमें थोड़े ही होने चाहिये।

यदि स्कूलके विद्यार्थियोंको शिक्षक जो कुछ कहे अुसे आंख बन्द करके मानना ही पड़े, तो अुनकी कमबख्ती आयी समझिये। अुलटे, शिक्षकोंको अपने पासके लड़कों और लड़कियोंकी तर्कशक्तिको बढ़ाना हो, तो कअी बार अुन्हें बुद्धिका अुपयोग करने और स्वतंत्र विचार करनेको मजबूर करना चाहिये। श्रद्धाकी गुंजाअिश तो वहीं है, जहां बुद्धि कुंठित हो जाय। परन्तु दुनियामें अैसे थोड़े ही काम हैं, जिनके लिअे ठीक कारण न ढूंढे जा सकें। मान लीजिये, किसी मुहल्लेके कुअेंका पानी बिगड़नेकी शंका हो और वहां अुबला हुआ और साफ पानी पीनेका कारण लड़कोंसे पूछा जाय और लड़के कहें कि फलां महात्माकी आज्ञा है अिसलिअे अैसा पानी पीते हैं, तो यह जवाब शिक्षकको बरदाश्त ही नहीं करना चाहिये। और यदि अिस

अुदाहरणमें यह जवाब ठीक न हो, तो अुन स्कूलमें कातनेके लिअे लड़कोंने जो कारण बताया है, अुसे कातनेके कारणके रूपमें मान लेना अनुचित ही कहा जायगा।

अिस स्कूलमें जब मैं 'महात्मा' के पदसे गिर जाअूंगा, तब तो बेचारे मेरे चरखेकी हालत खराब ही होगी न? और बहुतसे घरोंमें मेरा यह पद जा रहा है, अिसका मुझे पता है; क्योंकि कुछ पत्र लिखनेवाले मुझे वैसा बनानेकी मेहरबानी करते हैं। कअी बार काम व्यक्तिसे ज्यादा बड़ा हो जाता है। और चरखा तो जरूर ही मुझसे बढ़कर है। अुस हालतमें मैं यदि कोअी बेवकूफीका काम करूं, या लोग किसी कारणसे मुझसे नाराज हो जायं और मेरे प्रति अुनकी पूजाकी भावना खतम हो जाय और अिस वजहसे चरखेकी कल्याणकारी प्रवृत्तिको धक्का पहुंचे, तो मुझे बहुत ज्यादा दुःख होगा। अिसलिअे जिन बातोंके बारेमें विचार और दलील हो सकती है, अुन सब बातोंके कारण और दलील हर विद्यार्थी अपने-अपने मनमें समझ ले, तो यह मेरी आज्ञा माननेसे हजार दर्जे अच्छा है। चरखा तो अैसी चीज है, जिसकी जरूरत दलीलसे सिद्ध की जा सकती है। मेरी रायमें भारतकी सारी जनताकी भलाअीका चरखेसे निकट संबंध है। अिसलिअे विद्यार्थियोंको आम लोगोंकी भयंकर गरीबीके बारेमें कुछ न कुछ जान लेना चाहिये। कुछ बरबाद होते हुअे गांवोंमें अुनको ले जाकर वहांकी गरीबीका अुन्हें खयाल कराना चाहिये। अुन्हें भारतकी आबादीके बारेमें जानकारी होनी चाहिये। अुन्हें यह ज्ञान भी होना चाहिये कि यह प्रायद्वीप कितना बड़ा है, और अुन्हें यह भी जानना चाहिये कि करोड़ों गरीब लोग कौनसा धंधा करके अपनी आने-दो आनेकी आमदनीमें कुछ वृद्धि कर सकते हैं। अुन्हें देशके गरीब और दबाये हुअे लोगोंके साथ अेक होना सीखना चाहिये। जो चीज गरीबसे गरीबको न मिल सके, अुस चीजका त्याग करना अुन्हें सिखाना चाहिये। तब कातनेकी कीमत अुनकी समझमें आयेगी। और यह कीमत समझमें आ जायगी, तो फिर मैं महात्माके बजाय अल्पात्मा सिद्ध होअूं या आकाश-पाताल अेक हो जायं तो भी वे कातना नहीं छोड़ेंगे। चरखेकी प्रवृत्ति जितनी बड़ी और कल्याणकारी तो है ही कि अुसका आधार वीर-पूजाकी कच्ची बुनियाद पर नहीं रहना चाहिये। शास्त्रीय और दृष्टिसे अुसकी पूरी तरह समीक्षा हो सकती है।

मैं जानता हूं कि यूरपके पश्चमें बनाओ हुओ अैसी धोर-पूजा हममें काफी है। और मैं आशा रखता हूं कि राष्ट्रीय स्कूलोंके शिक्षक, मैंने येतावनीकी जो बात कही है असे ध्यानमें रखकर, अपने विद्यार्थियोंको बड़े कहलानेवाले मनुष्योंके वचनों पर जांच किये बिना आंखें बन्द करके अमल करनेसे रोकेंगे।

नवजीवन, २७-६-'२६

१७

खादीका विज्ञान

मैंने कभी बार कहा है कि जहां खादी आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक है, वहां वह विज्ञान और काव्य भी है। मुझे खयाल है कि 'कागजका काव्य' नामकी अेक पुस्तक है। असमें कागजकी अुत्पत्तिका अितिहास देकर यह बतानेका प्रयत्न किया गया है कि कागजकी खोजसे संस्कृतिका प्रवाह किस तरह बदला। मनुष्यमें विज्ञानकी, खोज-बीनकी और कवित्वकी वृत्ति हो, तो हर चीजका विज्ञान या काव्य बनाया जा सकता है। कितने ही लोग खादीकी हंसी अुड़ाते हैं और चरखेकी बात निकलते ही धीरज छोड़ने और नाक-भौं सिकोड़ने लगते हैं। परन्तु ज्यों ही आप यह मान लेते हैं कि सारे हिन्दमें फैले हुओ आलस्य, बेकारी और अुनके कारण पैदा हुआी गरीबीको दूर करनेकी शक्ति खादीमें है, त्यों ही अुससे घृणा करने या अुसकी हंसी अुड़ानेकी वृत्ति चली जाती है। यह बात नहीं कि खादी सचमुच अिन तीन प्रकारके दुःखोंकी रामबाण दवा होनी ही चाहिये। असे खूब दिलचस्प बनानेके लिअे अितना काफी है कि हम अीमानदारीसे असमें यह शक्ति मान लें। परन्तु खादीमें यह शक्ति मान लेनेके बाद भी जिस तरह कोओ अज्ञान और गरजवाला कारीगर रोटीके लिअे मजबूर होकर ओटता, पीजता, कातता या बुनता है, अुसी तरह हम भी करें तो काम नहीं चल सकता। जिस आदमीको खादीकी शक्ति पर भरोसा होगा, वह खादीसे संबंध रखनेवाली सारी क्रियायें श्रद्धा, ज्ञान, पद्धति और वैज्ञानिक वृत्तिके साथ करेगा। वह किसी भी चीजको यों ही नहीं मान लेगा, हर बातको प्रयोगकी कसौटी पर कसकर देखेगा, हकीकतों और आंकड़ोंका मेल बिठाकर जांचेगा,

कितनी ही बार हार होने पर भी निराश नहीं होगा, छोटी-छोटी सफलताओंसे फूल कर कुप्पा न होगा, और जब तक ध्येय पूरा न हो तब तक संतोष मानकर नहीं बैठेगा। स्व० मगनलाल गांधीको खादीकी शक्तिके बारेमें जीती-जागती श्रद्धा थी। वे अिसे अद्‌भुत रससे भरा हुआ काव्य मानते थे। अुन्होंने खादी-शास्त्रके मूल तत्त्व लिख डाले थे। अुनके खयालसे अेक भी तफसील निकम्मी नहीं थी; कोअी भी योजना अुन्हें बूतेसे बाहर नहीं लगती थी। रिचार्ड ग्रेगमें भी श्रद्धाकी अैसी ही रोशनी थी और है। अुन्होंने खादीका व्यापक अर्थ बताया है। अुनकी 'खादीका व्यापक अर्थशास्त्र' नामकी पुस्तक खादीके काममें अेक मौलिक देन है। वे चरखेको अहिंसाका अुत्तम प्रतीक मानते हैं। यह प्रतीक वह हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता। परन्तु किसी भी दिलचस्प विषयसे जो रस और आनन्द मिल सकता है, वह मगनलाल गांधीकी श्रद्धा अुन्हें देती थी और रिचार्ड ग्रेगकी श्रद्धा अुन्हें दे रही है। विज्ञानको विज्ञान तभी कह सकते हैं, जब वह शरीर, मन और आत्माकी भूख मिटानेकी पूरी ताकत रखता हो। शंकाशील लोगोंको कअी बार अचंभा होता है कि खादीसे यह भूख कैसे मिट सकती है? या दूसरे शब्दोंमें कहें तो मैं जो 'खादी विज्ञान' शब्द अिस्तेमाल करता हूं, अुसका अर्थ क्या करता हूं, अिस सवालका जवाब देनेका अच्छेसे अच्छा तरीका यह है कि मेरे पास परीक्षा देनेके लिअे आये हुअे अेक खादीसेवकके लिअे मैंने जो प्रश्न जल्दीमें तैयार किये थे वे यहां दे दूं। ये प्रश्न तर्कशुद्ध क्रमके अनुसार नहीं बनाये गये थे और न संपूर्ण ही थे। अिनका क्रम बदला और बढ़ाया भी जा सकता है।

पहला भाग

१. भारतमें कपास कहां और कितनी पैदा होती है? अुसकी किस्में गिनाओ। अिस कपासमें से कितनी भारतमें रहती है, कितनी हाथकताअीमें लगती है, कितनी विलायत जाती है और कितनी दूसरे देशोंको जाती है।

२. (क) भारतकी मिलोंमें कितना कपड़ा तैयार होता है? अिसमें से कितना अिस देशमें खर्च होता है और कितना बाहर जाता है?

(ख) अूपरके कपड़ेमें से कितना स्वदेशी मिलोंके सूतका होता है और कितना विदेशी सूतका?

(ग) विदेशसे भारतमें कितना कपड़ा आता है?

(घ) खादी कितनी बनती है?

नोट जवाब वर्गगजोंमें और रुपयेमें हो।

३. अूपर बताये तीनों किस्मके कपड़ेकी अच्छाअी-बुराअी बताओ।

४. कुछ लोग कहते हैं कि खादी महगी होती है, मोटी होती है और टिकाअू नहीं होती। अिन शिकायतोंका जवाब दो और जहां शिकायतें ठीक हों, वहां अुन्हें दूर करनेके अुपाय बताओ।

५ खादीके कामसे कितनी कत्तिनों, जुलाहों वगैराको रोजी मिलती है और कितने बरसमें अुन्हें कितना रुपया मिला है? अिनकी तुलनामें स्वदेशी मिलोंमें काम करनेवाले कारीगरोंको हर साल क्या मिलता है?

६ (क) चरखा-संघका कारबार कैसे होता है? अुसके व्यवस्था-खर्चमें कितना रुपया चला जाता है?

(ख) स्वदेशी मिलोंमें कौन-कौनसे वर्ग भाग लेते हैं और अुन्हें मजदूरोंकी तुलनामें क्या मिलता है?

७ (क) जीवनकी जरूरतोंमें कपड़ेका कितना भाग है?

(ख) जीवनकी जरूरतें क्या-क्या हैं और कुल जरूरतोंके हिसाबसे हरअेकका अनुपात क्या माना जाय?

८ भारतमें देशी या विदेशी मिलका बना हुआ कपड़ा कोअी भी न पहने, तो देशमें कितना रुपया बचे? और यह रुपया किस किसके पास रहे?

९ भारतमें जो कपड़ा परदेशसे आता है, अुसकी कीमतके बदलेमें अिस देशसे क्या जाता है? अिस आयात-निर्यातसे भारतको क्या नुकसान होता है?

१०. देशकी आबादीका कितना प्रतिशत भाग कपड़ा खरीद सकता है?

११ अपना कपड़ा खुद बना लेनेके लिअे समय, परिस्थिति और साधन कितने सैकड़ा घरोंमें है? और वह किस तरह?

१२. क्या यह वाक्य सच है कि "खादीसे आर्थिक साम्यवाद कायम होगा?" कारणोंके साथ जवाब दो।

१३ खादीका प्रचार सब जगह हो जाय, तो व्यापार-धंधा और आने-जानेके साधनों पर कैसा-कैसा असर होगा?

१४. मान लो अभी पचास बरस तक खादीका प्रचार न हो, तो अितने समयमें हमारे देशकी आर्थिक दशा पर अिसका क्या असर पड़ सकता है, अिसका विस्तारसे बयान करो।

दूसरा भाग

१. भारतमें आजकल जो चरखे चलते हैं, अुनके वर्णन लिखो। अिनमें से कौनसा चरखा सबसे अच्छा है? प्रचलित चरखेके सब हिस्सोंके नाम बताओ, चित्र दो। हरअेकमें काम आनेवाली लकड़ीकी किस्म, तकुअेका घेरा और मालकी मोटाअी बताओ।

२ गति, कीमत और मामूली सुभीतेकी दृष्टिसे प्रचलित चरखेकी तुलना यरवडा चक्रसे करो।

३ रुअीकी परीक्षा कैसे की जाती है? सूतकी मजबूती और अुसका अंक किस तरह निकाला जाता है?

४. तुम कितने अंकका, कितनी मजबूतीवाला सूत कातते हो? तकली और चरखे पर तुम्हारी गति कितनी है? आम तौर पर कौनसा चरखा अिस्तेमाल करते हो?

५ अेक पुरुषको कितना कपड़ा चाहिये? अेक स्त्रीको कितना चाहिये? अुतना कपड़ा बनवानेमें कितना सूत चाहिये? अुतना सूत कातनेमें कितने घण्टे लगेंगे?

६. अेक कुटुम्बके लिअे कितना सूत चाहिये? अुतने सूतके लिअे कितनी कपास चाहिये? और अुतनी कपास अुगानेके लिअे कितनी जमीन चाहिये? अेक कुटुम्बमें स्त्री, पुरुष और तीन बच्चे — अेक लड़की और दो लड़के (सात, पांच और तीन बरसके) माने जाय।

७. आजकल जिस पींजनका रिवाज है और जो नअी बनी है अुन दोनोंकी तुलना करो। तुम कितना पींजते हो? तुम यह कैसे समझ सकते हो कि रुअी ठीक पींजी गअी है या नहीं? अेक रतल या आधा सेर रुअीकी पूनी बनानेमें तुम्हें कितना समय लगता है? अेक तोला रुअीसे कितनी पूनी बनाते हो?

८ अेक घंटेमें कितनी कपास ओटते या लोढ़ते हो? हाथसे ओटने और मशीनसे ओटनेके गुण-दोष बताओ। आज जो हाथ-चरखी काममें ली जाती है, अुसका चित्रोंके साथ वर्णन करो।

९. बीस अंकके सूतकी ३६ अिंच पनेकी अेक गज खादीके लिअे कितना सूत चाहिये ? अुतना बुननेके लिअे मामूली तौर पर कितने आदमी चाहिये ?

१०. हाथके करघे और फटकेवाले करघे (शटल) की तुलना करो।

हरिजनबन्धु, १७–१–'३७

१८

विद्यालयमें खादीका काम

स्व० श्री रेवाशंकर जगजीवन झवेरीके मुख्य प्रयत्नसे और श्री जमना-दास गांधीकी मददसे राजकोटमें सोलह वर्ष पहले राष्ट्रीय शाला खुली थी। अुसका सोलहवां वार्षिक अुत्सव पिछले महीनेमें श्री नरहरि परीखकी अध्यक्षतामें मनाया गया था। अिस शालाके तीन विभाग हैं: विनय, कुमार और बालमंदिर। अुनमें कुल १९० विद्यार्थी (११० लड़के और ८० लड़कियां) शिक्षा पाते हैं। श्री नारणदास गांधीकी रिपोर्टमें से ध्यान खींचनेवाले नीचेके हिस्से यहां देता हूं:

"खादीका अुद्योग अैसा है, जो राष्ट्रके करोड़ों आदमियोंको पालनेमें मदद दे सकता है। अुद्योगमें अुसे मुख्य स्थान देनेसे अुसके द्वारा राष्ट्रके करोड़ों गरीबोंके साथ मेल साधनेकी शिक्षा मिलती है। अिसलिअे अिसे अेक महत्त्वकी शिक्षा समझना चाहिये।

अिस अुद्योगमें बच्चे काफी रस ले रहे हैं। अेक विद्यार्थीने गरमीकी छुट्टियोंमें ४० वर्गगज खादीके लायक सूत काता और चरखा द्वादशीके मौके पर ६७ वर्गगज खादीके लायक सूत काता। अिस तरह साल भरमें कुल १५० वर्गगज कपड़ा हुआ। अिसे बड़ा काम माना जायगा। अिसकी तुलनामें औरोंने थोड़ा किया, परन्तु कुल मिलाकर अच्छा काम हुआ है।

अिस अुद्योगके सिवा:

सिलाअी वर्ग — शालाके अुद्योगके लिअे है। अिसके सिवा बाहरवालोंके लिअे भी रखा गया था। अुसमें से दो भाअी अच्छी तरह सीख कर सीनेके धंधेमें लग गये हैं। अेक शिक्षक यह काम खास तौर पर सीखे हुअे हैं।

बुनाओ शाला — शालामें अेक जुलाहा परिवार बसाया गया है। अिन अढ़ाओ सालमें लगभग २६०० वर्गगज खादी बुनी गयी है।

खेती — अिस साल कपास भी बुआी थी और लड़कोंने कपास चुनी भी थी।

शालामें १३ हरिजन बालक पढ़ते हैं। अिनके सिवा पांच हरिजन युवक म्युनिसिपैलिटीमें काम करके दुपहरको शालामें छह घंटे कातनेका काम करते हैं। अुनको अिससे कुछ आमदनी हो जाती है। पटिया रुआीसे थोड़े दिनमें ही वे बारह नंबरका सूत कातने लगे हैं। अिस तरह खादीके क्षेत्रमें भी यह अच्छा अनुभव माना जायगा। हरिजनोंके लिअे शालामें अनाजकी दुकान भी खोली गयी है।

ग्रामवस्तु-भण्डार — सच्चा पोषण देनेवाली खुराक, जैसे हाथका पिसा आटा, हाथकुटे व दले चावल-दाल और शालामें दो घानियां लगाकर शुद्ध तेल देनेका अिन्तजाम किया गया है।

दुग्धालय — कुछ समयसे जयन्त दुग्धालयको शालामें ले आये हैं और अखिल भारत गोसेवा-संघकी दृष्टिसे अुसे चलानेका प्रयत्न किया जायगा।"

यह खुशीकी बात है कि अिस तरह लड़के-लड़कियोंमें खादीके बारेमें रस पैदा किया जा सकता है। यह महत्वकी बात है कि कपास भी शालामें पैदा हो, दुग्धालय चले और युक्ताहारकी चीजें भी वहीं तैयार हों। अिन अंगोंका अच्छा विकास हो और लड़के-लड़कियोंको अिन चीजोंका शास्त्र अिस तरह सिखाया जाय कि अुनकी समझमें आये, तो अुनकी बुद्धिका सच्चा विकास होगा। यह मानना भ्रम है कि जिन चीजोंका जीवनमें कोआी अुपयोग न हो, अुन्हें बालकोंके दिमागमें ठूंसनेसे अुनकी बुद्धि बढ़ती है। अिसमें बुद्धिका विलास भले ही हो परन्तु विकास नहीं; क्योंकि बुद्धि भले-बुरेका विवेक नहीं कर सकती। परन्तु जहां लड़के या लड़कीको कोआी क्रिया करनी पड़ती है और वह क्रिया अुसे मशीनकी तरह न सिखाआी जाकर अुसके कारण समझाये जाते हैं, वहां अुसकी बुद्धिका विकास अपने आप होता है, बालकको अपना भान होता है, वह स्वाभिमान सीखता है और स्वावलम्बी बनता है।

हरिजनबन्धु, २१-४-'३७

१९
अेक मंत्रीका स्वप्न

"अगर आप प्रान्तीय सरकारों और लोगोंको अिस आशयका सन्देश या सूचना दे सकें कि तमाम स्कूलोंमें लडकों और लडकियोंके लिअे कताअी और बुनाअी लाजिमी कर देनी चाहिये, तो मेरा विश्वास है कि थोड़े ही समयमें स्कूलोंके बच्चे खुद अपना बनाया हुआ कपड़ा पहनने लग जायंगे। यह पहला कदम होगा। आपके आदर्शोंके विषयमें मेरी आज भी वैसी ही श्रद्धा है और मैं आज वह दिन देखनेकी आशा करता हूं, जब हरअेक घर अपनी जरूरतका कपडा खुद बना लेगा, और हरअेक गाव भी अपनी ग्रामोद्योगो तथा शिक्षाकी योजनाओंके अनुसार केवल कपड़ेमें ही नही, बल्कि हर जरूरी चीजके संबंधमें स्वावलम्बी बन जायगा। आपकी तरह मैं भी यह मानता हूं कि अिस देशमें सच्चा स्वराज्य तभी स्थापित हो सकता है, जब कि प्रान्तीय सरकारो अथवा भारत-सरकारका बजट — जिसके पासे मिलानेके लिअे चालाकिया और करामातें करनी पड़ती हैं — ग्रामवासी जनताके बजटसे मेल खायेगा।"

अपर्युक्त पत्र अेक कांग्रेसी मंत्रीने लिखा है। मेरे पास यदि सर्व-स्वाधीन सत्ता हो तो मैं कम-से-कम प्राअिमरी स्कूलोंमें तो कताअीको अवश्य लाजिमी कर दू। जिस मंत्रीमें श्रद्धा हो अुसे अैसा करना चाहिये। हमारे स्कूलोंमें कितनी ही बेकार चीजोंको लाजिमी बना दिया जाता है। तब अिस अति अुपयोगी कलाको लाजिमी क्यों न बना दिया जाय? लेकिन लोकतंत्रमें किसी चीजको, यदि वह व्यापक रूपमें लोकप्रिय न हो, लाजिमी नही बनाया जा सकता। जिस तरह लोकतंत्रमें अनिवार्यता नामकी ही होती है। वह आलस्यको तो अुड़ा देती है, पर लोगोंकी अिच्छा पर जोर-जबरदस्ती नही करती। अिस प्रकारकी अनिवार्यता शिक्षणकी अेक क्रिया है। मैं अिससे अेक आसान रास्ता सुझाता हू। सबसे अच्छे कातनेवाले लड़के या लडकीको अिनाम दिलाना चाहिये। अिस प्रतिस्पर्धासे सब नहीं तो अधिकाश विद्यार्थी अिसमें भाग लेनेके लिअे प्रेरित होंगे। किसी भी योजनामें यदि खुद शिक्षकोंकी श्रद्धा न हो तो वह सफल नही हो सकती। प्रान्तीय सरकारें

अगर बुनियादी तालीमको स्वीकार कर लें तो कताओ आदि शिक्षाके केवल अंग ही नहीं, बल्कि शिक्षाके वाहन बन जायेंगे। बुनियादी तालीम अ जड़ पकड़ ले तो हमारी अिस पीड़ित भूमिमें खादी अवश्य सार्वत्रिक औ अपेक्षाकृत सस्ती हो सकती है।

हरिजनसेवक, २१-१०-'३९

२०

मातृभाषा*

शिक्षाके माध्यमके रूपमें देशी भाषाओंका सवाल राष्ट्रीय महत्व.. है। देशी भाषाओंका अनादर राष्ट्रीय आत्महत्या है। शिक्षाके माध्यमके रूपमें अंग्रेजी भाषा जारी रखनेकी हिमायत करनेवालोंमें बहुतसे लोग यह कहते सुने जाते हैं कि अंग्रेजी शिक्षा पानेवाले भारतीय ही जनताके और राष्ट्रीय कामके रक्षक हैं। अैसा न हो तो वह भयंकर स्थिति मानी जायेगी। अिस देशमें जो भी शिक्षा दी जाती है, वह अंग्रेजी भाषाके द्वारा दी जाती है। सच्ची हालत यह है कि हम अपनी शिक्षा पर जितना समय खर्च करते हैं, अुसके हिसाबसे नतीजा कुछ भी नहीं मिलता। हम आम लोगों पर कोओ असर नहीं डाल सके।...

अिस विषय पर ताजेसे ताजा बयान वाअिसरॉयका× है। ये साहब कोओ अेक रास्ता नहीं बता सके। फिर भी वे हमारे स्कूलोंमें देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा देनेकी जरूरत अच्छी तरह समझते हैं। मध्य और पूर्वी यूरोपके यहूदी दुनियाके बहुतसे हिस्सोंमें फैल गये हैं। अुन्होंने आपसके व्यवहारके लिये अेक समान भाषाकी जरूरत जानकर यीडिशको भाषाका दर्जा दिया है। अुन्होंने दुनियाके साहित्यमें मिलनेवाली अच्छीसे अच्छी किताबोंका यीडिशमें अनुवाद करनेमें सफलता पाओ है। वे बहुतेरी दूसरी भाषाअें अच्छी तरह जानते हैं, फिर भी अुनकी आत्माको पराओ भाषामें शिक्षा मिलनेसे शान्ति

* डा० प्राणजीवन महेता द्वारा प्रकाशित 'हिंदनी शाळाओ अने कालेजोमां देशी भाषा शिक्षणना वाहन तरीके' नामक गुजराती पुस्तिकाकी यह प्रस्तावना है।

× लार्ड चेम्सफोर्ड।

नही मिली। अिसी तरह अुनके छोटेसे शिक्षित वर्गने यह नही चाहा कि अपनी हैसियत समझ सकनेके पहले यहूदी जनताको विदेशी भाषा सीखनेकी तकलीफ अुठानी चाहिये। जिस तरह जो किसी समय अेक टूटी-फूटी बोली समझी जाती थी, परन्तु जिसे यहूदी बच्चे अपनी मासे सीखते थे, अुसीको अुन्होंने अपने विशेष प्रयत्नसे दुनियाके अच्छेसे अच्छे विचारोका अनुवाद करके कीमती बना लिया है। सचमुच यह अेक अद्‌भुत काम है। यह काम आजकी पीढीने ही किया है। अुस भाषाका वेब्सटरके कोषमें यह लक्षण दिया गया है कि वह तरह-तरहकी भाषाओंसे बनी हुअी अेक टूटी-फूटी बोली है और अलग-अलग राज्योमें बसनेवाले यहूदी आपसके व्यवहारमें अुसका अुपयोग करते हैं। यदि अब मध्य और पूर्वी यूरोपके यहूदियोकी भाषाका जिस तरह वर्णन किया जाय तो अुन्हें बुरा लग जाय। यदि ये यहूदी विद्वान अेक पीढ़ीमें ही अपनी जनताको अेक भाषा दे सके हैं — जिसके लिअे अुन्हें गर्व है — तो हमारी देशी भाषाओंके, जो परिपक्व भाषाअें हैं, दोष दूर करनेका काम तो हमारे लिअे अवश्य आसान होना चाहिये।

दक्षिण अफ्रीका हमें यही पाठ पढाता है। वहा डच भाषाकी अपभ्रंश टाल और अंग्रेजीके बीच होड होती थी। बोअर माताओं और बोअर पिताओंने निश्चय किया था कि हम अपने बच्चो पर, जिनके साथ हम बचपनमें टाल भाषामें बातचीत करते हैं, अंग्रेजी भाषामें शिक्षा लेनेका बोझ नही डालने देंगे। वहा भी अंग्रेजीका पक्ष बडा जोरदार था, अुसके हिमायती शक्तिशाली थे। परन्तु बोअर देशाभिमानके सामने अंग्रेजी भाषाको झुकना पडा था। यह जानने लायक बात है कि अुन्होने अूची डच भाषाको भी नामंजूर कर दिया। स्कूलोके शिक्षकोंको भी, जिन्हें यूरोपकी सुधरी हुअी डच भाषा बोलनेकी आदत पडी हुअी है, ज्यादा आसान टाल भाषा बोलनेको मजबूर होना पड़ा है। और दक्षिण अफ्रीकामें टाल भाषामें, जो कुछ ही वर्षों पहले सादे परन्तु बहादुर देहातियोके बीच बात करनेका समान साधन थी, आजकल अुत्तम प्रकारका साहित्य अुन्नति कर रहा है। यदि हमारा विश्वास हमारी भाषाओ परसे अुठ गया हो, तो वह अिस बातकी निशानी है कि हमारा अपने आप पर विश्वास नही रहा। यह हमारी गिरी हुअी हालतकी साफ निशानी है। और जो भाषाअें हमारी माताअें बोलती हैं, अुनके लिअे हमें जरा भी मान न हो तो किसी भी तरहकी स्वराज्यकी योजना, भले ही

वह कितनी ही परोपकारी वृत्ति या अुदारतासे हमें दी जाय, हमें कभी स्वराज्य भोगनेवाली प्रजा नहीं बना सकेगी।

विचारसृष्टि

२१

पराअी भाषाका घातक बोझ

कअी महाविद्यालयमें हैदराबाद रियासतके शिक्षामंत्री नवाब मसूदजंग बहादुरने देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा देनेकी जो जबरदस्त वकालत की थी, अुसका जवाब 'टाअिम्स आफ अिण्डिया' ने दिया है। अुसमें से अेक मित्रने नीचेका हिस्सा मेरे पास जवाब देनेके लिअे भेजा है:

> "अिन नेताओंके लेखोंमें जो कुछ भी कीमती और फल देनेवाली चीज है, वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें पश्चिमी संस्कृतिका फल है। ... पिछले ६० सालका अितिहास देखनेके बजाय १०० बरसका अितिहास देखें, तो हमें मालूम होगा कि राजा राममोहनरायसे लगाकर महात्मा गांधी तक किसी भारतीयने किसी भी दिशामें कोअी भी तारीफके लायक काम किया हो, तो वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें पश्चिमी शिक्षाका परिणाम है।"

अिस अुद्धरणमें शिक्षाके माध्यमके रूपमें अंग्रेजी भाषाकी कीमत नहीं बताअी गअी है। बात अितनी ही है कि पश्चिमी सभ्यताने खास-खास मनुष्यों पर क्या असर डाला है। पश्चिमी सभ्यताके महत्त्व या प्रभावके बारेमें नवाब साहबने या दूसरे किसीने भी कोअी विरोध नहीं किया है। जिस चीजका विरोध किया जाता है, वह तो यह है कि पश्चिमी सभ्यताके लिअे भारतीय या आर्यसंस्कृतिका बलिदान किया जाता है। यदि यह सिद्ध कर दिया जाय कि पश्चिमी शिक्षा पूर्वी या आर्य संस्कृतिसे बढ़कर है, तो भी भारतकी अुत्तम होनहार सन्तानोंको पश्चिमी शिक्षा देने और अुन्हें आम लोगोंसे अलग करके राष्ट्रभ्रष्ट बनानेमें सारे भारतका नुकसान है।

मेरे विचारसे अूपरके अुद्धरणमें बताये हुअे पुरुषोंने जनता पर जो कुछ अच्छा असर डाला है, वह पश्चिमी सभ्यताके भूतके असरके होते हुअे भी अुसी हद तक डाला है, जिस हद तक वे आर्यसंस्कृतिको अपनेमें पचा सके

है। पश्चिमी सभ्यताके अुलटे अगरसे मेरा मतलब अुस हद तक पड़नेवाले अुसके असरसे है, जिस हद तक वह आर्यसंस्कृतिका पूरा असर पड़नेमें रुकावट बनी हो। मुझ पर पश्चिमी सभ्यताका जितना ऋण है, अुसे सुले दिलसे मैंने मंजूर किया है। फिर भी मुझे कहना चाहिये कि मैंने जनताकी कुछ भी सेवा की हो, तो अुसका श्रेय जिस हद तक आर्यसंस्कृतिको मैंने अपने जीवनमें पचाया है अुसीको है। मैं यूरोपियन-सा बनकर अेक राष्ट्रभ्रष्ट आदमीके रूपमें जनताके सामने खड़ा होता, तो अुसके बारेमें मैं कुछ भी न जान सकता, अुसकी अुपेक्षा करता, अुसके रिवाजों, विचारों और अुसकी अिच्छाओंको तुच्छ समझकर अुसकी दुरेखा करता। जहां जनताने अपनी सभ्यताको हजम नहीं किया हो, वहां अिसका अंदाज लगाना कठिन है कि कितनी ही अच्छी होने पर भी अपने प्रतिकूल जानेवाली पराओी सभ्यताके हमलेका सामना करनेमें जनताको कितनी शक्ति खर्च करनी पड़ती है।

सारे प्रश्न पर सब तरफसे विचार करना चाहिये। यदि चैतन्य, नानक, कबीर, तुलसीदास और दूसरे कओी सुधारकोंको बचपनसे अच्छीसे अच्छी अंग्रेजी पाठशालामें रखा जाता तो क्या अुन्होंने ज्यादा काम किया होता? क्या 'टाअिम्स'के लेखमें बताये हुअे पुरुषोंने अिन सुधारकोंसे ज्यादा काम किया है? महर्षि दयानंद सरस्वती किसी सरकारी युनिवर्सिटीसे अेम० अे० हुअे होते, तो क्या वे ज्यादा काम कर सके होते? बचपनसे पश्चिमी शिक्षाके ही असरमें पले हुअे आजके मौज अुड़ानेवाले, अैश-आराम करनेवाले और अंग्रेजी बोलनेवाले राजा-महाराजाओंमें अेक तो अैसा बताअिये, जिसका नाम बड़ी-बड़ी मुसीबतोंमें टक्कर लेनेवाले और अपने मावलोंके* साथ अुन्हींका-सा कठिन जीवन बितानेवाले शिवाजीके साथ लिया जा सके। अिन राजाओंमें से किसका आचरण भयको भगानेवाले राणा प्रतापसे बढ़कर है? अरे, अिन्हें पश्चिमी सभ्यताके भी अच्छे नमूने कैसे माना जा सकता है? जब अिन राजाओंकी अपनी नगरिया कओी दुःख-दर्दों, रोगों और संकटोंमें जल रही हैं, तब भी ये लंदन और पेरिसके नाच-गानमें डूबे हुअे हैं। जिस शिक्षाने अुन्हें अपने ही देशमें परदेशी बनाया है, जो शिक्षा अुन्हें अपनी प्रजाके, जिसका ओीश्वरने अुन्हें शासक बनाया है, सुख-दुःखमें शामिल होनेके बजाय यूरोपमें

* महाराष्ट्रकी अेक पहाड़ी वीर जाति।

प्रजाके धन और अपनी आत्माको नष्ट करना सिखाती है, अुस शिक्षाने घमण्ड जैसी क्या बात है?

परन्तु पश्चिमी शिक्षाकी तो यहां बात ही नहीं। प्रश्न तो शिक्षाके माध्यमका है। हमें जो भी अूची शिक्षा मिली है या जो कुछ शिक्षा मिली है, वह सिर्फ अंग्रेजी भाषा द्वारा ही मिली है। अिसीलिअे तो आज दीये जैसी साफ बातको दलीलें देकर सिद्ध करना पड़ता है कि किसी भी राष्ट्रको अपने नौजवानोंमें राष्ट्रीयता कायम रखनी हो, तो अुन्हें अूंची और नीची सारी शिक्षा अुन्हींकी भाषामें देनी चाहिये। राष्ट्रके नौजवानोंको जब तक अैसी भाषाके द्वारा ज्ञान मिलता और पचता न हो, जिसे आम लोग समझते हों, तब तक यह अपने आप सिद्ध है कि वे जनताके साथ जीता-जागता संबंध न जोड़ सकते हैं और न हमेशा अुसे कायम रख सकते हैं। पराअी भाषा और अुसके मुहावरों पर, जिनका अिन नौजवानोंकी जिन्दगीमें कोअी काम नहीं पड़ता और जिन्हें सीखनेमें अुन्हें अपनी मातृभाषा और अुसके साहित्यकी अुपेक्षा करनी पड़ी है, काबू पानेमें हजारों युवकोंके कअी कीमती वर्ष बीत जाते हैं। अिसका अंदाज कौन लगा सकता है कि अिससे जनताकी कितनी अपार हानि होती है? अिस मान्यतासे अधिक बुरा वहम मैं नहीं जानता कि अमुक भाषाका तो विकास हो ही नहीं सकता या अमुक भाषामें अटपटे या तरह-तरहके विज्ञानके विचार प्रकट किये ही नहीं जा सकते। भाषा तो बोलनेवालेके चरित्र और अुन्नतिका सच्चा प्रतिबिम्ब है।

विदेशी राज्यकी कअी बुराअियोंमें अेक बड़ीसे बड़ी बुराअी अितिहासमें यह मानी जायगी कि अुसमें देशके नौजवानों पर पराअी भाषाके माध्यमका यह घातक बोझ डाला गया। अिस माध्यमने राष्ट्रकी शक्तिको नष्ट कर दिया है, विद्यार्थियोंकी अुम्र घटा दी है, अुन्हें आम लोगोंसे अलग कर दिया है, और शिक्षाको बिना कारण महंगी बना दिया है। यदि यह प्रथा अब भी जारी रहेगी, तो अिससे राष्ट्रकी आत्माका ह्रास होना निश्चित है। अिसलिअे शिक्षित भारतीय पराअी भाषाके माध्यमकी भयंकर मोहिनीसे जितने जल्दी छूट जायं, अुतना ही अुनके लिअे और राष्ट्रके लिअे अच्छा है।

नवजीवन, ८–७–'२८

२२
अेक विद्यार्थीके प्रश्न

अमेरिकामें ग्रेज्युअेट तककी पढ़ाओ पूरी करके आगे पढ़नेवाला अेक विद्यार्थी लिखता है:

> "भारतकी गरीबी मिटानेके अेक अुपायके तौर पर भारतकी सभी तरहकी पैदावारका भारतमें ही अुपयोग होना हितकर है, अैसा समझनेवालोंमें से मैं अेक हूं। अिस देशमें आये हुअे मुझे छह साल हुअे। लकड़ीका रसायन मेरा खास विषय है। भारतके औद्योगिक विकासके महत्त्वके बारेमें मेरा अितना पक्का विश्वास न होता, तो शायद मैं नौकरी करने लगा होता, या डाक्टरीकी पढ़ाओ शुरू कर देता।
>
> * * *
>
> "कागज बनानेके अुद्योग जैसे किसी अुद्योगमें मैं पड़ूं, तो क्या आप अुसकी राय देंगे? भारतमें मानवदयाकी बुनियाद पर अुद्योग-नीति खड़ी करनेके बारेमें आपकी क्या राय है? आप विज्ञानकी अुन्नतिके हिमायती हैं? मैं अिस तरहकी अुन्नतिकी बात कहता हूं कि जिससे 'पैस्चर ऑफ फ्रास' और टारण्टोवाले डा० बेण्टिककी पुस्तको जैसे अमूल्य रत्न लोगोंको मिलें।"

क्योंकि विद्यार्थियोंकी तरफसे अैसे प्रश्न कओ बार मुझसे पूछे जाते हैं और विज्ञान संबंधी मेरे विचारोंके बारेमें बड़ी गलतफहमी फैली है, अिसलिअे मैं अिन प्रश्नोंकी खुली चर्चा करता हूं। यह विद्यार्थी जिस ढंगका औद्योगिक काम शुरू करना चाहता है, अुससे मेरा कोओी विरोध नहीं हो सकता। अलबत्ता, मैं यह नहीं कहूंगा कि अुसमें मानवदया ही है। हाथ-कताअीके सफल पुनरुद्धारको ही मैं सच्ची मानवदयावाली अुद्योग-नीति समझता हूं, क्योंकि चरखेके द्वारा ही आज गावोंकी आबादीमें घर-घर बरबादी लानेवाली गरीबी जल्दी मिटाओ जा सकती है। बादमें देशकी पैदावारकी शक्ति बढ़ानेवाली और सब बातें अुसमें जोड़ी जा सकती हैं। हमारी झोपड़ियोंमें चलनेवाले चरखेसे जो काम हमें आज मिलता है, अुससे ज्यादा काम देनेवाले सुधार अुसमें हो सकते हों, तो मैं चाहूंगा कि शास्त्रीय तालीम पाये हुअे युवक अपनी कुशलताका अुपयोग अुस तरहके सुधारमें करें। मैं अिस बातके विरुद्ध

नही हू कि विज्ञानकी अेक विषयके रूपमें अुन्नति हो। अितना ही नहीं, मैं पश्चिमकी वैज्ञानिक वृत्तिको आदरकी दृष्टिसे देखता हूं। और यदि अिस आदरकी दृष्टिके साथ थोड़ा-बहुत डर मिला हुआ हो, तो अुसका कारण यह है कि पश्चिमके वैज्ञानिक अीश्वरकी सृष्टिमें गूंगे प्राणियोंको कुछ गिनते ही नही हैं।

शरीर-शास्त्रकी पढ़ाअीके लिअे जीवित प्राणियोंको काट कर अुन्हें पीड़ा पहुंचानेकी प्रथाके खिलाफ मेरी आत्मा विद्रोह करती है। तथाकथित विज्ञान और मानवधर्मके नामसे होनेवाली निर्दोष जीवोंकी असह्य हत्याने मुझे नफरत है। बेगुनाहोंके खूनसे सनी हुअी वैज्ञानिक खोजको मैं किसी कामकी नही समझता। जीवित प्राणियोंको चीरे बिना खूनके दौरेका रूप मालूम न हुआ होता, तो अुसके बिना दुनियाका काम चल जाता। और मैं तो वह दिन देखनेकी आशा करता हू, जब पश्चिम विज्ञानके प्रमाणित ज्ञानकी खोज करनेके आजकलके तरीकोंकी हद कायम कर देगा। भविष्यमें मानव-कुटुम्बके साथ हरअेक जीवकी भी गिनती की जायगी। और जैसे हम सब समझने लगे हैं कि अपने पांचवें हिस्सेके आबादीवाले देशभाअियोंको दबाये रखकर हिन्दू अपना भला करना चाहें या पश्चिमकी जातियां पूर्व और अफ्रीकाके देशोंको चूसकर और कुचलकर स्वयं आगे बढ़ना चाहें तो अुनका यह विचार गलत है, अुसी तरह समय आने पर हम यह भी समझ जायंगे कि निचले दर्जेके प्राणियों पर हमारा साम्राज्य अुन्हें मारनेके लिअे नहीं, बल्कि हमारी तरह अुनकी भी भलाअीके लिअे है। क्योंकि मुझे भरोसा है कि जैसी मेरी आत्मा है, वैसी ही अुनकी भी आत्मा है।

• • •

विद्यार्थीने दूसरा सवाल यह पूछा है

"भारतके संयुक्त राज्योंमें हम देशी रियासतोंको आप कैसे रहने देंगे, या लोकसत्तात्मक राज्य कायम करेंगे? राष्ट्रीय अेकताके लिअे हमारी राष्ट्रभाषा क्या होनी चाहिये? वह अंग्रेजी क्यों नहीं हो सकती?"

यह तो कुछ-कुछ दीखने लगा है कि देशी रियासतें भारतमें हैं आज स्वरूप बदलने लगी हैं। जब सारा राष्ट्र प्रजासत्तात्मक बनता है तब वे निरंकुश नहीं रह सकतीं। परन्तु आज कोई नहीं बता सकता कि अन्तमें प्रजातन्त्र राज्य कैसा रूप लेगा। यदि अंग्रेजी भाषा राष्ट्रभाषा हुअी तो

हो, तब तो भविष्य जान लेना आसान है। क्योंकि वह तो मुट्ठीभर आदमियोंका ही प्रजासत्ताक राज्य होगा। परन्तु यदि हमारा अिरादा भारतीय राष्ट्रके सभी लोगोंकी राजनीतिक अेकता करनेका हो, तो भविष्यवेत्ता ही कह सकता है कि हमारा भविष्य कैसा होगा। हमारे विशाल जनसमूहकी अेक भाषा अंग्रेजी हो ही नहीं सकती। हमारी भाषा तो हिन्दी और अुर्दूकी सुन्दर मिलावटसे बनी हुअी अेक तीसरी भाषा यानी हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। हमारी अंग्रेजी भाषाने हमें करोड़ों देशभाअियोंसे अलग कर दिया है। हम अपने ही देशमें पराये हो गये हैं। जिस ढंगसे अंग्रेजी भाषा राजनीतिक झुकाववाले हिन्दुओंमें घुसी है, वह मेरे नम्र मतसे देशके प्रति ही नहीं, बल्कि सारी मानव-जातिके प्रति बड़ा अपराध है; क्योंकि हम स्वयं अपने ही देशकी अुन्नतिके रास्तेमें बडी रुकावट बन गये हैं। भारत आखिर तो खंड ही कहलायेगा। और जिस तरह मानव-जातिकी प्रगति पर खंडकी प्रगतिका आधार है, वैसे ही खंडकी प्रगति पर मानव-जातिकी प्रगतिका आधार है। जो भी अंग्रेजी पढ़ा-लिखा भारतीय गावोंमें घूमा है, अुसने अिस धधकती हुअी सचाअीको पहचाना है; जैसे मैंने पहचाना है। मेरे दिलमें अंग्रेजी भाषा और अंग्रेज लोगोंके भारी गुणोंके लिअे बड़ी अिज्जत है। किन्तु अंग्रेजी भाषा और अंग्रेज लोगोंने आज हमारे जीवनमें अेक अैसी जगह कर रखी है, जो अुनकी व हमारी प्रगतिको रोके हुअे है। अिसमें मुझे जरा भी शक नहीं।

नवजीवन, २७–१२–'२५

२३
विविध प्रश्न

१

कच्छके अेक शिक्षकने कुछ प्रश्न पूछे हैं। अुनके अुत्तर खुले तौर पर देने लायक हैं। अिसलिअे यहां प्रश्न देकर मैं अुनके अुत्तर देता हूं:

> "मैं विद्यालयका शिक्षक हूं। मुझमें जितना चाहिये अुतना चारित्र्य, सत्य और ब्रह्मचर्य नहीं है। अलबत्ता, मैं अुन्हें प्राप्त करनेका बहुत ज्यादा प्रयत्न कर रहा हूं। मेरे पिताके सिर पर कर्ज है।

अैसे मौके बार-बार नहीं आते। आने पर भी दण्ड देनेके औचित्यके बारेमें शक हो तो नहीं देना चाहिये। गुस्सेमें तो हरगिज नहीं देना चाहिये।

* * *

दूसरे कुछ प्रश्न यहां देनेकी जरूरत नहीं। अुत्तरों परसे ही प्रश्न समझे जा सकते हैं।

१. कसरत करनेवालेको लंगोट पहननेकी पूरी जरूरत है। पश्चिममें भी अुसकी जरूरत मानी गअी है।

२. सुबह अुठकर दातुन-पानी करके अुबला हुआ पानी पीनेसे फायदा होता है। बहुतसे लोग साफ हो तो ठंडा पानी भी पीते हैं। पीनेमें कोअी नुकसान नहीं है।

३. गृहस्थ जीवनमें बाल बढ़ानेका मतलब है मैल बढ़ाना या अुन्हें साफ रखनेमें बहुत समय खोना। पुरुषके लिअे तो यह ठीक दीखता है कि वह छोटीसी चोटीके सिवा बाकी बाल कैंचीसे कटा ले या अुस्तरेसे मुडवा ले। मेरी कोअी माने तो मैं लड़कियोंके बाल भी जरूर कटवा दूं। बालोंमें शोभा है, यह तो हम अिसलिअे मानते हैं कि हमें अिसकी आदत पड गअी है। शोभा तो चाल-चलनमें होती है, बाहरकी दिखावटमें नहीं। यह अेक वहम है कि बाल कुदरती होनेके कारण न कटवाये जाय या न मुडवाये जायं। हम नाखून काटते ही हैं। न काटें तो अुनमें मैल भर जाता है, या अुन्हें दिनभर साफ रखना चाहिये। नहानेकी क्रिया करके हम रोज चमड़ीके अूपरकी पर अुतारते ही रहते हैं। जो जंगलके रहनेवाले हैं और जिन्होंने अपनी बहुतसी क्रियाअें बन्द कर रखी हैं, अुन पर कौनसा नियम लागू हो, यह हम यहां नहीं सोचेंगे।

नवजीवन, २७-९-'२५

२

विनय-मन्दिरके अेक शिक्षक पूछते हैं:

"१. स्कूलोंमें और खास तौर पर राष्ट्रीय पाठशालाओंमें विद्यार्थियोंको जो शारीरिक दण्ड दिया जाता है, वह किसी तरह भी अुचित है?

२. कुछ शिक्षक भाअी यों कहते हैं कि 'हम काम करके न मानेके लिअे विद्यार्थीको भले दण्ड न दें; परन्तु वह शरारत या नैतिक

अपराध करे तो पीटनेमें कोअी हानि हुअी नहीं।' क्या यह राय ठीक है?

३. कुछ भाअी यह भी दलील देते हैं कि 'हम विद्यार्थीको सुधारनेके लिअे कभी-कभी दण्ड देते हैं, और अैसा करनेके बाद हमें पछतावा होता है।' अिस तरहकी दलील देकर कोअी शिक्षक विद्यार्थीको मारे तो क्या वह क्षम्य है?

४. शारीरिक दण्डके सिवा और कौन-कौनसे दण्डोंकी राष्ट्रीय स्कूलोंमें मनाही होनी चाहिये?

५. विद्यार्थीको किस-किस तरहका दण्ड देनेमें राष्ट्रीय स्कूलके शिक्षककी अहिंसा-धर्म पालनेकी प्रतिज्ञा टूटती है?

अूपरके प्रश्न सिर्फ पूछनेके लिअे ही आपसे नहीं पूछे गये हैं। अिन प्रश्नोंके बारेमें यहाकी शालाके अध्यापकोंमें कुछ समयसे चर्चा हो रही है और अुसमें कुछ भाअियोंकी दी हुअी दलीलोंको ही मैंने प्रश्नोंमें रख दिया है। क्योंकि ये प्रश्न महत्त्वके हैं, अिसलिअे यदि अिनके अुत्तर आप 'नवजीवन'के जरिये देंगे, तो बहुतेरे शिक्षक भाअियोंको रास्ता मिलेगा।"

मेरी राय यह है कि विद्यार्थियोंको किसी भी तरहका दण्ड देना ठीक नहीं है। विद्यार्थियोंके लिअे शिक्षकोंके दिलमें जो मान और शुद्ध प्रेम होना चाहिये, अुसमें अैसा करनेसे कमी आती है। दण्ड देकर विद्यार्थियोंको पढ़ानेका तरीका दिन-दिन छोड़ा जा रहा है। मैं जानता हूं कि कभी मौके अैसे आते हैं, जब बड़ेसे बड़े शिक्षकसे भी दण्ड दिये बिना नहीं रहा जाता। परन्तु अैसे मौके अिक्के-दुक्के ही होते हैं और अुनका किसी तरह भी समर्थन करना ठीक नहीं। अुसको मारना पड़े तो यह बड़े शिक्षककी कलाकी कमी ही मानी जानी चाहिये। स्पेन्सर जैसोंने तो किसी भी तरहके दण्डको अनुचित ही माना है, पर वह अपने सिद्धान्त पर सदा अमल नहीं कर सका।

मेरे अिस तरहके अुत्तर देनेके बाद जो प्रश्न पूछे गये हैं, अुनका ब्यौरेवार अुत्तर देना जरूरी नहीं है।

आम तौर पर अहिंसाके साथ दण्डका मेल नहीं बैठ सकता। अैसे अुदाहरण मैं जरूर गढ़ सकता हूं, जिनमें दण्डको दण्ड न माना जाय। किन्तु ... लिअे निरर्थक समझने चाहिये। जैसे कोअी पिता अपने

ही दुःखी हो गया हो और दुःखमें अपने लड़केको पीट डाले तो वह प्रेमका दण्ड है। लडका भी अिसे हिंसा न समझेगा। या सन्निपातमें बकवास करनेवाले बीमारको कभी-कभी सेवा करनेवालोंको थप्पड़ लगानी पड़ती है। अिसमें हिंसा नहीं, अहिंसा है। किन्तु ये अुदाहरण शिक्षकोंके बिलकुल कामके नहीं। अुन्हें मारपीट किये बिना विद्यार्थियोंको पढ़ानेकी और अनुशासनमें रखनेकी कला सीखनी चाहिये। अैसे शिक्षकोंके अुदाहरण मौजूद हैं, जिन्होंने किसी भी दिन अपने विद्यार्थियोंको नहीं मारा। शरीर-दण्डके सिवा दूसरे दण्ड विद्यार्थीको नीचे अुतार देना, अुससे अुठ-बैठ करवाना, अंगूठे पकड़वाना, गाली देना वगैरा हैं। मेरे विचारसे अिनमें से कोअी भी दण्ड शिक्षक विद्यार्थियोंको न दें।

विद्यार्थियोंको सुधारनेके लिअे दण्ड देना और फिर पछताना पश्चात्ताप नहीं है। और दण्ड देनेसे सुधार हो सकता है, यह मान्यता विद्यार्थीमें पैदा करने और शिक्षकके रखनेसे अन्तमें वह समाजमें भी घर कर लेती है। अिसीलिअे समाजमें हिंसाके बलसे सुधार करनेका झूठा भ्रम पैदा हुआ है। मेरी यह राय है कि जो राष्ट्रीय शिक्षक जान-बूझकर दण्डसे काम लेता है, वह जरूर अपनी प्रतिज्ञा भंग करता है।

नवजीवन, २१-१०-'२८

२४

व्यायामकी पद्धतिके बारेमें*

मेरे विचारसे विद्यार्थियोंका शारीरिक व्यायाम पुराने ढंगके अनुसार होना चाहिये, यानी प्राणायाम, आसन आदिके द्वारा। मेरा यह विश्वास है कि मूलर जैसे पश्चिमवालोंने हालमें शरीरको बढ़ानेके लिअे जो-जो पुस्तकें लिखी हैं, और जिनमें थोड़ी-बहुत सफलता मिली है, अुनकी जड़ प्राचीन पद्धतिमें है। अिन लोगोंने सिर्फ अुसे आजके विज्ञानशास्त्रकी भाषामें रखा है और अुसमें कुछ सुधार भी किये हैं। मैं मानता हूं कि अिस दिशामें हमने

* अिस प्रकरणके दो भाग सत्याग्रह आश्रमकी शालाके हस्तलिखित पत्र 'मधपूडा' में से हैं। अुनकी निश्चित तारीख नहीं मिली। अैसा अन्दाज है कि वे १९२४-२५ के अरसेमें लिखे गये थे।

बहुत ही कम काम किया है। अिस पद्धतिसे व्यायाम सीखनेके बाद आजकलकी कुश्ती वगैरा जिसे सीखना हो, अुसे सीखनेकी सुविधा देनी चाहिये। परन्तु लाठी-तलवार चलाना सीखना जरूरी नहीं मानना चाहिये। मैंने यह नहीं माना है कि बच्चोंको पहलेसे ही लाठी वगैराके प्रयोगोंमें पड़नेकी जरूरत है। शरीरको कसने और अलग अलग अवयवोंका विकास करनेमें लाठीका बहुत कम स्थान है। यह व्यायामका अंग नहीं, परन्तु अिसे अपने बचावके लिअे या अिसी तरहके दूसरे कारणोंसे दी जानेवाली तालीमका भाग समझना चाहिये।

* * *

[अेक पत्रमें से]

कसरत और खेल अनिवार्य कर दिये गये, जिससे मुझे तो बहुत अच्छा लगा। हम अपने लिअे जो कुछ अच्छा है अुसे अनिवार्य बना लें। गुजराती, संस्कृत वगैरा विषयोंको हम अच्छा और जरूरी समझते हैं, अिसलिअे अुन्हें अनिवार्य बना लेते हैं। खेल और कसरतको अितना जरूरी नहीं समझा अिसलिअे अुन्हें विद्यार्थियोंकी मरजी पर छोड़ दिया। अब यह मानना चाहिये कि अुन्हें गुजरातीके बराबर ही आप जरूरी समझते हैं, अिसीलिअे वे अनिवार्य हो गये। हमारी मरजीके खिलाफ लगाया हुआ अंकुश हमें पराधीन बनाता है। अपने-आप माना हुआ या लगाया हुआ अंकुश हमारी सच्ची आजादीको बढ़ाता है।

२५

व्यायाम-मन्दिर किसलिअे?*

आज जो व्यायामके खेल मैंने देखे वे बहुत अच्छे थे। अुनके लिअे मैं डा० पटवर्धनको और खिलाड़ियोंको बधाअी देता हूं। आप सब जानते हैं कि मैं मर्यादित काम करनेवाला हूं। बहुतसे कामोंमें दखल देना मेरा काम नहीं। परन्तु जब डा० पटवर्धनने मुझसे प्रार्थना की तो मैं अिनकार न कर सका। मुझे कहा गया है कि अिस व्यायामशालामें हिन्दू-मुसलमान सबको

* अमरावतीके व्यायाम-मंदिरमें दिया हुआ भाषण।

आनेका मौका मिलता है। मुसलमान खिलाड़ी भी हैं और अुनके सिवा अछूत विद्यार्थी भी है। यह जान कर मुझे बड़ा आनन्द होता है।

हमारे शास्त्र बताते हैं कि जो विद्यार्थी व्यायाम करना चाहते हैं और अुसका अच्छा अुपयोग करना चाहते हैं, अुन्हें ब्रह्मचर्य पालना चाहिये। मैं यह कह सकता हूं कि मैंने सारे भारतमें दौरा किया है। मैं भारतकी दुखी हालत जानता हूं। परन्तु सबसे ज्यादा दुःखदायी बात यह है कि हमारे यहांके नौजवानोंके शरीर शक्तिहीन है। जहां बाल-विवाहका रिवाज जारी है और अुससे सन्तानें पैदा होना भी जारी है, वहां व्यायाम असंभव हो जाता है। व्यायामके लिअे भी थोड़ी बहुत शारीरिक सम्पत्ति चाहिये। क्षयरोगीको व्यायाम करनेकी सलाह कौन देगा? हां, कोअी हल्की कसरत अुसे बताअी जा सकती है। परन्तु आज जो दाव आपने देखे, वे तो अुसके लिअे असंभव हैं। अिसलिअे यदि हम भारतकी और हिन्दू जातिकी अुन्नति चाहते हैं, तो बाल-विवाहका बुरा रिवाज मिट जाना चाहिये। जैसा मनु महाराजने कहा है, हरअेक विद्यार्थीको २५ साल तक अखंड ब्रह्मचर्य पालना चाहिये। ये दो शर्तें पूरी न हों तो कितना ही व्यायाम किया जाय सब बेकार होगा।

परन्तु तीसरी बात। मेरी प्रतिज्ञा है, मेरा धर्म है कि मैं किसी भी अशातिके काममें हिस्सा नहीं लूंगा। भले ही कोअी कहे कि अहिंसा-धर्म सनातन धर्म नहीं। मेरे लिअे यही सनातन धर्म है, दूसरा कोअी नहीं। किसीको यह शंका हो सकती है कि मेरे जैसा अहिंसाका पुजारी यहां कैसे आ सकता है, परंतु यह शंका करनेकी जरूरत नहीं। अहिंसाका *अर्थ हिंसाकी* शक्तिको छोड़ना है। जिसमें हिंसा करनेकी शक्ति न हो, वह अहिंसक नहीं हो सकता। अहिंसाकी तो अुपासना करनी पड़ती है। वह कोअी अपने-आप मिल जानेवाली चीज नहीं है। क्योंकि, जैसा मैं कह चुका हूं, यह अेक प्रचंड शक्ति है। हिंसा करनेकी पूरी शक्ति हो, तो ही अहिंसक बननेकी गुंजाअिश रहती है। यह शक्ति जुटानेके लिअे बल ही पैदा करना चाहिये, यह मैं नहीं मानता। किन्तु मैं मानता हूं कि बच्चों और नौजवानोंको निर्बल बनाकर और अुनके शरीर क्षीण करके तो अुन्हें अहिंसक नहीं बनाया जा सकता; *नौजवानोंके हाथसे हथियार छीनकर अुन्हें अहिंसक नहीं बनाया जा सकता।* अिस राज्यके बहुतसे गुनाहोंमें से अेक गुनाह यह है कि अुसने हमसे हथियार छीन लिये हैं; और यह हमें अहिंसक बनानेके लिअे नहीं, बल्कि कमजोर

बनानेके लिअे किया है। मैं तो भारतको ताकतवर बना हुआ देखना चाहता हूं।

यह व्यायाम-मंदिर मुझे पसन्द है। परंतु यदि अेक भी व्यायाम-मंदिर मुसलमान, अीसाअी, हिन्दू या किसी भी जातिको मिटानेके लिअे खोला जाय, तो अुसे मेरा आशीर्वाद नहीं मिल सकता। जिस व्यायाम-मंदिरके जरिये सब जातियोंका, सब धर्मोंका संगठन होता हो, जो व्यायाम-मंदिर अहिंसाके धर्मका रहस्य जाननेके लिअे हो, अुसके लिअे मेरा सदा आशीर्वाद है। मुझे यह विश्वास दिलाया गया है कि यह व्यायाम-मंदिर अैसे ही ध्येयसे कायम हुआ है और अिसी विश्वास पर मैं यहां आया हूं।

मैं आपको बधाअी देता हूं और आपकी अुन्नति चाहता हूं। मेरी अीश्वरसे प्रार्थना है कि आप विद्यार्थी लोग सच्चे बनो, ब्रह्मचर्य पालो, धर्म-रक्षा करो और भारतको तेजस्वी बनाओ।

नवजीवन, २६-१२-'२६

२६

भारतीय कवायद

प्रो० माणिकरावने कवायद और व्यायामके बारेमें तन्मयतासे जितना काम किया है, अुतना मेरी जानकारीमें और किसीने नहीं किया है। अुनका सदा यह आग्रह रहा है कि कवायदके शब्द सारे हिन्दुस्तानमें समान रूपसे बरतने चाहिये। बहुत बार लोग अंग्रेजी शब्दोंकी खिचड़ीका अुपयोग करते देखे जाते हैं। प्रो० माणिकरावने अुन शब्दोंको निकालकर भारतीय पारिभाषिक शब्दोंकी योजना की है। अब अुनका गुजराती स्पष्टीकरण अुन्होंने प्रकाशित किया है। जो लोग कवायद और व्यायाममें रस लेते हैं, अुन्हें यह स्पष्टीकरण पढ़ना चाहिये। पुस्तककी कीमत ४ आना है।

हरिजनबन्धु, २८-१२-'३९

२७

दायां बनाम बायां

दाहिने और बायें हाथके बीच फर्क कैसे पड़ा, और कुछ काम बायें हाथसे नहीं किये जा सकते और कुछ दाहिनेसे ही किये जा सकते हैं यह रिवाज कब पड़ा, यह कोअी निश्चयके साथ नहीं कह सकता। परंतु परिणाम तो हम जानते हैं कि बहुतसे कामोंमें अुपयोग न करनेके कारण बाया हाथ निकम्मा हो जाता है और हमेशा दाहिनेसे कमजोर रहता है।

जापानमें अैसा नहीं होता। वहाके लोगोंको बचपनसे ही दोनों हाथोका अेकसा अुपयोग सिखाया जाता है। जिससे अुनके शरीरकी अुपयोगिता हमारे शरीरसे बढ़ जाती है।

ये विचार मैं अपने मौजूदा अनुभवके सिलसिलेमें पढ़नेवालोंके लाभके लिअे रखता हूं। जापानकी बात पढ़े हुअे मुझे बीस बरससे अूपर हो गये। जब मैंने यह बात सुनी तभीसे मैंने बायें हाथसे लिखनेकी आदत डालनी शुरू कर दी और साधारण आदत डाल ली। मैंने यह मानकर कि मुझे फुरसत नहीं है, दाहिने हाथ जैसी तेजी बायेंमें पैदा नहीं की। अिसका मुझे अब पछतावा होता है। मेरा दाहिना हाथ अब मैं जैसा चाहता हू, वैसा लिखनेका काम नहीं देता। ज्यादा लिखनेसे अुसमें दर्द होता है। जहा तक संभव हो हाथसे लिखनेकी शक्ति बनाये रखनेका लोभ है। अिसलिअे मैंने फिरसे बायें हाथसे काम लेना शुरू किया है। मुझे अब अितनी फुरसत तो है ही नहीं कि मैं सब कुछ बायें हाथसे ही लिखू और अुसमें दाहिनेके बराबर फुरती आ जाय। फिर भी वह मुझे कठिन समयमें काम दे रहा है, अिसलिअे मैं अपना अनुभव पढ़नेवालोंके सामने रखता हू। जिसे फुरसत और अुत्साह हो, वह बायें हाथको भी तालीम दे। कुछ समय बाद सब अुसको अुपयोगी बना सकेंगे। सिर्फ लिखनेकी ही नहीं, और भी क्रियाओंका अभ्यास बायें हाथसे करनेमें जरूर फायदा है। क्या कितने ही लोगोंका यह अनुभव नहीं होगा कि दाहिने हाथको कुछ हो जाने पर अुनसे बायें हाथसे खाया तक नहीं जाता? अिस लेखसे कोअी यह सार हरगिज न निकाले कि बायें हाथको अेकमी तालीम देनेके पीछे कोअी पागल हो जाय। अिस *टिप्पणीका आशय अितना ही है कि आसानीसे बायें हाथको जितनी आदत*

डाली जा सके, अुनकी डालनेकी सलाह दी जाय। शिक्षक लोग
सूचनाका अुपयोग बालकोंके लिअे करें, यह अिष्ट मालूम होता है।

नवजीवन, १९-७-'२५

२८

जीवनमें संगीत

१

*[अहमदाबादके राष्ट्रीय संगीत-मंडलका दूसरा वार्षिकोत्सव सत्या-
आश्रमके प्रार्थना-चौकमें गांधीजीकी मौजूदगीमें हुआ था। अुस मौके
गाना-बजाना हो जानेके बाद गांधीजीने यह भाषण दिया था।]*

हमारे यहां अेक सुभाषित है कि जिसे संगीत प्यारा न हो, वह
तो योगी है या पशु है। हम योगी तो हैं नहीं, परंतु जिस हद तक संगीत
कोरे हैं, अुस हद तक पशुके जैसे समझे जायेंगे। संगीत जाननेका अर्थ
अपने सारे जीवनको संगीतसे भर देना। हमारी जिन्दगी सुरीली न होने
ही तो हमारी हालत दयाजनक है। जहां जनताका अेक सुर न निकलता
हो, वहां स्वराज्य कैसे हो?

जहां अेक सुर न निकलता हो, जहां सब अपना-अपना राग अलापते
हों या सब तार टूटे हुअे हों, वहां अराजकता या बुरा राज्य होता है।
हममें संगीत न होनेसे हमें स्वराज्यके साधन अच्छे नहीं लगते। और जिस
अर्थमें प्लेटोका कहना सच है कि संगीतकी हालत देखकर आप समाजकी
राजनीतिक स्थिति बता सकते हैं। यदि हममें संगीत आ जाय, तो स्वराज
भी आ जाय। जब करोड़ों आदमी अेक स्वरसे भजन गाने लगें, अेक स्वरसे
कीर्तन करने लगें या रामधुन गाने लगें और जब अेक भी बेसुरी आवाज
न निकले, तब यह कह सकते हैं कि हमारे सामाजिक जीवनमें संगीत आ
गया। अितनी सीधी-सी बात भी हम न कर सकें तो स्वराज्य कैसे लेंगे?

* * *

जहां बदबू है, वहां संगीत नहीं। हमें यह समझ लेना चाहिये कि
सुगंध भी अेक तरहका संगीत है। आम तौर पर जब किसीके कंठमें सुरीली

आवाज निकलती है, तो अुसे सुननेको जी चाहता है और अुसे हम संगीत कहते हैं। परंतु संगीतका विशाल अर्थ करेंगे, तो मालूम होगा कि जीवनके किसी भी भागमें हमारा संगीतके बिना काम नहीं चल सकता। संगीतका अर्थ आज तो स्वच्छन्दता और स्वेच्छाचार हो गया है। किसी भी बेशरम स्त्रीके नाचने-गानेको हम संगीत मान लेते हैं। और हमारी पवित्र मा-बहनें तो बेसुरा ही गाती हैं। वे संगीत सीखें तो शरमकी बात समझी जाती है! अिस तरह संगीतके साथ सत्संग न होनेके कारण डाक्टर (संगीत-मंडलके सभापति डा० हरिप्रसाद) को दस विद्यार्थियोंसे ही संतोष करना पड़ा है।

असलमें देखा जाय तो संगीत पुरानी और पवित्र चीज है। हमारे सामवेदकी अृचायें संगीतकी खान हैं। कुरान शरीफकी अेक भी आयत सुरके बिना नहीं बोली जा सकती। और औसाओी धर्ममें डेविडके 'साम' (गीत) सुनें तो अैसा लगता है, मानो सरस्वती अिस कलाकी चरम सीमा पर पहुंच गअी है, जैसे हम सामवेद सुन रहे हों। आज गुजरात संगीतहीन, कलाहीन हो गया है। अिस दोषसे बचना हो तो अिस संगीत-मंडलको अुत्तेजन मिलना चाहिये।

संगीतमें हमें हिन्दू-मुसलमानोंका मेल चाहिये। हिन्दू गाने-बजाने-वालोंके साथ बैठकर मुसलमान गाने-बजानेवाले गाते-बजाते हैं। परंतु वह शुभ दिन कब आयेगा, जब अिस राष्ट्रके दूसरे कामोंमें भी अैसा संगीत जमेगा? अुस समय हम सब राम और रहीमका नाम अेकसाथ लेने लगेंगे।

आप संगीतको जो थोड़ी भी मदद देते हैं, अुसके लिअे बधाअीके पात्र हैं। आप लोग अपने लड़के-लड़कियोंको ज्यादा भेजेंगे तो वे भजन-कीर्तन सीखेंगे, और वे अितना करेंगे तो भी आप राष्ट्रीय अुन्नतिमें कुछ न कुछ हाथ जरूर बंटायेंगे।

परंतु अिससे आगे बढ़ें। यदि हमें करोड़ों लोगोंको संगीतमय बनाना है, तो हम सबको खादी पहनना होगा और चरखा चलाना होगा। आज खांसाहबका संगीत बहुत मीठा था, किन्तु वह हम जैसे थोड़े लोगोंको ही मिल सकता है। सबको नसीब नहीं हो सकता। परंतु चरखेका जो संगीत घर-घरमें सुनाअी दे सकता है, अुसके सामने वह संगीत फीका लगता है। क्योंकि चरखेका संगीत कामधेनु है, करोड़ोंके पेट भरनेका साधन है। मेरे

खयालमें वह सच्चा संगीत है। ओीश्वर सबका भला करे, सबको अच्छी बुद्धि दे।

नवजीवन, ४–४–'२६

२

कॉलिजके विद्यार्थियोंके प्रश्नोंके संग्रहमें आखिरी प्रश्न यह है:

"संगीतसे आपके जीवन पर क्या असर हुआ है?"

संगीतसे मुझे शांति मिली है। मुझे अैसे मौके याद हैं, जब मुझे किसी कारण परेशानी हुआी हो। अुस समय संगीत सुननेसे मनको शांति मिल गआी। यह भी अनुभव हुआ है कि संगीतसे क्रोध मिट जाता है। अैसी तो कआी बातें याद हैं कि जिनके बारेमें यह कहा जा सकता है कि गद्यमें लिखी हुआी चीजोंका असर नहीं हुआ और अुन्हीं चीजोंके बारेमें भजन सुननेसे असर हो गया। मैंने देखा है कि जब बेसुरा भजन गाया गया, तो अुसके शब्दोंका अर्थ जानते हुअे भी वह न सुननेके बराबर लगा। और वही भजन जब मीठे सुरमें गाया गया, तो अुसमें भरे हुअे अर्थका असर मेरे मन पर बहुत गहरा हुआ। गीताजी जब मीठे सुरमें अेक आवाजसे गाओी जाती है, तब अुसे सुनते-सुनते मैं थकता ही नहीं, और गाये जानेवाले श्लोकोंका अर्थ दिलमें ज्यादा-ज्यादा गहरा पैठता है। मीठे स्वरमें जो रामायण बचपनमें सुनी थी, अुसका असर अब तक चला आ रहा है। अेक बार अेक मित्रने 'हरिनो मारग छे शूरानो' भजन गाया, तो अुसका असर मुझ पर पहले कआी बार सुना अुससे कहीं ज्यादा गहरा हुआ। सन् १९०७में ट्रांसवालमें मुझ पर मार पड़ी थी। घावके टाके लगाकर डाक्टर चला गया था। मुझे दर्द हो रहा था। जो दुःख मैं स्वयं गाकर या मनन करके नहीं मिटा सकता था, वह ओलिव डोकसे अेक मशहूर भजन सुनकर मैंने मिटा लिया। यह बात 'आत्मकथा'में लिखी जा चुकी है।

मेरे यह लिखनेका कोओी अैसा मतलब न लगाये कि मुझे संगीत आता है। यह कहा जा सकता है कि संगीतका मेरा ज्ञान नहींके बराबर है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि मैं संगीतकी परीक्षा कर सकता हूं। यह मेरे लिअे अेक ओीश्वरकी देन है कि कुछ संगीत मुझे अच्छा लगता है या अच्छा संगीत मुझे पसन्द है।

मुझ पर संगीतका असर जिस तरह हमेशा अच्छा ही हुआ है, अिससे मैं यह सार नहीं निकालना चाहता कि सब पर अैसा ही असर होता है या होना ही चाहिये। मैं जानता हूं कि गानों द्वारा बहुतोंने अपनी विषय-वासनाओंको अुत्तेजित किया है। अिससे यह सार निकाला जा सकता है कि जिसकी जैसी भावना हो, अुसे वैसा ही फल मिलता है। तुलसीदासने ठीक ही कहा है :

जड़ चेतन गुण-दोषमय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय परिहरि वारि विकार॥

परमेश्वरने जड़, चेतन सबको गुण-दोषवाला बनाया है। किन्तु जो विवेकी है वह जैसे कहानीका हंस दूधमें से पानी छोड़कर मलाअी ले लेता है वैसे ही दोष छोड़कर गुणकी पूजा करेगा।

नवजीवन, २५-११-'२८

२९

शालाओंमें संगीत

गांधर्व महाविद्यालयके पंडित नारायणशास्त्री खरेने लड़के-लड़कियोंमें शुद्ध संगीतका प्रचार करनेके काममें जीवन अर्पण किया है। खास तौर पर अहमदाबादमें और आम तौर पर गुजरातमें अिस दिशामें जो बड़ी प्रगति हो रही है अुसका हाल अुन्होंने भेजा है, और अिस बारेमें अपना दुःख प्रकट किया है कि संगीतको पढ़ाओमें शामिल करनेकी बात शिक्षा-विभागके अधिकारी नहीं सुनते। पंडितजीकी अनुभव पर कायम की हुआी राय यह है कि प्रारंभिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें संगीतको जगह मिलनी ही चाहिये। मैं अिस सूचनाका हृदयसे समर्थन करता हूं। बच्चेके हाथको शिक्षा देनेकी जितनी जरूरत है, अुतनी ही जरूरत अुसके गलेको शिक्षा देनेकी है। लड़के-लड़कियोंके भीतर जो अच्छाअियां भरी रहती हैं, अुन्हें बाहर लाने और पढ़ाओमें भी अुनकी सच्ची दिलचस्पी पैदा करनेके लिअे कवायद, अुद्योग, चित्रकारी और संगीत साथ-साथ सिखाने चाहिये।

यह बात मैं मानता हूं कि अिसका अर्थ शिक्षाकी पद्धतिमें क्रांति करनेके बराबर है। राष्ट्रके भावी नागरिकोंके जीवन-कार्यकी पक्की बुनियाद

डालती हों, तो ये चार चीजें जरूरी हैं। किसी भी प्राथमिक शालामें जाकर देख लीजिये, तो वहां लड़के मैले होंगे, व्यवस्थाका नाम न होगा और कर्ण बेसुरी आवाजें निकलती होंगी। अिसलिये मुझे तो कोअी शंका नहीं कि जब सभी प्रान्तोंके शिक्षामंत्री शिक्षा-पद्धतिको नये सिरेसे रचना करेंगे और अुसे देशकी जरूरतके मुताबिक बनायेंगे, तब अिन जरूरी बातोंकी तरफ मैंने अूपर ध्यान खींचा है अुन्हें वे छोड नहीं देंगे। मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनामें ये चीजें शामिल ही हैं। जिस समय बच्चोंके सिरसे अेक कठिन विदेशी भाषा सीखनेका बोझ अुतार दिया जायगा, अुसी समय ये चीजें आसान हो जायेंगी।

बेशक, हमारे पास अिस नअी पद्धतिसे शिक्षा दे सकनेवाले शिक्षक नहीं हैं। परंतु यह कठिनाअी तो हर नये साहसमें आने ही वाली है आजका शिक्षकवर्ग सीखनेको राजी हो, तो अुसे यह मौका देना चाहिये, और यदि वे ये जरूरी विषय सीख लें, तो अुनकी तनखाहें तुरन्त बढ़ानेकी तजवीज भी करनी चाहिये। यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि जो नये विषय प्राथमिक शिक्षामें शामिल करते हैं, अुन सबके लिअे अलग-अलग शिक्षक रखे जायं। जिससे तो खर्च बहुत बढ़ जायगा। अिसलिअे यह बिलकुल अनावश्यक है। यह हो सकता है कि प्राथमिक शालाओंके कितने ही शिक्षक अितने कच्चे हों कि वे अिन नये विषयोंको थोड़े समयमें न सीख सकें। परंतु जो लड़का मैट्रिक तक पढ़ा हो, अुसे संगीत, चित्रकारी, कवायद और हाथ-अुद्योगके मूलतत्त्व सीखनेमें तीन महीनेसे ज्यादा समय न लगना चाहिये। जिनकी कामचलाअू जानकारी वह कर ले, तो फिर वह पढ़ाते-पढ़ाते जिन ज्ञानको हमेशा बढ़ाता रह सकता है। बेशक, यह काम तभी हो सकता है जब शिक्षकोंमें राष्ट्रको फिरसे अूंचा अुठानेके लिअे अपनी योग्यता दिन-दिन बढ़ाते रहनेकी लगन और अुत्साह हो।

हरिजनबंधु, १२–९–'३७

३०

अेक अटपटा प्रश्न

अेक शिक्षक नीचे लिखा प्रश्न पूछते हैं :

"हमारी धार्मिक पुराणोंकी कहानियोंमें देवी-देवताओंके तरह-तरहके रूपोंके वर्णन हैं और कभी प्रकारकी अजीब कथायें दी हुअी हैं। हम मानते हैं कि ये देवी-देवता भावनाओं या कुदरती शक्तियोंके प्रतीक या रूपक हैं। हम अुनके भीतरी रहस्य या आत्माको पूजते हैं, परंतु यह नहीं मानते कि अैसे स्वरूपवाले देवी-देवता स्वर्गमें, कैलासमें या वैकुण्ठमें रहते हैं। फिर भी यह मानकर कि पुराणोंकी कथाओंमें धर्मकी शिक्षा या काव्य है, हम अिन कहानियोंको स्वीकार करते और अुनका अुपयोग करते हैं। अब प्रश्न यह है कि बच्चोंके सामने ये कहानियां किस रूपमें रखी जायं? यदि अुनकी आत्मा कायम रखकर ढांचा बदल दें, तो आजकी बहुतसी कहानियां रद्द करके नअी कहानियां गढ़नी पड़ें। बालकोंसे यह कहना ही पड़े कि कुछ कहानियां अैसी हैं, जो कल्पित या मनगढ़न्त हैं। (जैसे यह कि राहु चन्द्र और सूर्यको निगल जाता है।) दूसरी कहानियोंमें (जैसे शंकर-पार्वती, समुद्र-मंथन आदि) देवताओंका स्वरूप वर्णन किये बिना कहानीमें मजा ही क्या रहे? तो क्या पग-पग पर यह कहते रहें कि ये कहानियां भी झूठी यानी कल्पित हैं? या अिन कहानियोंको अेक साथ ही रद्द कर दिया जाय? अैसा करनेसे क्या रूपक (जो बच्चोंके मन पर बहुत असर कर सकते हैं और जिनमें काव्य भी होता है) जैसे विषयको ही शिक्षामें से निकाल नहीं देना पड़ेगा? कहते हैं कि 'हमारी धार्मिक कहानियां कहते समय धार्मिक वातावरण अच्छी तरह कायम रहना चाहिये। अिसमें समालोचकका काम नहीं।' या मूर्ति या देवी-देवताकी पूजा भूल नहीं, बल्कि हलका सत्य है और तीव्र सत्य जब बच्चे बड़े होंगे तो समझ लेंगे, यह मानकर ये कहानियां बिना किसी फेरबदलके बच्चोंको कही जायं? यदि अैसा करें तो अिसमें सत्यका भंग होता है या नहीं? यह प्रश्न कहानीके वर्गमें आता है, अिसलिअे व्यावहारिक है। सार यह कि हमारी

पुराणोंकी कहानियोंके बारेमें हिन्दू और शिक्षकके नाते हमारा क्या रुख होना चाहिये?"

क्योंकि मैं भी अेक तरहका शिक्षक हूं और मैंने कभी प्रयोग किये हैं और कर रहा हूं, अिसलिअे अिस प्रश्नका अुत्तर देनेकी हिम्मत करता हूं। यह प्रश्न अेक साथीने किया है। बहुत समयसे मैंने अिस और अैसे दूसरे प्रश्नोंको संभालकर रख छोड़ा है। साथीकी मांग 'नवजीवन'के जरिये ही समझानेकी नहीं है। परंतु बहुतसे शिक्षकोंसे मेरा काम पड़ता है और अुनमें से कुछको मेरे विचारोंसे मदद मिल सकती है, अिस आशासे अुत्तर 'नवजीवन'में देनेका विचार किया है।

मैं स्वयं तो पुराणोंको धर्मग्रंथके रूपमें मानता हूं। देवी-देवताओंको मानता हूं। परंतु जिस तरहसे पुराणियोंने अुन्हें माना है या हमसे मनवाया है, अुस तरह मैं अुन्हें नहीं मानता। मैं जानता हूं कि जिस तरह समाज अुन्हें अभी मानता है, अुस तरह मैं नहीं मानता। मैं यह नहीं मानता कि अिन्द्र, वरुण आदि देवता आकाशके भीतर रहते हैं और वे अलग-अलग व्यक्ति हैं या सरस्वती आदि देवियां भी अलग-अलग व्यक्तियां हैं। परंतु मैं यह जरूर मानता हूं कि देवी-देवता अनेक शक्तियोंके वाचक हैं। अुनके वर्णन काव्य हैं। धर्ममें काव्यको स्थान है। जिस चीजको हम किसी भी तरह मानते हैं, अुसे हिन्दू धर्मने शास्त्रका रूप दे दिया है। जैसे, जो ओश्वरको अनन्त शक्तियोंमें विश्वास रखनेवाले हैं, वे देवी-देवताओंको मानते ही हैं। जैसे ओश्वरकी अनेक शक्तियां हैं, वैसे ही अुसके अपार रूप भी हैं। जिसे जो अच्छा लगे, वह अुसी नाम और रूपसे ओश्वरको पूजे। अिसमें तो जरा भी दोष नहीं दीखता। रूपकोंको छोड़कर बच्चोंको जहां-जहां अुनका रहस्य बतानेकी जरूरत हो, वहां-वहां बतानेमें मुझे तो कोओ संकोच नहीं होता। यह भी मैंने नहीं देखा कि अिससे कोओ बुरा फल निकला हो। बेशक, मैं बच्चोंको अुलटे रास्ते नहीं ले जाअूंगा। अैसा माननेमें मुझे जरा भी कठिनाओ नहीं होती कि हिमालय शिवजी हैं और अुनकी जटामें से पार्वतीके रूपमें गंगा निकलती है। अितना ही नहीं, अिससे मेरी ओश्वरके प्रति रही भावना बढ़ती है और मैं यह ज्यादा अच्छी तरह समझ सकता हूं कि सब कुछ ओश्वरमय है। समुद्र-मंथन आदिका अर्थ जिसे जैसा अुचित लगे वैसा लगा ले। हां, अुसमें नीति और सत्यका

वृद्धि होनी चाहिये। पंडितोंने अपनी बुद्धिके अनुसार अैसे अर्थ लगाये हैं। अैसी कोअी बात नही कि वही अर्थ लग सकते हैं। जैसे मनुष्यमें विकास हुआ करता है, वैसे ही शब्दों और वाक्यों आदिके अर्थमें भी हुआ करता है। जैसे-जैसे हमारी बुद्धि और हृदयका विकास हो, वैसे-वैसे शब्दों और वाक्यों आदिके अर्थका भी विकास होना चाहिये और हुआ करता है। जहां लोग अर्थको मर्यादित कर देते है, अुसके आसपास दीवार खडी कर लेते हैं, वहां लोगोंका पतन हुअे बिना रह ही नही सकता। अर्थ और अर्थ करनेवाले दोनोंका विकास साथ साथ होता है। और सब अपनी-अपनी भावनाके अनुसार अर्थकी खींचातानी करते ही रहेंगे। व्यभिचारी भागवतमें व्यभिचार देखेंगे, अेकनाथको अुसीमें से आत्माके दर्शन हुअे। मेरा पक्का विश्वास है कि भागवत लिखनेवालेने व्यभिचारको बढ़ानेके लिअे भागवत नही लिखी। साथ ही कलियुगके लोग अिस ग्रंथमें अैसी कोअी बात देखें, जो वे सहन न कर सकें, तो वे अुसे जरूर छोड़ दें। और यह मान बैठना कि जो कुछ छपा हुआ है — फिर भले ही वह संस्कृतमें ही क्यों न हो — वह सब धर्म ही है, धर्मान्धता या जड़ता ही है।

अिसलिअे अिस प्रश्नको हल करनेके लिअे मैं तो अेक ही सुनहला कायदा जानता हूं, और वह सब शिक्षकोंके सामने रखना चाहता हूं। जो कुछ हम पढ़ें, फिर भले ही वह वेदोंमें हो, पुराणोंमें हो या किसी भी धर्मपुस्तकमें हो, वह यदि सत्यका भंग करे या हमारी दृष्टिसे सत्यका भंग करता हो या दुर्गुणोंका पोषण करनेवाला हो, तो अुसे छोड़ देना हमारा धर्म है। जेलमें मुझ पर जो बात बीती, वह यहां लिख देता हूं। जयदेवके गीत-गोविन्दकी प्रशंसा मैंने बहुतोंसे कअी बार सुनी थी। किसी दिन अुसे पढ़ जानेकी अिच्छा मेरे मनमें थी। अिस काव्यसे भले ही बहुतोंका भला हुआ होगा, किन्तु मेरे लिअे अिसका पढना अेक सजा ही साबित हुआ। पढ तो गया, परंतु अुसके वर्णन दुःखदायी निकले। यह माननेमें मुझे जरा भी संकोच नही होगा कि अिसमें सिर्फ मेरा ही दोष हो सकता है। परंतु मैंने अपनी हालत तो पढ़नेवालेके संतोषके खातिर बताअी है। क्योंकि गीत-गोविन्दका असर मुझ पर अच्छा नहीं हुआ, अतः मेरे लिअे वह त्याज्य हो गया; और मैं अुसे छोड सका, क्योंकि मेरे पास अपना स्वतंत्र माप था। जो चीज मेरे विकार मिटा सके, मेरे रागद्वेषको कम कर सके, जिस

चीजके अुपयोगसे मेरा मन सूली पर थोड़े समय भी सत्य पर डटा रहे, वही चीज धर्मकी शिक्षा समझी जानी चाहिये। अिस कसौटी पर बैठ- गोविन्द खरा न अुतरा और अिसीलिअे मेरे लिअे वह त्याज्य पुस्तक हो गअी।

आजकल हममें अैसे बहुतसे नौजवान और बूढ़े भी हैं, जो यह मानते हैं कि कोअी बात शास्त्रमें लिखी है अिसीलिअे करने लायक है। अैसा करनेसे हमारा पतन अपने आप हो जायगा। शास्त्र किसे कहें, जिसकी मर्यादाका हमें पता नहीं होता। शास्त्रके नाम पर जो भी ढोंग चल रहा हो वह धर्म है, यह मानकर हम अपना व्यवहार करें तो जिसने बुरा नतीजा ही निकलेगा। मनुस्मृतिको ही लें। मनुस्मृतिमें क्या क्षेपक है और क्या असल है, यह मैं नहीं जानता। किन्तु अुसमें कितने ही श्लोक अैसे हैं, जिनका धर्मके रूपमें बचाव हो ही नहीं सकता। अैसे श्लोकोंको हमें छोड़ना ही चाहिये। मैं तुलसीदासका पुजारी हूं। रामायणको अुत्तमसे अुत्तम ग्रंथ मानता हूं। किन्तु 'ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताड़नके अधिकारी'में जो विचार भरा है, अुसका मैं आदर नहीं कर सकता। अपने समयके पुराने रिवाजके वशमें होकर तुलसीदासजीने ये विचार प्रकट किये, अिसलिअे मैं शूद्रके नामसे पुकारे जानेवालोंको या अपनी धर्मपत्नीको या जानवरको, जब-जब वे मेरे वशमें न रहें मारने लग जाअूं, तो यह कोअी न्यायकी बात नहीं।

अब मुझे लगता है कि अूपरके प्रश्नोंका अुत्तर स्पष्ट हो जाता है। देवी-देवताओंकी बात जिस हद तक सदाचारको बढ़ानेवाली हो, अुस हद तक अुसे माननेमें मुझे जरा भी कठिनाअी नहीं दीखती। मैं यह नहीं मानता कि रूपक छोड़कर बतानेसे बच्चोंकी अुन कथाओंमें दिलचस्पी नहीं रहती। किन्तु दिलचस्पी न रहती हो तो भी सत्यका नाश करके दिलचस्पी बढ़ानेके रिवाजको मैं नहीं मानता। सत्यमें जितना रस भरा है, वही रस हमें बच्चोंके आगे रख देना चाहिये। यह मेरा अनुभव है कि यह रस प्रगट किया जा सकता है। पहले बच्चोंको स्पष्ट कह दिया जाय कि दस सिरवाला रावण न तो दुनियामें कभी हुआ और न होगा। अिसके बाद हम यह मानकर भी बात करें कि अैसा रावण हो गया है, तो जिसमें मुझे सत्य या रसकी हानि नहीं मालूम होती। बच्चे समझते ही हैं कि दस सिरवाला रावण

हमारे दिलमें बसी हुअी दस नहीं, बल्कि हजार सिरवाली दुष्ट वासनाअें हैं। अीसपकी कहानियोंमें पशु-पक्षी बोलते हैं। बच्चे जानते हैं कि पशु-पक्षी बोल नहीं सकते। फिर भी अीसपकी कहानियां पढ़नेमें जो आनन्द आता है, वह बिलकुल कम नहीं होता।

नवजीवन, १८-७-'२६

३१

सत्यका अनर्थ

अेक भाअी अेक पाठशालाके आचार्यकी मददसे विद्यार्थियोंमें गीताकी पढ़ाअी जारी करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। परंतु गीताका वर्ग खुलनेके थोड़े समय बाद हुअी सभामें अेक बैंकके मैनेजर खड़े हुअे और सभाके काममें विघ्न डालकर बोले: 'विद्यार्थियोंको गीता पढ़नेका हक नहीं है। गीता कोअी बच्चोंके हाथमें देनेका खिलौना नहीं है।' अब अुन भाअीने मुझे अिस घटनाके बारेमें लंबा और दलीलोंसे भरा पत्र लिखा है और अपनी दलीलके समर्थनमें रामकृष्ण परमहंसके कितने ही वचन दिये हैं। अुनमें से कुछ यहां देता हूं:

> "बालकों और नौजवानोंको अीश्वर-प्राप्तिकी साधना करनेका प्रोत्साहन देना चाहिये। वे बिना बिगाड़े हुअे फलोंकी तरह होते हैं और दुनियाकी वासनाओंका दूषित स्पर्श अुन्हें जरा भी नहीं लगा होता। ये वासनाअें जहां अेक बार अुनके मनमें घुसी कि फिर अुन्हें मोक्षके रास्तेकी तरफ मोड़ना बहुत मुश्किल है।
>
> "मैं नौजवानोंको अितना ज्यादा क्यों चाहता हूं? अिसलिअे कि वे अपने मनके सोलहों आने मालिक हैं। वे जैसे बड़े होते जायेंगे, वैसे अुसमें छोटे-छोटे भाग होते जायेंगे। विवाहित आदमीका आधा मन स्त्रीमें बसा रहता है। जब बच्चा होता है, तो चार आने मन वह खींच लेता है। बाकीके चार आने माता-पिता, दुनियाके मान-मर्तबे, कपड़े-लत्तोंके शौक वगैरामें बंट जाते हैं। अिसलिअे बालकोंका मन अीश्वरको आसानीसे पहचान सकता है। बूढ़े आदमीके लिअे यह बड़ी कठिन बात है।

"तोतेका गला बड़ी अुमरमें पक जाता है, तब अुसे गाना नहीं सिखाया जा सकता। वह बच्चा हो तभी सिखाना चाहिये। असी तरह बुढ़ापेमें अीश्वर पर मन लगाना मुश्किल है। बचपनमें वह आसानीसे लगाया जा सकता है।

"अेक सेर मिश्रावटके दूधमें छटांकभर पानी हो, तो पानीको जलानेमें बहुत थोड़ी मेहनत और थोड़ा अीधन चाहिये। परंतु सेर भर दूधमें तीन पाव पानी हो तो अुसे जलानेके लिअे कितनी मेहनत और कितना अीधन चाहिये? बच्चोंके मनको वासनाओंका मैल थोड़ा ही लगा होता है, अिसलिअे वह अीश्वरकी तरफ मुड़ सकता है। वासनाओंसे पूरी तरह रंगे हुअे बूढ़े लोगोंके मनको किस तरह मोड़ा जा सकता है?

"छोटे पेड़को जैसा चाहे मोड़ लीजिये, परंतु पके बांसको मोड़ने लगें तो वह टूट जायगा। बच्चोंके दिलको अीश्वरकी तरफ मोड़ना आसान है, परंतु बूढ़े आदमीका दिल खींचने चलें तो वह छटक जाता है।

"मनुष्यका मन राअीकी पुड़िया जैसा है। जैसे पुड़ियाके फट जाने पर बिखरे हुअे दाने चुनकर जमा करना कठिन है, वैसे ही जब मनुष्यका मन कअी तरफ दौड़ता हो और संसारके जालमें फंस गया हो, तब अुसे मोड़कर अेक जगह लगाना बहुत कठिन है। बच्चोंका मन कअी तरफ नहीं दौड़ता, अिसलिअे अुसे किसी चीज पर आसानीसे अेकाग्र किया जा सकता है। किन्तु बूढ़ेका मन दुनियामें ही रमा रहनेके कारण अुसे अिधरसे खींचकर अीश्वरकी तरफ मोड़ना बहुत कठिन है।"

वेद पढ़नेके अधिकारके बारेमें मैंने सुना था, परंतु यह मुझे कभी खयाल भी न था कि अुस बैंकके मैनेजरकी कल्पनाके अधिकारकी जरूरत गीता पढ़नेके लिअे भी पड़ेगी। वे यह बता देते तो अच्छा होता कि अुस अधिकारके लिअे क्या गुण जरूरी हैं। स्वयं गीताने ही स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि गीता निन्दकके सिवा और सबके लिअे है। सच पूछें तो हिन्दू धर्मकी मूल कल्पना ही यह है कि विद्यार्थियोंका जीवन ब्रह्मचारीका है और अुन्हें अिस जीवनकी शुरुआत धर्मके ज्ञानसे और धर्मके आचरणसे करनी चाहिये,

जिसमे जो कुछ वे सीखते हैं, अुसे हजम कर सकें और धर्मके आचरणको अपने जीवनमें ओतप्रोत कर सकें। पुराने जमानेका विद्यार्थी यह जाननेसे पहले ही कि मेरा धर्म क्या है, अुस पर अमल करने लग जाता था, और अिस तरह अमल करनेके बाद अुसे जो ज्ञान मिलता था अुसमे अपने लिअे नियत किये गये अमलका रहस्य वह समझ सकता था।

अिस तरह अधिकार तो अुस समय भी था। परन्तु वह अधिकार पाच *यम — अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य — रूपी सदाचारका* था। धर्मका अध्ययन करनेकी अिच्छा रखनेवाले हर आदमीको ये नियम पालने पड़ने थे। धर्मके अिन आधारभूत सिद्धान्तोंकी जरूरत सिद्ध करनेके लिअे धर्मग्रंथोंके पढनेकी जरूरत नहीं रहती।

किन्तु आजकल अिस तरहके बहुतसे अर्थवाले शब्दोंकी तरह 'अधिकार' शब्द भी विकृत हो गया है। अेक धर्मभ्रष्ट मनुष्यको सिर्फ ब्राह्मण कहलानेके कारण ही शास्त्र पढ़नेका और हमें समझानेका हक माना जाता है, और दूसरे अेक आदमीको, जिसे किसी खास स्थितिमें जन्म लेनेके कारण 'अछूत' पद मिल गया है — भले ही वह कितना ही धर्मात्मा हो — शास्त्र पढ़नेकी मनाही है!

परन्तु जिस महाभारतका गीता अेक भाग है, अुसके लेखकने अिस पागलपन भरी मनाहीके विरोधमें ही यह महाकाव्य लिखा और वर्ण या जातिका जरा भी भेद किये बिना सबको अुसे पढ़नेकी आजादी दे दी। मेरा खयाल है कि अिसमें सिर्फ मेरे बताये हुअे यमोंके पालनकी शर्त रखी होगी। 'मेरा खयाल है' ये शब्द मैंने जिसलिअे जोड़े हैं कि यह लिखते समय मुझे याद नहीं आता कि महाभारत पढ़नेके लिअे यमोंके पालनकी शर्त रखी गअी होगी। किन्तु अनुभव बताता है कि हृदयकी शुद्धि और भक्तिभाव, ये दो बातें शास्त्रग्रंथ अच्छी तरह समझनेके लिअे जरूरी हैं।

आजकलके सुधारकोंके जमानेने सारे बंधन तोड़ डाले हैं। आज जितनी आजादीसे धर्मनिष्ठ लोग शास्त्र पढ़ते हैं, अुतनी ही आजादीसे नास्तिक भी पढ़ते हैं। किन्तु हम यहां तो अिसकी चर्चा करते हैं कि विद्यार्थियोंका धर्मकी शिक्षा और अुपासनाके अेक अंगके रूपमें गीता पढ़ना ठीक है या नहीं। अिस बारेमें मैं यह कहता हू कि यम-नियमके पालनकी शक्ति और अिस कारण गीता पढ़नेकी योग्यतामें विद्यार्थियोंसे बढ़कर अेक भी वर्ग मेरे ध्यानमें नहीं

आता। दुर्भाग्यसे यह मानना पड़ता है कि विद्यार्थी और शिक्षक ज्यादातर पाच यमोंके सच्चे अधिकारके बारेमें जरा भी विचार नहीं करते।

नवजीवन, ११-१२-'२७

३२

राष्ट्रीय स्कूलोंमें गीता

अेक भाअी मुझे लिखकर पूछते हैं कि राष्ट्रीय स्कूलोंमें हिन्दू-अहिन्दू तमाम विद्यार्थियोंके लिअे गीताकी शिक्षा अनिवार्य की जा सकती है या नहीं। दो साल पहले जब मैं मैसूरका दौरा कर रहा था, तब अेक माध्यमिक स्कूलके हिन्दू लड़कोंके गीता न जानने पर मुझे अफसोस जाहिर करनेका मौका मिला था। अिस तरह सिर्फ राष्ट्रीय स्कूलोंमें ही नहीं, बल्कि हर शिक्षण-संस्थामें गीताकी पढ़ाअीके लिअे मेरा पक्षपात है। हिन्दू लड़कों या लड़कियोंके लिअे गीताका न जानना शर्मकी बात मानी जानी चाहिये। किन्तु मेरा आग्रह गीताकी पढ़ाअी अनिवार्य करनेसे — खास कर राष्ट्रीय स्कूलोंमें अनिवार्य करनेसे — अिनकार करता है। यह सच है कि गीता सार्वत्रिक धर्मका ग्रन्थ है, परंतु यह अैसा दावा है जो किसीसे जबरदस्ती नहीं मनवाया जा सकता। कोअी भी अीसाअी, मुसलमान या पारसी यह दावा नामंजूर कर सकता है; या बाअिबिल, कुरान या अवेस्ताके लिअे यही दावा कर सकता है। मुझे डर है कि जो लोग अपना हिन्दू वर्गमें गिना जाना पसन्द करते हैं, अुन सबके लिअे भी गीता अनिवार्य नहीं की जा सकती। बहुतसे सिक्ख और जैन अपनेको हिन्दू मानते हैं, किन्तु अुनके बच्चोंके लिअे गीताकी शिक्षा अनिवार्य करनेकी बात आये तो वे अुसका विरोध करेंगे। साम्प्रदायिक स्कूलोंकी बात अलग है। जैसे अेक वैष्णव स्कूल गीताको अपने यहांकी शिक्षाका अंग माने, तो मैं अुसे सर्वथा अुचित समझूंगा। हर खानगी स्कूलको अपना शिक्षाक्रम तय करनेका अधिकार है। राष्ट्रीय स्कूलको कुछ खास और खास मर्यादाओंके भीतर रहकर चलना पड़ता है। किसीके अधिकारमें दखल देनेका नाम जबरदस्ती है। जहां अेक खानगी स्कूलमें भरती होनेके अधिकारका कोअी दावा नहीं कर सकता, वहां राष्ट्रीय स्कूलमें राष्ट्रका हरअेक आदमी भरती होनेके अधिकारका दावा अनुमानतः कर सकता है। अिस तरह अेक

जगह जो भाजी होनेकी थी भाजी जायगी, वह दूसरी जगह अवकाशकी जगहमें जायगी। बाहरके दबावसे पौधा सब जगह नहीं पैदा सकती। यदि किसीके ऊपर किसी अवकाशकी दूसरोंके बुरे भुलानेका प्रयत्न न करके अुसकी शिक्षाको अपने जीवनमें अुतारेंगे, तो ही अुसका सब जगह प्रचार होगा।

यंग अिंडिया, २०-६-'२९

३३
बालक क्या समझें ?

गुजरात विद्यापीठका अेक विद्यार्थी लिखता है :

"आपके लेख पढ़कर पैदा हुआ मेरा यह प्रश्न रूपमें रखता हूँ। आपके दो-तीन लेखोंके पढ़नेसे मुझे अैसा लगा कि आप बच्चोंके बारेमें कुछ अधिकसे विचार रखते हैं। बालककी बुद्धिकी कल्पना और अुसे आत्मज्ञान होनेके बारेमें आपकी मान्यता मुझे अजीब लगी। आपने अेक जगह हिन्दीमें यों लिखा है :

'बालकके लिअे लिखना-पढ़ना सीखने और दुनियावी जानकारी प्राप्त करनेसे पहले अिस बातका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है कि आत्मा क्या है, सत्य क्या है, प्रेम क्या है और आत्माके अन्दर कौन-कौनसी शक्तियाँ छिपी हुअी हैं।'

"ये वाक्य हमारी वाचनमालाके अेक पाठमें आये हैं। बच्चा दुनियावी ज्ञान प्राप्त करनेसे पहले आत्मा, प्रेम, सत्य आदिको किस तरह पहचान सकता है? ये तो तत्त्वज्ञानके गहरे ज्ञान और वाद-विवादके प्रश्न हैं। और किसी भी बच्चेको लिखना-पढ़ना सीखनेसे पहले आत्मा, सत्य आदिका ज्ञान होना संभव भी नहीं, क्योंकि अुसकी बुद्धि अभी कच्ची है। यह बात किसी भी तरह गले नहीं अुतरती।

"दूसरा अुल्लेख आपने 'नवजीवन' में 'अेक अटपटा प्रश्न' नामक लेखमें किया है :

'बच्चे समझते ही हैं कि दस सिरवाला रावण हमारे दिलमें बसी हुअी दस नहीं, बल्कि हजार सिरवाली दुष्ट वासनाअें हैं।'

"'बच्चे समझते ही हैं' यह आप कैसे कह सकते हैं? मुझे कल्पना भी नहीं होती कि बच्चेको रावणकी बात सुनकर अैसा विचार कभी आ सकता है।

"दिलमें बसी हुअी दस सिरवाली वासनाओंकी कल्पना तो किसी अच्छे पढ़े-लिखेको भी नहीं आयेगी। तत्त्वचिंतन करनेवाले या आध्यात्मिक रास्ते पर चलनेवाले आदमीको ही अैसी कल्पना हो सकती है। जब मामूली तौर पर बड़े आदमीको भी अैसी कल्पना नहीं आती, तो फिर समझमें नहीं आता कि बच्चेके बारेमें आप यह बात किस हेतुसे लिखते हैं। म तो मानता हूं कि किसी भी बच्चेको अैसी कल्पना नहीं आ सकती।

"आपकी मान्यताका प्रत्यक्ष अुदाहरण आश्रमकी प्रार्थनाके समय आप बच्चोंको जो 'गीता' और 'तुलसी रामायण' पढ़ाते हैं वह है।

"मेरे पास यह माननेके लिअे कोअी कारण नहीं कि आप यह पढ़ाअी सिर्फ अिसीलिअे कराते हैं कि अिससे बच्चोंका शब्द-भंडार बढ़े, भाषा पर अधिकार हो जाय। किन्तु कभी-कभी जब आप बच्चोंके सामने तत्त्वज्ञानके गंभीर प्रश्न रखते हैं और बेचारे बच्चे समझते नहीं और अूंघने लगते हैं, तब सचमुच हमारे सामने यह प्रश्न बहुत बड़े रूपमें खड़ा हो जाता है कि बापूजी किसलिअे बच्चोंको प्यारे अूधमसे हटाकर 'स्थितप्रज्ञता', 'कर्म', 'त्याग' आदि गहन विषयोंमें, जहां बच्चेकी बुद्धि सूअीकी नोंकके बराबर भी नहीं जाती, प्रवेश कराना चाहते हैं?"

अिस पत्रमें जो अुदाहरण दिये गये हैं, अुन अुदाहरणोंवाले लेखोंको मैं पढ़ नहीं सका हूं। किसी लेखमें से कोअी अेकाध अुदाहरण छांटकर, आगे-पीछेके संबंध पर विचार किये बिना, अुससे मेल खानेवाला अर्थ निकालना हमेशा सम्भव नहीं। फिर भी अिस अुदाहरणमें जो भाव भरा है, वह मेरे अनुभवसे निकला है। अिसलिअे असली लेख पढ़े बिना अुत्तर देनेमें मुझे कठिनाअी नहीं। पाठक यहां बालकका अर्थ दो सालका बच्चा न समझें। बल्कि यह अर्थ करना चाहिये कि जिस अुम्रमें बालकको आम तौर पर स्कूल भेजना शुरू किया जाता है अुस अुम्रका बालक।

मेरे गीता पढ़ते समय बच्चे सो जायं, तो असा नहीं कहा जा सकता कि यह *अुनकी समझनेकी शक्तिका अभाव बताता है।*

यह भले ही कह सकते हैं कि मैं अुनमें गीता पढ़नेकी दिलचस्पी पैदा नहीं कर सका, या असा भी हो सकता है कि बालक अुस समय थके हुअे हों। अंक-गणित सीखते समय, मजेदार बातें सुनते समय और नाटक देखते समय मैंने कअी बार बालकोंको सो जाते देखा है। और गीताजी आदिके पाठके समय बड़ी अुम्रवालोंको भी अूंघते देखा है। अिसलिअे नींद और आलसकी बात हमें अूपरके प्रश्न पर विचार करते समय छोड़ देनी चाहिये।

बच्चेके शरीरके जन्मसे पहले आत्माका अस्तित्व था; आत्मा अनादि है और अुसे बचपन, जवानी और बुढ़ापा आदि स्थितियोंसे कोअी वास्ता नहीं। यह बात जिसके लिअे दीये जैसी साफ है, अुसके मनमें अूपरके प्रश्न अुठने ही न चाहिये। देहाध्यासके कारण, हवाके रुखको देखकर और गहरे जाकर विचार करनेके आलस्यके कारण हम मान लेते हैं कि बच्चा सिर्फ खेलना ही जानता है या बहुत हुआ तो अक्षर रटना जानता है। और अिससे भी आगे बढ़ें तो यूरोप-अमेरिकाकी नदियों वगैराके अटपटे नाम याद करना जानता है और *कठिनाअीसे बोले जा सकनेवाले नामोंवाले वहांके राजाओं, डाकुओं और* खूनियोंका अितिहास समझ सकता है।

मेरा अपना अनुभव अिससे अुलटा है। बच्चोंकी समझमें आने लायक भाषामें आत्मा, सत्य और प्रेम क्या है, यह अुन्हें जरूर बताया जा सकता है। जिन्हें दुनियाका सयानापन बिलकुल न छू पाया हो, असे अेक नहीं कअी बच्चोंको मृत शरीरको देखकर यह पूछते सुना है, 'अिस आदमीका जीव कहां गया ?' जो बालक असा सवाल अपने आप कर सकता है, अुसे आत्माका ज्ञान जरूर कराया जा सकता है। भारतके करोड़ों बेपढ़े बच्चे जबसे समझने लगते हैं, तभीसे सत्य-असत्यका और प्रेम-अप्रेमका भेद जान सकते हैं। कौनसा बच्चा अपने माता-पिताकी आंखसे झरनेवाला प्रेमका अमृत या क्रोधका अंगार नहीं पहचान सकता? प्रश्न पूछनेवाला विद्यार्थी अपने बचपनको ही भूल गया है। अुसे मैं याद दिलाना चाहता हूं कि अुसे पढ़ना-लिखना आया, अुससे पहले वह माता-पिताके प्रेमका अनुभव कर चुका था। यदि प्रेम, सत्य और आत्माके प्रकट होनेके *लिअे भाषाकी जरूरत होती तो ये कभीके मिट गये* होते।

अुसके अुद्गारोंमें बच्चोंके सामने तत्त्वज्ञानकी शुष्क और निर्जीव चर्चा करनेकी बात नहीं, बल्कि सत्य आदि शाश्वत गुणोंका अुनके सामने प्रदर्शन करके यह साबित करनेकी बात है कि ये गुण अुनमें भी हैं। सार यह कि अक्षरज्ञान चरित्रके पीछे शोभा पाता है। चरित्रके पहले अक्षरज्ञानको रखा जाय, तो वह अुतना ही शोभा पायेगा और सफल होगा, जितनी गाड़ीके पीछे घोड़ेको रखकर अुसकी नाकसे गाड़ीको ढकेलवानेकी क्रिया शोभा देगी और सफल होगी। असे अनुभवसे ही डार्विनका समकालीन विज्ञान-शास्त्री वालेस नब्बे वर्षकी अुम्रमें कह गया है कि मैंने पढ़ी-लिखी और सुधरी हुअी मानी जानेवाली जातियोंकी सुधारनीतिमें जंगली कहलानेवाले हब्शियोंकी नीतिसे बढ़कर कुछ भी नहीं देखा। यदि हम आजकलके हर तरहके बाहरी प्रलोभनोंमें न फंस गये हों, तो हम वालेसकी कही हुअी बातको अनुभव करेंगे और बच्चे विद्याभ्यासकी कल्पना और रचना अलग तरहसे करेंगे।

दस सिरवाले रावणके बारेमें जो प्रश्न है, अुसके अुत्तरमें मैं अेक अुल्टा प्रश्न पूछता हूं : बालकको क्या समझाना आसान है? जैसा दस सिरवाला प्राणी किसी समय बनाया ही नहीं जा सकता, असा अेक रावण हो गया है — यह चीज बच्चोंके गले अुतारना आसान है, या सबके दिलमें चोरकी तरह छिपे बैठे दस सिरवाले रावणका साक्षात्कार करा देना आसान है? बच्चोंको कल्पना और बुद्धिकी शक्तिसे हीन मानकर हम अुनके साथ घोर अन्याय करते हैं और अपनी अवगणना करते हैं। 'बच्चे समझते ही हैं' असका यह मतलब लगाने की जरूरत नहीं कि समझाये बिना ही वे समझते हैं। दस सिरवाला शरीर-धारी मनुष्य हो सकता है, यह बात तो बहुत समझाने पर भी बच्चोंकी समझमें न आयेगी और दिलमें बैठे हुअे दस सिरवाले रावणकी बात वे कहते ही समझ जायेंगे।

अब मुझे आशा है कि विद्यार्थीके लिअे यह प्रश्न पूछना बाकी नहीं रहेगा कि तुलसीदासकी रामायण और व्यासकी गीता बच्चोंके आगे पढ़नेमें मुझे क्यों शर्म नहीं आती। 'कर्म', 'त्याग' और 'स्थितप्रज्ञता' का तत्त्वज्ञान मुझे बालकोंको नहीं सिखाना है। मैं नहीं मानता, नहीं जानता कि मुझे भी यह ज्ञान मिल गया है। शायद कर्म वगैराके बारेमें तत्त्वज्ञानसे भरी हुअी पुस्तकें पढ़ूं पर समझूं भी नहीं; और कठिनाअीसे समझूं तो भी अूब तो जरूर जाअूं। जब मनुष्य अूब जाता है, तो अुसे मीठी-मीठी नींद भी आने लगती है।

और अध्यापक मिल कर पहले ओीश्वरका ध्यान करते हैं और फिर अपने-अपने वर्गमें जाते हैं। शायद अिससे ज्यादा आज कुछ संभव नहीं है। अिस तरह ओीश्वरका ध्यान करते समय थोड़ी देर हर धर्मके बारेमें कुछ जानकारी करायी जाय, तो मैं अुसे धार्मिक शिक्षाका स्थूल रूप मानूंगा। जो दुनियाके माने हुअे धर्मोंके लिअे आदर पैदा करना चाहते हों, अुन्हें अुन धर्मोंकी साधारण जानकारी कर लेना जरूरी है। और अैसे धर्मग्रन्थ आदरके साथ पढ़े जायं, तो अुनसे पढ़नेवालेको सदाचारका ज्ञान और आध्यात्मिक आश्वासन मिल जाता है। अिस तरह अलग-अलग धर्मग्रंथोंको पढ़ते-पढ़ाते समय अेक बात ध्यानमें रखनी चाहिये। वह यह कि अुन धर्मोंके प्रसिद्ध आदमियोंकी लिखी हुअी पुस्तकें पढ़नी और विचारनी चाहिये। मुझे भागवत पढ़ना हो तो मैं ओीसाओी पादरीका आलोचनाकी दृष्टिसे किया हुआ अनुवाद नहीं पढ़ूंगा, बल्कि भागवतके भक्तका किया हुआ अनुवाद पढ़ूंगा। मुझे 'अनुवाद' अिसलिअे लिखना पड़ता है कि हम बहुतसे ग्रन्थ अनुवादके रूपमें ही पढ़ते हैं। अिसी तरह बाअिबल पढ़ना हो, तो हिन्दूकी लिखी हुअी टीका नहीं पढ़ूंगा, बल्कि यह पढ़ूंगा कि संस्कारवान ओीसाअीने अुसके बारेमें क्या लिखा है। अिस तरह पढ़नेसे हमें सब धर्मोंका निचोड़ मिल जाता है और अुससे सम्प्रदायोंसे परली पार जो शुद्ध धर्म है, अुसकी झांकी होती है।

कोअी यह डर न रखे कि अिस तरहकी पढ़ाअीसे अपने धर्मके प्रति अुदासीनता आ जायगी। हमारी विचार-श्रेणीमें यह कल्पना की गयी है कि सभी धर्म सच्चे हैं और सभीके लिअे आदर होना चाहिये। जहां यह हाल हो वहां अपने धर्मका प्रेम तो होगा ही। दूसरे धर्मके लिअे प्रेम पैदा करना पड़ता है। जहां अुदार वृत्ति है वहां दूसरे धर्मोंमें जो विशेषता पाअी जाय, अुसे अपने धर्ममें लानेकी पूरी आजादी रहती है।

धर्मकी पूरी सभ्यताके साथ तुलना की जा सकती है। जैसे हम अपनी सभ्यताकी रक्षा करते हुअे भी दूसरी सभ्यतामें जो कुछ अच्छाअी हो अुसे आदरके साथ ले लेते हैं, वैसे ही पराये धर्मके बारेमें किया जा सकता है। आज जो डर फैला हुआ है, अुसके लिअे आसपासका वायुमण्डल जिम्मेदार है। अेक-दूसरेके लिअे द्वेष या वैरभाव है, अेक-दूसरे पर भरोसा नहीं, यह डर रहता है कि दूसरे धर्मवाले हमें और हमारे आदमियोंको भ्रष्ट कर दें तो! अिसीलिअे दूसरे धर्मके ग्रन्थोंको हम बुराअीसे भरे हुअे समझकर अुनसे दूर भागते

है। जब धर्मों और धर्मवालोंके साथ आदरका बरताव होगा, तब यह अस्वाभाविक भय दूर होगा।

नवजीवन, ९-९-'२८

२

थोड़े ही दिन पहले बातचीत करते हुओे अेक पादरी मित्रने मुझसे प्रश्न किया था कि भारत यदि सचमुच आध्यात्मिक तौर पर आगे बढ़ा हुआ देश है, तो मुझे यह क्यों मालूम होता है कि अपने ही धर्मका, श्रीमद्-भगवद्-गीताका भी थोड़ेसे ही विद्यार्थियोंको ज्ञान है? अिस बातके समर्थनमें अुन मित्रने, जो शिक्षक भी हैं, मुझे यह भी कहा था कि अुन्हें जो-जो विद्यार्थी मिले हैं, अुनसे अुन्होंने खास तौर पर पूछ देखा है कि 'कहो, तुम्हें अपने धर्मका या श्रीमद्-भगवद्गीताका क्या ज्ञान है?' और अुन्हें मालूम हुआ कि अुनमें से बहुत ज्यादाको अिस बारेमें कोअी भी ज्ञान नहीं है।

कुछ विद्यार्थियोंको अपने धर्मका कुछ भी ज्ञान नहीं, अिसीसे हिन्दुस्तान आध्यात्मिक दृष्टिसे आगे बढ़ा हुआ देश नहीं, अिस अनुमानके बारेमें अभी मैं अितना ही कहूंगा: अैसा नहीं कहा जा सकता कि विद्यार्थियोंको अपने धर्मग्रंथोंका ज्ञान नहीं, अिसलिअे लोगोंमें भी धार्मिक जीवनका या आध्यात्मिकताका नाम-निशान नहीं है। फिर भी अिसमें शक नहीं कि सरकारी स्कूलोंसे निकलनेवाले विद्यार्थियोंके बहुत बड़े हिस्सेको किसी भी तरहकी धार्मिक शिक्षा नहीं मिलती। अूपरकी टीका अुन पादरी मित्रने मैसूरके विद्यार्थियोंके बारेमें बोलते हुअे की थी और यह देखकर किसी हद तक मुझे दुख हुआ था कि मैसूरके विद्यार्थियोंको भी राज्यके स्कूलोंमें कोअी धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती। मैं जानता हूं कि अेक दल यह माननेवालोंका है कि सार्वजनिक स्कूलोंमें संसारी शिक्षा ही देनी चाहिये। मैं यह भी जानता हूं कि भारत जैसे देशमें, जहां दुनियाके बहुतसे धर्म प्रचलित हैं और जहां अेक ही धर्ममें भी कअी सम्प्रदाय हैं, धार्मिक शिक्षाका प्रबन्ध करना मुश्किल है। किन्तु यदि हिन्दुस्तानका आध्यात्मिक दिवाला नहीं पीटना हो, तो अुसे अपने नौजवानोंको धार्मिक शिक्षा देनेका काम ज्यादा नहीं तो संसारी शिक्षाके बराबर जरूरी तो समझना ही चाहिये। यह सच है कि धर्मग्रंथका ज्ञान ही धर्मका ज्ञान नहीं है, किन्तु हम यदि धर्मका ज्ञान न दे सकें तो अुसीसे हमें संतोष मानना पड़ेगा।

किन्तु स्कूलोंमें अैसी शिक्षा दी जाती हो या न दी जाती हो, हुअी अुम्रके विद्यार्थियोंको दूसरी बातोंकी तरह धार्मिक बातोंमें भी पैरों पर खड़े होनेकी कला सीखनी चाहिये। जैसे वे वादविवाद, सभायें वक्ताअी-मंडल स्वतंत्र रूपमें चलाते हैं, वैसे अुन्हें अिस विषयके बल मंडल भी खोलने चाहिये।

शिमोगाके कालेजियट हाअीस्कूलके विद्यार्थियोंके सामने बोलते हुये बुली सभामें की गअी पूछताछसे मुझे मालूम हुआ कि अुनमें सौ या ज्यादा हिं विद्यार्थियोंमें से श्रीमद्-भगवद्गीता पढ़े हुअे विद्यार्थियोंकी संख्या मुश्किलसे आठ तक होगी। जिन थोड़े विद्यार्थियोंने भगवद्गीता पढ़ी थी, अुनमें से जो समझनेवालोंको हाथ अुठानेका कहने पर अेक भी हाथ नहीं अुठा। यह भी मालूम हुआ कि सभामें जो पाच या छह मुसलमान विद्यार्थी थे अुन सबने कुरान पढा है, किन्तु यह कहने पर कि जिसने समझा हो वह हाथ अुठाये, सिर्फ अेक ही हाथ अुठा था। मेरी रायमें गीता समझनेमें बड़ी सरल पुस्तक है। वह कुछ बुनियादी पहेलिया पेश करती है, जिनको हल करना बेशक मुश्किल है। किन्तु मेरी रायमें गीताका सामान्य रुख दीयेकी तरह स्पष्ट है। सभी हिंदू सम्प्रदायोंने गीताको प्रमाण-ग्रंथ माना है। किसी भी तरहके स्थापित मत-वादसे यह मुक्त है। वह कारणोंके साथ समझाये हुअे पूरे नीतिशास्त्रकी जरूरत पूरी करती है। बुद्धि और हृदय दोनोंको वह संतोष देती है। अुसमें तत्त्वज्ञान और भक्ति दोनों भरे हैं। अुसका प्रभाव सार्वत्रिक है। और भाषा अितनी आसान है कि क्या कहा जाय। फिर भी मैं मानता हूं कि हर देशी भाषामें अिसका प्रामाणिक अनुवाद होना चाहिये। वह पारिभाषिक शब्दोंसे मुक्त और अितना सरल हो कि मामूली आदमी अुसके जरिये गीताका सबक सीख सके। अिससे मैं यह नही कहना चाहता कि वह अैसा हो जो मूलकी जगह ले ले, क्योंकि मेरी यह राय है कि हर हिन्दू लड़के और लड़कीको संस्कृत जानना ही चाहिये। किन्तु भविष्यमें लंबे समय तक लाखों हिंदू संस्कृत बिलकुल न जाननेवाले होंगे। अिसीलिअे अुन्हें श्रीमद्-भगवद्गीताके अुपदेशामृतसे वंचित रखना तो आत्मघातके बराबर हो जायगा।

यंग अिंडिया, २५–८–'२७

लोग आपसमें अूँच-नीचका घमंड रखकर अैसा ही भेद पैदा करते हैं। यह यदि करुणाजनक दृश्य न होता, तो हास्यरसका अजीब नमूना ही माना जाता।

"पंक्तिभेदके बारेमें छात्रालयमें कोअी खास नियम नहीं। विद्यार्थी अपने-आप सब अेकसाथ बैठते हैं। अध्यापक तो कोअी पंक्तिभेदमें विश्वास रखते ही नहीं। अिसलिअे विद्यार्थी भी अपने स्वभावसे अुसी तरह करते हैं। दो-तीन विद्यार्थी अपने माता-पिताके हठके कारण रसोअीमें जहां रसोअिये खाते है वहीं बैठकर खाते हैं। किन्तु अिन विचारको विद्यापीठकी तरफसे अुत्तेजन नहीं मिल सकता। भोजनकी सफाई पर आज जितना ध्यान दिया जाता है, अुससे भी ज्यादा दिया जा सकता है। परन्तु पंक्तिभेद विद्यापीठके लिअे अिष्ट नहीं, क्योंकि विद्यापीठ मानता है कि यह भेद घमंडसे पैदा हुअी झूठी प्रतिष्ठा पर खड़ा हुआ है। धर्मका शुद्ध वातावरण कायम रखनेका विद्यापीठ हमेशा प्रयत्न करेगा।"

काकासाहब फूंक-फूंक कर क़दम रखना चाहते हैं। क्योंकि वे माता-पिताका या विद्यार्थियोंका जहां तक हो सके जी नहीं दुखाना चाहते, अिसलिअे कहते हैं कि "छात्रालयमें ब्राह्मण रसोअियेके हाथसे ही रसोअी होती है। शौचाचारमें रसोअी अेक खास तरीकेसे ही तैयार करनेका जो आग्रह रखा जाता है, वह अिस तरह पूरा किया जाता है।" मेरी राय तो यह है कि ब्राह्मण रसोअियेका आग्रह बहुत समय तक रखना असंभव है। अैसी तो कोअी बात नहीं कि जिस अर्थमें यहां ब्राह्मण शब्द काममें लिया गया है, वैसे ब्राह्मणोंमें ही शौचाचारका पालन होता है। अितना ही नहीं, बल्कि ब्राह्मणोंमें शौचाचारका पालन होता ही है अैसा भी नहीं। गंदगीसे भरपूर, तन्दुरस्तीके नियमोंको तोड़नेवाले ब्राह्मण रसोअिये तो मैंने कितने ही देखे हैं। दो आनेवाले किस आदमीने नहीं देखे होंगे? शौचाचारमें कुशल, तंदुरस्तीके नियम जाननेवाले और अुन्हें पालनेवाले अब्राह्मण रसोअिये भी मैंने बहुत देखे हैं। अिसलिअे यदि ब्राह्मण शब्दके मूल अर्थको ध्यानमें रखकर जो शौचाचारको पाले वही ब्राह्मण माना जाय, तो सब राष्ट्रीय छात्रालय काकासाहबका नियम पाल सकेंगे। जो अस्पृश्य कहलाते हैं अुन्हें भी ब्राह्मण माना जाय, तब तो शौचाचारको पालनेवाले ब्राह्मण रसोअिये बहुत

रही मिलेंगे; और जो मिलेंगे वे अितनी बड़ी तनखाह मागेंगे और अितने सिर चढ़ेंगे कि अुन्हें रखना या निभाना लगभग असंभव हो जायगा।

विद्यापीठ सत्य और अहिंसाकी आराधना करता है। अिसलिअे हमारे छात्रालयोंमें जैसी हालत हो, वैसी ही अुसे बताना चाहिये। अंदर या बाहर अुसकी अुपेक्षा नहीं की जा सकती। अिसीलिअे काकासाहबने साफ कर दिया है कि विद्यापीठके छात्रालयमें पंक्तिभेदके लिअे जगह नहीं है। पंक्तिभेदके गर्भमें ही अूच-नीचका भेद रहा है। वर्णभेदके साथ अूच-नीचका कोअी सम्बन्ध नहीं। अूचेपनका दावा करनेवाला ब्राह्मण नीचे गिरता है और नीच बनता है। अपनेको नीच माननेवाले और नीचे रहनेवालेको दुनिया अूंची जगह देती है। जहा मोक्ष आदर्श है, जहा अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है, जहा आत्मा आत्मामें कोअी भेद नहीं, वहा अूच-नीचकी गुजाअिश ही कहा है? अिसलिअे राष्ट्रीय छात्रालयोंके बारेमें मेरे विचारसे तो अितना ही कहा जा सकता है कि वहा शौचाचारको पूरी तरह पालनेका प्रयत्न होगा, यानी सच्चा ब्राह्मण-धर्म अुनका आदर्श रहेगा। नामका ब्राह्मण-धर्म पालनेका आदर्श हो ही नहीं सकता, क्योंकि वह दोष है और अिसलिअे छोड़ने लायक है।

नवजीवन, ९-९-'२८

३६

आदर्श छात्रालय

१

छात्रालयोंका सम्मेलन अिस महीने यहीं होनेवाला है, अिसलिअे अिस बारेमें मेरी राय मागी गअी है कि आदर्श छात्रालय किसे कहा जाय। सन् १९०४ से मैं अपनी बुद्धिके अनुसार छात्रालय चलाता रहा हू। अिसलिअे अैसा कहनेका मोह भी है कि मुझे छात्रालय चलानेका थोड़ा ज्ञान है। यहा छात्रालयका अर्थ जरा विस्तृत करनेकी आवश्यकता है। कोअी कुछ भी सीखता हो अुसे छात्र मान लें, और अैसे अेकसे ज्यादा छात्र साथ रहते हों, तो मैं कहूंगा कि वे छात्रालयमें रहते हैं।

अैसे छात्रालयके गृहपति (सुपरिन्टेण्डेन्ट) चरित्रवान होने चाहिये।

छात्रालय वार्डेका रूप कभी अख्तियार न करे, यानी यह न मानना चाहिये कि छात्र सिर्फ खाने-पीनेके लिअे ही अेक साथ रहते हैं।

छात्रोंमें कुटुम्बकी भावना फैलानी चाहिये। गृहपति जिनकी जान होना चाहिये। अिसलिअे अुसे छात्रोंके जीवनमें ओतप्रोत हो जाना चाहिये और अपना खाना-पीना छात्रोंके साथ ही रखना चाहिये।

आदर्श छात्रालय स्कूलसे बढ़कर होना चाहिये। सच्चा स्कूल तो वही होता है। स्कूल या कॉलेजमें तो विद्यार्थियोंको अक्षरज्ञान ही मिलता है। छात्रालयोंमें विद्यार्थियोंको सब तरहका ज्ञान मिलता है। आदर्श छात्रालयका सम्बन्ध अलग स्कूलसे नहीं होता; शिक्षण अेक ही तंत्र या प्रबन्धके मातहत होता है और जहां तक हो सके सब विद्यार्थी और शिक्षक साथ ही रहते हैं। अिस तरह जो हालत आज स्वाभाविक कुटुम्बोंमें नहीं होती, वह हालत छात्रालयोंके जरिये नये और बड़े कुटुम्ब बना कर पैदा करनी पड़ेगी। अिस दृष्टिसे छात्रालय गुरुकुलका रूप लेंगे।

आजकल छात्रालयोंमें बहुतसी बुराअियां पाअी जाती हैं। अुसका कारण मैं यह मानता हूं कि अुनमें कुटुम्बकी भावना पैदा नहीं की जाती और छात्रालय चलानेवाले लोग विद्यार्थियोंके जीवनमें पूरी तरह नहीं घुसते।

छात्रालय शहरके बाहर होने चाहिये और जिन सुधारोंके करनेकी जरूरत शहरों या गांवोंमें मानी जाती है, वे सब सुधार अुनमें होने चाहियें। यानी शौचादिके नियम वहां पाले जाने चाहियें। किसी भी तरहका मकान भाड़े लेकर अुसमें आदर्श छात्रालय नहीं चलाया जा सकता। आदर्श छात्रालयमें नहाने और पाखानेकी सहूलियतें अच्छी होनी चाहियें और हवा और रोशनीकी पूरी सुविधा रहनी चाहिये। अुसके साथ बाग होना चाहिये।

आदर्श छात्रालय सब तरहसे स्वदेशी होगा। छात्रालयकी अिमारतमें और सजावटमें देहाती जीवनकी छाया जरूर होनी चाहिये। अुसकी रचना भारतकी गरीबीके लिहाजसे होगी। अिस तरह पश्चिमके ठण्डे और धनी देशोंके छात्रालय हमारे लिअे नमूना नहीं बन सकते।

आदर्श छात्रालयोंमें अैसा कुछ न होना चाहिये, जिससे छात्र आलसी, नाजुक और आवारा बन जायें। अिसलिअे वहां साधु-जीवनको शोभा देनेवाली सादी खुराक होगी, वहां प्रार्थना होगी, वहां सोने-बैठनेके नियम होंगे।

आदर्श छात्रालय ब्रह्मचर्याश्रम होगा। विद्यार्थी नये जमानेका शब्द है। विद्यार्थियोंके लिअे सच्चा शब्द ब्रह्मचारी है। विद्याभ्यासके समयमें ब्रह्मचर्य जरूरी है। आजकी छिन्न-भिन्न स्थितिमें मैं यह चाहूंगा कि यदि ब्याहे हुअे विद्यार्थी छात्रालयमें भरती किये जायं, तो अुन्हें भी विद्याभ्यास पूरा होने तक ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, यानी विद्याभ्यासके समयमें अुन्हें अपनी स्त्रीसे बिलकुल अलग रहना चाहिये।

पाठक याद रखें कि मैंने आदर्श छात्रालयका वर्णन किया है। यह समझमें आने लायक बात है कि सब छात्रालय अुस हद तक नहीं पहुंच सकेंगे। किन्तु अूपरका आदर्श ठीक हो, तो सब छात्रालयोंको अुस मापके अनुसार चलना चाहिये।

नवजीवन, ३-३-'२९

२

[छात्रालयोंके सम्मेलनमें आदर्श छात्रालय कैसा हो, अिस विषयमें गृहपतियोंकी प्रार्थना पर गांधीजीका दिया हुआ भाषण।]

छात्रालयकी मेरी कल्पना यह है कि छात्रालय अेक कुटुम्बकी तरह हो, अुसमें रहनेवाले गृहपति और छात्र कुटुम्बियोंकी तरह रहते हों, गृहपति छात्रोंके माता-पिताकी जगह ले। गृहपतिके साथ अुसकी पत्नी हो, तो दोनों पति-पत्नी मिलकर माता-पिताकी तरह काम करें। आज तो हमारे यहां दयाजनक स्थिति हो रही है। गृहपति ब्रह्मचर्य न पालता हो, तो अुसकी पत्नी छात्रालयमें मांका स्थान हरगिज नहीं ले सकती। अुसे शायद यही पसन्द न आये कि अुसका पति छात्रालयमें काम करे। और पसन्द आये तो अिसीलिअे कि तनखाहके रुपये मिलते हैं। वह छात्रालयमें से थोड़ा घी चुरा लाये, तो भी पत्नी खुश होगी कि चलो, मेरे बच्चोंको ज्यादा घी खानेको मिलेगा। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं कि सब गृहपति अैसे ही होते हैं, किन्तु आज हमारा सब कामकाज अिसी तरहकी तितर-बितर हालतमें है।

मैंने बताये अुस तरहके छात्रालय आज गुजरातमें या भारतमें बहुत नहीं हैं। हों तो मुझे अनुभव नहीं। गुजरातके बाहर तो हिन्दुस्तानमें ये संस्थाअें ही बहुत कम हैं। छात्रालयकी संस्था गुजरातकी खास देन है। अिसके कअी कारण हैं। गुजरात व्यापारियोंका देश है। जो व्यापारसे धन

कमाते हैं, अुन्हें शौक होता है कि अपनी जातिके बच्चोंके लिअे छात्रालय खोलें। 'छात्रालय' जैसा बड़ा नाम तो बादमें पड़ा। अुन बेचारोंने तो 'बोर्डिंग' ही कहा था; और लड़कोंके खाने-पीनेका प्रबन्ध कर देनेके सिवा अुनका और कोअी खयाल न था। बादमें जब अिन बोर्डिंगोंमें संस्कारवान गृहपति आये, तब अुन्होंने अिनमें भावना डालना शुरू किया।

मैं स्वयं विद्यालयसे छात्रालयको ज्यादा महत्त्व देता हूं। बहुतसी शिक्षा, जो स्कूलमें नहीं मिल सकती, छात्रालयमें मिल सकती है। स्कूलमें भले ही बुद्धिकी विद्या थोड़ी मिलती हो, किन्तु स्कूलमें जो कुछ मिलता है, अुसे भी विद्यार्थी पचा नहीं सकते। अितना ही होता है कि अिच्छा न रहते भी थोड़ी-बहुत बात दिमागमें रह जाती है। यहां मैं विद्यालयका खराब पहलू ही रख रहा हूं। छात्रालयोंमें लड़कों और लड़कियोंको मनका जितना बल दिया जा सकता है, अुतना अकेला विद्यालय नहीं दे सकता। मेरी आखिरी कल्पना तो यह है कि छात्रालय ही विद्यालय हो।

सेठोंने जो छात्रालय खोले, वे दूसरी ही तरहके थे। वे स्वयं छात्रालय खोलकर दूर रहे। गृहपति भी अितनेसे अपना काम पूरा हुआ समझ लेता कि लड़के खा-पीकर स्कूल-कॉलेज चले जायं। सेठों और गृहपतियों दोनोंने जिम्मेदारी ली होती, तो छात्रालय आज जैसे न रहते। अब हमें परिस्थितिको देखकर यह सोच लेना है कि अुन्हें किस तरह सुधारा जा सकता है। यदि हम अिरादा कर लें तो अिन संस्थाओंकी शक्ल बहुत कुछ बदल सकते हैं। जो बात स्कूलोंमें नहीं हो सकती, वह छात्रालयोंमें की जा सकती है। गृहपति सिर्फ हिसाब रखनेवाला ही न रहे, बल्कि अिसकी भी जांच करे कि विद्यार्थी स्कूलमें आकर क्या सीखता है और विद्यार्थीके लिअे पुत्र या शिष्यका भाव रखकर अुसके बारेमें चिन्ता करता रहे। आज तो बहुत जगह अैसा व्यवहार है कि गृहपतिको यह भी पता नहीं रहता कि विद्यार्थी क्या करते-धरते हैं।

छात्रालयोंमें जो अेक गंभीर अराजकता फैली हुअी है, अुसकी तरफ मैं आम तौर पर ध्यान खींचना चाहता हूं। अिस चीजकी हमेशा अुपेक्षा की जाती है। यह समझकर कि हमारे छात्रालयकी बदनामी होगी, गृहपति लोग अुसे जाहिर करते शरमाते हैं और छिपाते हैं। वे सोचते हैं कि हमारे विद्यार्थी जो बुरा काम करते हैं वह खुल जायगा, अतः वे माता-पिताको भी

अिसकी खबर नहीं करते। किन्तु अिस तरह छिपाकर रखनेमें सफलता तो मिलती नहीं। गृहपति अपने मनमें यह समझते होंगे कि कोअी नहीं जानता, किन्तु बदबू तो देखते-देखते फैल जाती है। अनुभवी गृहपति समझ गये होंगे कि मैं क्या कहना चाहता हूं। गृहपतियोंको मैं अिस बारेमें चेतावनी देता हूं। वे सावधान रहें, अपना धर्म अच्छी तरह समझें। जो छात्रालयको शुद्ध न रख सकें, वे अिस्तीफा देकर अिस कामसे अलग हो जायं। यदि छात्रालयमें रहकर लड़के निकम्मे बनें, अुनमें दृढ़ता न रहे, अुनके विचार तितर-बितर हो जायं, बुद्धिके स्रोत सूख जाय, तो यह सब गृहपतिकी अयोग्यता सूचित करता है।

मैं जो कहता हूं अुसकी बहुतसी मिसालें दे सकता हूं। मेरे पास विद्यार्थियोंके ढेरों पत्र आते हैं। बहुतसे गुमनाम होते हैं। अुन्हें मैं रद्दीकी टोकरीमें डाल देता हूं, किन्तु अुनमें से सार निकाल लेता हूं। बहुतसे भोलेभाले विद्यार्थी अपना नाम-पता देकर मुझसे अुपाय पूछते हैं। अुन्हें जब नअी-नअी आदत पड़ती है, तब गृहपतिकी तरफसे आश्वासन नहीं मिलता, अुलटे कभी-कभी अुत्तेजन मिलता है। फिर जब अुनकी आंखें खुलती हैं, तब अुनमें दृढ़ता नहीं होती, मन अुनके काबूमें नहीं होता, मेरे जैसा सलाह दे तो अुस पर चलनेकी शक्ति नहीं रहती।

जो गृहपतिका काम कर सकते हैं, वे बड़ी कीमत मांगते हैं। अुन्हें विधवा बहनोंकी परवरिश करनी होती है और लड़के-लड़कियोंके शादी-ब्याहमें खर्च करना होता है। अिस तरहके गृहपति योग्य हों, तो भी हमें अुन्हें छोड़ना पड़ेगा। दूसरे गृहपति अैसे हैं, जो यह मानते हैं कि मेरा यही काम है। अुन्हें दूसरा काम पसन्द ही नहीं आता। अैसे कुछ लोग निकले हैं, जो गुजारे जितना लेकर काम करनेको तैयार हैं।

मैं जो कहता हूं अुससे मालूम होगा कि गृहपति लगभग संपूर्ण पुरुष होना चाहिये। जो अैसा आदमी हो कि विद्यार्थियों पर असर डाल सके, अुनके दिलमें घुस सके, वही गृहपति बन सकता है। अैसा गृहपति न हो तो लड़कोंको अिकट्ठा करना भयंकर है।

यह तो गृहपतियोंकी बात हुअी। अब छात्रोंको दो शब्द। छात्र अपना होश भूलकर गृहपतिको नौकर मान लें, यह समझने लगें कि अुनका सब काम नौकर ही करेंगे और वे स्वयं हाथसे कुछ भी नहीं करेंगे, तो यह अुनकी भूल

होगी। छात्रोंको जानना चाहिये कि छात्रालय अुनके अैश-आरामके लिये नहीं है। वे यह न मान बैठें कि छात्रालयको वे रुपया देते हैं। वे जो कुछ देते हैं, अुससे खर्च पूरा नहीं पड़ता। छात्रालय खोलनेवाले सेठ लोग अज्ञानसे मान लेते हैं कि विद्यार्थी लाड़-प्यारसे रखनेके कारण अच्छे बनते हैं और अुन्हें आराम देनेसे धर्म होता है। अिस समझके कारण वे विद्यार्थियोंको सहूलियतें देते हैं, किन्तु अिससे अकसर धर्मके बजाय पाप होता है। अिससे विद्यार्थी अुलटे बिगड़ते हैं, परावलम्बी बनते हैं। जो विद्यार्थी बुद्धिसे काम लेता है, वह यह हिसाब लगा लेगा कि छात्रालयके जिस मकानमें वह रहता है, अुसका किराया कितना है, नौकर-चाकरों और गृहपतिकी तनख्वाह कितनी है? यह सब छात्रोंसे नहीं लिया जाता। वे तो सिर्फ खानेका खर्च देते हैं। बहुतसे छात्रालयोंमें तो खाना, कपड़ा, पुस्तकें वगैरा भी मुफ्त दिये जाते हैं। दान करनेवाले सेठ लोग यह लिखा लेते हों कि पढ़-लिखकर ये लड़के देशसेवा करेंगे तो भी ठीक है, परन्तु वे अितने अुदार होते हैं कि अैसा कुछ नहीं करते। परन्तु छात्रोंको समझ रखना चाहिये कि वे जो खाते हैं अुसका बदला नहीं देंगे, तो कहा जायगा कि चोरीका धन खाते हैं। बचपनमें मैंने अखा भगतकी कविता पढ़ी थी:

'काचो पारो खावो अन्न, तेवुं छे चोरीनुं धन।'*

चोरीका माल खानेसे छात्र शूरवीर नहीं बनते, दीन बनते हैं। तब छात्र यह निश्चय करें कि हम भीखका अन्न नहीं खायेंगे। वे छात्रालयकी सुविधाओंका फायदा भले ही अुठायें, किन्तु यहांसे जाकर फौरन गृहपतिको नोटिस दे दें कि सब नौकरोंको बिदा कर दीजिये। या नौकरों पर दया आये तो अुनकी नौकरी रहने दें, किन्तु सारा काम तो स्वयं ही करें। पाखाने साफ करने तक सारे काम हाथोंसे ही कर लेनेका निश्चय करें। तभी वे गृहस्थ बन सकेंगे, तभी देशकी सेवा कर सकेंगे। आज तो हमारे लोग अीमानदारीके धन्धेसे अपना, स्त्रीका या मांका गुजारा करनेकी भी ताकत नहीं रखते।

किसीको कहीं नौकरी मिलने पर यह घमण्ड हो जाय कि मैं अीमानदारीका धन्धा करता हूं, तो अुसे यह विचार करना पड़ेगा कि मिलमें गुमाश्तेका काम करने पर मुझे ७५ रुपये मिलते हैं और अुस मजदूरको बड़े

---

* चोरीका धन कच्चे पारेको खानेके समान है; जैसे कच्चा पारा शरीरमें से फूट निकलता है, वैसे ही चोरीका धन समझिये।

कुनबेवाला होने पर भी १२ रुपये ही मिलते हैं। अैसा क्यों? यह हिसाब वह लगायेगा तो फौरन समझ जायगा कि वह बड़ी तनख्वाहके लायक नहीं है, यह रोजी अीमानदारीकी नहीं है और शहरोंमें हम सब चोरीका ही अन्न खाते हैं। हम तो डाकुओंके अेक बड़े जत्थेके कमीशन अेजेण्ट हैं। लोगोंसे हम जो कुछ लेते हैं, अुसका ९५ फी सदी भाग विलायत भेज देते हैं। अैसे धन्धेसे कमाना भी न कमानेके बराबर है।

मैंने आज जो कुछ कहा है, अुस पर विश्वास हो तो आप आज ही से अमल करने लग जाना।

छात्रालय अृषिकुल होना चाहिये। वहां सब ब्रह्मचारी ही रहने चाहिये। जो ब्याहे हुअे हों वे भी वानप्रस्थ धर्मका पालन करें। यदि आप अैसी आदर्श स्थितिमें दस-पांच साल रहें, तो आप अितने समर्थ बन सकते हैं कि भारतके लिअे जो कुछ करना चाहें वही कर सकते हैं। आज स्वराज्यका यज्ञ छिड़ गया है। किन्तु भिक्षा पर निर्भर करनेवाले अिसमें क्या भाग लेंगे? मेरे जैसा शायद कोअी निकल पड़े, किन्तु मेरे पास तो जुवार-बाजरेकी रोटियां हैं और तुम्हें साझ पड़ते ही पकोड़ियां चाहिये। कोअी यह घमंड रखता हो कि समय आने पर यह सब कर लेंगे, आजसे ही चिन्ता करनेकी क्या जरूरत है — तो अैसा कहनेवाले मैंने बहुत देखे हैं। परन्तु समय आने पर वे कुछ नहीं कर पाते। जेलमें जानेवाले वहां कैसा बरताव करते हैं, अिसका हमें अनुभव हो चुका है। सन् २०–२१ में जो जेल गये, अुन्होंने खाने-पीनेके मामलेमें कितना झगड़ा किया और कैसे-कैसे काम किये यह सबको मालूम है। अुससे हमें शरमाना पड़ा। यह न मानना कि त्याग अेकदम आ जाता है। वह बहुत प्रयत्न करनेसे ही आता है। जिस आदमीमें त्यागकी अिच्छा है, परन्तु जिसने छोटे-छोटे रसोंको जीतनेका प्रयत्न नहीं किया, अुसे वे अैन मौके पर दगा देते हैं। यह बात अनुभवसे सिद्ध हो चुकी है। यदि तुम सब छात्र समझनेका प्रयत्न करो, तो तुम्हें मालूम होगा कि मैंने जो बातें कही हैं, वे सादी और आसानीसे अमलमें लाने लायक हैं।

नवजीवन, २३–२–'३०

३७

विश्वविद्यालयोंमें क्यों नहीं?

स० — आपने क्रिकेटके खेलमें साम्प्रदायिकताके खिलाफ अपनी राय दी है। क्या अिसी तरह साम्प्रदायिक विश्वविद्यालय भी शोचनीय नहीं हैं? जो कॉलेज और छात्रावास सबके लिअे खुले हैं, अुनमें पढ़ने और रहनेवालोंमें गहरी मित्रता पैदा हो जाती है और धार्मिक सहिष्णुता अेक स्वाभाविक चीज बन जाती है। यदि सर्वसामान्य विद्यापीठोंमें विद्वान अध्यापकों द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक विषयोंकी शिक्षा दिलानेके लिअे अच्छी निधिका प्रबन्ध किया जाय, तो क्या अुससे अुन-अुन संस्कृतियोंका विकास न होगा?

ज० — आप ठीक कहते हैं। अगर हम साम्प्रदायिक संस्थाओंके बिना अपना काम चला सकें तो अच्छा हो। लेकिन जिस तरह मैं निश्चयपूर्वक यह कह सकता हूं कि क्रिकेटमें साम्प्रदायिकता बिलकुल नहीं होनी चाहिये, अुसी तरह मैं यह नहीं कह सकता कि मुस्लिम या हिन्दू विश्वविद्यालय नहीं होने चाहिये। अगर अुनके मूलमें कोअी खराबी न हो, तो विश्वविद्यालयोंसे राष्ट्रकी सेवा हो सकती है। मसलन्, हिन्दू विश्वविद्यालय और मुस्लिम विश्वविद्यालय साम्प्रदायिक अेकताके केन्द्र बन सकते हैं, और अुन्हें बनना भी चाहिये। लेकिन साम्प्रदायिक और खेल ये दो शब्द तो परस्पर विरोधी मालूम होते हैं। मैं आपके साथ अिस बातमें पूरी तरह सहमत हूं कि देशमें साम्प्रदायिकतासे रहित कॉलेज और छात्रावास होने चाहिये। अैसे कॉलेज और छात्रावास आज भी मौजूद हैं, लेकिन दुर्भाग्यसे अुनमें भी यह जहर घुस गया है। आशा करनी चाहिये कि यह अेक क्षणजीवी चीज सिद्ध होगी।

सेवाग्राम, १३–४–'४२
हरिजनसेवक, १९–४–'४२

३८

अेक यात्रा

गांधीजी बालिकाश्रमसे सीधे अपने मुकाम पर वापिस आना चाहते थे। लेकिन अितनेमें जामिया-मिलियाके कुछ विद्यार्थी और शिक्षक वहां आ पहुंचे और अुन्होंने गांधीजीसे प्रार्थना की कि वे कभी समय निकालकर अुनके यहां भी पधारें।

गांधीजीने कहा: "कभी क्यों? अभी ही चलो। यहां तक आनेके बाद आपके यहां गये बिना मैं वापिस नहीं लौट सकता।" यह सुनकर जामिया-मिलियाके विद्यार्थी और शिक्षक तो मारे खुशीके पागल हो अुठे। अपने साथियोंको यह खुशखबर सुनानेके लिअे वे गांधीजीसे पहले जामिया-मिलियाकी तरफ दौड़े और रास्ता दिखानेके लिअे पैट्रोमेक्स लेकर वापस आये। अचानक गांधीजीको अपने बीच पाकर सारी संस्थामें अुत्साहकी अेक लहर दौड़ गअी। डा० जाकिरहुसेन भावलपुर गये हुअे थे। लेकिन मुजीब साहब और दूसरे शिक्षक वहां मौजूद थे। आंगनकी हरी दूबवाली जमीन पर जाजमें बिछा दी गअीं और आसमानके शामियानेके नीचे सब लोग अेक जगह अेक सुखी परिवारकी तरह अिकट्ठे हुअे। सन् १९२० में असहयोग आन्दोलनके शुरूमें जामिया-मिलियाकी स्थापना हुअी थी। कुछ ही समय बाद वह अपनी रजत-जयन्ती मनाने जा रहा है। मरहूम हकीम अजमलखां, डा० अन्सारी और अलीबन्धुओंका रोपा हुआ यह पौधा डा० जाकिरहुसेन और अुनके साथियोंकी प्रेमभरी देखरेखमें बढ़कर अेक विशाल वृक्ष बन गया है। जामिया-के प्राअिमरी स्कूलमें २०० विद्यार्थी हैं, हाअीस्कूलमें १०० और कॉलेजमें २८। अिसके अलावा, वहां ५० शिक्षक भी तालीम ले रहे हैं। जामियाकी ओरसे दिल्लीमें अेक मदरसा चलता है और करौलबागमें अुसका अपना अेक प्रकाशन-मंदिर भी है।

जामियावालोंके अुमड़ते स्नेह और स्वागतको देखकर गांधीजी गद्गद हो गये और बोले: "अचानक बिना खबर दिये यहां आकर मैंने अपना यह दावा साबित कर दिया है कि मैं आप ही के परिवारका अेक आदमी हूं।" फिर अुन्होंने सुझाया कि लोग सवाल पूछें।

अेक विद्यार्थीने पूछा: "हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके लिअे विद्यार्थी क्या कर सकते हैं?" यह सवाल गांधीजीको पसन्द आया। अुन्होंने कहा:

"अिसका अेक सीधा-सादा रास्ता है। तमाम हिन्दू अपना आपा खोकर आपको गालियां दें तो भी आपको अुन्हें अपने सगे भाअी ही मानना चाहिये। हिन्दुओंको भी यही करना चाहिये। क्या यह नामुमकिन है? नहीं, यह तो बिलकुल मुमकिन है। और जो अेकके लिअे मुमकिन है, वह हजारोंके लिअे भी मुमकिन हो सकता है।

"आज तो सारी हवा ही जहरीली बन गअी है। अखबार तरह तरहकी सनसनीखेज अफवाहें फैलाते हैं, और लोग बिना सोचे-समझे अुन्हें सच मान बैठते हैं। अिससे घबराहट फैलती है और हिन्दू तथा मुसलमान अपनी अिन्सानियतको भूलकर अेक-दूसरेके साथ जंगली जानवरों-सा बरताव करते हैं। मनुष्यको चाहिये कि वह मनुष्यको शोभा देनेवाला व्यवहार करे और अिस बातकी परवाह न करे कि प्रतिपक्षी भी वैसा व्यवहार करता है या नहीं। अगर हम अच्छे व्यवहारके बदलेमें अच्छा व्यवहार करें तो वह सौदा कहा जायगा। और सौदा तो चोर और डाकू भी करते हैं। अिसमें भलमनसाहत क्या रही? भलमनसाहतका तकाजा है कि आदमी हानि-लाभका हिसाब लगाना छोड़ दे। भले आदमीका यह फर्ज हो जाता है कि वह सामने-वालेके व्यवहारकी परवाह न करके खुद अच्छा व्यवहार करता रहे। अगर सारे हिन्दुओंने मेरी बात पर ध्यान दिया होता या मुसलमानोंने भी मेरी बात सुनी होती, तो आज हिन्दुस्तानमें अमन और शांतिका राज्य होता और खंजर और लाठी अुस शांतिमें खलल नहीं डाल पाते। अगर बदलेकी भावनाने काम न किया जाय और लोगोंको भड़काया और अुभाड़ा न जाय, तो दंगाअी लोग छुरा भोंकनेकी अपनी करतूतसे थोड़े ही समयमें थक जायं। कोअी अदृष्ट शक्ति अुनके अुठे हुअे हाथोंको रोक रखेगी और अुनके हाथ अुनकी दुष्ट अिच्छाके वश होकर काम करनेसे अिनकार कर देंगे। सूरज पर भले आप धूल डालें, अुससे सूरजका तेज कम नहीं होगा। जरूरत अिस बातकी है कि सब खामोश रहें और श्रद्धासे काम लें। अीश्वर कल्याणकारी है, और दुष्टताको वह अेक हदसे ज्यादा बढ़ने नहीं देता।

"अिस संस्थाको कायम करनेमें मेरा हाथ था, अिसलिअे यहां अपने दिलकी बात कहना मुझे अच्छा लगता है। यही बात मैंने हिन्दुओंसे भी कही है। भगवानसे मैं यही प्रार्थना करता हूं कि आप हिन्दुस्तानके सामने दुनियाके सामने अेक अुम्दा मिसाल पेश करें।"

अपने मुकाम पर लौटनेसे पहले अिस्लामी खानदानियतके और हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके जीते-जागते स्मारकके समान स्व० डाक्टर अन्सारीकी कब्र पर गांधीजी गये। डा० अन्सारी गांधीजीके सगे भाओीके समान थे। सन् १९३२ में जब परिस्थिति अत्यन्त नाजुक मालूम होती थी, तब गांधीजी द्वारा पर्णकुटीमें शुरू किये गये २१ दिनके अपवासमें अपनी यूरोपकी यात्रा स्थगित रखकर डा० अन्सारी गांधीजीके बिस्तरके पास आ पहुंचे थे। जिस स्थान पर डा० अन्सारी दफनाये गये थे, वहां सीढ़ियोंवाला अेक विशाल चबूतरा बनाया गया है। नीचे अेक संगमरमरकी तख्ती है। अुस पर अुनके जन्म और अवसानकी तारीखें खोदी गयी हैं। अुस कब्रकी आडंबर-रहित सादगी अुसकी भव्यताको बढ़ाती है। आजाद भारत आशा, श्रद्धा और अेकताके प्रतीकके रूपमें स्वर्गीय डाक्टर साहबकी यादको सदा सुरक्षित रखेगा।

हरिजनसेवक, २८–४–'४६

३९
आदर्श बालमंदिर

१

बालकोंकी शिक्षाका विषय होना तो चाहिये आसानसे आसान, परन्तु वह कठिनसे कठिन बन गया मालूम होता है या बना दिया गया है। अनुभव यह सिखाता है कि बच्चे, हम चाहें या न चाहें, कुछ न कुछ अच्छी या बुरी शिक्षा पा रहे हैं। यह वाक्य बहुतसे पाठकोंको विचित्र लगेगा। परन्तु हम यह विचार लें कि बालक किसे कहें, शिक्षाका अर्थ क्या है और बालकोंकी शिक्षा कौन दे सकता है, तो शायद अपरके वाक्यमें कोअी ताज्जुबकी बात न लगे। बालकोंसे मतलब है दस बरससे भीतरके लड़के-लड़कियां या अिसी अुम्रके दीखनेवाले बच्चे।

शिक्षाका अर्थ अक्षरज्ञान ही नहीं है। अक्षरज्ञान शिक्षाका साधनमात्र है। शिक्षाका अर्थ यह है कि बच्चा मनसे लगा कर सारी अिन्द्रियोंसे अच्छा काम लेना जाने। यानी बच्चा अपने हाथ, पैर आदि कर्में[illegible] नाक, कान आदि ज्ञानेन्द्रियोंका अच्छा अुपयोग करना [illegible] यह ज्ञान मिलना है कि हाथसे चोरी

मारनी चाहिये, अपने साथी या छोटे भाओी-बहनको नहीं पीटना चाहिये, अुस बच्चेकी शिक्षा शुरू हो चुकी समझिये। जो बालक अपना शरीर, अपने दांत, जीभ, नाक, कान, आंख, सिर, नाखून आदि साफ रखनेकी जरूरत समझता है और साफ रखता है, अुसकी शिक्षा आरम्भ हो गअी कही जा सकती है। जो बच्चा खाते-पीते शरारत नहीं करता, अकेले या दूसरोंके साथ बैठकर खाने-पीनेकी क्रिया कायदेसे करता है, ढंगसे बैठ सकता है और शुद्ध-अशुद्ध भोजनका भेद समझकर शुद्धको पसन्द करता है, ठूंस-ठूंसकर नहीं खाता, जो देखता है वही नहीं मांगता और न मिलने पर भी शान्त रहता है, अुस बच्चेने शिक्षामें अच्छी अुन्नति की है। जिस बच्चेका अुच्चारण शुद्ध है, जो अपने आसपासके प्रदेशका अितिहास-भूगोल — अिन शब्दोंका नाम जाने बिना — भी बता सकता है, जिसे अिस बातका पता लग गया है कि देश क्या है, अुसने भी शिक्षाके रास्तेमें खासी मंजिल तय कर ली है। जो बच्चा सच-झूठका, सार-असारका भेद जान सकता है और जो अच्छे और सच्चेको पसन्द करता है और शरारत व झूठके पास नहीं फटकता, अुस बच्चेने शिक्षामें बहुत अच्छी प्रगति की है। अिस बातको अब लम्बानेकी जरूरत नहीं रहती। चित्रमें दूसरे रंग पाठक अपने-आप भर सकते हैं। सिर्फ अेक बात साफ कर देनी चाहिये। अिसमें कहीं अक्षरज्ञानकी या लिपिके ज्ञानकी जरूरत नहीं मालूम होती। बच्चोंको लिपिकी जानकारीमें लगाना अुनके मन पर और दूसरी अिन्द्रियों पर दबाव डालनेके बराबर है, अुनकी आंखों और अुनके हाथोंका दुरुपयोग करने जैसा है। सच्ची शिक्षा पाया हुआ बच्चा ठीक समय पर अपने-आप लिखना-पढ़ना सीख जाता है और आनन्दके साथ सीख लेता है। आज तो बच्चोंके लिअे यह ज्ञान बोझरूप बन जाता है। अुनका आगे बढ़नेका अच्छेसे अच्छा समय व्यर्थ जाता है और अन्तमें वे सुन्दर अक्षर लिखने और अच्छे ढंगसे पढ़नेके बजाय मक्खीकी टांगों जैसे अक्षर लिखते हैं। वे बहुत कुछ न पढ़ने लायक पढ़ते हैं और जो पढ़ते हैं वह भी अक्सर गलत ढंगसे पढ़ते हैं। अिसे शिक्षा कहना शिक्षा पर अत्याचार करनेके बराबर है। बच्चा लिखना-पढ़ना सीखे, अुससे पहले अुसे प्रायमिक शिक्षा मिल जानी चाहिये। अैसा करनेसे यह गरीब देश बहुतसी पाठमालाओं और बारहखड़ियोंके खर्चसे और बहुतसी बुराअियोंसे बच जायगा। बालपोथी जरूरी हो तो वह शिक्षकोंके लिअे हो, मेरी व्याख्याके बच्चोंके लिअे कभी नहीं।

यदि हम चालू प्रवाहमें न बह रहे हों तो यह बात हमें दीये जैसी स्पष्ट लगनी चाहिये।

अूपर बताअी हुअी शिक्षा बच्चे घरमें ही पा सकते हैं और वह भी माके जरिये ही। यों तो बच्चे मांसे जैसी-तैसी शिक्षा पाते ही हैं। यदि आज हमारे घर अस्तव्यस्त हो गये हैं और माता-पिता बालकोंके प्रति अपना धर्म भूल गये हैं, तो यथासंभव बच्चोंको अैसी परिस्थितिमें शिक्षा दिलानी चाहिये, जहां अुन्हें कुटुम्ब जैसा वातावरण मिले। यह धर्म माता ही पूरा कर सकती है, अिसलिअे बच्चोंकी शिक्षाका काम स्त्रीके ही हाथमें होना चाहिये। जो प्रेम और धीरज स्त्री दिखा सकती है, वह आम तौर पर पुरुष आज तक नहीं दिखा सका। यह सब सच हो तो बच्चोंकी शिक्षाका प्रश्न हल करते समय स्त्री-शिक्षाका प्रश्न अपने-आप हमारे सामने खड़ा होता है। और जब तक सच्ची बालशिक्षा देने लायक माताअें तैयार नहीं होतीं, तब तक मुझे यह कहनेमें संकोच नहीं कि बच्चे सैकड़ों स्कूलोंमें जाते हुअे भी अशिक्षित ही रहते हैं।

अब मैं बच्चोंकी शिक्षाकी कुछ रूपरेखा बता दूं। मान लीजिये किसी मातारूपी स्त्रीके हाथमें पांच बच्चे आ गये। अिन बच्चोंको न बोलनेका शअूर है, न चलनेका। नाकसे जो मल बहता है, अुसे वे हाथसे पोंछकर पैर या कपड़े पर लगा लेते हैं; आंखोंमें कीचड़ भरा है; कानों और नाखूनोंमें मैल भरा है, बैठनेको कहने पर पैर फैलाकर बैठते हैं; बोलते हैं तो फूल्गड़ी करते हैं, 'तु' के बदले 'टु'* कहते हैं और 'मैं' के बजाय 'हम' बोलते हैं। पूर्व-पश्चिम और अुत्तर-दक्षिणका अुन्हें भान नहीं। शरीर पर मैले कपड़े पहने हैं। गुप्त अिन्द्रिय खुली है और अुसे वे मोसा करते हैं, और जितना मना किया जाय अुतना ज्यादा मोसते हैं। जेब हो तो अुसमें कुछ न कुछ मैली मिठाअी भरी हुअी है और अुसे बीच-बीचमें निकालकर खाते रहते हैं। अुसमें से कुछ जमीन पर बिखरते जाते हैं और जिनमें हाथोंको ज्यादा चिकना करते ही जाते हैं। टोपी पहने हैं तो अुसके किनारे मैलसे काले हो गये हैं और अुसमें से खूब दुर्गंध आती है। अिन पांच बच्चोंको सम्हालनेवाली स्त्रीके मनमें मातृकी भावना पैदा हो, तो ही वह

---

* गुजरातीमें 'तमे' का अर्थ बतानेवाला 'तु' शब्द है, किन्तु अुसका शुद्ध अुच्चारण न कर सकनेवाले अुसकी जगह 'टु' बोलते ।

अुन्हें शिक्षा दे सकती है। पहला पाठ अुन्हें ढंग पर मानेगा ही होगा। मां अुन्हें प्रेमसे नहलायेगी, कुछ दिन तक तो अुनके साथ विनोद ही करेगी; और अुसी तरहसे जैसे आज तक माताओंने किया है, जैसे कौशल्याने बालक रामचन्द्रके साथ किया, वैसे ही मां बच्चोंको प्रेमपाशमें बांधेगी और जिस तरह नचाना चाहेगी अुसी तरह अुन्हें नाचना सिखा देगी। जब तक मांको यह चीज नहीं मिल जायगी, तब तक बिछुड़े हुओ बछड़के पीछे गाय व्याकुल होकर जैसे अिधर-अुधर दौड़ा करती है, वैसे ही यह मां अुन पाच बच्चोंके लिअे बेचैन रहेगी। जब तक ये बच्चे अपने-आप साफ नहीं रहने लगें, अुनके दांत, कान, हाथ, पैर जैसे चाहिये वैसे नहीं होंगे, जब तक अुनके बदबूदार कपड़े बदले नहीं जाते और जब तक अुनके अुच्चारण शुद्ध नहीं होते — वे 'हूं' के बदले 'शूं' नहीं बोलने लगते — तब तक वह चैनसे नहीं बैठेगी। अितना काबू पानेके बाद मा बालकोंको पहला पाठ रामनामका सिखायेगी। अिस रामको कोअी राम कहे या रहीम कहे, बात तो अेक ही है। धर्मके बाद अर्थका स्थान तो है ही। अिसलिअे अब मां अंकगणित शुरू करेगी। बच्चोंको पहाड़े याद करायेगी और जोड़-बाकी जबानी सिखायेगी। बच्चे जहा रहते होंगे, अुस जगहका तो अुन्हें पता होना ही चाहिये। अिसलिअे वह अुन्हें आसपासके नदी-नाले, पहाड़, मकान वगैरा बतायेगी और अैसा करते-करते दिशाका ज्ञान तो अुन्हें करा ही देगी। बच्चोंके लिअे वह अपने विषयका ज्ञान बढ़ायेगी। अिस कल्पनामें अितिहास और भूगोल कभी अलग विषय नही होते। दोनोंका ज्ञान कहानीके तौर पर ही कराया जायगा। अितनेसे ही मांको संतोष नही होगा। हिन्दू माता बच्चोंको संस्कृतकी ध्वनि बचपनसे ही सुनायेगी। अिसलिअे अुन्हें औश्वरकी स्तुतिके श्लोक जबानी याद करायेगी। और बच्चोंको शुद्ध अुच्चारण करना सिखायेगी। देशप्रेमी मा अुन्हें हिन्दीका ज्ञान तो करायेगी ही। अिसलिअे बालकोंके साथ हिन्दीमें बात करेगी। हिन्दीकी किताबोंमें से कुछ पढ़कर सुनायेगी और बालकोंको द्विभाषी बनायेगी। वह बालकोंको अक्षरज्ञान अभी नहीं देगी, परन्तु अुनके हाथमें ब्रश तो जरूर देगी। वह रेखागणितकी आकृतियां बनवायेगी। सीधी लकीरें, वृत्त आदि खिंचवायेगी। जो बालक फूल नहीं बना सके या लोटेका चित्र नहीं बना सके या त्रिकोण नही खींच सके, अुसे मां शिक्षा पाया हुआ मानेगी ही नही। और संगीतके बिना तो वह बालकोंको

रहने ही नहीं देगी। बच्चे मीठे स्वरसे अेकसाथ राष्ट्रीय गीत, भजन आदि नहीं गा सकें, असे वह सहन ही नहीं करेगी। वह अुन्हें ताल-सहित गाना सिखायेगी। हो सके तो अुनके हाथमें अेकतारा देगी, अुन्हें झांझ देगी, डंडा-रास सिखायेगी। अुनका शरीर मजबूत बनानेके लिअे अुन्हें कसरत करायेगी, दौडायेगी, कुदायेगी। बालकोंको सेवाभाव और हुनर भी सिखाना है, अिसलिअे अुन्हें कपासकी बौंडिया चुनने, छीलने, लोढने, पींजने और कातनेकी क्रियायें सिखायेगी और बालक रोज खेल-खेलमें कमसे कम आधा घंटा कात डालेंगे।

अभी हमें जो पाठ्यपुस्तकें मिलती हैं, अुनमें से बहुतसी अिस क्रमके लिअे निकम्मी हैं। हर माको अुसका प्रेम नअी पुस्तकें दे देगा, क्योंकि गांव गांवमें नया अितिहास-भूगोल होगा। गणितके सवाल भी नये ही बनाये जायेंगे। भावनावाली मा रोज तैयारी करके पढायेगी और अपनी नोटबुकमें नअी बातें, नये सवाल वगैरा गढकर बच्चोंको सिखायेगी।

अिस पाठ्यक्रमको ज्यादा लंबानेकी जरूरत न होनी चाहिये। अिसमें से हर तीन महीनेका क्रम तैयार किया जा सकता है। क्योंकि बच्चे अलग-अलग वातावरणमें पले हुअे होते हैं, अिसलिअे अुन सबके लिअे हमारे पास अेक ही क्रम नहीं हो सकता। कभी-कभी तो बच्चे जो अुलटा सीखकर आते हैं, वह अुन्हें भुलाना पडता है। छह सात वर्षका बच्चा जैसे-तैसे अक्षर लिखना जानता हो, या अुसे बिना समझे कुछ पढ़नेकी आदत पड़ गअी हो तो मा अुससे छुड़वायेगी। जब तक अुसके मनसे यह भ्रम नहीं निकलेगा कि पढनेसे ही बालकको ज्ञान मिलता है तब तक वह आगे नहीं बढ़ेगी। यह आसानीसे ख़यालमें आ सकता है कि जिसने जिन्दगी-भर अक्षरज्ञान न पाया हो वह भी विद्वान बन सकता है।

अिस लेखमें 'शिक्षिका' शब्दका मैंने कहीं अुपयोग नहीं किया। शिक्षिका तो मा है। जो मांकी जगह नहीं ले सकती, वह शिक्षिका हो ही नहीं सकती। बच्चेको अैसा लगना ही न चाहिये कि वह शिक्षा पा रहा है। जिस बच्चे पर माकी आंख लगी रहती है, वह चौबीसों घण्टे शिक्षा ही लेता रहता है; और संभव है छह घंटे स्कूलमें बैठकर आनेवाला बच्चा कुछ भी शिक्षा न पाता हो। अिस अस्तव्यस्त जीवनमें शायद स्त्री-शिक्षिकाअें न मिल सकें। भले ही अभी पुरुषोंके जरिये ही बच्चोंकी शिक्षाका काम हो। अैसी हालतमें पुरुष-शिक्षकको माताका बड़ा पद लेना पड़ेगा और

खुले थे। बादमें अिन बच्चोंने वह काम बताकर, जो अुन्हें सिखाया गया था, हमारा मनोरंजन किया। ताल मिलाकर चलना-फिरना, ध्यान और अिच्छाशक्तिके छोटे-छोटे प्रयोग, बाजे बजाना और अन्तमें महत्वमें किसीसे भी कम न माने जा सकनेवाले मौन साधनाके प्रयोग अुन्होंने कर दिखाये। जो लोग वहां मौजूद थे, अुन सब पर अिसका बहुत अच्छा असर पड़ा। अपने बच्चोंसे घिरी हुआी मैडम माण्टेसोरीमें मुझे बच्चोंके लिअे मुक्त हुआी दुनियाके दर्शन हुअे। ओीश्वरकी सृष्टिमें बच्चे ही ज्यादातर अुसमें मिलते-जुलते हैं। मैडम माण्टेसोरीकी शिक्षाके बारेमें सारी महत्वाकांक्षाअें पूरी तरह सफल न हों, तो भी अुन्होंने बच्चोंमें जो कुछ पूजने लायक चीज है अुसकी तरफ माता-पिताका ध्यान खीचकर मनुष्य-जातिकी असाधारण सेवा की है। अुन्होंने संगीतमय मीठी अिटालियन भाषामें गांधीजीका स्वागत किया और अुनके मंत्रीने अुसका अंग्रेजीमें अनुवाद किया। यह अनुवाद भी बड़ा दिलचस्प है:

"मैं अपने विद्यार्थियों और मित्रोंको संबोधित करके कहती हूं कि मुझे आपसे अेक बड़ी जरूरी बात कहनी है। जिस महान आत्माका हम अितना अनुभव करते हैं, वह आज गांधीजीके शरीरमें मूर्तरूपसे हमारे सामने मौजूद है। जिस वाणीको सुननेका अभी हमें सौभाग्य मिलनेवाला है, वह वाणी आज दुनियामें सब जगह गूंज रही है। वे प्रेमसे बोलते हैं और सिर्फ मुहसे ही नहीं बोलते, बल्कि अुसमें अपना सारा जीवन अुंडेल देते हैं। यह अैसी चीज है जो कभी-कभी ही होती है; और अिसलिअे जब होती है तो हर आदमी अुसे सुनता है। गुरुवर! आज जो भाषा आपका स्वागत कर रही है, वह लेटिन जातियोंमें से अेक जातिकी है। वह पश्चिमके धार्मिक विचारोंकी जन्मभूमि रोमकी भाषा है और अुस पर मुझे गर्व है। मुझे अैसा लगता है कि यदि आज पूर्वके सम्मानमें मैं पश्चिमके इन विचारों और जीवनको मूर्तरूपमें रख सकी होती तो कितना अच्छा होता। मैं अपने विद्यार्थियोंको आपके सामने रखती हूं। ये मेरे विद्यार्थी ही नहीं, मेरे मित्र, मित्रोंके मित्र और अुनके सगे-सम्बन्धी भी यहां अिकट्ठे हुअे हैं। मेरे विद्यार्थियोंमें बहुतसे राष्ट्रोंके लोग हैं। यहां जो आये हुअे हैं, अुनमें ... दिल्ली अंग्रेज शिक्षक हैं। और बहुतसे भारतीय विद्यार्थी हैं; ... ..., डच, जर्मन, डेन्स, जेकोस्लोवेकियन, स्वीडिश, आस्ट्रियन, हंगेरि...

अमेरिकन और आस्ट्रेलियन विद्यार्थी हैं और न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, कनाडा और आयरलैण्डसे आये हुअे विद्यार्थी भी हैं।

"बालकोंके प्रेमसे ये यहां आये हैं। हे गुरु! दुनियाकी सभ्यता और बच्चोंके खयालकी जंजीरसे हम अेक-दूसरेके साथ बंधे हुअे हैं और अिसी कारणसे आज हम सब आपके पास आये हुअे हैं। हम बच्चोंको जीना, आध्यात्मिक जीवन बिताना सिखाते हैं, क्योंकि अुसीसे संसारमें शांति हो सकती है। अिसीलिअे हम सब यहां जीवनकी कलाके आचार्य और हम सबके विद्यार्थियों और अुनके मित्रोंके गुरुकी वाणी सुननेके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं। हमारे जीवनमें यह अेक स्मरणीय दिन साबित होगा। ये २४ अंग्रेज बच्चे, जिन्होंने खुद तैयारी करके आपके सामने काम किया है, अुस नये बालककी जीती-जागती निशानी हैं जो आगे पैदा होनेवाला है। हम सब आपके शब्दोंकी राह देख रहे हैं।"

गांधीजीकी हृतन्त्रीके सारे तार हिला डालनेमें अिन शब्दोंने बड़ा काम किया और अुस हृदय-कम्पनसे अुस महान अवसरके योग्य ही संगीत भी निकला। दुनियाके सभी हिस्सोंमें बसनेवाले माता-पिताओंके लिअे यह अेक सन्देश भी था और मुक्तिपत्र भी था। मैं अुसे यहां पूरा-पूरा देता हूं:

"मैडम, मैं आपके शब्दोंके भारसे दबा जा रहा हूं। पूरी नम्रताके साथ मुझे यह कबूल करना चाहिये कि यह सच है कि जीवनके हर पहलूमें मेरा प्रयत्न — फिर वह कितना ही थोड़ा क्यों न हो — हमेशा प्रेम प्रकट करनेका होता है। मैं अपने स्रष्टाके, जो मेरे विचारसे सत्य-स्वरूप है, दर्शन करनेके लिअे अधीर हूं; और मैंने अपने जीवनके शुरूमें ही यह खोज कर ली थी कि यदि मुझे सत्यका साक्षात्कार करना है, तो जानको जोखिममें डाल कर भी प्रेमधर्मका पालन करना चाहिये। और क्योंकि प्रभुने मुझे बच्चे दिये हैं, अिसलिअे मैं यह खोज भी कर सका कि प्रेमधर्मको बच्चे ही सबसे ज्यादा समझ सकते हैं और अुनके जरिये ही अुसे ज्यादा अच्छी तरह सीखा जा सकता है। यदि बच्चोंके माता-पिता बेचारे अज्ञान न होते तो वे पूरी तरह निर्दोष रहते। मुझे पूरा भरोसा है कि जन्मसे बच्चा बुरा नहीं होता। यह जानी हुअी बात है कि बच्चेके पैदा होनेके पहले और पीछे भी माता-पिता अुसके विकास-कालमें अच्छी तरह बर्ताव करें, तो स्वभावसे ही बच्चा भी सत्य और अहिंसा

धर्मका पालन करेगा। और अपने जीवनके आरंभकालसे ही, जब मैंने यह बात जानी तभीसे, मैं अपने जीवनमें धीरे-धीरे ' किन्तु स्पष्ट फेरबदल करने लगा। मैं यह बताना नहीं चाहता कि मेरा जीवन कैसे-कैसे तूफानोंसे होकर गुजरा है। किन्तु मैं सचमुच पूरी नम्रताके साथ अिस बातकी गवाही दे सकता हूं कि जिस हद तक मैंने अपने जीवनमें विचार, वाणी और कार्यमें प्रेम प्रगट किया है, अुसी हद तक मैंने वह शान्ति अनुभव की है जो समझी नहीं जा सकती। यह आीर्षा करने जैसी शान्ति मुझमें देखकर मेरे मित्र अुसे समझ नहीं सके और अुन्होंने मुझसे अिस अमूल्य धनका कारण जाननेके लिअे प्रश्न किया। मैं अुसके कारण स्पष्ट रूपमें नहीं बता सका। मैं तो सिर्फ अितना ही कहता था कि मित्र लोग मुझमें जो अितनी शान्ति देखते हैं, अुसका कारण हमारे जीवनके सबसे बड़े नियमको पालनेका मेरा प्रयत्न है।

"१९१५ में मैं जब भारत पहुंचा, तब मुझे सबसे पहले आपकी प्रवृत्तिका ज्ञान हुआ। अमरेली जैसे छोटे शहरमें मैंने माण्टेसोरी-पद्धतिसे चलती हुअी अेक छोटी पाठशाला देखी। अुससे पहले मैंने आपका नाम सुन था। अिसलिअे मुझे यह जाननेमें कठिनाअी नहीं हुअी कि यह पाठशाल आपकी शिक्षा-पद्धतिके ढांचेका ही अनुसरण करती थी, अुसकी आत्मा नहीं। यद्यपि वहां थोड़ा-बहुत अीमानदारीसे प्रयत्न किया जाता था, तो भी मैंने देखा कि अुसमें बहुत कुछ झूठा दिखावा ही था।

"बादमें तो मैं अैसी कअी शालाओंके संसर्गमें आया। और जैसे जैसे मैं अुनके ज्यादा संसर्गमें आता गया, वैसे वैसे मैं यह ज्यादा स्पष्ट लगा कि यदि बच्चेको शिशु-जगतमें साम्राज्य भोगनेवाले नहीं, बल्कि मनुष्यत्वको शोभा देनेवाले कुदरतके नियमों द्वारा शिक्षा दी जाय, तो अुनकी नींव सुन्दर और अच्छी होगी। बच्चोंको वहां जिस ढंगसे शिक्षा दी जाती थी, अुससे मुझे सहज ही अैसा लगा कि भले ही अुन्हें अच्छी तरह शिक्षा नहीं दी जाती, फिर भी अुसकी मूल पद्धति तो अिन मूल नियमोंके मुताबिक ही सोची गअी थी। अुसके बाद तो मुझे आपके बहुतसे शिष्योंसे मिलनेका मौका मिला। अुनमें से अेकने अिटलीका सफर करके आपका आशीर्वाद भी लिया था। मैं यहां अिन बच्चोंसे और आप सबसे मिलनेकी आशा रखता था और अिन बच्चोंको देखकर मुझे बड़ी खुशी हुअी है। अि

बालकोंके बारेमें मैंने कुछ जाननेका प्रयत्न किया है। यहां मैंने जो कुछ देखा असकी कुछ झलक मुझे बरमिंघममें *मिल गयी थी। वहां अेक* शाला है। अिस शाला और अुस शालामें फर्क है। किन्तु वहां भी मानवता प्रकाशमें आनेका प्रयत्न करती दिखाओी देती है। यहां भी मैं वही देखता हूं। बच्चोंको छुटपनसे ही मौनके गुण समझाये जाते हैं। और बच्चे अपने शिक्षकके अेक अिशारेसे ही अैसी शांतिसे कि सुअीके गिरनेकी आवाज भी सुनाओी दे जाय, अेकके पीछे अेक जिस तरह आये, अुसे देखकर मुझे जैसा आनन्द हुआ अुसका वर्णन मैं नहीं कर सकता। कदम मिलाकर चलने-फिरनेके प्रयोग देखकर मुझे बड़ी खुशी हुआी है। जब मैं अिन बच्चोंके प्रयोग देख रहा था, तब मेरा दिल भारतके गावोंके अधभूखे बच्चोंकी तरफ दौड़ गया। और मैंने अपने मनसे पूछा, 'क्या सचमुच अैसा हो सकता है कि मैं ये पाठ अुन्हें सिखाअूं और आपके तरीकेसे जो शिक्षा दी जाती है, वह शिक्षा अुन बालकोंको दूं?' भारतके गरीबसे गरीब बच्चोंमें हम अेक प्रयोग कर रहे हैं। वह प्रयोग कितना सफल होगा, यह मैं नहीं जानता। भारतके झोंपडोंमें रहनेवाले बच्चोंको सच्ची शक्तिशाली शिक्षा देनेका प्रश्न हमारे सामने है और रुपये-पैसेका कोओी साधन हमारे पास नहीं है।

"हमें तो शिक्षकोंकी स्वेच्छासे दी हुआी मदद पर आधार रखना पड़ता है, और जब मैं शिक्षकोंको ढूंढता हूं तो बहुत थोड़े ही मिलते हैं। *खास तौर पर अैसे शिक्षक तो बहुत ही कम मिलते हैं, जो बच्चोंको समझ-*कर, अुनके भीतरकी विशेषताओंका अध्ययन करके, अुन्हें अपने आत्म-सम्मान पर छोड़कर और अुनकी अपनी शक्तिसे काम लेनेके रास्ते लगाकर अुनके भीतरकी अुत्तमसे अुत्तम शक्तियोंको *प्रगट कर सकें। सैंकड़ों, मैं तो हजारों* कहता हूं, बच्चोंके अनुभवसे मैं कहता हूं और आप अुस पर विश्वास कीजिये कि आपसे और मुझसे बच्चोंमें सम्मानकी ज्यादा अच्छी भावना होती है। यदि हम नम्र बन जायं, तो जीवनके बड़ेसे बड़े पाठ *बड़ी अुम्रके* विद्वान मनुष्योंसे नहीं, बल्कि अज्ञान कहे जानेवाले बच्चोंसे सीखेंगे। ओसाने जब यह कहा था कि बच्चोंके मुहमें सयानापन होता है, तब अुन्होंने अूंचेसे अूंचा और सुन्दरसे सुन्दर सत्य प्रकट *किया था। मेरा अिसमें विश्वास* है और मैंने अपने अनुभवसे देखा है कि यदि हम नम्रताके साथ और निर्दोष बनकर बच्चोंके पास जायं तो हम अुनसे जरूर सयानापन सीखेंगे।

"मुझे आपका समय नहीं लेना चाहिये। अिस समय मेरे मनमें जिस प्रश्नने अुथल-पुथल मचा रखी है, वही प्रश्न मैंने आपके सामने रखा है। और वह यह है कि करोड़ों बच्चोंके भीतरके अच्छेसे अच्छे गुणोंको किस तरह प्रगट किया जाय। किन्तु मैंने यह अेक पाठ सीखा है: मनुष्यके लिअे जो असंभव है, वह अीश्वरके लिअे बच्चोंका खेल है; और अुसकी सृष्टिके अेक-अेक अणुके भाग्य-विधाता परमेश्वरमें हमारी श्रद्धा हो, तो बेशक हर चीज संभव हो सकती है। और अिसी आखिरी आशामें मैं जीता हूं, अपना समय बिताता हूं और प्रभुकी अिच्छाके आगे सिर झुकाता हूं। और अिसीलिअे मैं फिर कहता हूं कि जैसे आप बच्चोंके प्रेमके कारण अपनी असंख्य संस्थाओंके जरिये बच्चोंको अच्छेसे अच्छा बनानेवाली शिक्षा देनेका प्रयत्न करती हैं, वैसे ही मैं आशा रखता हूं कि धनवान और साधन-सम्पन्न लोगोंके बच्चोंको ही नहीं, बल्कि गरीबोंके बच्चोंको भी अिसी तरहकी शिक्षा जरूर दी जा सकेगी। सचमुच आपका यह कथन सही है कि हम संसारमें सच्ची शान्ति चाहते हों, हमें लड़ाअीसे सचमुच लड़ना हो, तो हमें बच्चोंसे ही शुरुआत करनी चाहिये। यदि वे स्वाभाविक और निर्दोष तरीके पर पल-पुसकर बड़े हों, तो हमें लड़ना न पड़े, हमें बेकार प्रस्ताव पास न करने पड़ें। परन्तु जाने-अनजाने सारे संसारको जिस शान्ति और प्रेमकी भूख है, वह प्रेम और शान्ति दुनियाके कोने-कोनेमें जब तक न फैल जाय, तब तक हम प्रेमसे प्रेम और शान्तिसे शान्ति प्राप्त करते जायेंगे।"

नवजीवन, २२-११-'३१

४१

लड़कियोंकी शिक्षा

['नडियादका स्मरणीय भाषण' नामक लेखसे।]

आज हम कन्या-विद्यालय खोलनेको अिकट्ठे हुअे हैं। जैसे मैंने बाल-शिक्षाको घोटकर पी लिया है, वैसे ही मैं कन्या-शिक्षाके बारेमें भी कह सकता हूं। किन्तु बड़े-बड़े पुरुष यह कैसे मानें? मुझसे भी अिस तरह दावा नहीं किया जा सकता। आजकलके वातावरणमें लड़कियोंकी शिक्षाकी बात करना आसान नहीं। सब लोग ही कहते हों कि हम लड़कियोंकी शिक्षा

दे सकते हैं, किन्तु मैं अुन्हें पूछूंगा कि आपने अपनी स्त्रीको, अपनी लड़कीको शुद्ध शिक्षा दी है? जिसने अपनी स्त्री या बहन या माता या सासके साथ अपना धर्म नहीं पाला, वह औरोंकी लड़कियों या बहनोंको क्या सिखायेगा? वे बी० अे०, अेम० अे० भले ही हो जाय, परतु मैं तो अुन्हें अिसी कसौटी पर कसूंगा। लड़कियोंकी शिक्षाकी पुस्तकें लिखनेवालोंके बारेमें मैं जानना चाहूंगा कि वे कैसे पति थे, कैसे पिता थे।

आप मुझे कहेंगे कि यह विद्यालय विट्ठलभाअीके स्मारकके तौर पर खोलना है, परन्तु अभी तक विट्ठलभाअीके बारेमें तो मैंने कुछ कहा ही नहीं। विट्ठलभाअीका स्मारक नडियादमें क्या बनाया जाय? अुनकी सेवाका क्षेत्र तो लम्बा-चौड़ा था। अुन्होंने बम्बअी कारपोरेशनके अध्यक्षपदको सुशोभित किया और बम्बअी और शिमलेमें वे राष्ट्रीय दृष्टि सामने रखकर ही लड़ते रहे। विट्ठलभाअीके और मेरे बीच मतभेद जारी रहा, किन्तु अुन्हीं विट्ठलभाअीने अमेरिकामें मेरी दुंदुभी बजाअी। अिसका कारण यह था कि हम दोनोंके बीच अेक चीज समान थी — वह है देशके लिअे जीने और मरनेकी लगन। अुन्होंने अेक पैसा भी अपने पास नहीं रखा। जो जमा किया वह भी देशके लिअे ही छोड़ गये। जब कमाते थे तब ४०,००० रु० दिये, जिसका ब्याज अभी तक चढ़ रहा है। अैसे आदमीका स्मारक बनाना कोअी खेल है? लड़कियोंकी शिक्षाका आदर्श तो यह है कि हमारे यहां शिक्षा पाअी हुअी लड़की न गुड़िया बने, न सुन्दर नाच करनेवाली, बल्कि अच्छी स्वयंसेविका बने। आप लोगोंने पटेलोंके नाते अुनका स्मारक बनानेका सोचा है। वे पटेल थे या क्या थे, यह तो भगवान जाने। मैं तो जब पहले-पहल अुनसे मिला था, तब अुनकी फैज टोपी और लम्बी दाढ़ी देखकर मैंने अुन्हें मुसलमान समझा था। मुझे पूछनेकी आदत न थी, अिसलिअे पूछा भी नहीं। सबको भाअी माननेवाला जात-पात क्यों पूछे? विट्ठल-भाअीको पटेल कह कर अुनकी हंसी करनी हो तो भले ही कीजिये। अुन्होंने पटेलोंके किस रीत-रिवाजका पालन किया? अुन्हें पटेलोंका कौनसा समूह अपनेमें समा सकता है? यदि आपने विट्ठलभाअी और वल्लभभाअीका ठेका लिया हो, तो निश्चित मानना कि आपका दिवाला निकल कर रहेगा। यदि आप विट्ठलभाअीको अपना मानेंगे, तो आपको ढेड़, भंगी, धाराला सबको अपना मानना पड़ेगा। अुन्होंने भंगी और पटेलके बीचमें कभी भेद नहीं

माना था। अुनका स्मारक बनाना चाहते हों, तो आपको यह संस्था अैसी बनानी होगी, जिससे खेड़ाकी शोभा नहीं बल्कि भारतकी शोभा बढ़े। और अैसी सेविकायें पैदा करनी होंगी जो भारतकी सेवा करें। यह आदर्श रखकर आप अिस संस्थाको चलायेंगे, तभी विट्ठलभाअीका सच्चा स्मारक बना माना जायगा।

अिसे चलाना आसान नहीं। किन्तु आपके आग्रह और मोहके वश होकर मैं यहां आ गया। खेड़ा वह जिला है, जहांके पुण्यस्मरण मेरे दिलमें भरे हैं, जहां मैं गांवोंमें घूमा, घोड़े पर घूमा, पैदल घूम कर खूब खाक छानी, जहां मैं अेक बार मौतके मुहमें जा पड़ा था और फूलचन्द जैसे स्वयंसेवकने मेरा पाखाना साफ किया था। यहां आनेसे मैं कैसे अिनकार कर सकता था? मुझसे यह कैसे कहा जा सकता था कि मैं विद्यालय नहीं खोलूंगा? यह सच है कि अिसे खोलनेकी लगन मुझमें नहीं थी; क्योंकि मैं धोखा खाया हुआ आदमी हूं। फिर भी यह माननेके कारण कि विश्वाससे दुनिया चलती है, मैंने मंजूर कर लिया।

हरिजनबन्धु, ९–६–'३५

४२

स्त्रियोंकी शिक्षा

१

[बम्बअीके भगिनी-समाजके दूसरे वार्षिक सम्मेलनके मौके पर (सन् १९१८) अध्यक्षपदसे दिये हुअे भाषणसे।]

यों तो अक्षरज्ञानके बिना बहुतसे काम हो सकते हैं, फिर भी मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि अक्षरज्ञानके बिना काम नहीं चल सकता। विद्यासे शिक्षामें बुद्धि बढ़ती है, तेज होती है और अुनसे हमारी परमार्थ करनेकी शक्ति बहुत बढ़ती है। अिस ज्ञानकी कीमत मैंने कभी अूंची नहीं लगाअी। मैंने अुसे सिर्फ अुचित जगह देनेका प्रयत्न किया है। मैंने समय-समय पर बताया है कि स्त्रीमें विद्याका अभाव अिस बातका कारण नहीं होना चाहिये कि पुरुष स्त्रीसे मनुष्य-समाजके स्वाभाविक अधिकार छीन ले या अुन्हें वे

अधिकार न दे। किन्तु अिन स्वाभाविक अधिकारोंको काममें लानेके लिअे, अुनकी शोभा बढ़ानेके लिअे और अुनका प्रचार करनेके लिअे विद्याकी जरूरत अवश्य है। साथ ही, विद्याके बिना लाखोंको शुद्ध आत्मज्ञान भी नहीं मिल सकता। बहुतसी पुस्तकोंमें निर्दोष आनंद लेनेका जो अखूट भंडार भरा है, वह भी विद्याके बिना हमें नहीं मिल सकता। विद्याके बिना मनुष्य जानवरके बराबर है, यह अतिशयोक्ति नहीं बल्कि शुद्ध चित्र है। अिसलिअे पुरुषकी तरह ही स्त्रीको भी विद्या जरूर चाहिये। मैं यह नहीं मानता कि जिस तरहकी शिक्षा पुरुषको दी जाती है, अुसी तरहकी शिक्षा स्त्रीको भी मिलनी चाहिये। पहले तो, जैसा मैंने दूसरी जगह बताया है, हमारी सरकारी शिक्षा बहुत हद तक भूलभरी और हानिकारक मानी गअी है। यह दोनों वर्गोंके लिअे बिलकुल त्याज्य है। अिसके दोष दूर हो जायं तब भी मैं यह नहीं मानूंगा कि वह स्त्रियोंके लिअे बिलकुल ठीक ही है। स्त्री और पुरुष अेक दरजेके हैं, परन्तु अेक नहीं, अुनकी अनोखी जोड़ी है। वे अेक-दूसरेकी कमी पूरी करनेवाले हैं और दोनों अेक-दूसरेका सहारा हैं। यहां तक कि अेकके बिना दूसरा रह नहीं सकता। किन्तु यह सिद्धान्त अूपरकी स्थितिमें से ही निकल आता है कि पुरुष या स्त्री कोअी अेक अपनी जगहसे गिर जाय तो दोनोंका नाश हो जाता है। अिसलिअे स्त्री-शिक्षाकी योजना बनानेवालेको यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये। दम्पतीके बाहरी कामोंमें पुरुष सर्वोपरि है। बाहरी कामोंका विशेष ज्ञान अुसके लिअे जरूरी है। भीतरी कामोंमें स्त्रीकी प्रधानता है। अिसलिअे गृहव्यवस्था, बच्चोंकी देखभाल, अुनकी शिक्षा वगैराके बारेमें स्त्रीको विशेष ज्ञान होना चाहिये। यहां किसीको कोअी भी ज्ञान प्राप्त करनेसे रोकनेकी कल्पना नहीं है। किन्तु शिक्षाका क्रम अिन विचारोंको ध्यानमें रखकर न बनाया गया हो, तो दोनों वर्गोंको अपने-अपने क्षेत्रमें पूर्णता प्राप्त करनेका मौका नहीं मिलता।

स्त्रियोंको अंग्रेजी शिक्षाकी जरूरत है या नहीं, अिस बारेमें भी दो बातें कहनेकी जरूरत है। मुझे अैसा लगा है कि हमारी मामूली पढ़ाअीमें स्त्री या पुरुष किसीके लिअे भी अंग्रेजी जरूरी नहीं। कमाअीके खातिर या राजनीतिक कामोंके लिअे ही पुरुषोंको अंग्रेजी भाषा जाननेकी जरूरत हो सकती है। मैं नहीं मानता कि स्त्रियोंको नौकरी ढूंढने या व्यापार करनेकी झंझटमें पड़ना चाहिये। अिसलिअे अंग्रेजी भाषा थोड़ी ही स्त्रियां सीखेंगी।

और जिन्हें सीखना होगा वे पुरुषोंके लिअे खोली हुअी शालाओंमें ही सीख सकेंगी। स्त्रियोंके लिअे खोली हुअी शालामें अंग्रेजी जारी करना हमारी गुलामीकी अुम्र बढ़ानेका कारण बन जायगा। यह वाक्य मैंने बहुतोंके मुंहसे सुना है और बहुत जगह सुना है कि अंग्रेजी भाषामें भरा हुआ खजाना पुरुषोंकी तरह स्त्रियोंको भी मिलना चाहिये। मैं नम्रताके साथ कहूंगा कि असमें कहीं न कहीं भूल है। यह तो कोअी नहीं कहता कि पुरुषोंको अंग्रेजीका खजाना दिया जाय और स्त्रियोंको न दिया जाय। जिसे साहित्यका शौक है, वह अगर सारी दुनियाका साहित्य समझना चाहे, तो असे रोककर रखनेवाला अिस दुनियामें कोअी पैदा नहीं हुआ। परन्तु जहां आम लोगोंकी जरूरतें समझकर शिक्षाका क्रम तैयार किया गया हो, वहां अूपर बताये हुअे साहित्य-प्रेमियोंके लिअे योजना तैयार नहीं की जा सकती। अैसे लोगोंके लिअे हमारी अुन्नतिके समयमें यूरोपकी तरह अलग-अलग स्वतंत्र संस्थायें होंगी। सुव्यवस्थित क्रममें जब बहुतसे स्त्री-पुरुष शिक्षा पाने लगेंगे और शिक्षा न पाये हुअे अिक्के-दुक्के ही रह जायंगे, तब दूसरी भाषाके साहित्यका आनंद देनेवाले हमारी भाषाके अनेकों लेखक निकल आयेंगे। यदि हम साहित्यका रस हमेशा अंग्रेजी भाषासे ही लेते रहेंगे, तो हमारी भाषा सदा निकम्मी रहेगी, यानी हम हमेशा निकम्मी प्रजा बने रहेंगे। यदि अिस अुपमाके लिअे मुझे माफ किया जा सके, तो मुझे कहना चाहिये कि पराअी भाषाके साहित्यसे ही आनन्द लेनेकी आदत चोरीके मालसे आनन्द लूटनेकी चोरकी आदत जैसी है। पोपने जो आनन्द अिलियडसे लिया, वह अुसने अपनी जातिके सामने अलौकिक अंग्रेजीमें पेश कर दिया; फिट्ज़जेराल्डने जो आनन्द अुमर खय्यामकी रुबाअियातसे लूटा, वह अुसने अितनी प्रभावशाली अंग्रेजीमें व्यक्त किया कि अुसीके कारण अुसके काव्यकी रक्षा लाखों अंग्रेज बाअिबलकी तरह करते हैं। अेडविन आरनॉल्डने भगवद्गीतासे रसके घूंट पीये थे। अुसे पीनेके लिअे अुसने जनतासे संस्कृत भाषा सीखनेका आग्रह नहीं किया, बल्कि अपनी भाषामें अपनी आत्माको अुड़ेलकर और संस्कृत तथा पाली भाषाके साथ शोभा देनेवाली अंग्रेजी भाषामें घोलकर जनताको अपना रस पिलाया। हम बहुत पिछड़े हुअे हैं, अिसलिअे यह प्रवृत्ति हममें 'बहुत ज्यादा होनी चाहिये। जब मेरे बताये अनुसार हमारा शिक्षाक्रम तैयार होगा और अुस पर हम दृढ़तासे चलेंगे तभी वह प्रवृत्ति संभव होगी। यदि हम अंग्रेजीका गलत मोह

छोड सकें और अपनी या अपनी भाषाकी शक्तिके बारेमें अविश्वास करना छोड दें तो यह काम कठिन नही है। स्त्री या पुरुषको अंग्रेजी भाषा सीखनेमें अपना समय नही लगाना चाहिये। यह बात मैं अुनका आनंद कम करनेके लिअे नही कहता, बल्कि अिसलिअे कहता हू कि जो आनंद अंग्रेजी शिक्षा पानेवाले बडे कष्टसे लेते हैं वह हमें आसानीसे मिले। पृथ्वी अमूल्य रत्नोंसे भरी है। सारे साहित्य-रत्न अंग्रेजी भाषामें ही नही हैं। दूसरी भाषाअें भी रत्नोंसे भरी हैं। मुझे ये सारे रत्न आम जनताके लिअे चाहिये। अैसा करनेके लिअे अेक ही अुपाय है और वह यह है कि हममें से कुछ अैसी शक्ति-वाले लोग वे भाषायें सीखें और अुनके रत्न हमें अपनी भाषामें दें।

२

[अहमदाबादकी गुजरात-साहित्य-सभाने गुजरातके खास-खास नेताओं और संस्थाओंको स्त्री-शिक्षाके बारेमें कुछ प्रश्न भेजकर अुनके अुत्तर मागे थे। गाधीजीने अिन प्रश्नोंके जो अुत्तर दिये थे, अुनमें से कुछ यहा दिये जाते हैं।]

प्राथमिक शिक्षा पूरी होनेके बाद लड़कीको शिक्षा पानेके लिअे आजकल चार-पाच साल और मिलते है। अिस अर्सेमें अंग्रेजी भाषा द्वारा शिक्षा दी जाय या मातृभाषामें अूची शिक्षा दी जाय, अिस बारेमें अपनी राय देते हुअे गाधीजी कहते हैं: मुझे तो अैसा लगता है कि अंग्रेजी शिक्षा देना अुनकी हत्या करनेके बराबर है। यह कभी सभव नही होगा कि लाखों स्त्रियां अच्छीसे अच्छी बातें अंग्रेजीमें सोचें या व्यक्त करें। यदि हो भी सके तो वह अच्छी बात नही है।

जिन स्त्रियोंके लिअे शिक्षाकी योजना तैयार करनी है, अुन्हें यदि मातृभाषा द्वारा अूंची शिक्षा मिलेगी, तो वे गृह-संसारको सोनेका बना देंगी। अितना ही नही, वे अपनी बेपढ़ी-लिखी बहनों पर अपने चरित्रका असर डालकर अुनकी हर तरहसे सेवा कर सकेंगी।

सस्कृतके बारेमें गाधीजी लिखते हैं: मेरी राय है कि संस्कृत सिखाअी जा सके तो जरूर सिखानी चाहिये। किन्तु अिन चार-पाच बरसका अितना ज्यादा अुपयोग कर लेना है कि संस्कृतकी पढ़ाअीको प्रधानता नही दी जा सकती।

नैतिक और धार्मिक शिक्षाके बारेमें नीचे लिखा जवाब दिया है:

नीति और धर्म, अिन दोनोंमें मुझे कोअी भेद नहीं दीखता। यह जरूर लगता है कि धर्मकी शिक्षाकी बड़ी जरूरत है। किन्तु हिन्दू धर्म अितना सूक्ष्म है कि यह अेकाअेक नहीं कहा जा सकता कि अुसकी शिक्षा किस तरह दी जाय। मामूली तौर पर यह कहा जा सकता है कि गीता, रामायण, महाभारत और भागवत ये चार ग्रन्थ सर्वमान्य समझे जाते हैं। अिनका ज्ञान सिर्फ आध्यात्मिक विचारसे ही दिया जाय, तो अैसा मालूम होता है कि सब कुछ आ गया। अिस बारेमें शिक्षाकी योजना बनाते समय शिक्षकका चुनाव करने पर ही ज्यादा आधार रखना चाहिये।

'गुनर आवे त्यम तु रहे
ज्यम त्यम करीने हरिने लहे.'

अर्थात् दुनियामें तू जैसा भी चाहे रह, किन्तु किसी भी कीमत पर अीश्वरको प्राप्त करनेका ध्येय अपने सामने रख।

अखा भगतके अिस सिद्धान्तको ध्यानमें रखकर धार्मिक शिक्षा दी जाय तो वह सफल होगी।

लड़के-लड़कियोंको अेकसाथ पढ़ानेके बारेमें गांधीजी कहते हैं:

लड़के-लड़कियोंको साथ-साथ पढ़ानेका प्रयोग मैंने करके देख लिया है। वह बड़ा जोखिमभरा है। साधारण नियम यही हो सकेगा कि अलग-अलग शिक्षा दी जाय।

अध्यापिकाअें जितनी चाहिये अुतनी नहीं मिलतीं, अिसका क्या किया जाय? अिसके जवाबमें गांधीजी कहते हैं: जब तक हमारा यह आदर्श है कि हर पढ़ी-लिखी स्त्रीको शादी करनी ही चाहिये, तब तक अैसा लगता है कि अध्यापिकाओंकी कमी रहेगी ही।

विधवा स्त्रियोंमें से बढ़िया अध्यापिकाअें निकलनी चाहियें। किन्तु भारत जब तक विधवापनको अुसका योग्य दर्जा नहीं देता और जब तक पश्चिमी हवामें बहनेवाले हिन्दू ही स्त्री-शिक्षाकी योजना तैयार करते रहेंगे, तब तक विधवाओंमें से भी अुत्तम अध्यापिकाअें मिलनी मुश्किल होंगी। हमारी कितनी ही योजनाअें कुछ खास मर्यादाओंके सामने रुक जाती हैं— आगे चल नहीं सकतीं। अिसका कारण यह है कि सुधरे हुअे और दूसरे लोगोंके बीच जितना चाहिये अुतना सम्बन्ध नहीं है।*

* आत्मोद्धार (मराठी मासिक), भाग २, पृष्ठ १३५।

४३
लोक-शिक्षण

[सत्याग्रह आश्रमकी राष्ट्रीय पाठशालाके शिक्षकोंके हस्तलिखित पत्र 'विनिमय' के भाग २, अंक ३ से यह हिस्सा लिया गया है।]

लोक-शिक्षणका प्रश्न बच्चोंकी शिक्षासे भी ज्यादा अटपटा है। बच्चोंकी शिक्षाके लिअे हमारे पास कअी नमूने हैं। किन्तु अैसा कह सकते हैं कि लोक-शिक्षणके लिअे कुछ भी नहीं। विदेशोंसे भी हमें थोड़ा ही मार्गदर्शन मिल सकता है। भारतकी स्थिति ही न्यारी है।

अिस समय हमारे धर्म और कर्म दोनों ढीले पड़ गये हैं। अिसके सिवा कअी धर्म होनेसे जो झगड़े होते हैं सो अलग। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, अीसाअी वगैरा सबके लिअे अेक ही तरहकी शिक्षा नहीं हो सकती।

जैसे हिन्दू लोगोंको गोरक्षाके बारेमें हम जो बात समझायेंगे और अुनके सामने जो दलीलें देंगे, वे मुसलमानोंके सामने नहीं रखी जा सकतीं। और हिन्दू-मुसलमानके झगड़ेके बारेमें शिक्षा तो दोनोंको देनी ही होगी।

समाज-सुधारका काम भी अेक टेढ़ी खीर है। अलग-अलग धर्मोंमें अलग-अलग बुटेवें हैं। और सबकी अुपजातियोंमें भिन्नता है। कोअी यह न समझे कि मुसलमानों या अीसाअियोंमें अुपजातियां नहीं हैं। हिन्दुओंकी छूत सभीको लगी है।

राजनीति और स्वास्थ्य ये दो ही विषय अैसे हैं, जिनकी शिक्षा सबको अेक तरहकी दी जा सकती है। आर्थिक ज्ञानको मैं राजनीतिमें ही शामिल कर लेता हूं।

किन्तु राजनीतिका और यहां तो स्वास्थ्यका भी धर्मके साथ गहरा सम्बन्ध है। सभी धर्मोंवाले राजनीतिको अेक नजरसे नहीं देखते। बीमारियोंके अिलाज सोचनेमें धर्मकी भावनाओंका विचार अनिवार्य हो जाता है। लोक-शिक्षक सबको शक्तिके लिअे 'बीफ़-टी' पीनेकी शिक्षा नहीं दे सकता। पानी पीने वगैराके नियम वह मुसलमानोंके गले अेकदम नहीं अुतार सकता।

अैसी हालतमें लोक-शिक्षण कहांसे शुरू किया जाय और कहां तक अुसकी हद बांधी जाय? लोक-शिक्षणका अर्थ रात्रि-पाठशाला खोल कर पढ़े हुअे मजदूरोंको ककहरा सिखाना ही तो नहीं हो सकता।

नैतिक और धार्मिक शिक्षाके बारेमें नीचे लिखा जवाब दिया

नीति और धर्म, अिन दोनोंमें मुझे कोअी भेद नहीं दीखता। यह लगता है कि धर्मकी शिक्षाकी बड़ी जरूरत है। किन्तु हिन्दू धर्म अि सूक्ष्म है कि यह अेकाअेक नहीं कहा जा सकता कि अुसकी शिक्षा तरह दी जाय। मामूली तौर पर यह कहा जा सकता है कि गीता, रामा महाभारत और भागवत ये चार ग्रन्थ सर्वमान्य समझे जाते हैं। अिनका सिर्फ आध्यात्मिक विचारसे ही दिया जाय, तो अैसा मालूम होता है सब कुछ आ गया। अिस बारेमें शिक्षाकी योजना बनाते समय शिक्ष चुनाव करने पर ही ज्यादा आधार रखना चाहिये।

'मुतर आवे त्यम तु रहे
ज्यम त्यम करीने हरिने लहे.'

अर्थात् दुनियामें तू जैसा भी चाहे रह, किन्तु किसी भी कीमत अीश्वरको प्राप्त करनेका ध्येय अपने सामने रख।

अखा भगतके अिस सिद्धान्तको ध्यानमें रखकर धार्मिक शिक्षा दी ज तो वह सफल होगी।

लड़के-लड़कियोंको अेकसाथ पढ़ानेके बारेमें गांधीजी कहते हैं:

लड़के-लड़कियोंको साथ-साथ पढ़ानेका प्रयोग मैंने करके देख लिया है वह बड़ा जोखिमभरा है। साधारण नियम यही हो सकेगा कि अलग-अल शिक्षा दी जाय।

अध्यापिकायें जितनी चाहिये अुतनी नहीं मिलतीं, अिसका क्या कि जाय? अिसके जवाबमें गांधीजी कहते हैं. जब तक हमारा यह आदर्श कि हर पढ़ी-लिखी स्त्रीको शादी करनी ही चाहिये, तब तक अैसा लगत है कि अध्यापिकाओंकी कमी रहेगी ही।

विधवा स्त्रियोंमें से बढ़िया अध्यापिकायें निकलनी चाहिये। किन् भारत जब तक विधवापनको अुसका योग्य दर्जा नहीं देता और जब त पश्चिमी हवामें बहनेवाले हिन्दू ही स्त्री-शिक्षाकी योजना तैयार करते रहेंगे तब तक विधवाओंमें से भी अुत्तम अध्यापिकायें मिलनी मुश्किल होंगी। हमारी कितनी ही योजनायें कुछ खास मर्यादाओंके सामने रुक जाती हैं— आगे चल नहीं सकतीं। अिसका कारण यह है कि सुधरे हुअे और दूसरे लोगोंके बीच जितना चाहिये अुतना सम्बन्ध नहीं है।*

४३
लोक-शिक्षण

[सत्याग्रह आश्रमकी राष्ट्रीय पाठशालाके शिक्षकोंके हस्तलिखित पत्र 'विनिमय' के भाग २, अंक ३ से यह हिस्सा लिया गया है।]

लोक-शिक्षणका प्रश्न बच्चोंकी शिक्षासे भी ज्यादा अटपटा है। बच्चोंकी शिक्षाके लिअे हमारे पास कअी नमूने हैं। किन्तु अैसा कह सकते हैं कि लोक-शिक्षणके लिअे कुछ भी नहीं। विदेशोंसे भी हमें थोड़ा ही मार्गदर्शन मिल सकता है। भारतकी स्थिति ही न्यारी है।

अिस समय हमारे धर्म और कर्म दोनों ढीले पड़ गये हैं। अिसके सिवा कअी धर्म होनेसे जो झगड़े होते हैं सो अलग। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, अीसाअी वगैरा सबके लिअे अेक ही तरहकी शिक्षा नहीं हो सकती।

जैसे हिन्दू लोगोंको गोरक्षाके बारेमें हम जो बात समझायेंगे और अुनके सामने जो दलीलें देंगे, वे मुसलमानोंके सामने नहीं रखी जा सकतीं। और हिन्दू-मुसलमानके झगड़ेके बारेमें शिक्षा तो दोनोंको देनी ही होगी।

समाज-सुधारका काम भी अेक टेढ़ी खीर है। अलग-अलग धर्मोंमें अलग-अलग कुटेवें हैं। और सबकी अुपजातियोंमें भिन्नता है। कोअी यह न समझे कि मुसलमानों या अीसाअियोंमें अुपजातियां नहीं हैं। हिन्दुओंकी छूत सभीको लगी है।

राजनीति और स्वास्थ्य ये दो ही विषय अैसे हैं, जिनकी शिक्षा सबको अेक तरहकी दी जा सकती है। आर्थिक ज्ञानको मैं राजनीतिमें ही शामिल कर लेता हूं।

किन्तु राजनीतिका और यहां तो स्वास्थ्यका भी धर्मके साथ गहरा सम्बन्ध है। सभी धर्मोंवाले राजनीतिको अेक नजरसे नहीं देखते। बीमारियोंके अिलाज सोचनेमें धर्मकी भावनाओंका विचार अनिवार्य हो जाता है। लोक-शिक्षक सबको शक्तिके लिअे 'बीफ-टी' पीनेकी शिक्षा नहीं दे सकता। पानी पीने वगैराके नियम वह मुसलमानोंके गले अेकदम नहीं अुतार सकता।

अैसी हालतमें लोक-शिक्षण कहांसे शुरू किया जाय और कहां तक अुसकी हद बांधी जाय? लोक-शिक्षणका अर्थ रात्रि-पाठशाला खोल कर थके हुअे मजदूरोंको ककहरा सिखाना ही तो नहीं हो सकता।

तब लोक-शिक्षक क्या करे?

अभी तो मुझे दो ही रास्ते सूझते हैं : अेक तो यह कि लोक-शिक्षक किसी गांवमें जाकर बस जाय और लोगोंमें घुलमिल कर अुनकी सेवा करे। अिससे लोगोंकी सेवा होगी मानों अुन्हें शिक्षा मिलेगी।

दूसरा यह कि लोक-शिक्षणके लायक सरल और सस्ता साहित्य तैयार करके अुसका प्रचार किया जाय। अैसा साहित्य अपढ़ लोगोंको पढ़कर सुनानेका रिवाज शुरू करना चाहिये।

यदि लोक-शिक्षणकी यह कल्पना ठीक हो, तो पहला काम योग्य लोक-शिक्षक तैयार करना है। लोगोंमें अभी लोक-शिक्षण जैसी चीज ही नहीं है। यह कहा जा सकता है कि कांग्रेसने यह काम थोड़ा-बहुत अवश्य किया है। किन्तु वह शिक्षककी दृष्टिसे नहीं किया। शिक्षककी दृष्टि चरित्र पर रहेगी। राजनीतिज्ञकी दृष्टि सिर्फ राजनीति पर, स्वराज्य पर रहेगी। राजनीतिज्ञ मनुष्य कहेगा कि लोक-शिक्षण स्वराज्यके पीछे-पीछे चला आयेगा। लोक-शिक्षक छाती ठोककर कहेगा कि चरित्र हो तो स्वराज्य लो। हमारे सामने तो अभी शिक्षाकी ही दृष्टि है। राजनीतिज्ञ चरित्रहीन हो तो भी शायद काम चल सकता है; लोक-शिक्षक चरित्रहीन हो तो वह बिना खारेपनके नमक जैसा फीका होगा।

कि बहुना?

४४

म्युनिसिपैलिटियां और प्राथमिक शिक्षा

स० — "हमारी प्रौढ़-शिक्षाकी योजनामें ध्येय अक्षरज्ञानके प्रचारका होना चाहिये या अुपयोगी ज्ञान देनेका? स्त्रियोंकी शिक्षाका ध्येय क्या हो?"

गांधीजी — "जो अधेड़ अुमरके हो गये हैं और कोओ धन्धा करते हैं, अुन्हें पढ़ना-लिखना सीखनेकी खास जरूरत है। आम जनताकी निरक्षरता हिन्दुस्तानका पाप है, शर्म है। अुसे दूर करना ही चाहिये। बेशक, अक्षरज्ञानके प्रचारकी प्रवृत्ति मूलाक्षरके ज्ञानसे शुरू होकर वहीं रुक न जानी चाहिये। परन्तु म्युनिसिपैलिटियोंको अेकसाथ दो घोड़ों पर सवार होनेका लोभ नहीं करना चाहिये। वर्ना अुन्हें पछताना पड़ेगा। पुरुषोंकी तरह स्त्रियोंकी निरक्षरताका कारण केवल आलस्य और जड़ता नहीं है। स्त्रि-

ज्यादा बड़ा कारण तो अनादि कालसे स्त्रियोंको नीची माननेवाली सामाजिक रूढ़ि है। पुरुषने स्त्रीको अपनी सहायक और सहधर्मिणी बनानेके बदले अुसे घरका काम करनेवाली दासी और भोग-विलासका साधन बना रखा है। अिसके फलस्वरूप हमारे समाजका आधा अंग बेकार हो गया है। स्त्रीको प्रजाकी माता कहा गया है, यह बिलकुल ठीक है। पर हमने अुसके साथ यह जो घोर अन्याय किया है, अुसे दूर करना हमारा कर्तव्य है।"

कपड़वजके अेक प्रतिनिधिने पूछा: "आपने अमुक विषयों पर अलग-अलग मौकों पर अलग-अलग मत प्रकट किये हैं। अिसका दुरुपयोग करके हमारे विरोधी हमारी आजकी नीतिका विरोध करते हैं। अैसी स्थितिमें हमें क्या करना चाहिये?"

गांधीजीने कहा: "मेरे अलग-अलग मतोंमें परस्पर जो विरोध दिखाओ देता है वह आभास-मात्र है। अुनके बीच आसानीसे मेल बैठाया जा सकता है। सुरक्षित नियम तो यह है कि मेरा जो वचन कालक्रमके अनुसार अंतिम हो, अुसे पहलेके सब वचनोंसे ज्यादा प्रमाणित माना जाय और अुसका अनुसरण किया जाय। लेकिन मेरे किसी भी वचनको, यदि वह आपके दिल और दिमागको अपील न करता हो, आप माननेके लिअे बंधे हुअे नहीं हैं — भले वह आजका हो या पहलेका। अिसका अर्थ यह नहीं कि मेरा दृष्टिकोण गलत था। लेकिन जिस दृष्टिकोणको आप समझ या ग्रहण न कर सकें अुसे स्वीकार करना ठीक नहीं है।"

हरिजनबन्धु, २६-२-'३९

४५

प्रौढ़-शिक्षा

तिरुवेन्नेनेलूरकी गांधी-मिशन सोसायटीने अपने प्रौढ़-शिक्षा सम्बन्धी कार्यकी छमाही रिपोर्ट मेरे पास भेजी है। कुल मिलाकर १९४ प्रौढ़ व्यक्तियोंको शिक्षा दी गअी। लेकिन असलमें समस्या अुनके सामने यह है कि 'प्रौढ़ोंको जो शिक्षा मिलती है, अुसे टिकाये रखने लायक अुन्हें कैसे बनायें?' रिपोर्टमें लिखा है: "पहले सत्रमें जो पढ़ने आते थे, अुनमें से आधेके करीब यहांके कार्यकर्ताके पास अपने पाठोंको फिरसे पढ़नेके लिअे पहुंच गअे

है। अक्लमें वे पहलेसे जैसे निरक्षर बन गये हैं। कार्यकर्ता परेशान
किस भुपायसे भुनकी भिस भूल जानेकी आदतको छुड़ायें।"

कार्यकर्ताओंको परेशान होनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। थोड़ी
पढ़ाओ कराओ जायगी जैसी कि आज कराओ जाती है, तो भु
भूलनेका परिणाम जरूर आयेगा। शिक्षाको देहातियोंकी रोजमर्रा
रतोंके साथ जोड़ कर ही यह चीज दूर की जा सकती है। केवल
पढ़नेकी सूखी विद्याका ग्रामवासियोंके जीवनमें अब न तो कोओी स
और न हो सकता है। भुन्हें असा ज्ञान दिया जाना चाहिये,
भुन्हें रोजके व्यवहारमें भुपयोग करना पड़े। वह भुन पर जबरद
लादा जाय। भुनके भीतर भुसकी भूख होनी चाहिये। आज जो ज्ञान
मिलता है, भुसकी न तो भुन्हें चाह है और न कदर है। देहाति
देहाती गणित, देहाती भूगोल और देहाती अितिहास पढ़ाअिये। भुनके
भुपयोगका भाषाज्ञान — पढ़ना, लिखना, पत्र लिखना वगैरा — दी
असे ज्ञानको वे निधि समझकर अपनायेंगे और आगे बढ़ेंगे। असी कि
भुन्हें क्या लाभ हो सकता है, जो भुन्हें रोजमर्राके कामका कोओी
नहीं देतीं?

हरिजनसेवक, २२-६-'४०

४६

प्रौढ़-शिक्षाका नमूना

चरखा-जयन्तीके बारेमें सैकड़ों तार और खत मेरे पास आये
नमें से नीचेके खतने, जो अिन्दौरकी प्रौढ़-शिक्षा संस्थाकी तरफसे मि
मेरा ध्यान खींचा है:

"आजके शुभ अवसर पर हजारों बड़ी-बड़ी कीमती भे
मुबारकबादीके तार और खत आपकी सेवामें पहुंचे होंगे। हिन्दुस्तान
कोने-कोनेमें आपकी जन्मतिथि खुशीसे मनाओ जा रही है। हर जगह
खुशी मनानेका ढंग जरूर कुछ-न-कुछ निराला होगा। हरअेक म

अुसीकी हो। अिन सब बातोंको देखते हुअे हमारी यह हिम्मत नहीं पड़ती कि यहाके प्रौढ़-साक्षरता-प्रचारके कार्यकर्ताओंकी तरफसे आपकी सेवामें किसी तरहकी भेंट पेश की जाय। फिर भी अिस शुभ अवसरको यहां जिस तरह मनाया गया है अुसे लिखे बिना रहा नहीं जाता। आशा है कि हमारे अिस कार्यको ही भेंट समझकर आप स्वीकार करेंगे।

"ता० २-१०-'४७ से ८-१०-'४७ तक जयन्ती मनानेकी योजना अिस तरह बनाअी गअी है कि अिन सात दिनोंमें ८० गांवोंके लोग मिलकर आधाशीशीके झाड़ोंको जड़से अुखाड़कर नष्ट कर दें। अिन झाड़ोंने सारे जंगलको घेरकर पशुओंके चारेका नाश कर दिया है। अुन्हें अुखाड़कर पशुओंके जीवनको बचानेके लिअे, बिना किसी भेदभावके, अिस अवसरसे लाभ अुठाकर अेक बुरी चीजको यहांसे दूर कर दें। अिस योजनाके मुताबिक २ तारीखको छोटे-छोटे बच्चोंसे लेकर ६०-७० सालके बूढ़ोंने, मामूली गरीबसे लेकर सबसे बड़े धन वानने और अदने नौकरसे लेकर बड़े-से-बड़े सर्कलके अफसरने अिस कामको अपनाया और दोपहरसे पहले आधाशीशीके बड़े बड़े खेतोंके पौधोंको अुखाड़कर साफ कर दिया। अिससे चारेका बचाव, आधा शीशीके आगे बढ़ने पर रोक और अुसका खातमा हफ्तेके खतम होनेसे पहले हो जायगा। बजाय जुलूस निकालनेके यहाकी जनताके दिलमें प्रौढ़-शिक्षा द्वारा यह बैठाया जा रहा है कि अैसे अवसर पर कोअी अैसा काम करना चाहिये जो किसी भी जीवके लिअे लाभदायी हो। किसी भी तरहकी बुराअीके बीजको जड़मूलसे खोदनेका प्रयत्न प्रौढ़-शिक्षाकी तरफसे किया जा रहा है।

"अूपरकी जो भेंट आपकी सेवामें पेश की जा रही है अुस पर लोग चाहे हंस लें, लेकिन हम पूरे दिलसे यह विश्वास करते हैं कि आप हमें निराश नहीं करेंगे और अिसे जरूर स्वीकार करेंगे।"

मैं अिसे चरखा-जयन्ती मनानेका अेक अच्छा नमूना समझता हूं। सूत निकालनेके अर्थमें चरखा भले ही न चला। लेकिन चरखेमें जो चीजें आती हैं, अुनमें आधाशीशीके पेड़ोंको जड़से अुखाड़ डालना अवश्य शामिल है। अुसमें परमार्थ है। अैसे कामोंमें सहयोग होता है; अैसे काम छोटे-बड़े सब निरन्तर

करते रहें, तो सच्चा शिक्षण मिलता है और अुसके सुन्दर
होते हैं।

हरिजनसेवक, २६–१०–'४७

४७

ग्रामशिक्षा

१

'नवजीवन' की अिस पूर्तिसे काकासाहब कअी काम निक
हैं। अुनमें से अेक यह है कि पढ़ाअीकी जो अुम्र आम तौर
जाती है, अुसे पार किये हुअे, गृहस्थका जीवन बितानेवाले, काम
हुअे महागुजरातके दसेक हजार देहाती स्त्री-पुरुषोंको भी हो स
शिक्षा मिल जाय। अैसी शिक्षाका अुदार अर्थ करना चाहिये।
ज्ञानसे परे है। देहातियोंको आजकी दृष्टिसे बहुतसी बातोंमें
ज्ञान नहीं होता और अुसके बजाय अकसर अुनमें अज्ञानभरे वहम
बाला होता है। अुनके ये वहम दूर हों और अुन्हें अुपयोगी ज्ञान
मतलब अिस अतिरिक्त अंकके जरिये किसी हद तक काकासाहब
चाहते हैं।

स्वास्थ्यकी दृष्टिसे गांवोंकी हालत बहुत दयाजनक है। स्वास्थ
और आसानीसे मिलनेवाले ज्ञानका अभाव हमारी गरीबीका अेक
कारण है। यदि गांवोंका स्वास्थ्य सुधारा जा सके, तो सहजमें ल
बच सकते हैं और अुस हद तक लोगोंकी हालत सुधर सकती है
किसान जितना काम कर सकेगा, अुतना रोगी कभी नहीं कर
हमारे यहां मृत्युसंख्या मामूलीसे ज्यादा है। अिससे कम नुकसान नहीं

कहा जाता है कि स्वास्थ्यके बारेमें हमारी जो दयाजनक
है, अुसका कारण हमारी आर्थिक दीनता है; और यदि यह दूर
तो स्वास्थ्य अपने-आप ठीक हो जाय। सरकारको गालियां देने
दोष अुसीके सिर पर थोपनेके लिअे भले ही अैसा कहा जाय, किन्
कथनमें आधेसे भी कम सचाअी है। मेरी अनुभवसे बनी हुअी राय

अिस लेखमालाका अुद्देश्य यह है कि हमारे दोषोंसे होनेवाली अं *मामूली-से खर्चसे या बिना खर्चके सहज ही दूर हो सकनेवाली बीमारि* दूर करनेके साधन और रास्ते बताये जायं।

अिस दृष्टिसे हम अपने गावोंकी हालत देखें। हमारे बहुतसे ग घूरे जैसे दिखाअी देते हैं। अुनमें जहां-तहां लोग टट्टी-पेशाब करते हैं। घर आगनको भी नहीं छोड़ते। जहां टट्टी-पेशाब करते हैं, वहां अुसे मिट्टी ढंकनेकी कोअी चिन्ता नहीं करता। गावोंमें रास्ते कहीं भी अच्छे नहीं र जाते और जहां-तहां मिट्टीके ढेर पाये जाते हैं। अुनमें हमें और हम बैलोंको चलना भी मुश्किल हो जाता है। जहां पानीके तालाब होते वहां अुनमें बरतन साफ किये जाते हैं, अुनमें मवेशी पानी पीते हैं, नहा हैं और पड़े रहते हैं; अुनमें बच्चे और बड़े भी आबदस्त लेते हैं। अुन पासकी ज़मीन पर वे शौच तो जाते ही हैं। यही पानी पीने व भोज बनानेके काममें लिया जाता है।

मकान बनानेमें किसी भी तरहका नियम नहीं पाला जाता। मका बनाते समय न पड़ोसीके आरामका विचार किया जाता है, न यह विच किया जाता है कि रहनेवालोंको हवा-रोशनी मिलेगी या नहीं।

गाववालोंके बीच सहयोगका अभाव होनेके कारण अपने स्वास्थ्य लिअे जरूरी चीजें भी वे पैदा नहीं करते। गावोंके लोग अपने फाल समयका अच्छा अुपयोग नहीं करते या अुन्हें करना ही नहीं आता। अिसलि अुनकी शारीरिक और मानसिक शक्ति कम होती है।

स्वास्थ्यके बारेमें सामान्य ज्ञान न होनेसे जब बीमारियां आती तब देहाती हमेशा घरेलू अुपाय करनेके बजाय अकसर जादू-टोने करवा हैं, या मंतर-जंतरके जालमें फंसकर हैरान होते हैं; रुपया खर्च करते और बदलेमें रोग बढ़ाते हैं।

अिन सब कारणोंकी और अिनके बारेमें क्या हो सकता है अुस जाच अिस लेखमालामें हम करेंगे।*

१८-८-'२९

* यह लेखमाला 'गामडानी वहारे' नामसे गुजरातीमें पुस्तकके रूप प्रकाशित हो चुकी है।

२

सर्वांगीण शिक्षा

सच्ची बात यह है कि गांवोंके लोग बिल्कुल ही निराश
है। अुन्हें शक होता है कि हरअेक अनजान आदमी अुनका गला
चाहता है और अुन्हें चूसनेके लिअे ही अुनके पास जाता है। बुद्धि
शरीरकी मेहनतका सम्बन्ध टूट जानेके कारण अुनकी सोचनेकी
बिलकुल खतम हो गअी है। वे अपने कामके घटोंका अच्छेसे अच्छा अु
नहीं करते। अैसे गांवोंमें ग्रामसेवकको प्रेम और आशाके साथ प्रवेश
चाहिये और मनमें पक्का भरोसा रखना चाहिये कि जहां स्त्री-पुरुष
लगाये बिना कड़ी मेहनत करते हैं और आधे साल बेकार बैठे रह
वहां मैं स्वयं बारहों महीने काम करके और बुद्धिके साथ श्रमका
बिठाकर ग्रामवासियोंका विश्वास प्राप्त किये बिना और अुनके बीचमें
मजदूरी करके अीमानदारीके साथ और अच्छी तरह रोजी कमायें
नहीं रहूंगा।

किन्तु ग्रामसेवाका अुम्मीदवार कहता है: "मेरे बच्चों और अु
शिक्षाका क्या होगा?" यदि अिन बच्चोंको आजकलके ढंगकी शिक्षा
हो, तो मैं कोअी रास्ता नहीं बता सकता। अुन्हें नीरोग, बहादुर, अी
दार, बुद्धिशाली और माता-पिता द्वारा पसन्द किये हुअे स्थानमें जब
तब गुजारा करनेकी शक्तिवाले देहाती बनाना हो, तो अुन्हें माता-पि
घर पर ही सर्वांगीण शिक्षा मिलेगी। अिसके सिवा जब वे समझने ल
और बाकायदा हाथ-पैरोंको काममें लेने लगेंगे, तबसे कुटुम्बकी कमा
कुछ न कुछ वृद्धि करने लगेंगे। सुघड़ घरके बराबर दूसरी कोअी शा
नहीं होती और अीमानदार तथा अच्छे गुणोंवाले माता-पिता जैसा को
शिक्षक नहीं होता। आजकी हाअीस्कूलकी शिक्षा देहातियों पर अेक ब
बोझ है। अुनके बच्चोंको वह कभी नहीं मिल सकेगी; और भगवानकी कृ
यदि अुन्हें सुघड़ घरकी शिक्षा मिली होगी, तो अुस शिक्षाकी कमी अु
कभी खटकेगी नहीं। ग्रामसेवक या सेविकामें सुघड़ता न हो और सु
घर चलानेकी शक्ति न हो, तो यही अच्छा है कि वह ग्रामसेवा
सौभाग्य और सम्मान लेनेका लोभ न रखे।

४८

पाठ्यपुस्तकें

१

आजकल शालाओंमें, खासकर बच्चोंके लिअे, जो पाठ्यपुस्तकें काम ली जाती हैं, वे ज्यादातर हानिकारक नहीं तो निकम्मी जरूर होती है अिसमें अिनकार नहीं किया जा सकता कि अिनमें से बहुतेरी लच्छेदा भाषामें लिखी होती हैं। जो अंग्रेजी पाठ्यपुस्तकें स्कूलोंमें चलती है, अुनक बात की जाय तो जिन लोगों और जिन परिस्थितियोंके लिअे वे लिखं जाती हैं, अुनके लिअे वे बहुत अच्छी भी हो सकती हैं। किन्तु ये पुस्तक भारतके लड़के-लड़कियोंके लिअे या भारतके वातावरणके लिअे नहीं लिखं जाती। जो पुस्तकें भारतके बच्चोंके लिअे लिखी जाती है, वे भी ज्यादात अंग्रेजीकी अधकचरी नकल होती है; और अुनसे विद्यार्थियोंको जो चीज मिलनी चाहिये वह नहीं मिलती। अिस देशमें जैसा प्रान्त हो और जैसं बच्चोंकी सामाजिक हालत हो वैसी अुनकी शिक्षा होनी चाहिये। जैसे हरिजन बालकोंको शुरूमें तो दूसरे बच्चोंसे कुछ अलग ही तरहकी शिक्ष मिलनी चाहिये।

अिसलिअे मैं अिस फैसले पर पहुंचा हूं कि पाठ्यपुस्तकोंकी जरूर विद्यार्थियोंसे शिक्षकोंको ज्यादा है; और हर शिक्षक अपने विद्यार्थियोंक सच्चे दिलसे पढ़ाना चाहता हो, तो अुसे अपने पास पड़ी हुअी सामग्री से रोज पाठ तैयार करने होंगे। ये पाठ भी अैसे तैयार करने पड़ेंगे, जिनवे द्वारा अुसके वर्गके बच्चोंकी विशेषताओंके साथ अुनकी खास जरूरतोंका मेल बैठे।

सच्ची शिक्षा लड़कों और लड़कियोंके भीतरी जौहरको प्रगट करने है। यह चीज विद्यार्थियोंके दिमागमें निकम्मी बातोंकी खिचड़ी भर देने कभी पार नहीं पड़ेगी। अैसी बातें विद्यार्थियोंके लिअे बोझ बन जाती है अुनकी स्वतंत्र विचार-शक्तिको मार देती है और विद्यार्थियोंको मशीन बन देती हैं। यदि हम स्वयं अिस पद्धतिके शिकार न बने होते, तो आ लोक-शिक्षण देनेका जो ढंग खास तौर पर भारतमें जारी है, अुस होनेवाले नुकसानका खयाल हमें कभीका हो गया होता।

अिसमें शक नहीं कि बहुतसी संस्थाओंने अपनी-अपनी पाठ्यपु
तैयार करनेका प्रयत्न किया है। अिसमें अुन्हें थोड़ी-बहुत सफलता भी मि
है। किन्तु मैं मानता हूं कि ये पाठ्यपुस्तकें अैसी नहीं, जो देशकी स
जरूरतोंको पूरा कर सकें।

मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने जो विचार यहां प्रगट किये
वे पहले-पहल मुझीको सूझे हैं। मैंने ये विचार हरिजन पाठशाला
संचालकोंके लाभके लिअे यहां जाहिर किये हैं, जिनके सामने भगीरथ क
पड़ा है। हरिजन पाठशालाओंके संचालक और शिक्षक अितनेसे संतोष
मान सकते कि वे अपने विद्यार्थियोंसे मशीनकी तरह काम करा लें
विद्यार्थी नियत की हुअी पुस्तकोंसे जैसे-तैसे अूपरी और तोतेका-सा
पा लें। अुन्होंने बड़ी जिम्मेदारी सिर पर ली है और अुसे हिम्मत, होशिय
और अीमानदारीसे अुन्हें निभाना चाहिये।

यह काम कठिन तो है ही; किन्तु यदि शिक्षक या संचालक अप
सारा दिल अिसमें अुड़ेल दें, तो यह काम जितना हम सोचते हैं अुत
कठिन नहीं है। ये लोग अपने विद्यार्थियोंके पिता बन जायं, तो अि
अपने-आप मालूम हो जाय कि विद्यार्थियोंको किस चीजकी जरूरत है, अ
वे फौरन वह चीज अुन्हें देने लग जायं। अिसे देने लायक ज्ञानका य
अुनके पास न होगा, तो वे अुसे जुटानेमें लगेंगे और प्रयत्न करके अुस
योग्यता प्राप्त करेंगे। और क्योंकि हमने अिस विचारसे शुरुआत की
कि लड़के-लड़कियोंको अुनकी जरूरतके मुताबिक शिक्षा देनी है, अिसलिअे
हरिजनोंके या दूसरोंके बच्चोंके शिक्षकोंको भी असाधारण चतुराअी य
बाहरी ज्ञानकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

और शिक्षामात्रका अुद्देश्य चरित्र निर्माण करना है या होना चाहिये
यह बात याद रखकर चरित्रवान शिक्षकको निराश होनेकी जरूरत नहीं।

हरिजनबंधु, १२-११-'३३

२

बार बार बदलनेवाली पाठ्यपुस्तकोंका हमारा पाश्चात्य शिक्षणकी
दृष्टिसे सुचिह्न नहीं कहा जा सकता। पाठ्यपुस्तकोंको शिक्षणका माध्यम
माना जाय, तब तो शिक्षककी वाणीकी शायद ही कोअी कीमत रह जाय।
जो शिक्षक पाठ्यपुस्तकोंमें से सिखाता है, वह अपने विद्यार्थियोंको स्वतंत्र और

मौलिक विचार करनेकी शक्ति नहीं देता। असिसे शिक्षक स्वयं पाठ्यपुस्तकोंका गुलाम बन जाता है और असे अपना स्वतंत्र तेज बतानेका मौका ही नहीं मिलता। असिसे मालूम होता है कि पाठ्यपुस्तकें जितनी कम होंगी, अुतना ही शिक्षको और विद्यार्थियोंको लाभ होगा।

पाठ्यपुस्तकें आज व्यापारकी वस्तु बन गअी लगती हैं। जो लेखक और प्रकाशक लेखन और प्रकाशनको कमाअीका जरिया बनाते हैं, अुनका पाठ्यपुस्तकें बार बार बदलती रहें असिमें स्वार्थ रहता है। अनेक जगह शिक्षक और परीक्षक खुद पाठ्यपुस्तकोंके लेखक होते हैं। अपनी पुस्तकें बेचनेमें अुनका स्वार्थ हो यह स्वाभाविक है। असिके अलावा, पाठ्यपुस्तकें पसन्द करनेवाली समिति स्वभावतः अैसे लोगोंकी बनी होती है। अिस तरह यह विषचक्र पूरा होता है। और हर साल नअी नअी पुस्तकें खरीदनेके लिअे पैसेकी व्यवस्था करना माता-पिताके लिअे बहुत कठिन हो जाता है।

लड़के-लड़कियोंको पाठ्यपुस्तकोंका अुठाया न जा सके अितना बोझ ढोते देखकर बड़ी दया आती है।

अिस संपूर्ण पद्धतिकी पूरी तरह जांच होनी चाहिये। व्यापारकी वृत्ति जड़मूलसे नष्ट की जानी चाहिये और अिस प्रश्नका विचार केवल विद्यार्थियोंकी दृष्टिसे ही किया जाना चाहिये। अैसा करने पर संभवतः मालूम होगा कि ७५ प्रतिशत पुस्तकें कचरेकी टोकरीमें फेंकने लायक हैं। मेरी चले तो मैं पाठ्यपुस्तकें अधिकतर विद्यार्थियोंके लिअे नहीं, परन्तु शिक्षकोंको मदद करनेके लिअे ही रखूं। जिन पाठ्यपुस्तकोंके बिना विद्यार्थियोंका काम चल ही न सके, वे अैसी होनी चाहिये जो अुनके बीच बरसों घूमती रहें, ताकि मध्यमवर्गके परिवार आसानीसे अुनका खर्च अुठा सकें। अिस दिशामें पहला कदम शायद यह हो सकता है कि सरकार पाठ्यपुस्तकोंके प्रकाशन और मुद्रण पर अपना अधिकार रखे और खुद अुसकी व्यवस्था करे। अिस बातसे पाठ्यपुस्तकोंकी अनावश्यक वृद्धि पर अपने-आप अंकुश लग जायगा।

शिमला जाते हुअे, ३-९-'३९

हरिजनबन्धु, १७-९-'३९

- १

पुस्तकालयके आदर्श

[सत्याग्रह आश्रमकी पुस्तकोंके अहमदाबाद संग्रहालयका शि
करते समय दिये गये भाषणसे।]

पुस्तकालयोंके बारेमें मेरे कुछ आदर्श हैं। वे आपके साम
देता हूं। पुस्तकालयका मकान आप लोग अिस तरह बनायें कि जै
यह बढ़ता जाय, वैसे-वैसे अुसकी शाखायें बढ़ें और मकान बढ़ाया जा
फिर भी यह पता न चले कि मकान बढ़ाया गया है, और मकान
भी न लगे। मकान अिस तरहकी सुविधाओंका विचार करके बना
अिस पुस्तकालयमें भाषण दिये जा सकें, विद्यार्थी आकर शांतिसे प
और अध्ययन कर सकें और कुछ सिर्फ खोजबीन करनेवाले विद्वान
अध्ययन कर सकें। हमारा आदर्श यही हो सकता है कि हम अिस पु
लयको दुनियामें बड़ेसे बड़ा और अच्छेसे अच्छा बनायें। औीश्वर
शक्ति दे ही देगा। काकासाहबने सुझाया है कि विद्यापीठमें जैसा कु
संग्रह है, वह भी यहीं रख दिया जाय। गुजरातमें कलाकी कमी नहीं।
जालीकी जोड़ सारे संसारमें नहीं मिलती। अहमदाबादके कसीदेकी होड़
ही हो सके। अहमदाबादके कारीगरोंकी खुदाअीका काम देखकर तो मैं अ
में पड़ गया। मैंने अुन्हें बिलकुल अंधेरे छोटे-छोटे झोंपड़ोंमें रहते देखा
कला-कोविद अुत्तेजनाकी राह देखते हुअे बैठे नहीं रहते। अिस मकानमें
संग्रहालय बनानेके लिअे दूसरा कोअी ५० हजार रुपये दे, तो यहीं संग्रह
हो सकता है।

आप अैसा काम करें कि पुस्तकालयका दिन-दिन विकास होता
अेक दो आदमी अपना काफी समय देनेवाले होंगे तो अच्छा होगा। ग्रंथ
किसी व्यापारीको मत बनाअिये, जो सिर्फ किताबोंको संभाल कर रख
बल्कि अैसेको बनाअिये, जो पुस्तकोंको समझे, अुनका चुनाव कर सके।
कोअी स्वयंसेवक न मिले तो ज्यादा रुपये दें। हरिजनोंको मुफ्त आने
पुस्तकें भी ले जाने दें; और अुनके हाथसे किताब बिगड़े या चोरी जाय
सहन करें। ये लोग गरीबोंमें भी सबसे ज्यादा गरीब हैं। यह रिआयत
गरीबोंके लिअे रखी जा सके तो रखें। अिससे संस्थाका यश बढ़ेगा।

भाअी रसिकलालने जो विनती की है, वही मेरी भी विनती है कि पुस्तकालयकी समिति अच्छी बनायें। अुसमें विद्वानोंको रखेंगे तो पुस्तकालयको जीवित रखनेमें मदद मिलेगी। यह विचार न रखें कि समितिमें व्यवहार-बुद्धिवाले आदमी ही होने चाहियें। विद्वान ही अिस बातको समझते हैं कि पुस्तकालय कैसा चाहिये और अुसे कैसे चमकाया जा सकता है। कार्नेगीने बहुतसे पुस्तकालयोंको दान दिया। अुनके साथ जो शर्तें अुसने कीं, अुनको बहुतसे विद्वानोंने मान लिया। परन्तु स्काटलैण्डके विद्वानोंने नहीं माना। अुन्होंने कार्नेगीसे कह दिया कि आपको शर्त करना हो तो हमें आपका दान नहीं चाहिये; आपको क्या मालूम हो सकता है कि कैसी पुस्तकें चाहियें? कलाकार अपनी कला बेचने नहीं जाते। गुजरातमें अमूल्य पुस्तकोंका भण्डार है। वह बनियोंके हाथमें पड़ा है। जैनोंका सुन्दर पुस्तक-भंडार रेशममें बंधा पड़ा है। अिन पुस्तकोंको देखकर मेरा दिल रोया है। अज्ञानी और सिर्फ रुपया जमा कर सकनेवाले बनियोंके हाथमें पड़ी-पड़ी ये पुस्तकें क्या काम आती हैं? अिनके हाथोंमें जैन धर्म भी सूखता जाता है, क्योंकि धर्मको पैसेके सांचेमें ढाल दिया गया है। धर्म भी कहीं पैसेके सांचेमें ढाला जा सकता है? पैसेको धर्मके सांचेमें ढालना चाहिये। अिसलिअे मैं आपसे कहता हूं कि कोअी भी रास्ता निकालकर विद्वानोंको समितिमें शामिल करें। *अिस पुस्तकालयकी जय हो!*

हरिजनबन्धु, १–१०–'३३

५०

अखबार*

'*हिन्दुस्तान*' *के दीवाली अंकके लिअे कोअी लेख भेजनेका मैंने* सम्पादकजीको वचन दिया है। वह वादा पूरा करनेके लिअे मेरे पास समय नहीं है। फिर भी यह सोचकर कि किसी भी तरह थोड़ा-बहुत लिखकर भेजना ही चाहिये, मैं अखबारोंके बारेमें अपने विचार पाठकोंके सामने रखना ठीक समझता हूं। संयोगवश मुझे दक्षिण अफ्रीकामें यह काम करना पड़ा था। अिसलिअे अिस बारेमें सोचनेका भी मौका मिल गया। जो विचार मैं यहां पेश करता हूं, अुन सब पर मैंने अमल किया है।

* संवत १९७३ के दीवाली अंकमें यह लेख छपा है।

मेरी छोटी बुद्धिके अनुसार अखबारोंका धंधा जीविकाके लिअे करन
अच्छा नहीं। कुछ काम अैसे जोखिमभरे और सार्वजनिक होते हैं कि अुन
जरिये जीविका चलानेका अिरादा रखनेसे असली अुद्देश्यको धक्का पहुंचत
है। अिससे भी आगे बढ़कर यदि अखबारोंको विशेष कमाअीका साधन बनाय
जाय, तब तो बहुतसी बुराअियां पैदा हो सकती हैं। जिन लोगोंको अख
बारोंका अनुभव है, अुनके सामने यह साबित करनेकी जरूरत नहीं कि
अैसी बुराअियां आज बहुत चल रही हैं।

अखबारका काम लोगोंको शिक्षा देना है। अखबारसे लोगोंको वर्त
मान अितिहास मिल जाता है। यह काम कम जिम्मेदारीका नहीं। अित
पर भी हम महसूस करते हैं कि अखबारों पर पाठक भरोसा नहीं रख सकते
अक्सर अखबारमें दी हुअी खबरसे अुलटी ही घटना हुअी देखी जाती है।
यदि अखबार यह समझें कि अुनका काम लोक-शिक्षणका है, तो खबरें देने
पहले वे रुके बिना न रहें। अिसमें शक नहीं कि अखबारोंकी स्थिति अक्सर
विषम होती है। थोड़ेसे समयमें अुन्हें सारासारका निर्णय करना पड़ता है
और सच्ची हकीकतका अन्दाज ही लगाना होता है। तो भी मैं मानता हूं
कि यदि किसी खबरके सच होनेका निश्चय न हो सका हो, तो अुसे
बिलकुल ही न देना ज्यादा अच्छा है।

वक्ताओंके भाषण छापनेमें भारतके समाचारपत्रोंमें बहुत दोष पा
जाते हैं। भाषण सुनकर लिखनेकी शक्ति रखनेवाले बहुत थोड़े लो
हैं। अिससे वक्ताओंके भाषणोंकी खिचड़ी हो जाती है। सबसे बढ़िय
नियम यह है कि हर वक्ताके भाषणका 'प्रूफ' अुसके पास सुधारनेके लि
भेज देना चाहिये और वह अपने भाषणका 'प्रूफ' ठीक न करे, तो
अखबारको अपना लिया हुआ मार देना चाहिये।

बहुत बार अैसा देखा जाता है कि समाचारपत्र सिर्फ जगह भरने
लिअे ही जैसी-तैसी चीज छाप देते हैं। यह आदत सब जगह पाअी जा
है। पश्चिममें भी अैसा ही होता है। अिसका कारण यह है कि ज्याद
तर अखबारोंकी नजर कमाअी पर रहती है। अिसमें शक नहीं कि अखबारों
बड़ी सेवा की है, जिससे अुनके दोष छिप जाते हैं। किन्तु मेरी राय है
जैसे सेवा की है, वैसे ही नुकसान भी कम नहीं किया है। पश्चिममें
अखबार अितने अश्लीलतासे भरे होते हैं कि अुन्हें छूना भी पाप है। बहु

अखबार पक्षपातसे भरे होनेके कारण लोगोंमें वैर फैलाते या बढ़ाते हैं *अक्सर कुटुम्बों और जातियोंमें झगड़े भी खड़े करा देते हैं। अिस तरहके* लोकसेवा करनेके कारण अखबार टीकासे बच नहीं सकते। सब बातोंको देख हुअे अुनसे नफा-नुकसान बराबर ही होनेकी संभावना है।

अखबारोंमें अैसा रिवाज पड़ गया मालूम होता है कि मुख्य कमाअ ग्राहकोंके चन्देसे न करके विज्ञापनोंसे की जाय। अिसका फल दुःखदाअी ह हुआ है। जिस अखबारमें शराबकी बुराअी की जाती है, अुसीमें शराबकी तारीफ़के विज्ञापन होते हैं। अेक ही अखबारमें हम तम्बाकूके दोष भी पढ़ें और यह भी पढ़ेंगे कि बढ़िया तम्बाकू कहां बिकती है। जिस पत्रमें नाटकका लंबा विज्ञापन होगा, अुसीमें नाटककी टीका भी मिलेगी। सबसे ज्याद आमदनी दवाओंके विज्ञापनोंसे होती है। किन्तु दवाओंके विज्ञापनोंसे जनताको जितनी हानि हुअी है और हो रही है, अुसका कोअी पार नहीं। दवाओंके *विज्ञापनोंसे अखबारों द्वारा की हुअी सेवा पर लगभग पानी फिर जाता है* दवाके विज्ञापनसे होनेवाले नुकसान मैंने आंखों देखे हैं। बहुतसे लोग सिर्फ विज्ञापनके भुलावेमें आकर हानिकारक दवायें लेते हैं। अकसर दवायें अनीतिको बल पहुंचानेवाली होती हैं। अैसे विज्ञापन धार्मिक पत्रोंमें भी पाये जाते हैं। यह प्रथा सिर्फ पश्चिमसे आअी है। किसी भी प्रयत्नसे विज्ञापनोंका रिवाज या तो मिटना चाहिये या अुसमें बहुत सुधार होना चाहिये। हरअेक अखबारका फर्ज है कि वह विज्ञापनों पर काबू रखे।

अंतिम प्रश्न यह है कि जहां 'सिडीशस रार्जिंग अेक्ट' और डिफेन्स ऑफ अिण्डिया अेक्ट' जैसे कानून मौजूद हों वहां अखबारोंको क्या करना अुचित है? हमारे अखबारोंमें अक्सर दो अर्थ पाये जाते हैं। कुछ अखबारोंमें तो अिस पद्धतिको शास्त्रका रूप दे दिया गया दीखता है। मेरी नम्र रायमें *अिससे देशको नुकसान पहुंचता है। लोगोंमें नामर्दी आती* है और द्वि-अर्थक बात कहनेकी आदत पड़ती है। अिससे भाषाका रूप बदल जाता है और भाषा विचारोंको प्रकट करनेका साधन न रहकर विचारोंको छिपानेका साधन बन जाती है। मैं खास तौर पर यह मानता हूं कि अिस तरह जनता तैयार नहीं होती। जो मनमें हो वही बोलनेकी आदत जनतामें और व्यक्तियोंमें पड़नी चाहिये। यह तालीम अखबारसे अच्छी मिल सकती है। अिसलिअे मुझे अिसीमें भलाअी जान पड़ती है कि जिसे अूपरके कानूनोंसे बचकर

काम करता है, वह अखबार ही न निकाले; या जो विचार मनमें आयें वही निडर होकर नम्रताके साथ पेश किये जायें और जो फल मिले अुसे सहन किया जाय। जस्टिस स्टीवनने अेक विचार दिया है कि जिन आदमीने मनमें भी द्रोह नहीं किया अुसकी भाषामें द्रोह हरगिज नहीं आ सकता; और यदि मनमें द्रोह हो तो अुसे बेधड़क जाहिर करना चाहिये। यदि अैसा करनेकी हिम्मत न हो, तो अखबार बन्द कर देना चाहिये। अिसमें सबका भला है।

'विचार-सृष्टि'

५१

शिक्षा और साहित्य

१

[बारहवें गुजराती साहित्य-परिषद सम्मेलनके सभापति-पदसे दिये हुअे भाषणसे।]

साहित्य-परिषद क्या करे? परिषदसे मैं क्या आशा रखूं? काका कालेलकरने अिस बारेमें नौ पन्ने लिखकर मुझे दिये थे। अुन्हें मैं पढ़ तो गया था परन्तु भूल गया हूं। डाक्टर हरिप्रसादने भी पत्र भेजा था, किन्तु वह न मालूम कहां पड़ा है। होगा तो सुरक्षित, परन्तु यहां आते समय मुझे नहीं मिला। अुन्हें फिर लिख कर देनेको कहा, तो अुन्होंने रातको मेरे सो जानेके बाद भेजा। वह भी यहां नहीं लाया। अिस तरह जो कुछ अुन्होंने चाहा, वह मैं नहीं दे सकता। यह मेरा दुर्भाग्य है। मुझे समय मिले तभी तो पकाअूं और सामान तैयार करूं न? किन्तु अिस समय जो कुछ कहता हूं, वह कुछ नहीं तो मेरे पास तो शोभा देता ही है। क्योंकि जो हृदयसे निकलता है वही मैं कहता हूं, मुलम्मा चढ़ाये बिना कहता हूं।

स्वागताध्यक्षने मेरा बोझ हलका कर दिया है। मैंने पहली साहित्य-परिषदमें जो कुछ कहा था अुसे अुन्होंने फिर कह सुनाया है, ताकि मुझे चाबुक न लगाने पड़ें। परन्तु अहिंसाका पुजारी भी कभी चाबुक लगाता है? मेरे पास चाबुक नहीं हो सकता। अुस समय मैंने तो नम्रता

ही बताओी थी। आज नरसिंहरावभाओी यहा नही है, जिसका मुझे बडा दुख है। अुनके साथ मेरा सम्बन्ध लगातार बढता गया है। वे यहा होते तो मैं बहुत खुश होता। और रमणभाओीका तो आज शरीर भी नही रहा। अुनसे मैंने कहा था कि मेरे पासके कुअें पर चडस चलानेवाले चड़सिया कौनसी भाषा बोलता है, जिसका अुसे पता नही होता। वह गाली देता है, जिसका अुसे पता नहीं होता। अुसे मैं क्या कहूं? जो कवि हो वह अुसके पास जाये। मुंशी ठहरे अुपन्यासकार, वे तो नही जा सकते। कोओी अद्‌भुत कलाकार अुसके पास जाकर अुसे समझा सकता है। दो बात यहा कहे, दो बात वहा कहे और अैसी कहे कि वह हजम कर सके।

हम साहित्य किसके लिअे तैयार करें? कस्तूरभाओी अेण्ड कंपनीके लिअे या अम्बालालभाओीके लिअे या सर चीनूभाओीके लिअे? अुनके पास तो रुपया है जिसलिअे वे जितने चाहें अुतने साहित्यकार रख सकते हैं और जितने चाहें अुतने पुस्तकालय कायम कर सकते हैं। परन्तु अुस चड़सियेका *क्या हो? अुस समय मेरे सामने वह अकेला था।* और वह भी किसी वास्तविक गावका नहीं बल्कि कोचरबका था। कोचरब भी कोओी गाव है? वह तो अहमदावादकी जूठन है। वहा जीवनलालभाओीका बगला था। मेरे जैसा भूत ही वहा जाकर बस सकता था न? वहा अुन्हें ज्यादा किराया देनेवाला भी अुस समय कौन मिलता? किन्तु मुझे यहां रखना था जिसलिअे जीवनलालभाओीने बंगला दिया और सेठ मंगलदासने रुपया देनेको कहा। किन्तु आज तो अुस चड़सिये जैसे बहुत लोग मेरे सामने मौजूद है। जिस समय मैं सेगावमें जाकर पड़ा हूं। वहा ६०० मनुष्य हैं। अुनमें १० आदमी भी मुश्किलसे अैसे होगे जो पढ़ सकें। दस कम हो तो पचास कहूं, परन्तु पचास कहना जरूर अधिक होगा। वहा मैं क्या करता हूं? विद्यापीठके कुलपतिका पद मुझे शोभायमान करता है। जिसलिअे मुफ्त पुस्तकालय खोला। वहां किताबें जमा करना शुरू किया। परन्तु पढ सकनेवाले दसमें से समझकर पढ़नेवाले तो दो-तीन ही होगे। और बहनोंमें तो अेक भी अैसी नहीं जो पढ़ सके। वहा ७५ फीसदी हरिजन हैं। वर्षोंने अुन्हें छुआ तक नहीं। छुआ होता तो मैं दूर जाता। वहा तो मलेरिया है। किन्तु जहा मैं जाअूं वहा मलेरियाका गुजर नही हो सकता। अैसा मलेरियाके साथ मेरा करार है। वहां कओी खड्डे-पोखरे हैं। किन्तु अेक धनी व्यक्ति मिल गया,

जिसने सड़क बनवा दी है। छह महीने पहले जैसी हालत थी, वैसी हालतमें आनन्दशंकरभाओी जैसे वहां आ भी नहीं सकते थे।

वहां मैंने अेक पुस्तकालय खोला है। अुसमें साहित्य तो क्या हो सकता है? अेक दो लड़कियोंकी काममें ली हुआी किताबें अुनसे छीन लीं। ये निकम्मी पाठ्यपुस्तकें तैयार करनेवालोंके बारेमें बोलूं, तो आपको खूब हंसा सकता हूं और घण्टों बात कर सकता हूं। किन्तु समय नहीं है।

वहांका प्रदेश महाराष्ट्री ठहरा। वहां गुजरातके बराबर निरक्षरता नहीं है, परन्तु सेगांवमें निरक्षरता है। वहां मेरे पास अेक अेल्‌-अेल० बी० है। वह कानून भूल गया है। भूलसे अेल्‌-अेल० बी० हो गया। वह गुजरातका है, परन्तु थोड़ी मराठी जानता है। अुसे मैंने कह दिया कि लोग समझ सकें, अैसी किताबें पढ़ाओ और खुद अपने ज्ञानसे अुन्हें बढ़ाओ। आजकलके अखबार तो हैं, पर वहांके लोग अुनमें क्या समझें? अुन्हें भूगोल पढ़ाना है। वे रूसको क्या जानें? अुन्हें क्या पता कि स्पेन कहां है? जिन साढ़े तीन रुपयेकी किताबोंके लिअे घर अैसा है कि बरसातमें वहां बैठ भी नहीं सकते। कोआी दियासलाआी डाल दे तो सुलग अुठे। यह मीराबहनकी झोंपड़ी थी। मीराबहन त्यागी है पर मूर्ख है। मैंने अुससे कहा था कि जहां लोग पाखाने जाते हों वहां तू नहीं रह सकती। मैं तो गांवकी सीमा पर ही रह सकता हूं। मेरे देहातमें बसनेकी यह शर्त है कि मुझे साफ हवा, साफ पानी और साफ भोजन मिलना चाहिये। सौभाग्यसे मैं जहां पड़ा हूं, अुस तरफकी पड़त जमीनको लोग पाखानेके लिअे अिस्तेमाल नहीं करते। अुस मीराबहन वाली झोंपड़ीमें हमने पुस्तकालय जमाया। अैसे गांवमें लोगोंको क्या पढ़ कर सुनाअूं? मुशीका अुपन्यास पढ़ूं? श्री कृष्णलालभाओीका कृष्ण-चरित्र पढ़ूं? यद्यपि कृष्ण-चरित्र मौलिक नहीं बल्कि अनुवाद है, फिर भी अिस अनुवादको मैंने पढ़ा, तब मुझे मीठा लगा था। मैं अिसे पढ़कर खुश हुआ था। किन्तु यह हमारा दुर्भाग्य है कि मैं अुनकी अिस पुस्तकको भी सेगांवमें नहीं चला सकता। पढ़े-लिखे लोग यह बात मेरे मुंहसे न सुनें तो किसके मुंहसे सुनेंगे? सेगांवसे मैं अेक भी लड़केको यहां नहीं लाया। किराया दूं तो चला आवे। परन्तु यहां आकर क्या करे? तो भी मैं अुनका बिनमांगा और बिनचुना प्रतिनिधि हूं और गांवोंके लोगोंके दिलका दर्द आपको सुनाता हूं। यह सच्ची 'डेमोक्रसी' है। अिन लोगोंसे सीख सीखकर मैं आपसे कहता

हूं कि सच्चा स्वराज्य चाहिये तो यहां आअिये। आपके लिअे मैं रास्ता साफ कर रहा हूं। वहां कांटे तो बिछे ही हैं, परन्तु थोडेसे गुलाब भी मैं लगा दूंगा।

जब यह बात कहता हूं तो डीन फेरर याद आता है। वह जबरदस्त विद्वान था। मैं मानता हूं कि अंग्रेजीमें बड़े-बड़े विद्वान मौजूद हैं। मैं अंग्रेजोंके साथ लड़ूं भले ही, परन्तु मैं गुणग्राही हूं। मुझे किसी अंग्रेज या अंग्रेजी भाषासे दुश्मनी थोडे ही, है। डीन फेररको लगा कि जनताके सामने मुझे अीसाका जीवन लिखकर रखना है, किन्तु वह कैसे लिखा जाय? अंग्रेजी भाषामें अीसाके जितने जीवन-चरित्र हैं वे सब वह पढ़ गया, किन्तु अुसे संतोष न हुआ। फिर वह फिलस्तीन गया। वहां बाअिबल ली और अुसमें दिये हुअे जीवन-वृत्तान्तके अनुसार सब कुछ शुद्ध आंखसे देख लिया। फिर अुसने श्रद्धाभावसे पुस्तक लिखी। अिसके लिअे अुसने कितनी सामग्री अिकट्ठी की, कितनी मेहनत और कितने बरसोंके बाद अुसने यह पुस्तक लिखी! अंग्रेजी भाषामें वह अद्भुत पुस्तक है। जब मैंने नेटाल छोड़ा, तब अेक पादरीने वह मुझे पढनेको दी थी। अंग्रेजी भाषामें यह सुन्दर और सर्वमान्य पुस्तक है। अिसमें जॉन्सनकी अंग्रेजी नहीं है। डिकन्स जैसी सुन्दर और सरल अंग्रेजी है। यह पुस्तक आम लोगोंके लिअे लिखी गअी है। तब क्या विद्वान लोग रघुवंश पढ़कर, भवभूति पढ़कर और अंग्रेजी पढकर गांवोंमें जायेंगे? ये पुस्तकें पढते-पढ़ते अिन्हें क्षय हो जाय, संग्रहणी हो जाय या ब्लड-प्रेशर हो जाय, तो भी पढ़नेका लोभ बाकी रह जायगा। फिर ये गांवोंके लिअे पुस्तकें तैयार करने बैठेंगे, तो अिनकी पुस्तकें भी अिनकी तरह रोगी ही होंगी। अैसे आदमियोंका गांवोंमें काम नहीं। नर्मदाशंकरने कहा है, वैसे सभी बातोंमें पूरे आदमीका वहां काम है। गांवोंमें धर्माम लेकर जानेवाले मेरे जैसे आदमीसे भी ज्यादा सच्चे देहातीकी तरह जाकर वहां रहनेवालोंका काम है। वे ही वहांके लोगोंको जीता-जागता साहित्य दे सकेंगे।

रविशंकर रावल जैसे लोग अहमदाबादमें बैठे-बैठे ब्रश (कूंची) चलाया करते हैं। किन्तु गांवोंमें जाकर क्या करें? हां, अुनके चित्रोंकी प्रदर्शनी देखकर मेरी छाती फूल गअी, क्योंकि पहले यहां अैसे चित्र नहीं थे। डा० हरिप्रसाद मुझे आजसे पहले भी कुछ चित्र देखने ले गये थे, किन्तु तबसे अब बहुत ज्यादा प्रगति हो गअी है। साहित्य चित्रोंके जरिये भी दिया जा

जिसने सड़क बनवा दी है। छह महीने पहले जैसी हालत थी, वैसी हालतमें आनन्दशंकरभाअी जैसे वहां आ भी नहीं सकते थे।

वहां मैंने अेक पुस्तकालय खोला है। अुसमें साहित्य तो क्या है रखना है? अेक दो सहेलियोंकी काममें ली हुअी किताबें अुनने दे दीं। ये निकम्मी पाठ्यपुस्तकें तैयार करनेवालोंके बारेमें बोलूं, तो आपको खूब हंसा सकता हूं और घण्टों बात कर सकता हूं। किन्तु समय नहीं है।

वहांका प्रदेश महाराष्ट्री ठहरा। वहां गुजरातके बराबर निरक्षरता नहीं है, परन्तु सेगांवमें निरक्षरता है। वहां मेरे पास अेक अेल-अेल० बी० है। वह कानून भूल गया है। भूलसे अेल-अेल० बी० हो गया। वह गुजराती है, परन्तु थोड़ी मराठी जानता है। अुसे मैंने कह दिया कि लोग समझ सकें अैसी किताबें पढ़ाओ और खुद अपने ज्ञानसे अुन्हें बढ़ाओ। आजकलके अखबार तो हैं, पर वहांके लोग अुनमें क्या समझें? अुन्हें भूगोल पढ़ाना है। वे रूसको क्या जानें? अुन्हें क्या पता कि स्पेन कहां है? जिन गरीबोंके तीन रुपयेकी किताबोंके लिअे घर अैसा है कि बरसातमें वहां बैठ भी नहीं सकते। कोअी दियासलाअी डाल दे तो सुलग अुठे। यह मीराबहनकी झोंपड़ी थी। मीराबहन त्यागी है पर मूर्ख है। मैंने अुससे कहा था कि जहां लोग पाखाने जाते हों वहां तू नहीं रह सकती। मैं तो गांवकी सीमा पर ही रह सकता हूं। मेरे देहातमें बसनेकी यह शर्त है कि मुझे साफ हवा, साफ पानी और साफ भोजन मिलना चाहिये। सौभाग्यसे मैं जहां पड़ा हूं, अुस तरफकी पड़त जमीनको लोग पाखानेके लिअे अिस्तेमाल नहीं करते। अुस मीराबहन वाली झोंपड़ीमें हमने पुस्तकालय जमाया। अैसे गांवमें लोगोंको क्या पढ़ कर सुनाअूं? मुंशीका अुपन्यास पढ़ूं? श्री किशोरलालभाअीका कृष्ण-चरित्र पढ़ूं? यद्यपि कृष्ण-चरित्र मौलिक नहीं बल्कि अनुवाद है, फिर भी अिस अनुवादको मैंने पढ़ा, तब मुझे मीठा लगा था। मैं अिसे पढ़कर खुश हुआ था। किन्तु यह हमारा दुर्भाग्य है कि मैं अुनकी अिस पुस्तकको भी सेगांवमें नहीं चला सकता। पढ़े-लिखे लोग यह बात मेरे मुंहसे न सुनें तो किसके मुंहसे सुनेंगे? सेगांवसे मैं अेक भी लड़केको यहां नहीं लाया। किराया दूं तो चला आवे। परन्तु यहां आकर क्या करे? तो भी मैं अुनका बिनमांगा और बिनचुना प्रतिनिधि हूं और गांवोंके लोगोंके दिलका दर्द आपको सुनाता हूं। यह सच्ची 'डेमोक्रसी' है। अिन लोगोंसे सीख सीखकर मैं आपसे कहता

मैंने जो अितनी बडबड़ाहट की है, अुसके लिअे मुझे माफ करना मेरे दिलमें आग जल रही है। अिच्छा तो होती है कि अस्पष्ट खीची हुअी लकीरोंको मैं पूरा कर दूं, किन्तु मजबूरीसे खतम कर देता हूं। मुझे जो कुछ कहना है, अुसमें से थोड़ा ही मैंने कहा है।

अिस समय मेरा दिल रो रहा है। किन्तु मैं आखमें से आंसू कैसे निकालूं? खूब वेदना होते हुअे भी मुझे तो हंसना है। रोनेके प्रसंग आते हैं तब भी मैं नही रोता। जी कडा कर लेता हूं। परन्तु वह सेगाव —वहाके अस्थिपंजर देखता हूं (यहा गला भर आया। थोडी देर रुक कर बोले), तो मुझे आपका साहित्य निकम्मा लगता है। आनन्दशंकर भाअीसे मैंने सौ पुस्तकें मांगी। अिन्होंने मेहनत करके मुझे भेजी, परन्तु मैं अिन पुस्तकोंका क्या करूं? वहा किस तरह ले जाअू?

वहांकी स्त्रियोंको देखता हूं, तो अैसा लगता है कि अिन स्त्रियोंका अहमदाबादकी स्त्रियोंके साथ क्या सबंध है। वे स्त्रिया साहित्यको नहीं जानती, रामधुन गवाअू तो गा नही सकती। वे साप-बिच्छूकी परवाह किये बिना, बरसात, ठंड या धूपका खयाल किये बिना, मेरे लिअे पानी लाती हैं, घास काट लाती हैं, अीधन ला देती हैं, और मैं अुन्हें पाच पैसे दे देता हूं तो वे मुझे अन्नदाता समझती हैं। वहा अुन्हें पाच पैसे देनेवाले अंबालाल भाअी नही हैं। यह भारत अहमदाबादमें नहीं, सात लाख गावोंमें है। अुन्हें आप क्या देंगे? अुनमें से पाच फी सदी ही लिख-पढ सकते हैं। मुश्किलसे सौ दो सौ शब्दोंकी अुनके पास पूजी है। मैं जानता हूं कि अुनके पास क्या ले जाना चाहिये। किन्तु मैं आपसे कहकर क्या करूं? कहकर बतानेका मेरा विषय नही, जो कहकर बताअूं। कलम तो मैंने मजबूरन पकडी है। पराधीन दशामें अुसे चलाता हूं। आज बोलता हूं, किन्तु खास परिस्थितिमें। मैं बरसों तक नहीं बोला। मित्रोंने मुझे Dunce (मूर्ख) समझा। छोटीसी मडलीमें भी मैं नही बोल सका था। अदालतमें गया तो मुझे यह भी पता नही था कि 'माअी लार्ड' कहूं या क्या कहूं। मुझे बोलना नहीं आता था। बैरिस्टर बन गया किन्तु देहाती। अिसलिअे बोलना छोड दिया। मने यह सूत्र पकड़ लिया कि जितना हो सके अुतना करूं। मैं जानता हूं कि स्वराज्यकी कुंजी मजदूरोंके पास भी नही। स्वराज्यकी कुंजी तो देहातमें है। गांव भी मैं ढूंढने नही गया। सत्याग्रह भी मैं ढूढ़ने नहीं

सकता है। किन्तु ये चित्र दूसरे ही होते हैं। यहां तो रविशंकर रावल चित्रोंमें शब्दोंका ज्ञान पूरते थे। किन्तु सच्ची कला तो अैसी होनी चाहिये कि वे चुप रहें तो भी मैं अुसे समझ सकूं। मैं शिक्षित होअूं, रस्किन मैंने पढ़ा हो और फिर मैं अिनकी कला समझ सकूं या वे समझायें तब समझूं, तो अिसमें कोअी बड़ी कला नहीं। मुझे तो देहाती आंखसे देखना है। फिर भी मेरी छाती अिनके चित्रोंको देखकर फूल गअी। किन्तु मुझे लगा कि चित्र अैसे होने चाहिये, जो मुझसे बोलें, मेरे आगे नाचें। अैसे चित्र दुनियाभरमें बहुत थोड़े हैं। रोममें पोपके मन्दिरमें मैंने अेक मूर्ति देखी, जिसे देखकर मैं बेहोश हो गया था। यह मूर्ति Christ on the Cross (सूली पर अीसा) की है। यह मूर्ति देखकर मनुष्य पागल हो जाता है। अिसे समझानेको रविशंकर रावल मेरे पास खड़े नहीं थे। अुसे देखकर ही मैं स्तब्ध हो गया था। यह तो विदेशकी बात हुअी। परन्तु कुछ साल पहले मैं मैसूरमें बेलूर गया था। वहांके पुराने मंदिरमें नग्न अवस्थामें खड़ी अेक स्त्रीकी मूर्ति देखी थी। वह मुझे किसीने बताअी नहीं थी, परन्तु मेरा ध्यान अुधर गया और मैं आकर्षित हुआ। मैं नग्न अवस्थामें खड़ी स्त्रीका यहां वर्णन नहीं करना चाहता, किन्तु चित्रका जो भाव मैंने समझा वह बताता हूं। अुसके पैरके सामने अेक बिच्छू पड़ा है। अुसका कवि बीभत्स नहीं था, अिसलिअे स्त्रीको कपड़ेसे कुछ ढक दिया है। यह काले संगमरमरकी मूर्ति है। अुसे देखकर अैसा लगता है कि कोअी रंभा है जो बेचैन हो रही है। मैं अुसका, भावकी वर्णन ही करता हूं। मैं तो देखता ही रह गया। वह अपने शरीर परके कपड़ेको फाड़ रही है। कलाको वाणीकी जरूरत नहीं होती। मुझे अैसा लगा कि साक्षात् कामदेव यहां बिच्छू बनकर बैठे हैं। अुस स्त्रीके शरीरमें आग जल रही है। कविने कामदेवकी विजय होने दी है, परन्तु अुस स्त्रीने आखिर अपने कपड़ेमें से अुसे झाड़कर फेंक दिया है और अुसकी जीत नहीं होने दी। अुस स्त्रीके अंग-अंग पर अुसकी वेदना चित्रित है। रविशंकर भले ही अिसका कुछ भी अर्थ करें, किन्तु अुनका यह शहरी अर्थ गलत होगा और मेरा देहाती अर्थ सच्चा है।

मैं क्या चाहता हूं सो मैंने कह दिया। अिच्छा तो होती है कि अिस विषयमें और रस भरूं। किन्तु जो अिससे विशेष न समझ सकें, वह कला-रसिक नहीं कहला सकता।

अुपन्यासोंकी तो आज कल बाढ़-सी आ गअी है। अुन्हें पढ़ना अेक व्यसन बन गया है। कुकुरमुत्तेकी तरह ये निकलते ही जा रहे हैं। अुपन्यास किस तरह लिखे जाते हैं, यह जानना हो तो आपको मैं बहुत सुना सकता हूं। किन्तु अिसका चित्र सभ्य स्त्री-पुरुषोंके सामने नहीं रखा जा सकता। कल्पनाके घोड़े तो कहीं भी जा सकते हैं। अुन पर कोअी अंकुश नहीं होता। किन्तु अिन अुपन्यासोंके बिना हमारा काम चल सकता है। गुजराती भाषा अुपन्यासोंके बिना विधवा नहीं हो जायगी। आज गुजराती विधवा है। मैं दक्षिण अफ्रीका गया, तब अपने साथ कुछ गुजराती पुस्तकें ले गया था। अुनमें टेलरका गुजराती व्याकरण भी था। वह मुझे बहुत अच्छा लगा था; अिस बार भी परिषदके पहले दिनकी कतलकी रातमें मैंने अुसे पढ़नेको निकाला था। परन्तु पढ़ा कैसे जाय? अिस व्याकरणका आखिरी हिस्सा मुझे याद रह गया है। अुसमें टेलर पूछते हैं : 'गुजरातीको कौन अधूरी कहता है? संस्कृतकी सुन्दर पुत्री गुजराती और अधूरी?' अन्तमें अुन्होंने कहा है: 'यथा भाषकः तथा भाषा।' गुजरातीमें गुजराती भाषाकी दरिद्रता नहीं दीखती, अुसे बोलनेवालोंकी दरिद्रता दीखती है। यह दरिद्रता अुपन्यासोंसे नहीं मिटेगी। कुछ अुपन्यास बढ़ जानेसे हमारी भाषाका अुद्धार थोड़े ही होना है।

मैं तो गांवमें पड़ा हूं। अिसलिअे देहातियोंके खयालसे अपनी भूख बताता हूं। खगोलकी किताब मैंने मैट्रिकमें पढ़ी थी, किन्तु आकाशकी तरफ देखनेको मुझे किसीने नहीं कहा। काकासाहब रसिक ठहरे। वे यरवडा जेलमें रोज आसमानमें तारे देखते थे। मुझे लगा कि ये रोज-रोज क्या देखते होंगे? अुनके छूटनेके बाद मैंने भी पुस्तकें मंगवाअीं। मुझे गुजराती पुस्तककी जरूरत थी और अेक निकम्मी-सी पुस्तक मेरे पास आअी भी। किन्तु अुससे मेरी भूख क्या मिटती? क्या हम खगोलकी अैसी किताब देहातियोंको नहीं दे सकते, जिसे वे समझ सकें?

परन्तु खगोलकी बात जाने दीजिये, भूगोल भी अिन लोगोंके लायक कहां है? सच बात यह है कि हमने गांवोंकी परवाह ही नहीं की। हमारे रोटी-कपड़ेका आधार गांवों पर है, फिर भी हमारा बरताव अैसा है मानो हम अुनके सेठ हों। हमने अुनकी जरूरतोंका विचार ही नहीं किया। क्या कोअी अैसा कंगाल देश है, जो अपनी भाषा छोड़कर पराअी भाषासे अपना

गया था। अिन गांवोंकी कअी स्त्रियां आकर मुझे जबरन मरती हैं। किन्तु मैं अुन्हें वरूं तो मेरा अेक-परनीव्रत जाता है। अिसलिअे मैंने अुन्हें माताअें बनाया है। मैं अुन्हें माताके रूपमें ही देखता हूं और पूजता हूं। अिस माताके मंदिरमें मैं आपको भी न्यौता देता हूं।

हरिजनबन्धु, २२-११-'३६

२

[गुजराती साहित्य-परिषदका अुपसंहार-भाषण।]

पहले तो मुझे आप सबका आभार मानना चाहिये। आम तौर पर सभापति आभार मानता ही है, परन्तु मैं रूढ़िके वशमें होकर आभार नहीं मानता। मैं आपके प्रेमके वशमें होकर आया था। मुझे आपके लिअे जितना समय देना चाहिये था, वह भी मैं न दे सका। मैंने तो निकम्मा, बिना सोचे-विचारे बोल कर भाषण दिया। अिसके लिअे मुझे आपसे माफी मागनी चाहिये। आपने मुझे निभा लिया, अिसके लिअे मैं दिलसे आपका आभार मानता हूं।

अैसी बात नहीं है कि सुन्दर-सुन्दर लेख पढ़ना मुझे अच्छा नहीं लगता। मुझमें कितने ही अैसे रस भरे हैं, जिन्हें मैं तृप्त नहीं कर सकता। अिनमें से कुछ सूख गये हैं और जो बाकी हैं वे जब तक 'पर' या भगवानके दर्शन न हों, तब तक मौके-मौके पर खिलते रहेंगे। आनन्दशंकरभाअीने मुझे कहा कि यहां मुशायरा हुआ, अुसमें नौजवानोंने भी अच्छा भाग लिया। अिन्दौरके पुरातत्व विषयके भाषणमें जानेकी भी मेरी अिच्छा थी। परन्तु न मैंने वह भाषण सुना और न वह मुशायरा देखा। आपने मेरी सब गलतियोंको सह लिया, यह आपकी अुदारता नहीं तो और क्या है?

अिनामके लिअे दिये गये दानोंके बारेमें सुनकर मुझे स्काटलैण्डके बड़े पुस्तकालयको दान करनेवाले कार्नेगी याद आ गये। स्काटलैण्डके प्रोफेसरोंने अुनसे कहा: "दान देना है तो पुस्तकालयको किसलिअे पकड़ते हैं? आप अपने व्यापारको समझ सकते हैं, अिसमें आप क्या समझें?" मैं भी दानवीरोंसे कहता हूं कि आपको लगता हो कि आपके रुपयेका ठीक अुपयोग होगा, तो आप हमें बिना किसी शर्तके दान दीजिये।

बातें भेजी हैं। स्त्रीके बारेमें जो कुछ खराब कहा जा सकता है, वह सब अुसने मनुस्मृतिमें से निकाला है। कुछ स्त्रियां बेचारी स्वयं भी कहती हैं कि हम अबला, हम अनघड़, हम ढोर हैं। परन्तु अिसमें क्या यह वर्णन स्त्री-मात्रके लिअे लागू किया जा सकता है? मनुस्मृतिमें किसीने अैसे भद्दे श्लोक घुसेड़ नहीं दिये होंगे?

अब ये बहनें पूछती हैं कि हम जैसी हैं वैसी हमें क्यों नहीं चित्रित किया जाता? हम न तो रंभाअें और अप्सराअें हैं, और न निरी गुलाम दासियां हैं। हम भी आपके जैसी स्वतंत्र मनुष्य हैं। किसलिअे आप गुड़ियोंकी तरह हमारा वर्णन करते हैं? स्त्रियोंके बारेमें बोलते समय आपको *अपनी माका खयाल क्यों नहीं आता? अेक समय अैसा था कि मेरे पास* पचासों बहनें रहती थीं। दक्षिण अफ्रीकामें मैं साठेक घरोंकी स्त्रियोंका भाअी और बाप बन बैठा था। अिनमें बहुत सुन्दर और कुरूप स्त्रियां भी थीं। ये स्त्रियां अपढ़ थीं फिर भी अुनकी वीरताको मैंने प्रकट किया और वे भी पुरुषोंकी तरह वीरताके साथ जेलमें गअीं।

मैं आपसे कहता हूं कि आप अपनी दृष्टि बदलिये। मुझे कहा गया है कि आजकलके साहित्यमें स्त्रियोंकी प्रशंसा भरी रहती है। मुझे अिस तरहकी अुनकी झूठी बड़ाअी, अुनके आंख, कान, नाक और दूसरे अंगोंका वर्णन नहीं चाहिये। क्या आप कभी *अपनी माताके अंगोंका वर्णन करते हैं?* मैं तो आपसे कहता हूं कि जब आप स्त्रीके बारेमें कलम अुठायें, तब अपनी मांको अपनी आंखके सामने रख लिया करें। यह सोचकर आप लिखेंगे, तो आपकी कलमसे जो साहित्य निकलेगा वह अिस तरह बरसेगा जैसे सुन्दर आकाशसे मेंह बरसता है और स्त्रीरूपी जमीनका धरतीमाताकी तरह पोषण करेगा। किन्तु आज तो आप बेचारी स्त्रीको शांति देनेके बजाय, अुसे प्रोत्साहन देनेके बजाय, तपा देते हैं। अिस बेचारीको अैसा लगता है कि जैसा मेरा वर्णन किया जाता है, वैसी मैं हूं तो नहीं, परन्तु वैसी बनूं *क्यों कर? अैसे वर्णन साहित्यके अनिवार्य अंग हैं क्या?* अुपनिषद्, कुरान और बाअिबलमें क्या कुछ गंदा पढ़नेमें आता है? तुलसीदासमें कुछ मैला देखनेमें आता है? क्या ये बड़े ग्रंथ साहित्य नहीं हैं? बाअिबल साहित्य नहीं है? कहते हैं कि अंग्रेजी भाषाका पौन हिस्सा बाअिबलसे और पाव हिस्सा शेक्सपीयरसे बना है। अिसके बिना अंग्रेजी भाषा कहां, कुरानके बिना

सब बारबार चलाता हो? यही कारण है कि हमारा देश गरीब रहा और हमारी भाषा विधवा हो गयी। कोश्री भी पुस्तक फ्रेंच या जर्मन भाषामें अैसी नहीं होती, जिसके प्रकाशित होते ही अुसका अंग्रेजी भाषामें अनुवाद न हो गया हो। बच्चोंके लिअे बढ़िया-बढ़िया पुस्तकोंके बेशुमार संक्षिप्त संस्करण तैयार होते है। अैसा गुजरातीमें क्या है? यदि हो तो मैं अुसे हृदयसे आशीर्वाद दू।

मुझे अिन विषयोंके लिअे प्रस्ताव रखना था, परन्तु अभी तो सूचनासे ही संतोष कर लूंगा। मैं अपने यहाके लेखकोंसे कहूंगा कि शहरियोंके लिअे लिखनेके बजाय हमारी मूक जनताके लिअे लिखना शुरू कीजिये। मैं अिस मूक जनताका अपने-आप बना हुआ प्रतिनिधि हूं। अुसकी तरफसे मैं कहता हूं कि अिस क्षेत्रमें कूद पड़िये। आप मनोरंजक कहानियां लिखते होंगे, परन्तु अिससे अुनकी बुद्धि पर प्रभाव नहीं पड़ेगा। हमारे यहां ग्राम-सेवक विद्यालय है। अुसके आचार्यसे मैंने कहा है कि अुद्योग सिखानेसे पहले अुद्योगके औजारोंका अध्ययन कीजिये, नमूनेकी रचना समझिये; अगर बुद्धिका विकास करना हो, तो गावोंके साधनोंका अध्ययन कीजिये, अुनकी खूबियां और खामियां समझिये और फिर अिस बारेमें लिखिये। जिसका दिमाग ताजा है, अुसे गांवमें नअी-नअी बातें देखने-जाननेको मिलेंगी। गांवोमें जाते ही बुद्धिका विकास रुक नहीं जाता। जो अैसा कहें अुन्हें मैं कहूंगा कि वे रुंधी हुअी बुद्धि लेकर ही वहा जाते हैं। बुद्धिके विकासके लिअे सच्चा क्षेत्र गाव ही है, शहर नहीं।

कल मैंने विषय-निर्वाचिनी सभामें अेक बात कही थी। वही यहा कह देता हूं। मुझे ज्योति-संघकी तरफसे श्रीमती लीलावती देसाअीका पत्र मिला था। अुस पत्रका भावार्थ तो ठीक था, परन्तु अुसकी भाषा मुझे पसन्द नहीं आअी। अुसका भावार्थ यह था कि स्त्रियोंके बारेमें जो कुछ लिखा जाता है, अुससे अुन्हें दुःख होता है। आजकलके साहित्यमें स्त्रियोंके जो वर्णन आते हैं वे विकृत होते हैं। ये बहन घबराकर पूछती हैं कि औरतको हमें बनाया है तो क्या अिसलिअे कि आप हमारे शरीरका वर्णन करें? हम मरेंगी तब क्या आप हमारे शरीरमें मसाला भरकर रखेंगे? यह मान लेनेकी जरूरत नही कि हम खाना बनाने और बरतन मलनेके लिअे पैदा हुअी हैं। मुझे अेक आदमीने मनुस्मृतिसे चुन-चुन कर कुछ चुभनेवाले

५३
छड़ी नहीं

स० —मैं अेक अध्यापक हूं। स्कूलके लड़कों और अपने बच्चोंके साथ बरताव करनेमें मैं आपके अहिंसाके असूल पर अमल करनेका प्रयत्न करता हूं। स्कूलके लड़कोंके साथ मुझे काफी सफलता भी मिली है। सिर्फ अेक ही बदमाश लड़का है, जिसे मैं सुधार नहीं सका। असे मैं हेडमास्टर साहबके पास भेज दूंगा। पर मेरे अपने बच्चोंको अकसर मेरी पीटनेकी अिच्छा हो आती है, हालांकि मैं असे दबा लेता हूं। मेरे अेक चाचा मेरे खयालके नहीं हैं। वे अिस पुरानी कहावतके अनुयायी हैं कि 'लातोंके भूत बातोंसे नहीं मानते हैं'; वे कहते हैं कि बगैर डंडेके बच्चे बिगड़ जाते हैं। और मैं देखता हूं कि बच्चे भी अुन्हींकी बात मानते हैं। मुझे अपने बच्चोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये? कोअी अहिंसक शिक्षक किसी बदमाश लड़केके साथ कैसा बरताव करे?

ज० —मुझे अिसमें जरा भी शका नहीं कि आपको अपने बच्चोंको और विद्यार्थियोंको शारीरिक या कोअी दूसरे किस्मकी सजा नहीं देनी चाहिये। अगर आप चाहें और आपमें यह योग्यता हो तो अपने बच्चों या विद्यार्थियोंका दिल पिघलानेको आप खुद अपनेको सजा दे सकते हैं। बहुतसी माताओंने अपने बच्चोंको अिस तरह सुधारा है। मैंने स्वयं बहुत बार अैसा किया है। दक्षिण अफ्रीकामें मेरा वास्ता जंगली लड़कोंसे पड़ा था। अुनमें हिन्दू, मुसलमान, अीसाअी, पारसी सभी थे। मुझे याद नहीं है कि अेकके सिवा मैंने कभी किसीको सजा दी हो। मेरा अहिंसक अुपाय हमेशा ही सफल रहा। जब शिक्षकों और विद्यार्थियोंमें प्रेमकी गांठ बंध जाती है, तब विद्यार्थी कभी यह सहन नहीं करते कि शिक्षक अुनके कारण कष्ट अुठायें। रही बदमाश लड़कोंकी समस्या। सो अगर अुनके मनमें आपके लिअे मान नहीं है, तो आप अुनके साथ असहयोग कर सकते हैं। यानी अुन्हें अपने स्कूलसे निकाल सकते हैं। अहिंसा आपको मजबूर नहीं करती कि आप अैसे लड़कोंको स्कूलमें रखें, जो स्कूलके नियमोंका पालन नहीं करते।

हरिजनसेवक, ६–७–'४०

अरबी कहां और तुलसीके बिना हिन्दी कहां? आप लोग अैसा साहित्य क्यों नहीं देते? मैंने जो यह कहा है, अुस पर विचार करना, बार-बार विचार करना और बेकार मालूम हो तो अुसे फेंक देना।

हरिजनबन्धु, २०–१२–'३६

५२
संस्कृतकी अुपेक्षा

स० — क्या आप जानते हैं कि पटना विश्वविद्यालयने अेक तरहसे संस्कृतकी पढ़ाओ अुड़ा दी है? क्या आप अिस कार्रवाओको पसन्द करते हैं? करते हों तो 'हरिजन' में अिस पर अपनी राय जाहिर करेंगे?

ज० — मुझे मालूम नहीं कि पटना विश्वविद्यालयने क्या किया है। मगर मैं आपसे अिस बातमें बिलकुल सहमत हूं कि संस्कृतकी पढ़ाओकी बुरी तरह अुपेक्षा की जा रही है। मैं तो अुस पीढ़ीका आदमी हूं, जिसका प्राचीन भाषाओंकी पढ़ाओमें विश्वास था। मैं यह नहीं मानता कि अैसी पढ़ाओसे समय और शक्ति बरबाद होती है। अुलटे, मैं यह मानता हूं कि अिससे आधुनिक भाषाओंकी पढ़ाओमें मदद मिलती है। जहां तक भारतवर्षका संबंध है, यह बात और किसी भी प्राचीन भाषाकी अपेक्षा संस्कृत पर अधिक लागू होती है; और हर राष्ट्रवादीको संस्कृत पढ़नी चाहिये। क्योंकि अिससे प्रान्तीय भाषाओंका अध्ययन आसान हो जाता है। अिसी भाषामें तो हमारे पूर्वजोंने विचार किया और लिखा है। यदि हिन्दू बालकोंको अपने धर्मकी भावना हृदयंगम करनी है, तो अेक भी लड़के या लड़कीको संस्कृतका प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त किये बिना नहीं रहना चाहिये। देखिये, गायत्रीका अनुवाद ही नहीं हो सकता। मेरी रायमें अुसका अेक विशेष अर्थ है, और मूल मंत्रमें जो संगीत है वह अनुवादमें कैसे आयेगा? गायत्री तो मैंने जो कुछ कहा है अुसका अेक अुदाहरण है।

हरिजनसेवक, ९–३–'४०

सरकारी मदद पर निर्भर करता है, वह अपने लिअे कोअी भी धर्म रखने लायक नहीं होता, बल्कि अुसके पास धर्मके नामसे पुकारी जानेवाली कोअी चीज ही नहीं होती। यह बात जितनी मुझे स्पष्ट दिखाअी देती है, अुतनी ही दूसरोंको भी दिखाअी दे सकती है। अिसलिअे अिसके समर्थनमें यहां कोअी अुदाहरण देना जरूरी नहीं है।

अखबारोंमें प्रकट हुअे मौलाना साहबके विचारोंमें दूसरा ध्यान खींचनेवाला विषय अुर्दू और नागरी लिपियोंके बदले रोमन लिपि अपनानेकी बातसे सम्बन्ध रखता है। यह सुझाव चाहे जितना मोहक हो और हिन्दुस्तानी सैनिकोंके बारेमें कुछ भी सही क्यों न हो, मेरे विचारसे हमारी अिन दो लिपियोंकी जगह रोमन लिपिको देना अेक घातक भूल होगी। और अिसका नतीजा हमारे लिअे कुअेंमें से निकल कर खाअीमें गिरने जैसा होगा। अिस सम्बन्धमें मैं चाहूंगा कि आप पिछली २१ जनवरीको दिया हुआ मेरा अखबारी बयान पढ़ जायं।

तीसरी जिस बातसे मुझे दुःख हुआ, वह फौजी तालीमसे संबंध रखती है। मुझे लगता है कि अिस संबंधमें सारे राष्ट्रके लिअे कोअी फैसला करनेसे पहले हमें बहुत समय तक रुकना और विचार करना चाहिये। वर्ना मुमकिन है हम दुनियाके लिअे आशीर्वाद बननेके बदले आफत बन जायं। नेता बनाये नहीं जाते, वे पैदा होते हैं। क्या राज्य या सरकारको पूरी आजादी मिलनेसे पहले ही अिस संबंधमें जल्दी मचाना चाहिये? अिसलिअे केन्द्रीय सलाहकार बोर्डने जिस तरहकी व्यापक सिफारिशें की हैं, अुनसे मुझे अचरज होता है।

हरिजनसेवक, २३-३-'४७

२

धार्मिक शिक्षणके बारेमें मौलाना आजाद

[गांधीजीने श्री आर्यनायकमूको जो पत्र लिखा था, अुसका विषय समझनेके लिअे जरूरी होनेसे मौलाना साहबकी पत्र-प्रतिनिधियोंके साथ हुअी मुलाकातकी ता० १९-२-'४७ के 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' में जो रिपोर्ट छपी थी अुसमें से लिया गया अुद्धरण नीचे दिया जाता है।]

स्कूलोंमें धार्मिक शिक्षण देनेके बारेमें मौलाना आजादने कहा: "हिन्दुस्तानमें दूसरे देशोंके बनिस्बत धर्म पर ज्यादा जोर दिया जाता रहा है,

५४

धार्मिक शिक्षण, फौजी तालीम और रोमन लिपि

१

[आजके संक्रान्ति-कालमें ये तीनों मसले जनताके मनको परेशान कर रहे हैं। हिन्दुस्तानी तालीमी संघके मंत्री श्री आर्यनायकम्‌को लिखे अपने पत्रमें गांधीजीने अिन मसलों पर अपनी स्पष्ट राय बताअी है। स्वतंत्र राष्ट्रके नाते हमारे विकाससे सम्बन्ध रखनेवाले अिन तीनों विषयोंका बहुत बड़ा महत्त्व है, अिसलिअे यह पूरा पत्र हम नीचे देते हैं। मौलाना आजाद द्वारा पत्र-प्रतिनिधियोंको दी गअी मुलाकातका विवरण तथा केन्द्रीय सलाहकार बोर्डकी सिफारिशें अिस पत्रके विषयको समझनेके लिअे जरूरी होनेके कारण अिस लेखके बाद दोनों दिये गये हैं। —प्रकाशक]

आपके थोड़े वक्तके लिअे आने और आपसे आम दिलचस्पीकी बातें कम बातें करने पर भी मुझे बड़ी खुशी हुअी है।

आपने मुझे 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' की अेक कतरन दी थी। अुसमें शिक्षा पर मौलाना आजादके विचार दिये गये हैं। अुनकी मुलाकातका यह विवरण सच्चा है, अैसा मानकर मैं थोड़े और साफ शब्दोंमें कहता हूं कि वह तालीमी संघ द्वारा अख्तियार किये गये तरीकेसे बिलकुल मेल नहीं खाता। हिन्दुस्तान गांवोंमें बसा है; थोड़ेसे पश्चिमी ढंगके शहरोंमें नहीं, जो विदेशी शासनके गढ़ हैं।

मैं नहीं मानता कि सरकार धार्मिक शिक्षणसे सम्बन्ध रख सकती है या अुसे चला भी सकती है। मेरा विश्वास है कि धार्मिक शिक्षण देनेका काम पूरी तरह धार्मिक संस्थाओंका ही होना चाहिये। धर्म और नीतिको मिलाना नहीं चाहिये। मेरा विश्वास है कि नीति या सदाचारके बुनियादी सिद्धान्त सब धर्मोंमें अेक ही हैं। बुनियादी नीतिकी तालीम देना बेशक सरकारका काम है। धर्मसे मेरा मतलब बुनियादी नीति नहीं बल्कि अुन बातोंसे है, जिनका सिक्का लगाकर अलग अलग सम्प्रदाय खड़े किये जाते हैं। हमने सरकारी मदद पानेवाले और सरकारी धर्मके बहुत नतीजे भोगे हैं। जो समाज या समूह अपने धर्मकी रक्षाके लिअे कुछ हद तक या पूरी तरह

सरकारी मदद पर निर्भर करता है, वह अपने लिओ कोओी भी धर्म रखने लायक नहीं होता, बल्कि अुसके पास धर्मके नामसे पुकारी जानेवाली कोओी चीज ही नहीं होती। यह बात जितनी मुझे स्पष्ट दिखाओी देती है, अुतनी ही दूसरोंको भी दिखाओी दे सकती है। अिसलिओ अिसके समर्थनमें यहां कोओी अुदाहरण देना जरूरी नहीं है।

अखबारोंमें प्रकट हुओे मौलाना साहबके विचारोंमें दूसरा ध्यान खींचनेवाला विषय अुर्दू और नागरी लिपियोंके बदले रोमन लिपि अपनानेकी बातसे सम्बन्ध रखता है। यह सुझाव चाहे जितना मोहक हो और हिन्दुस्तानी सैनिकोंके बारेमें कुछ भी सही क्यों न हो, मेरे विचारसे हमारी अिन दो लिपियोंकी जगह रोमन लिपिको देना अेक घातक भूल होगी। और अिसका नतीजा हमारे लिओ कुओंमें से निकल कर खाओीमें गिरने जैसा होगा। अिस सम्बन्धमें मैं चाहूंगा कि आप पिछली २१ जनवरीको दिया हुआ मेरा अखबारी बयान पढ़ जायं।

तीसरी जिस बातसे मुझे दुःख हुआ, वह फौजी तालीमसे संबंध रखती है। मुझे लगता है कि अिस संबंधमें सारे राष्ट्रके लिओ कोओी फैसला करनेसे पहले हमें बहुत समय तक रुकना और विचार करना चाहिये। वर्ना मुमकिन है हम दुनियाके लिओ आशीर्वाद बननेके बदले आफत बन जायं। नेता बनाये नहीं जाते, वे पैदा होते हैं। क्या राज्य या सरकारको पूरी आजादी मिलनेसे पहले ही अिस संबंधमें जल्दी मचाना चाहिये? अिसलिओ केन्द्रीय सलाहकार बोर्डने जिस तरहकी व्यापक सिफारिशें की हैं, अुनसे मुझे अचरज होता है।

हरिजनसेवक, २३-२-'४७

२

धार्मिक शिक्षणके बारेमें मौलाना आजाद

[गांधीजीने ... लिखा था, ... लिओ जरूरी होनेसे मौलाना ... ता० १९-२-'४७ के ... में जो रिपोर्ट छपी ... गया अुद्धरण नीचे दिया ... स्कूलोंमें धार्मिक ... स्थानमें दूसरे देशोंके

५४

धार्मिक शिक्षण, फौजी तालीम और रोमन लिपि

१

[आजके संक्रान्ति-कालमें ये तीनों मसले जनताके मनको परेशान कर रहे हैं। हिन्दुस्तानी तालीमी संघके मंत्री श्री आर्यनायकम्‌को लिखे गये पत्रमें गांधीजीने अिन मसलों पर अपनी स्पष्ट राय बताअी है। स्वराज्य होनेके नाते हमारे विकाससे सम्बन्ध रखनेवाले अिन तीनों विषयोंका बड़ा भारी महत्त्व है, अिसलिअे यह पूरा पत्र हम नीचे देते हैं। मौलाना आज़ादकी पत्र-प्रतिनिधियोंको दी गअी मुलाकातका विवरण तथा केन्द्रीय सलाहकार बोर्डकी सिफारिशें अिस पत्रके विषयको समझनेके लिअे जरूरी होनेसे अिस लेखके बाद दोनों दिये गये हैं।

— सम्पादक]

आपके थोड़े वक्तके लिअे आने और आपसे आम दिलचस्पीकी बातों पर बातें करने पर भी मुझे बड़ी खुशी हुअी है।

आपने मुझे 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' की अेक कतरन दी थी। अुसमें लिखा है कि अुस पर मौलाना आज़ादके विचार दिये गये हैं। अुनकी मुलाकातका यह लिखा सच्चा है, अैसा मानकर मैं थोड़े और साफ शब्दोंमें कहता हूँ कि वह तालीमी संघ द्वारा अख्तियार किये गये तरीकेसे बिलकुल मेल नहीं खाता। हिन्दुस्तान गांवोंमें बसा है; थोड़ेसे पश्चिमी ढंगके शहरोंमें नहीं, जो सिर्फ ताकतके गढ़ हैं।

मैं नहीं मानता कि सरकार धार्मिक शिक्षासे सम्बन्ध रख सकती है या अुसे पूरा भी कर सकती है। मेरा विश्वास है कि धार्मिक शिक्षा देनेका काम पूरी तरह धार्मिक संस्थाओंका ही होना चाहिये। धर्म और नीतिको मिलाना नहीं चाहिये। मेरा विश्वास है कि नीति या सदाचारके बुनियादी सिद्धान्त सब धर्मोंमें अेक ही हैं। बुनियादी नीतिकी तालीम देना बेशक सरकारका काम है। धर्मसे मेरा मतलब बुनियादी नीति नहीं बल्कि वह चीज है, जिसका सिक्का लगाकर अलग अलग सम्प्रदाय बने हुअे हैं। हमने सरकारी मदद पानेवाले और सरकारी धर्मके बहुत बुरे नतीजे देखे हैं। या समाज या समूह अपने धर्मकी रक्षाके लिअे कुछ हद तक

भाग्यताओंकी तरफ मनुष्योंको खीचनेके बदले मानवताका सन्देश लोगोंमें फैलायें, तो वे औसाकी मूल भावनाको अधिक सच्चे ढंगसे अमली रूप देंगे। अगर सारी मिशनरी सोसायटियां अैसी समझदारीकी दृष्टि रखेंगी, तो वे जो सेवा कर सकें अुसे स्वीकार करनेमें हिन्दुस्तान संकोच नहीं करेगा।"

हरिजनसेवक, २३-३-'४७

३

केन्द्रीय सलाहकार बोर्डकी सिफारिशें

[गांधीजी द्वारा श्री आर्यनायकम्‌को लिखे पत्रमें जिन सिफारिशोंका जिक्र किया गया है, वे नीचे दी जाती हैं।]

नअी दिल्ली, २७ जनवरी

"केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्डने राष्ट्रीय युद्ध अेकेडेमीकी कार्यसमितिके अिस मतका समर्थन किया है कि देशी रियासतों और प्रान्तोंमें अैसे छात्रालयवाले स्कूल खोले जाने चाहिये, जिनमें विद्यार्थियोंके चरित्र और नेतृत्व-शक्तिके विकासकी सारी सहूलियतें मिल सकें। ये स्कूल राष्ट्रीय युद्ध अेकेडेमीको विद्यार्थी मुहैया करनेका काम करें।

"बोर्डका खयाल है कि युद्धके बादकी राष्ट्रीय शिक्षाकी योजनामें जिन स्कूलोंकी कल्पना की गअी है, अुनमें स्थलसेना, नौसेना और हवाअीसेनाके लिअे आवश्यक नेतृत्व, चरित्र, बुद्धि, साहस और शारीरिक स्वास्थ्यकी तालीम मिल जायेगी।

"यह बोर्ड प्रान्तीय सरकारोंका ध्यान अपने स्कूलोंका अिस हेतुसे विकास करनेकी जरूरत पर खींचना चाहता है, ताकि फौजी अधिकारियोंकी कल्पनामें जिस ढंगके स्कूल हैं अुनका काम शुरू हो सके।"

हरिजनसेवक, २३-३-'४७

और अब भी दिया जाता है। न सिर्फ हिन्दुस्तानकी पुरानी परम्परामें बल्कि लोगोंका आजका मानस भी धार्मिक शिक्षणके महत्त्व पर जोर देनेका आग्रह रखता है। अगर सरकार धार्मिक शिक्षणको मामूली शिक्षामें दाखिल करनेका फैसला कर ले, तो यह जरूरी है कि वह धार्मिक शिक्षण बहुत अच्छे प्रकारका हो।

"हिन्दुस्तानकी खानगी संस्थाओंमें अकसर जो धार्मिक शिक्षण दिया जाता है, वह बहुत बार विद्यार्थीके विचारोंको व्यापक और अुदार बनाने तथा अुनमें सब मनुष्योंके लिअे सहिष्णुताकी भावना पैदा करनेके बदले बिलकुल अुलटा ही परिणाम लाता है। संभव है सरकारकी देखरेखमें अलग अलग नामोंसे पुकारे जानेवाले धर्मोंका शिक्षण भी खानगी संस्थाओंकी अपेक्षा ज्यादा अुदार भावसे दिया जा सके। सारे धार्मिक शिक्षणका अुद्देश्य मनुष्योंको ज्यादा सहिष्णु और ज्यादा अुदार विचारवाले बनानेका होना चाहिये। मेरा खयाल है कि खानगी संस्थाओं पर छोड़ देनेके बदले अगर सरकार अिस सवालको हाथमें ले ले, तो यह मकसद ज्यादा अच्छे ढंगसे पूरा हो सकता है। अिस सवाल पर मैं जल्दी ही सरकारका फैसला जाहिर करनेकी अुम्मीद रखता हूं।

"दूसरा सवाल, जिसके बारेमें मैं अपनी राय जाहिर करना चाहता हूं, मिशनरी सोसायटियोंकी शिक्षण-प्रवृत्तियोंसे सम्बन्ध रखता है। अिसमें कोअी शक नहीं कि अुन्होंने नये जमानेकी शिक्षाको फैलानेमें और विद्यार्थियोंकी दृष्टिको व्यापक और अुदार बनानेमें महत्त्वका भाग लिया है। यह केवल हिन्दुस्तानके बारेमें ही नहीं, बल्कि पूर्वके दूसरे देशोंके बारेमें भी सही है।

"भूतकालमें किये हुअे मिशनरियोंके कामकी कीमती मिसालें नजर रखी जायं, तो कोअी कारण नहीं है कि आगे भी अुसी ढंगसे किये जानेवाले अुनके मानव-कल्याणके कामोंकी अुतनी ही कद्र न की जाय। सिर्फ अेक बातमें कभी कभी दिक्कतें पैदा होती हैं। वह है लोगोंका धर्म बदलनेकी और कभी कभी भारी संख्यामें अेकसाथ धर्म बदलनेकी। अिस प्रश्न पर दुनियाके विचार बहुत बदल गये हैं। जिम्मेदार मिशनरी स्वयं अिस नतीजे पर पहुंचे हैं कि भारी संख्यामें अेकसाथ धर्म बदलवानेसे सच्चे अर्थमें धर्म नहीं बदलता। अीसाने स्वयं आत्माके बपतिस्मा पर अधिक जोर दिया था, न कि पानीके बपतिस्मा पर। अिसलिअे मिशनरी लोग अीसाअी सम्प्रदायकी

सच्ची शिक्षा

दूसरा भाग

विद्यार्थी-जीवनके प्रश्न

सच्ची शिक्षा

दूसरा भाग

विद्यार्थी-जीवनके प्रश्न

१

विद्यार्थियोंसे

१

[१९१५ में मद्रासके विद्यार्थियोंके अभिनन्दन-पत्रके जवाबमें दिये गये भाषणसे।]

तुमने जो सुन्दर राष्ट्रीय गीत गाया, अुसमें कविने भारतमाताका वर्णन करते हुअे जितने हो सके अुतने विशेषण काममें लिये हैं। अुसने भारतमाताको सुहासिनी, सुमधुर-भाषिणी, सुवासिनी, सर्वशक्तिमती, सर्वसद्‌गुणवती, सत्यवती, बुद्धिमती, और महान सतयुगमें ही सभव हो अैसी मानव-जातिसे बसी हुअी वर्णन किया है। कवि भारतमाताकी अेक अैसी भूमिके रूपमें कल्पना करता है, जो सारी दुनियाको, सारी मनुष्य-जातिको शरीर-बलसे नहीं, बल्कि आध्यात्मिक शक्तिसे वशमें कर लेगी। क्या हम यह गीत गा सकते हैं? मैं स्वयं अपनेसे पूछता हूं : 'यह गीत सुनते समय खड़े हो जानेका मुझे क्या हक है?' कविने तो हमारे लिअे अेक आदर्श चित्रित किया है। वह अब तक अेक भविष्यकी सूचनाके रूपमें ही रहा है। कवि द्वारा भारतमाताके वर्णनमें प्रयोग किया हुआ अेक-अेक शब्द तुम लोगोंको, जिन पर भारतकी आशाअें लगी हुअी हैं, सच्चा साबित करना है। आज तो मुझे अैसा लगता है कि मातृभूमिके वर्णनमें ये विशेषण अयोग्य स्थान पर अुपयुक्त हुअे हैं। अिसलिअे कविने मातृभूमिके बारेमें जो कुछ कहा है, अुसे तुम्हें और मुझे सिद्ध करके दिखाना है।

मैं तुमसे, मद्रासके विद्यार्थियोंसे और सारे भारतके विद्यार्थियोंसे पूछता हूं कि क्या तुम्हें अैसी शिक्षा मिलती है, जो अिस आदर्शको पूरा करनेके लायक तुम्हें बनाये और जिससे तुममें भरे अुत्तम तत्त्व प्रगट हो सकें? या यह शिक्षा सरकारके लिअे नौकर और व्यापारी कोठियोंके लिअे गुमास्ते तैयार करनेकी मशीन है? जो शिक्षा तुम ले रहे हो, अुसका अुद्देश्य क्या सरकारी विभागोंमें या दूसरे किसी विभागमें नौकरी पानेका है? यदि तुम्हारी शिक्षाका अुद्देश्य यही हो, यदि तुमने शिक्षाका यही अुद्देश्य बनाया हो, तो जो चित्र कविने खींचा है वह कभी सिद्ध नहीं होगा। तुमने मुझे यह कहते

१
विद्यार्थियोंसे

१

[१९१५ में मद्रासके विद्यार्थियोंके अभिनन्दन-पत्रके जवाबमें दिये गये भाषणसे।]

तुमने जो सुन्दर राष्ट्रीय गीत गाया, अुसमें कविने भारतमाताका वर्णन करते हुअे जितने हो सके अुतने विशेषण काममें लिये हैं। अुसने भारतमाताको सुहासिनी, सुमधुर-भाषिणी, सुवासिनी, सर्वशक्तिमती, सर्वसद्‌गुणवती, सत्यवती, बुद्धिमती, और महान सतयुगमें ही संभव हो अैसी मानव-जातिसे बसी हुअी वर्णन किया है। कवि भारतमाताकी अेक अैसी भूमिके रूपमें कल्पना करता है, जो सारी दुनियाको, सारी मनुष्य-जातिको शरीर-बलसे नहीं, बल्कि आध्यात्मिक शक्तिसे वशमें कर लेगी। क्या हम यह गीत गा सकते हैं? मैं स्वयं अपनेसे पूछता हूं: 'यह गीत सुनते समय खडे हो जानेका मुझे क्या हक है?' कविने तो हमारे लिअे अेक आदर्श चित्रित किया है। वह अब तक अेक भविष्यकी सूचनाके रूपमें ही रहा है। कवि द्वारा भारतमाताके वर्णनमें प्रयोग किया हुआ अेक-अेक शब्द तुम लोगोंको, जिन पर भारतकी आशाअें लगी हुअी हैं, सच्चा साबित करना है। आज तो मुझे अैसा लगता है कि मातृभूमिके वर्णनमें ये विशेषण अयोग्य स्थान पर प्रयुक्त हुअे हैं। अिसलिअे कविने मातृभूमिके बारेमें जो कुछ कहा है, अुसे तुम्हें और मुझे सिद्ध करके दिखाना है।

मैं तुमसे, मद्रासके विद्यार्थियोंसे और सारे भारतके विद्यार्थियोंसे पूछता हूं कि क्या तुम्हें अैसी शिक्षा मिलती है, जो अिस आदर्शको पूरा करनेके लायक तुम्हें बनाये और जिससे तुममें भरे अुत्तम तत्त्व प्रगट हो सकें? या यह शिक्षा सरकारके लिअे नौकर और व्यापारी कोठियोंके लिअे गुमाश्ते तैयार करनेकी मशीन है? जो शिक्षा तुम ले रहे हो, अुसका अुद्देश्य क्या सरकारी विभागोंमें या दूसरे किसी विभागमें नौकरी पानेका है? यदि तुम्हारी शिक्षाका अुद्देश्य यही हो, यदि तुमने शिक्षाका यही अुद्देश्य बनाया हो, तो जो चित्र कविने खींचा है वह कभी सिद्ध नहीं होगा। तुमने मुझे यह कहते

सुना होगा या पढ़ा होगा कि मैं वर्तमान संस्कृतिका पक्का विरोधी हूं। यूरोपमें अिस समय क्या हो रहा है, अुसकी तरफ जरा नजर डालो। यदि तुम अिस निश्चय पर आये हो कि यूरोप आजकी सभ्यताके पैरों तले कुचला जा रहा है, तो फिर तुम्हें और तुम्हारे बड़ोंको अपने देशमें अुस सभ्यताका फैलाव करनेसे पहले गहरा विचार करना चाहिये। किन्तु मुझे यह कहा गया है कि 'हमारे देशमें हमारे शासक यह सभ्यता फैलाते हैं तो फिर हम क्या कर सकते हैं?' अिस बारेमें तुम भुलावेमें न आ जाना। मैं पलभरके लिअे भी यह नहीं मान सकता कि जब तक हम अुस संस्कृतिको स्वीकार करनेके लिअे तैयार न हों, तब तक कोअी भी शासक हममें अुसे जबरदस्ती फैला सकता है। और कभी अैसा हो भी कि हमारे शासक हममें अुस सभ्यताका प्रचार करते हैं, तो भी मैं मानता हूं कि शासकोंको अस्वीकार किये बिना अुस संस्कृतिको अस्वीकार करनेके लिअे हममें काफी बल मौजूद है। मैंने बहुत बार खुले तौर पर कहा है कि ब्रिटिश जनता हमारे साथ है। मैं यहां यह नहीं बताना चाहता कि वह जनता हमारे साथ क्यों है। यदि भारत संतोंके रास्ते पर चलेगा, जिनके बारेमें हमारे सभापतिजी बोले हैं, तो मैं मानता हूं कि वह अिस महान जनताके जरिये अेक संदेश — जड़ शक्तिका नहीं, बल्कि प्रेमकी शक्तिका संदेश — दुनियाको पहुंचा सकेगा और अुस समय हमें खून बहाकर नहीं, बल्कि सिर्फ आत्मबलसे अपने विजेताओंको जीतनेका सौभाग्य मिलेगा।

भारतमें होनेवाली घटनाओंका विचार करने पर मुझे लगता है कि हमारे लिअे यह निर्णय कर लेना जरूरी है कि राजनीतिक कारणोंसे होनेवाले खूनों और लूटपाटके बारेमें हमारी क्या राय है। ये सब विदेशी तत्व हैं। ये हमारी जमीनमें घर नहीं कर सकेंगे। फिर भी अिस तरहके आतंकका विचार करते हुअे तुम्हें, विद्यार्थियोंको, यह सावधानी रखनी है कि तुम मनमें या हृदयमें अुसकी जरा भी हिमायत न करो। मैं सत्याग्रहीके नाते तुम्हें अिसके बजाय अेक बहुत ठोस और शक्तिशाली चीज दूंगा। तुम खुद अपनेमें ही आनंद पैदा करो। अपने भीतर ही क्रांति करो। जहां-जहां जुल्म दिखाअी दे, वहां तुम जरूर अुसका सामना करो; किन्तु जालिमका खून बहाकर नहीं। हमारा धर्म हमें यह नहीं सिखाता। हमारा धर्म अहिंसाके सिद्धान्त पर रचा गया है। अुसका क्रियात्मक रूप प्रेमके सिवा और कुछ नहीं; वह प्रेम जो हमें

अपने पड़ोसी या मित्र पर ही नहीं, बल्कि जो हमारे शत्रु हों अुन पर भी रखना है।

मैं अिसी बारेमें कुछ कहूंगा। यदि हमें सत्यका पालन करना हो, अहिंसाका पालन करना हो, तो अुसके साथ ही हमें निडर भी बनना होगा। हमारे शासक जो कुछ करते हैं, वह हमारी रायमें बुरा हो और हमें अैसा लगे कि अपना विचार अुन्हें बताना हमारा धर्म है, तो भले ही वह विचार राजद्रोही माना जाता हो, तो भी मैं तुमसे आग्रह करूंगा कि तुम वह विचार अुन्हें जरूर बता दो। किन्तु यह तुम्हें अपनी जिम्मेदारी पर करना है। तुम्हें अुसके फल भोगनेको तैयार रहना पड़ेगा। तुम अुसके फल भोगनेको तैयार रहोगे, फिर भी कुटिल बननेको तैयार न होगे, तो मेरी रायमें यह कहा जा सकता है कि तुमने सरकार तकको अपना विचार बतानेके अपने हकका सदुपयोग किया।

मैं ब्रिटिश राज्यका मित्र हूं, क्योंकि मैं मानता हूं कि ब्रिटिश साम्राज्यकी दूसरी सब प्रजाओंकी तरह मैं अपने लिअे भी साम्राज्यमें बराबरीका हिस्सा मांग सकता हूं। मैं आज वह बराबरीका हिस्सा मांग भी रहा हूं। मैं पराजित प्रजाका नहीं हूं। मैं अपनेको हारी हुअी प्रजा कहलवाता भी नहीं। किन्तु यह अेक बात ध्यानमें रखनेकी है: हमें हमारा हिस्सा देनेका काम ब्रिटिश शासकोंको नहीं करना है। वह तो हमें स्वयं ही लेना पड़ेगा। अपनी जरूरतकी चीज मैं ले सकता हूं; किन्तु मैं अपना फर्ज अदा करके ही अुसे ले सकता हूं। अलबत्ता, हमें अपना धर्म समझनेके लिअे मेक्समूलरके पास जानेकी जरूरत न होनी चाहिये। फिर भी वे ठीक कहते हैं कि हमारे धर्मका आधार 'अधिकार' पर नहीं, बल्कि कर्तव्य पर है। यदि तुम यह मानते हो कि हमें जो कुछ चाहिये वह हम अपना फर्ज अच्छी तरह अदा करके ले सकेंगे, तो फिर तुमको अपने फर्जका विचार करना चाहिये; और अिस ढंगसे तुम्हें अपना मार्ग बनानेमें किसी भी आदमीका डर नहीं रहेगा। तुम्हें सिर्फ अीश्वरका ही डर रहेगा। यह आदेश मेरे गुरु, और मैं कहूं तो तुम्हारे भी गुरु, श्री गोखलेने हमें दिया है। वह आदेश क्या है? वह आदेश भारत सेवक समाजके विधानसे मालूम हो जाता है। मैं अुसीके अनुसार अपना जीवन बिताना चाहता हूं। वह आदेश देशकी राजनीतिक संस्थाओं और राजनीतिक जीवनको धार्मिक रूप देनेका है। हमें अुसे तुरन्त अमलमें लाना

शुरू कर देना चाहिये। अैसा हो तो विद्यार्थियोंको राजनीतिके सवालोंसे दूर रहनेकी जरूरत नहीं रहेगी। अुनके लिअे धर्म जितना जरूरी है, अुतनी ही जरूरी राजनीति भी रहेगी। राजनीति और धर्मको अलग नहीं किया जा सकता।

मैं जानता हूं कि मेरे विचार तुम्हें शायद मंजूर न भी हों, तो भी जो कुछ मेरे अंतरमें अुछल रहा है, वही मैं तुम्हें दे सकता हूं। दक्षिण अफ्रीकाके अपने अनुभवके आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि हमारे जिन देशवासियोंको आजकलकी शिक्षा नहीं मिली है, परन्तु जिन्होंने ऋषियों द्वारा की हुअी तपस्याकी विरासत पाअी है, जो अंग्रेजी साहित्यका ककहरा भी नहीं जानते, जिन्हें आजकलकी शिक्षाका पता भी नहीं, वे भी अुत्तम गुण प्रकट करनेमें सफल हुअे थे। दक्षिण अफ्रीकामें हमारे अज्ञान और अशिक्षित भाअियोंके लिअे जो कुछ कर दिखाना संभव था, वह हमारी पवित्र भूमि पर तुम्हारे और मेरे लिअे कर दिखाना दस गुना ज्यादा संभव है। मेरी यही प्रार्थना है कि तुम्हारा और मेरा अैसा सौभाग्य हो।

२

[यह भाषण गुरुकुलके विद्यार्थियोंके सामने १९१५ में दिया गया था।]

मैं आर्यसमाजका बहुत आभारी हूं। मुझे अुसके आन्दोलनसे कअी बार प्रोत्साहन मिला है। मैंने अुसके अनुयायियोंमें बहुत त्यागवृत्तिकी भावना देखी है। भारतके अपने दौरेमें मैं बहुतसे आर्यसमाजियोंके सम्पर्कमें आया हूं। वे देशके लिअे अच्छा काम कर रहे हैं। मैं आपके सम्पर्कमें आ सका हूं, अिसके लिअे मैं महात्माजीका आभार मानता हूं। अिसके साथ ही मैं खुले दिलसे यह बता देना चाहता हूं कि मैं सनातनी हूं। मुझे हिन्दू धर्मसे पूरा संतोष है। वह धर्म अितना विशाल है कि अुसमें हर तरहके विश्वासोंको आश्रय मिलता है। आर्यसमाजी, सिक्ख और ब्रह्मसमाजी भले ही अपनेको हिन्दुओंसे अलग समझना चाहें, किन्तु मुझे तो अिसमें शक नहीं कि आगे चलकर वे सब हिन्दू धर्ममें मिल जायेंगे और अुसीसे शांति पायेंगे। दूसरी सब मनुष्यकी बनायी हुअी संस्थाओंकी तरह हिन्दू धर्ममें भी कमियां और दोष हैं। सुधारके लिअे कोअी सेवक प्रयत्न करना चाहे, तो अुसके लिअे यह बड़ा क्षेत्र है। किन्तु हिन्दू धर्मसे अलग होनेके लिअे कोअी कारण नहीं।

मुझे अपने दौरेमें जगह जगह पूछा गया है कि भारतको अिस समय किस चीजकी जरूरत है। जो जवाब मैंने और जगह दिया है, वही जवाब यहां देना मुझे ठीक मालूम होता है। मामूली तौर पर कहें तो हमें ज्यादासे ज्यादा जरूरत आज सच्ची धार्मिक भावनाकी है। किन्तु मैं जानता हूं कि यह अुत्तर बहुत व्यापक होनेके कारण किसीको अिससे संतोष नहीं होगा। यह अुत्तर सब समयके लिअे सत्य है। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारी धार्मिक भावना लगभग मृतप्राय बन चुकी है, अिसलिअे हम सदा भयभीत दशामें रहते हैं। हम राजनीतिक और धार्मिक दोनों सत्ताओंसे डरते हैं। ब्राह्मणों और पण्डितोंके सामने हम अपने विचार बता नहीं सकते, और राजनीतिक सत्तासे बहुत ज्यादा डर जाते हैं। मैं मानता हूं कि अिस तरहका बरताव करनेसे हम अुनका और अपना अहित करते हैं। धर्मगुरुओं और शासकोंकी यह अिच्छा तो नहीं होगी कि हम अुनके सामने सचाअीको छिपायें। कुछ समय पहले बम्बअीकी अेक सभामें बोलते हुअे लार्ड विलिंग्डनने अपना अनुभव बताया था कि सचमुच 'ना' कहनेकी अिच्छा होते हुअे भी हम अैसा कहनेमें हिचकिचाते हैं। अिसलिअे अुन्होंने श्रोताओंको निडर बननेकी सलाह दी थी। किन्तु निडर होनेका यह मतलब कभी नहीं कि हम दूसरेके भावोंका खयाल ही न रखें या अुनका आदर न करें। चिरस्थायी और सच्चे फल पाना हो तो हमें पहले निडर जरूर बनना होगा। यह गुण धार्मिक जागृतिके बिना नहीं आ सकता। हम अीश्वरसे डरेंगे तो फिर आदमीसे नहीं डरेंगे। यदि हम यह समझें कि हममें अीश्वर बसता है, जो हमारे हरअेक विचार और कामका साक्षी है, जो हमारी रक्षा करता है और हमें अच्छे रास्ते चलाता है, तो हमें तमाम दुनियामें अीश्वरके सिवा और किसीका डर न रहे। अधिकारियोंके भी अधिकारी परमात्माकी वफादारी दूसरी सब वफादारियोंसे बढ़कर है और अुसीसे दूसरी सब वफादारियां सकारण बनती हैं।

जब हममें जितनी चाहिये अुतनी निडरता बढ़ जायगी, तो हमें मालूम होगा कि सुभीतेके अनुसार कभी भी छोड़े जा सकनेवाले स्वदेशीके जरिये नहीं, बल्कि सच्चे स्वदेशीसे ही हमारा अुद्धार हो सकेगा। स्वदेशीमें मुझे गहरा रहस्य दिखाअी देता है। मैं तो यह चाहता हूं कि हम अपने धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवनमें अुसे स्वीकार कर लें। यानी अुसकी सफलता मौका पड़ने पर स्वदेशी कपड़े पहन लेनेमें ही नहीं है। स्वदेशीका

शुरू कर देना चाहिये। अैसा हो तो विद्यार्थियोंको राजनीतिसे सुरक्षित दूर रहनेकी जरूरत नहीं रहेगी। अुनके लिअे धर्म जितना जरूरी है, अुतनी ही जरूरी राजनीति भी रहेगी। राजनीति और धर्मको अलग नहीं किया जा सकता।

मैं जानता हूं कि मेरे विचार तुम्हें शायद मंजूर न भी हों, तो भी जो कुछ मेरे अंतरमें अुछल रहा है, वही मैं तुम्हें दे सकता हूं। दक्षिण अफ्रीकाके अपने अनुभवके आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि हमारे जिन देशवासियोंको आजकलकी शिक्षा नहीं मिली है, परन्तु जिन्होंने ऋषियों द्वारा की हुअी तपस्याकी विरासत पाअी है, जो अंग्रेजी साहित्यका ककहरा भी नहीं जानते, जिन्हें आजकलकी शिक्षाका पता भी नहीं, वे भी अुत्तम गुण प्रकट करनेमें सफल हुअे थे। दक्षिण अफ्रीकामें हमारे अज्ञान और अशिक्षित भाअियोंके लिअे जो कुछ कर दिखाना संभव था, वह हमारी पवित्र भूमि पर तुम्हारे और मेरे लिअे कर दिखाना दस गुना ज्यादा संभव है। मेरी यही प्रार्थना है कि तुम्हारा और मेरा अैसा सौभाग्य हो।

२

[यह भाषण गुरुकुलके विद्यार्थियोंके सामने १९१५ में दिया गया था।]

मैं आर्यसमाजका बहुत आभारी हूं। मुझे अुसके आन्दोलनमें कअी बार प्रोत्साहन मिला है। मैंने अुसके अनुयायियोंमें बहुत त्यागवृत्तिकी भावना देखी है। भारतके अपने दौरेमें मैं बहुतसे आर्यसमाजियोंके सम्पर्कमें आया हूं। वे देशके लिअे अच्छा काम कर रहे हैं। मैं आपके सम्पर्कमें आ सका हूं, अिसके लिअे मैं महात्माजीका आभार मानता हूं। अिसके साथ ही मैं खुले दिलसे यह कह देना चाहता हूं कि मैं सनातनी हूं। मुझे हिन्दू धर्मसे पूरा संतोष है। यह धर्म अितना विशाल है कि अुसमें हर तरहके विश्वासोंको आश्रय मिलता है। आर्यसमाजी, सिक्ख और ब्रह्मसमाजी भले ही अपनेको हिन्दुओंसे अलग रखना चाहें, किन्तु मुझे तो अिसमें शक नहीं कि आगे चलकर वे सब हिन्दू धर्ममें मिल जायेंगे और अुसीसे शांति पायेंगे। दूसरी सब मनुष्यकी बनाअी हुअी संस्थाओंकी तरह हिन्दू धर्ममें भी कमियां और दोष हैं। सुधारके लिअे कोअी सेवक प्रयत्न करना चाहे, तो अुसके लिअे यह बड़ा क्षेत्र हिन्दू धर्मसे अलग होनेके लिअे कोअी कारण नहीं।

मुझे अपने दौरेमें जगह जगह पूछा गया है कि भारतको अिस समय किस चीजकी जरूरत है। जो जवाब मैंने और जगह दिया है, वही जवाब यहां देना मुझे ठीक मालूम होता है। मामूली तौर पर कहें तो हमें ज्यादासे ज्यादा जरूरत आज सच्ची धार्मिक भावनाकी है। किन्तु मैं जानता हूं कि यह अुत्तर बहुत व्यापक होनेके कारण किसीको अिससे संतोष नहीं होगा। यह अुत्तर सब समयके लिअे सत्य है। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारी धार्मिक भावना लगभग मृतप्राय बन चुकी है, अिसलिअे हम सदा भयभीत दशामें रहते हैं। हम राजनीतिक और धार्मिक दोनों सत्ताओंसे डरते हैं। ब्राह्मणों और पण्डितोंके सामने हम अपने विचार बता नहीं सकते, और राजनीतिक सत्तासे बहुत ज्यादा डर जाते हैं। मैं मानता हूं कि अिस तरहका बरताव करनेसे हम अुनका और अपना अहित करते हैं। धर्मगुरुओं और शासकोंकी यह अिच्छा तो नहीं होगी कि हम अुनके सामने सचाअीको छिपायें। कुछ समय पहले बम्बअीकी अेक सभामें बोलते हुअे लार्ड विलिंग्डनने अपना अनुभव बताया था कि सचमुच 'ना' कहनेकी अिच्छा होते हुअे भी हम अैसा कहनेमें हिचकिचाते हैं। अिसलिअे अुन्होंने श्रोताओंको निडर बननेकी सलाह दी थी। किन्तु निडर होनेका यह मतलब कभी नहीं कि हम दूसरेके भावोंका खयाल ही न रखें या अुनका आदर न करें। चिरस्थायी और सच्चे फल पाना हो तो हमें पहले निडर जरूर बनना होगा। यह गुण धार्मिक जागृतिके बिना नहीं आ सकता। हम अीश्वरसे डरेंगे तो फिर आदमीसे नहीं डरेंगे। यदि हम यह समझें कि हममें अीश्वर बसता है, जो हमारे हरअेक विचार और कामका साक्षी है, जो हमारी रक्षा करता है और हमें अच्छे रास्ते चलाता है, तो हमें तमाम दुनियामें अीश्वरके सिवा और किसीका डर न रहे। अधिकारियोंके भी अधिकारी परमात्माकी वफादारी दूसरी सब वफादारियोंसे बढ़कर है और अुसीसे दूसरी सब वफादारियां सकारण बनती हैं।

जब हममें जितनी चाहिये अुतनी निडरता बढ़ जायगी, तो हमें मालूम होगा कि सुभीतेके अनुसार कभी भी छोड़े जा सकनेवाले स्वदेशीके जरिये नहीं, बल्कि सच्चे स्वदेशीसे ही हमारा अुद्धार हो सकेगा। स्वदेशीमें मुझे गहरा रहस्य दिखाअी देता है। मैं तो यह चाहता हूं कि हम अपने धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवनमें अुसे स्वीकार कर लें। यानी अुसकी सफलता मौका पड़ने पर स्वदेशी कपड़े पहन लेनेमें ही नहीं है।

व्रत तो सदा ही पालना है और द्वेष या वैरभावसे नहीं, बल्कि अपने प्यारे देशके प्रति कर्तव्य-बुद्धिसे प्रेरित होकर पालना है। अिसमें शक नहीं कि विलायती कपड़ा पहन कर हम स्वदेशी भावनाकी हत्या करते हैं, किन्तु विलायती ढंगसे सिले हुअे कपड़ोंसे भी अुसकी हत्या होती है। बेशक, हमारे पहनावेका हमारी परिस्थितियोंके साथ कुछ हद तक संबंध है। खूबसूरती और अच्छाअीमें हमारी पोशाक कोट-पतलूनसे कहीं बढ़कर है। पाजामा और कमीज पहने हुअे हों और अुसमें से कमीजके पल्ले अुड़ते हों, अुन पर कमर तकका कोट पहने हों और साथ ही 'नेकटाअी' बांध रखी हो, तो यह दृश्य किसी भारतीयके लिअे खूबसूरत नहीं कहा जा सकता। स्वदेशीकी भावनाके कारण हम धर्मके बारेमें भव्य भूतकालकी कीमत लगाना और वर्तमानको बनाना सीखते हैं। यूरोपमें फैले हुअे अैश-आराममें मालूम होता है कि आजकी संस्कृतिमें राजसी और तामसी सत्ताका जोर है, जब कि पुरानी आर्यसंस्कृतिमें सात्त्विक सत्ताका जोर है। अर्वाचीन संस्कृति मुख्यतः भोग-प्रधान है, हमारी संस्कृति मुख्यतः धर्मप्रधान है। आजकी संस्कृतिमें जड़ प्रकृतिके नियमोंकी खोज होती है और मनुष्यकी बुद्धिशक्ति चीजें पैदा करनेके साधनों और नाश करनेके हथियारोंकी खोज और बनावटमें काम आती है, जब कि हमारी संस्कृतिकी प्रवृत्ति मुख्यतः आध्यात्मिक नियम ढूंढ़नेकी है। हमारे शास्त्र साफ तौर पर बताते हैं कि सच्चे जीवनके लिअे सत्यका अुचित पालन, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, दूसरेका धन लेनेमें संयम और दैनिक जरूरतोंकी चीजोंके सिवा दूसरी चीजोंका अपरिग्रह अनिवार्य है। अिसके बिना दिव्य तत्त्वका ज्ञान संभव नहीं। हमारी संस्कृति स्पष्ट कहती है कि जिसमें अहिंसा धर्मका, जिसका क्रियात्मक रूप शुद्ध प्रेम और दया है, पूर्ण विकास हुआ है, अुसे सारी दुनिया प्रणाम करती है। अूपर बताये हुअे विचारोंकी सत्यता सिद्ध करनेवाले दृष्टान्त ज्यादा मिल सकते हैं, जिनसे मनमें कोअी शक बाकी नहीं रहता।

हम यह देखें कि अहिंसा-धर्मके राजनीतिक परिणाम क्या होंगे? हमारे शास्त्र अभयदानको अमूल्य दान बताते हैं। हम अपने शासकोंको पूर्ण अभयदान दे दें, तो हमारा अुनके साथ कैसा सम्बन्ध होगा अिसका भी जरा विचार करें। यदि अुन्हें विश्वास हो जाय कि हम अुनके कामके बारेमें कुछ भी खयाल रखते हों, किन्तु अुनके शरीर पर कभी हमला नहीं करेंगे, तो तुरन्त

रुकावट डालनेवाली सिद्ध होगी; साथ ही ये सब बातें ब्रह्मचर्यकी दुश्मन हैं। हमारे सामने जो दुष्ट लालसाअें खड़ी हैं, वे विद्यार्थियोंमें भी बसी हुअी हैं और अुन्हें भी अुनके विरुद्ध लड़ना है। अिसलिअे हमें अुनके प्रलोभनोंको बढ़ाकर अुनकी लड़ाअीको ज्यादा मुश्किल नहीं बनाना चाहिये।

३

[यह भाषण १९१७में भागलपुरमें बिहारी छात्र-सम्मेलनकी सत्रहवीं बैठकके सभापति-पदसे दिया गया था।]

. . . अिस सम्मेलनका काम अिस प्रान्तकी भाषामें ही — और वही राष्ट्रभाषा भी है — करनेका निश्चय करके तुमने दूरन्देशीसे काम लिया है। अिसके लिअे मैं तुम्हें बधाअी देता हूं। मुझे आशा है कि तुम यह प्रथा जारी रखोगे।

हमने मातृभाषाका अनादर किया है। अिस पापका कड़वा फल हमें जरूर भोगना पड़ेगा। हमारे और हमारे घरके लोगोंके बीच कितना ज्यादा फर्क पड़ गया है, अिसके साक्षी अिस सम्मेलनमें आनेवाले हम सभी हैं। हम जो कुछ सीखते हैं वह अपनी माताओंको नहीं समझाते और न समझा सकते हैं। जो शिक्षा हमें मिलती है, अुसका प्रचार हम अपने घरमें नहीं करते और न कर सकते हैं। अैसा दुःसह परिणाम अंग्रेज कुटुम्बोंमें कभी नहीं देखा जाता। अिग्लैण्डमें और दूसरे देशोंमें जहां शिक्षा मातृभाषामें दी जाती है, वहां विद्यार्थी स्कूलोंमें जो कुछ पढ़ते हैं, वह घर आकर अपने-अपने माता-पिताको कह सुनाते हैं और घरके नौकर-चाकरों और दूसरे लोगोंको भी वह मालूम हो जाता है। अिस तरह जो शिक्षा बच्चोंको स्कूलमें मिलती है, अुसका लाभ घरके लोगोंको भी मिल जाता है। हम तो स्कूल-कॉलेजमें जो कुछ पढ़ते हैं वह वहीं छोड़ आते हैं। विद्या हवाकी तरह बहुत आसानीसे फैल सकती है। किन्तु जैसे कजूस अपना धन गाड़कर रखता है, वैसे ही हम अपनी विद्याको अपने मनमें ही भर रखते हैं और अिसलिअे अुसका फायदा औरोंको नहीं मिलता। मातृभाषाका अनादर माके अनादरके बराबर है। जो मातृभाषाका अपमान करता है, वह स्वदेश-भक्त कहलाने लायक नहीं। बहुतसे लोग अैसा कहते सुने जाते हैं कि 'हमारी भाषामें अैसे शब्द नहीं, जिनमें हमारे अूंचे विचार प्रगट किये जा सकें।'

भला चाहनेवालोंको सृष्टिके अिस अटल नियमसे संतोष करना चाहिये कि जैसा पेड़ होता है वैसा ही फल होता है। यह पेड़ तो सुन्दर दिखाअी देता है। अुसे पालने-पोसनेवाली अुदात्त आत्मा है। तो फिर अिसकी क्या चिन्ता कि फल कैसा आयेगा?

क्योंकि मैं गुरुकुलको चाहता हूं, अिसलिअे संस्थाकी प्रबंधकारिणी समितिको अेक-दो बातें सुझानेकी अिजाजत लेता हूं। गुरुकुलके विद्यार्थी अपने पर भरोसा रखनेवाले और अपना गुजर चला सकनेवाले बनें, अिसके लिअे अुन्हें पक्की औद्योगिक शिक्षा मिलनेकी जरूरत है। मुझे मालूम है कि हमारे देशमें ८५ फीसदी जनता किसान है और १० फीसदी लोग किसानोंकी जरूरतें पूरी करनेके काममें लगे हुअे हैं। अिसलिअे हर विद्यार्थीकी पढ़ाअीमें खेती और बुनाअीका मामूली व्यावहारिक ज्ञान शामिल होना चाहिये। औजारोंका ठीक अुपयोग जाननेसे, लकड़ी सीधी फाड़ना सीखनेसे और साहुलको कायदेसे लगाकर न गिरनेवाली दीवार चुनना जाननेसे वे कुछ खोयेंगे नहीं। अिस तरह सुसज्जित हुआ नौजवान दुनियामें अपना रास्ता बनानेमें अपनेको कभी लाचार नहीं समझेगा और कभी बेरोजगार नहीं रहेगा। अिसके सिवा, स्वास्थ्य और सफाअीके नियमों और बच्चोंके पालन-पोषणका ज्ञान भी गुरुकुलके विद्यार्थियोंको जरूर देना चाहिये। मेलेके मौके पर सफाअीके लिअे जो व्यवस्था की जानी चाहिये थी अुसमें बहुत दोष थे। हजारोंकी संख्यामें मक्खियां भिनभिना रही थीं। किसीकी भी परवाह न रखनेवाले सफाअी-महकमेके ये अफसर हमें लगातार चेतावनी दे रहे थे कि सफाअी रखनेकी तरफ हमने ठीक-ठीक ध्यान नहीं दिया। वे खास तौर पर सुझा रहे थे कि जूठन और मैलेको अच्छी तरह गाड़ देना चाहिये। हर साल आनेवाले यात्रियोंको सफाअीके बारेमें व्यावहारिक ज्ञान देनेका यह अेक सुनहरा मौका होता है। अिसे बार हाथसे जाने देते हैं, यह देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है। असलमें अिस कामकी शुरुआत विद्यार्थियोंसे ही होनी चाहिये। फिर तो हर साल अुत्सव या जल्सोंके मौके पर स्वयंसेवकोंके पास सफाअीके बारेमें व्यावहारिक ज्ञान दे सकनेवाले तीन सौ शिक्षक तैयार रहेंगे। अन्तमें, माता-पिता और प्रबन्धकारिणी समितिको चाहिये कि वे विद्यार्थियोंको अंग्रेजी पोशाककी या आजकलके मौज-शौककी बन्दरोंकीसी नकल करना सिखाकर न बिगाड़ें। यह चीज आगे चलकर अुनके जीवनमें

रुकावट डालनेवाली सिद्ध होगी; साथ ही ये सब बातें ब्रह्मचर्यकी दुश्मन हैं। हमारे सामने जो दुष्ट लालसाअें खड़ी हैं, वे विद्यार्थियोंमें भी बसी हुअी हैं और अुन्हें भी अुनके विरुद्ध लड़ना है। अिसलिअे हमें अुनके प्रलोभनोंको बढ़ाकर अुनकी लड़ाअीको ज्यादा मुश्किल नहीं बनाना चाहिये।

३

[यह भाषण १९१७में भागलपुरमें बिहारी छात्र-सम्मेलनकी सत्रहवीं बैठकके सभापति-पदसे दिया गया था।]

. . . अिस सम्मेलनका काम अिस प्रान्तकी भाषामें ही — और वही राष्ट्रभाषा भी है — करनेका निश्चय करके तुमने दूरन्देशीसे काम लिया है। अिसके लिअे मैं तुम्हें बधाअी देता हूं। मुझे आशा है कि तुम यह प्रथा जारी रखोगे।

हमने मातृभाषाका अनादर किया है। अिस पापका कड़वा फल हमें जरूर भोगना पड़ेगा। हमारे और हमारे घरके लोगोंके बीच कितना ज्यादा फर्क पड़ गया है, अिसके साक्षी अिस सम्मेलनमें आनेवाले हम सभी हैं। हम जो कुछ सीखते हैं वह अपनी माताओंको नहीं समझाते और न समझा सकते हैं। जो शिक्षा हमें मिलती है, अुसका प्रचार हम अपने घरमें नहीं करते और न कर सकते हैं। अैसा दु:सह परिणाम अंग्रेज कुटुम्बोंमें कभी नहीं देखा जाता। अिंग्लैण्डमें और दूसरे देशोंमें जहां शिक्षा मातृभाषामें दी जाती है, वहां विद्यार्थी स्कूलोंमें जो कुछ पढ़ते हैं, वह घर आकर अपने-अपने माता-पिताको कह सुनाते हैं और घरके नौकर-चाकरों और दूसरे लोगोंको भी वह मालूम हो जाता है। अिस तरह जो शिक्षा बच्चोंको स्कूलमें मिलती है, अुसका लाभ घरके लोगोंको भी मिल जाता है। हम तो स्कूल-कॉलेजमें जो कुछ पढ़ते हैं वह वहीं छोड़ आते हैं। विद्या हवाकी तरह बहुत आसानीसे फैल सकती है। किन्तु जैसे कंजूस अपना धन गाड़कर रखता है, वैसे ही हम अपनी विद्याको अपने मनमें ही भर रखते हैं और अिसलिअे अुसका फायदा औरोंको नहीं मिलता। मातृभाषाका अनादर माके अनादरके बराबर है। जो मातृभाषाका अपमान करता है, वह स्वदेश-भक्त कहलाने लायक नहीं। बहुतसे लोग अैसा कहते सुने जाते हैं कि 'हमारी भाषामें अैसे शब्द नहीं, जिनमें हमारे अूंचे विचार प्रगट किये जा सकें।'

किन्तु यह कोअी भाषाका दोष नहीं। भाषाको बनाना और बढ़ाना हमारा अपना ही कर्तव्य है। अेक समय अैसा था जब अंग्रेजी भाषाकी भी यही हालत थी। अंग्रेजीका विकास अिसलिअे हुआ कि अंग्रेज आगे बढ़े और अुन्होंने भाषाकी अुन्नति कर ली। यदि हम मातृभाषाकी अुन्नति नहीं कर सकें और हमारा यह सिद्धान्त रहे कि अंग्रेजीके जरिये ही हम अपने अूंचे विचार प्रकट कर सकते हैं और अुनका विकास कर सकते हैं, तो अिसमें जरा भी शक नहीं कि हम सदाके लिअे गुलाम बने रहेंगे। जब तक हमारी मातृभाषामें हमारे सारे विचार प्रगट करनेकी शक्ति नहीं आ जाती और जब तक वैज्ञानिक शास्त्र मातृभाषामें नहीं समझाये जा सकते, तब तक राष्ट्रको नया ज्ञान नहीं मिल सकेगा। यह तो स्वयंसिद्ध है कि:

१. सारी जनताको नये ज्ञानकी जरूरत है;

२. सारी जनता कभी अंग्रेजी नहीं समझ सकती;

३. यदि अंग्रेजी पढ़नेवाला ही नया ज्ञान प्राप्त कर सकता हो, तो सारी जनताको नया ज्ञान मिलना असंभव है।

अिसका मतलब यह हुआ कि पहली दो बातें सही हों तो जनताका नाश ही हो जायगा। किन्तु अिसमें भाषाका दोष नहीं। तुलसीदासजी अपने दिव्य विचार हिन्दीमें प्रगट कर सके थे। रामायण जैसे ग्रंथ बहुत ही थोड़े हैं। गृहस्थाश्रमी होकर भी सब कुछ त्याग कर देनेवाले महान देशभक्त भारत-भूषण पण्डित मदनमोहन मालवीयजीको अपने विचार हिन्दीमें प्रकट करनेमें जरा भी कठिनाअी नहीं होती। अुनका अंग्रेजी भाषण चांदीकी तरह चमकता हुआ कहा जाता है; किन्तु पण्डितजीका हिन्दी भाषण अिस तरह चमकता है, जैसे मानसरोवरसे निकलती हुअी गंगाका प्रवाह सूर्यकी किरणोंसे सोनेकी तरह चमकता है। मैंने कितने ही मौलवियोंको धर्मोपदेश करते हुअे सुना है। वे अपने गंभीर विचार भी अपनी मातृभाषामें ही बड़ी आसानीसे प्रकट कर सकते हैं। तुलसीदासजीकी भाषा संपूर्ण है, अविनाशी है। जिस भाषामें हम अपने विचार प्रकट न कर सकें तो दोष हमारा ही है।

अैसा होनेका कारण स्पष्ट है: हमारी शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी है। अिस भारी दोषको दूर करनेमें सब मदद कर सकते हैं। मुझे लगता है कि विद्यार्थी लोग अिस मामलेमें सरकारको विनयके साथ सूचना कर सकते हैं। साथ ही साथ विद्यार्थियोंके पास तुरन्त करने लायक यह अुपाय भी

है कि वे जो कुछ स्कूलमें पढ़ें, अुसका अनुवाद हिन्दीमें करते रहें, जहां तक हो सके अुसका प्रचार घरमें करें और आपसके व्यवहारमें मातृभाषाको ही काममें लेनेकी प्रतिज्ञा कर लें। अेक बिहारी दूसरे बिहारीके साथ अंग्रेजी भाषामें पत्रव्यवहार करे, यह मेरे लिअे तो असह्य है। मैंने लाखों अंग्रेजोंको बातचीत करते सुना है। वे दूसरी भाषाअें जानते हैं, किन्तु मैंने दो अंग्रेजोंको आपसमें पराअी भाषामें बोलते कभी नहीं सुना। जो अत्याचार हम भारतमें करते हैं, अुसका अुदाहरण दुनियाके अितिहासमें कहीं नहीं मिलेगा।

अेक वेदान्ती कवि लिख गया है कि विचारके बिना शिक्षा व्यर्थ है। किन्तु अूपर बताये हुअे कारणोंसे विद्यार्थियोंका जीवन बहुत कुछ विचार-शून्य दिखाअी देता है। विद्यार्थी तेजहीन हो गये हैं; अुनमें नयापन नहीं होता और अधिकतर विद्यार्थी निरुत्साही नजर आते हैं।

मुझे अंग्रेजी भाषासे वैर नहीं। अिस भाषाका भण्डार अटूट है। यह राजभाषा है और ज्ञानके कोशसे भरी-पूरी है। फिर भी मेरी यह राय है कि हिन्दुस्तानके सब लोगोंको अिसे सीखनेकी जरूरत नहीं। किन्तु अिस बारेमें मैं ज्यादा नहीं कहना चाहता। विद्यार्थी अंग्रेजी पढ़ रहे हैं, और जब तक दूसरी योजना नहीं होती और आजकी शालाओंमें परिवर्तन नहीं होता, तब तक विद्यार्थियोंके लिअे दूसरा कोअी अुपाय नहीं। अिसलिअे मैं मातृभाषाके अिस बड़े विषयको यहीं समाप्त कर देता हूं। मैं अितनी ही प्रार्थना करूंगा कि आपसके व्यवहारमें और जहां-जहां हो सके वहां सब लोग मातृभाषाका ही अुपयोग करें; और *विद्यार्थियोंके सिवा जो महाशय यहां आये हैं,* वे मातृभाषाको शिक्षाका माध्यम बनानेका भगीरथ प्रयत्न करें।

जैसा मैंने अूपर कहा है, अधिकतर विद्यार्थी निरुत्साही दीखते हैं। बहुतसे विद्यार्थियोंने मुझसे सवाल किया है कि 'मुझे क्या करना चाहिये? मैं देशसेवा किस तरह कर सकता हूं? आजीविकाके लिअे मुझे क्या करना ठीक है?' मुझे मालूम हुआ है कि आजीविकाके लिअे विद्यार्थियोंको बड़ी चिन्ता रहा करती है। अिन प्रश्नोंका अुत्तर सोचनेसे पहले यह विचार करना जरूरी है कि शिक्षाका अुद्देश्य क्या है? हक्सलेने कहा है कि शिक्षाका अुद्देश्य चरित्र-निर्माण है। भारतके ऋषि-मुनियोंने कहा है कि वेद आदि सारे शास्त्र जानने पर भी यदि कोअी आत्माको न पहचान सके, तब

बंधनोंसे मुक्त होनेके लायक न बन सके तो अुसका ज्ञान बेकार है। दूसरा वचन यह है कि जिसने आत्माको जान लिया, अुसने सब कुछ जान लिया। अक्षरज्ञानके बिना भी आत्मज्ञान होना संभव है। पैगम्बर मुहम्मद साहबने अक्षरज्ञान नहीं पाया था। अीसा मसीहने किसी स्कूलमें शिक्षा नहीं ली थी। अितने पर भी यह कहना कि अिन महात्माओंको आत्मज्ञान नहीं हुआ था धृष्टता ही होगी। वे हमारे विद्यालयोंमें परीक्षा देने नहीं आये थे। फिर भी हम अुन्हें पूज्य मानते हैं। विद्याका सब फल अुन्हें मिल चुका था। वे महात्मा थे। अुनकी देखा-देखी यदि हम स्कूल-कॉलेज छोड़ दें तो हम कहींके न रहें। किन्तु हमें भी अपनी आत्माका ज्ञान चारित्र्यसे ही मिल सकता है। चारित्र्य क्या है? सदाचारकी निशानी क्या है? सदाचारी पुरुष सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अस्तेय, निर्भयता आदि व्रतोंका पालन करनेका प्रयत्न करता रहता है। वह प्राण छोड़ देगा, किन्तु सत्यको कभी न छोड़ेगा। वह स्वयं मर जायगा, परंतु दूसरेको नहीं मारेगा। वह स्वयं दुःख अुठा लेगा, परंतु दूसरेको दुःख नहीं देगा। अपनी स्त्री पर भी भोग-दृष्टि न रखकर अुसके साथ मित्रकी तरह रहेगा। सदाचारी अिस तरह ब्रह्मचर्य रखकर शरीरके सत्वको भरसक बचानेका प्रयत्न करता है। वह चोरी नहीं करता, रिश्वत नहीं लेता। वह अपना और दूसरोंका समय खराब नहीं करता। वह अकारण धन अिकट्ठा नहीं करता। वह ऐश-आराम नहीं बढ़ाता और सिर्फ शौकके खातिर निकम्मी चीजें काममें नहीं लेता, परंतु सादगीमें ही सन्तोष मानता है। यह पक्का विचार रखकर कि 'मैं आत्मा हूं, शरीर नहीं हूं और आत्माको मारनेवाला दुनियामें पैदा नहीं हुआ', वह आधि, व्याधि और अुपाधिका डर छोड़ देता है और चक्रवर्ती सम्राटसे भी नहीं दबता, किन्तु निडर होकर काम करता चला जाता है।

यदि हमारे विद्यालयोंसे अूपर कहे हुअे परिणाम न निकल सकें, तो अिसमें विद्यार्थी, शिक्षा और शिक्षक तीनोंका दोष होना चाहिये। किन्तु चरित्रकी कमी पूरी करनेका काम तो विद्यार्थियोंके ही हाथमें है। यदि वे चरित्र-निर्माण नहीं करना चाहते हों, तो शिक्षक या पुस्तकें अुन्हें यह चीज नहीं दे सकते। अिसलिअे, जैसा मैंने अूपर कहा है, शिक्षाका अुद्देश्य समझना जरूरी है। चरित्रवान बननेकी अिच्छा रखनेवाला विद्यार्थी किसी भी पुस्तकसे चरित्रका पाठ ले लेगा। तुलसीदासजीने कहा है:

'जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार॥'

रामचन्द्रजीकी मूर्तिके दर्शन करनेकी अिच्छा रखनेवाले तुलसीदासजीको कृष्णकी मूर्ति रामके रूपमें दिखाअी दी। हमारे कितने ही विद्यार्थी विद्यालयका नियम पालनेके लिअे बाअिबलके वर्गमें जाते है, फिर भी बाअिबलके ज्ञानसे अछूते रहते है। दोष निकालनेकी नीयतसे गीता पढ़नेवालेको गीतामें दोष मिल जायेंगे। मोक्ष चाहनेवालेको गीता मोक्षका सबसे अच्छा साधन बताती है। कुछ लोगोंको कुरान शरीफमें सिर्फ दोष ही दोष दिखाअी देते हैं; दूसरे अुसे पढ़कर व मनन करके अिस संसार-सागरसे पार होते हैं। अिस तरह देखने पर जैसी भावना होती है वैसी ही सिद्धि होती है। किन्तु मुझे डर है कि बहुतसे विद्यार्थी अुद्देश्यका खयाल नही करते। वे रिवाजके मारे ही स्कूल जाते हैं। कुछ आजीविका या नौकरीके हेतुसे जाते है। मेरी तुच्छ बुद्धिके अनुसार शिक्षाको आजीविकाका साधन समझना नीच वृत्ति कही जायगी। आजीविकाका साधन शरीर है और पाठशाला चरित्र-निर्माणकी जगह है। अुसे शरीरकी जरूरतें पूरी करनेका साधन समझना चमड़ेकी जरासी रस्सीके लिअे भैंसको मारनेके बराबर है। शरीरका पोषण शरीर द्वारा ही होना चाहिये। आत्माको अुस काममें कैसे लगाया जा सकता है? 'तू अपने पसीनेसे अपनी रोटी कमा ले'—यह अीसा मसीहका महावाक्य है। श्रीमद् भगवद्गीतासे भी यही ध्वनि निकलती जान पड़ती है। अिस दुनियामें ९९ फीसदी लोग अिस नियमके अधीन रहते है और निडर बन जाते हैं। जिसने दात दिये हैं वही चबेना भी देगा, यह सच्ची बात है। किन्तु यह आलसीके लिअे नही कही गअी है। विद्यार्थियोंको शुरूमें ही यह सीख लेना जरूरी है कि अुन्हें अपनी आजीविका अपने बाहुबलसे ही चलानी है। अुसके लिअे मजदूरी करनेमें शर्म नही आनी चाहिये। अिससे मेरा यह मतलब नही कि हम सब हमेशा कुदाली ही चलाया करें। परंतु यह समझनेकी जरूरत है कि दूसरा धंधा करते हुअे भी आजीविकाके लिअे कुदाली चलानेमें जरा भी बुराअी नही और हमारे मजदूर भाअी हमसे नीचे नही हैं। अिस सिद्धान्तको मानकर, अिसे अपना आदर्श समझकर, हम किसी भी धंधेमें पड़ें, तो भी हमें अपने काम करनेके ढंगमें शुद्धता और असाधारणता मालूम होगी। और अिससे हम लक्ष्मीके दास नहीं बनेंगे; लक्ष्मी हमारी

दासी बनकर रहेगी। यदि यह विचार सही हो तो विद्यार्थियोंको मजदूरी करनेकी आदत डालनी पड़ेगी। ये बातें मैंने धन कमानेके अुद्देश्यसे शिक्षा पानेवालोंके लिअे कही हैं।

जो विद्यार्थी शिक्षाका अुद्देश्य सोचे बिना पाठशाला जाता है, अुसे वह अुद्देश्य समझ लेना चाहिये। वह आज ही निश्चय कर सकता है कि 'मैं आजसे पाठशालाको चरित्र-निर्माणका साधन समझूंगा।' मुझे पूरा भरोसा है कि अैसा विद्यार्थी अेक महीनेमें अपने चरित्रमें जबरदस्त परिवर्तन कर डालेगा और अुसके साथी भी अुसकी गवाही देंगे। यह शास्त्रका वचन है कि हम जैसे विचार करते हैं वैसे ही बन जाते हैं।

बहुतसे विद्यार्थी अैसा मानते हैं कि शरीरके लिअे ज्यादा प्रयत्न करना ठीक नहीं। किन्तु शरीरके लिअे व्यायाम बहुत जरूरी है। जिस विद्यार्थीके पास शरीर-संपत्ति नहीं वह क्या कर सकेगा? जैसे दूधको कागजके बरतनमें रखनेसे वह नहीं रह सकता, वैसे ही शिक्षारूपी दूधका विद्यार्थियोंके कागज जैसे शरीरमें से निकल जाना संभव है। शरीर आत्माके रहनेकी जगह होनेके कारण तीर्थ जैसा पवित्र है। अुसकी रक्षा करनी चाहिये। सुबह सवेरे डेढ़ घंटा और शामको डेढ़ घंटा साफ हवामें नियमसे और अुत्साहके साथ घूमनेसे शरीरमें शक्ति बढ़ती है और मन प्रसन्न रहता है। और अैसा करनेमें लगाया हुआ समय बरबाद नहीं होता। अैसे व्यायाम और आरामसे विद्यार्थीकी बुद्धि तेज होगी और वह सब बातें जल्दी याद कर लेगा। मुझे लगता है कि गेंद-बल्ला या बॉल-बैट अिस गरीब देशके लिअे ठीक नहीं। हमारे देशमें निर्दोष और कम खर्चवाले बहुतसे खेल हैं।

विद्यार्थीका जीवन निर्दोष होना चाहिये। जिसकी बुद्धि निर्दोष है, अुसे ही शुद्ध आनन्द मिल सकता है। अुसे दुनियामें आनन्द लेनेको कहना ही अुसका आनन्द छीन लेनेके बराबर है। जिसने यह निश्चय कर लिया हो कि मुझे अूंचा दरजा पाना है, अुसे वह मिल जाता है। निर्दोष बुद्धिसे रामचन्द्रने चन्द्रमाकी अिच्छा की तो अुन्हें चन्द्रमा मिल गया।

अेक तरहसे सोचने पर जगत मिथ्या मालूम होता है और दूसरी तरहसे देखने पर वह सत्य मालूम होता है। विद्यार्थियोंके लिअे तो जगत है ही, क्योंकि अुन्हें अिसी जगतमें पुरुषार्थ करना है। रहस्य समझे बिना

जगतको मिथ्या कह कर मनमानी करनेवाला और जगतको छोड़ देनेका *दावा करनेवाला भले ही संन्यासी हो, किन्तु वह मिथ्याज्ञानी है।*

अब मैं धर्मकी बात पर आ गया। जहा धर्म नही वहा विद्या, लक्ष्मी, स्वास्थ्य आदिका भी अभाव होता है। धर्मरहित स्थितिमें बिलकुल शुष्कता होती है, शून्यता होती है। हम धर्मकी शिक्षा खो बैठे हैं। हमारी पढ़ाअीमें धर्मको जगह नही दी गअी। यह तो बिना दूल्हेकी बरात जैसी बात है। धर्मको जाने बिना विद्यार्थी निर्दोष आनन्द नही ले सकते। यह आनन्द लेनेके लिअे शास्त्रोंका पढना, शास्त्रोंका चिन्तन करना और विचारके अनुसार कार्य करना जरूरी है। सुबह अुठते ही सिगरेट पीनेसे या निकम्मी बातचीत करनेसे न अपना भला होता है और न दूसरोंका भला होता है। नजीरने कहा है कि चिड़िया भी चूं चूं करके सुबह-शाम अीश्वरका नाम लेती हैं, किन्तु हम तो लम्बी तानकर सोये रहते हैं। किसी भी तरह धर्मकी शिक्षा पाना विद्यार्थीका कर्तव्य है। पाठशालाओंमें धर्मकी शिक्षा दी जाय या न दी जाय, किन्तु अिस समय यहां आये हुअे विद्यार्थियोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे अपने जीवनमें धर्मका तत्त्व दाखिल कर दें। धर्म क्या है? धर्मकी शिक्षा किस तरहकी हो सकती है? अिन बातोंका विचार अिस जगह नही हो सकता। परंतु अितनी-सी व्यावहारिक सलाह अनुभवके आधार पर मैं देता हू कि तुम रामचरितमानसके और भगवद्‌गीताके भक्त बनो। तुम्हारे पास 'मानस' रूपी रत्न आ पडा है। अुसे ग्रहण कर लो। किन्तु अितना याद रखना कि अिन दो ग्रंथोंकी पढाअी धर्म समझनेके लिअे करनी है। अिन ग्रंथोंके *लिखनेवाले ऋषियोंका ध्येय अितिहास लिखना नही था,* बल्कि धर्म और नीतिकी शिक्षा देना था। करोड़ों आदमी अिन ग्रंथोंको पढ़ते हैं और अपना जीवन पवित्र करते हैं। वे निर्दोष बुद्धिसे अिनका अध्ययन करते हैं और अुससे निर्दोष आनन्द लेकर अिस ससारमें विचरते हैं। मुसलमान विद्यार्थियोंके *लिअे कुरान शरीफ सबसे अूचा ग्रंथ है। अुन्हें भी अिस ग्रंथका धर्मभावसे* अध्ययन करनेकी सलाह देता हू। कुरान शरीफका रहस्य जानना चाहिये। मेरा यह भी विचार है कि हिन्दू-मुसलमानोंको अेक-दूसरेके धर्मग्रंथोंको विनयके साथ पढ़ना चाहिये और समझना चाहिये।

अिस रमणीय विषयको छोड़कर मैं फिर प्राकृत विषय पर आता हूं। यह प्रश्न पूछा जाता है कि विद्यार्थियोंका राजनीतिक मामलोंमें भाग लेना

ठीक है या नहीं? मैं कारण बताये बिना अिस विषयमें अपनी राय बताता हू। राजनीतिक क्षेत्रके दो भाग हैं: अेक सिर्फ शास्त्रका और दूसरा शास्त्र पर अमल करनेका। विद्यार्थियोंके लिअे शास्त्रके प्रदेशमें जाना जरूरी है, किन्तु अुसके व्यवहारके प्रदेशमें अुतरना हानिकारक है। विद्यार्थी शास्त्रकी शिक्षा लेने या राजनीति सीखनेके ध्येयसे राजनीतिक सभाओंमें, कांग्रेसमें जा सकते हैं। अैसे सम्मेलन अुन्हें पदार्थपाठ देनेवाले साबित होते हैं। अुनमें जानेकी अुन्हें पूरी आजादी होनी चाहिये और जो प्रतिबंध अभी लगाया गया है अुसे दूर करानेका पूरा प्रयत्न होना चाहिये। अैसी सभाओंमें विद्यार्थी बोल नहीं सकते, राय नहीं दे सकते। किन्तु यदि पढ़ाओके काममें रुकावट न होती हो तो वे स्वयंसेवकका काम कर सकते हैं। मालवीयजीकी सेवा करनेका अवसर कौन विद्यार्थी छोड़ सकता है? विद्यार्थियोंको दलबन्दीसे दूर रहना चाहिये। तटस्थ या निष्पक्ष रहकर जनताके नेताओं पर पूज्य भाव रखना चाहिये। अुनके गुण-दोषोंकी तुलना करनेका काम अुनका नहीं। विद्यार्थी तो गुणोंके लेनेवाले होते हैं; वे गुणोंकी पूजा करते हैं।

बड़ोंको पूज्य समझकर अुनकी बातोंका आदर करना विद्यार्थियोंका धर्म है। यह बात ठीक है। जिसने आदर करना नहीं सीखा अुसे आदर नहीं मिलता। धृष्टता विद्यार्थियोंको शोभा नहीं देती। अिस बारेमें भारतमें विचित्र हालत पैदा हो गयी है। बड़े बड़प्पन छोड़ते दिखाओ दे रहे हैं या अपनी मर्यादा नहीं समझते। अैसे समय विद्यार्थी क्या करें? मैंने अैसी कल्पना की है कि विद्यार्थियोंमें धर्मवृत्ति होनी चाहिये। धर्म पर चलनेवाले विद्यार्थियोंके सामने धर्मसंकट आ पड़े, तो अुन्हें प्रह्लादको याद करना चाहिये। अिस बालकने जिस समय और जिस हालतमें पिताकी आज्ञाको बड़े आदरके साथ तोड़ा, वैसे समय और वैसी हालतमें हम भी आदरके साथ अुस प्रकारके बड़ोंकी आज्ञा माननेसे अिनकार कर सकते हैं। अिस मर्यादाके बाहर जाकर किया हुआ अनादर दोषमय है। बड़ोंका अपमान करनेमें प्रजाका नाश है। बड़प्पन सिर्फ अुम्रमें ही नहीं, अुम्रके कारण मिले हुअे ज्ञान, अनुभव और चतुराओमें भी है। जहां ये तीनों चीजें न हों, वहा सिर्फ अुम्रके कारण बड़प्पन रहता है। किन्तु सिर्फ अुम्रकी ही पूजा कोओ नहीं करता।

अैसा प्रश्न पूछा जाता है कि विद्यार्थी किस प्रकारकी देशसेवा कर सकता है? अिसका सीधा अुत्तर यह है कि विद्यार्थी विद्या अच्छी तरह प्राप्त करे

और अैसा करते हुअे शरीरकी तदुरुस्ती बनाये रखे और यह विद्याध्ययन देशके लिअे करनेका आदर्श सामने रखे। मुझे विश्वास है कि अैसा करके विद्यार्थी पूरी तरह देशसेवा करता है। विचारपूर्वक जीवन व्यतीत करके और स्वार्थ छोड़कर *परोपकार करनेका ध्यान रखकर हम मेहनत किये बिना* भी बहुत कुछ काम कर सकते हैं। अैसा अेक काम मैं बताना चाहता हूं। तुमने रेलके यात्रियोंकी तकलीफोंके बारेमें मेरा पत्र अखबारोंमें पढा होगा। मैं यह मानता हूं कि तुममें से ज्यादातर विद्यार्थी तीसरे दरजेमें सफर करनेवाले होंगे। तुमने देखा होगा कि मुसाफिर गाडीमें थूकते हैं; पान-तम्बाकू चबाकर जो छूंछ निकलती है अुसे भी वहीं थूकते हैं, केले-सन्तरे वगैरा फलोंके छिलके और जूठन भी गाडीमें ही फेंकते हैं, पाखानेका भी सावधानीसे अुपयोग नहीं करते, अुसे भी खराब कर डालते हैं; दूसरोंका खयाल किये बिना सिगरेट-बीड़ी पीते हैं। जिस डब्बेमें हम बैठते हैं, अुस डब्बेके मुसाफिरोंको गाड़ीमें गदगी करनेसे होनेवाली हानियां समझा सकते हैं। ज्यादातर मुसाफिर विद्यार्थियोंका आदर करते हैं और अुनकी बात सुनते हैं। लोगोंको सफाअीके नियम समझानेका बहुत अच्छा मौका छोड नहीं देना चाहिये। स्टेशन पर खानेकी जो चीजें बेची जाती हैं वे गंदी होती हैं। अैसी गदगी मालूम हो तब विद्यार्थियोंका कर्तव्य है कि वे ट्रैफिक मैनेजरका ध्यान अुस तरफ खींचे। ट्रैफिक मैनेजर भले ही जवाब न दे। पत्र भी हिन्दी भाषामें लिखना चाहिये। अिस तरह बहुतसे पत्र जायेंगे तो ट्रैफिक मैनेजरको विचार करना पडेगा। यह काम आसानीसे हो सकता है, किन्तु अिसका नतीजा बड़ा निकल सकता है।

मैं तम्बाकू और पान खानेके बारेमें बोला हूं। मेरी नम्र रायमें तम्बाकू व पान खानेकी आदत खराब और गंदी है। हम सब स्त्री-पुरुष अिस आदतके गुलाम हो गये हैं। अिस गुलामीसे हमें छूटना चाहिये। कोअी अनजान आदमी भारतमें आ पहुंचे, तो अुसे जरूर अैसा लगेगा कि हम दिन भर कुछ न कुछ खाते रहते हैं। संभव है पानमें अन्नको पचानेका थोड़ा बहुत गुण हो, किन्तु नियमसे खाया हुआ अन्न पान वगैराकी मददके बिना पच सकता है। नियमके साथ खानेसे पानकी जरूरत नहीं रहती। पानमें कोअी स्वाद भी नहीं। जरदा भी जरूर छोड़ना चाहिये। विद्यार्थियोंको सदा संयम पालना चाहिये। तम्बाकू पीनेकी आदतका भी विचार

करना जरूरी है। अिस मामलेमें हमारे शासकोंने हमारे सामने बड़ा बुरा अुदाहरण रखा है। वे जहां-तहां सिगरेट पिया करते हैं। अुनके कारण हम भी अुसे फैशन समझकर मुहको चिमनी बनाते हैं। यह बतानेके लिअे बहुतसी पुस्तकें लिखी गयी हैं कि तम्बाकू पीनेसे नुकसान होता है। हम अिस समयको कलियुग कहते हैं। औसाओ कहते हैं कि जिस समय जनतामें स्वार्थ अनीति, दुर्व्यसन फैल जायंगे, अुस समय औसा मसीह फिर अवतार लेंगे। अिसमें कितना मानने लायक है, अिसका मैं विचार नहीं करता। फिर भी मुझे मालूम होता है कि शराब, तम्बाकू, कोकीन, अफीम, गांजा, भांग आदि व्यसनोंसे दुनिया बहुत दुःख पा रही है। अिस जालमें हम सब फंस गये हैं, अिसलिअे हम अुसके बुरे नतीजोंका ठीक-ठीक अंदाज नहीं लगा सकते। मेरी प्रार्थना है कि तुम विद्यार्थी लोग अैसे व्यसनोंसे दूर रहो।

* * *

भाषणोंका अुद्देश्य ज्ञान प्राप्त करके अुसके अनुसार बरताव करना है। तुममें से कितने विद्यार्थियोंने विदुषी अेनी बेसेंटकी सलाह मानकर देशी पोशाक पसन्द की, खान-पान सादा बनाया और गंदी बातें छोड़ीं? प्रोफेसर जदुनाथ सरकारकी सलाहके मुताबिक छुट्टीके दिनोंमें गरीबोंको मुफ्त पढ़ानेका काम कितने विद्यार्थियोंने किया? अिस तरहके बहुतसे सवाल पूछे जा सकते हैं। अिनका जवाब मैं नहीं मांगता। तुम स्वयं अपनी अन्तरात्माको अिनका जवाब देना।

तुम्हारे ज्ञानकी कीमत तुम्हारे कामोंसे होगी। सैकड़ों किताबें दिमागमें भर लेनेसे अुसकी कीमत मिल सकती है, किन्तु अुसके हिसाबसे कामकी कीमत कअी गुनी ज्यादा है। दिमागमें भरे हुअे ज्ञानकी कीमत सिर्फ कामके बराबर ही है। बाकीका सब ज्ञान दिमागके लिअे व्यर्थका बोझ है। अिसलिअे मेरी तो सदा यही प्रार्थना है और यही आग्रह है कि तुम जैसा पढ़ो और समझो, वैसा ही आचरण करो। वैसा करनेमें ही अुन्नति है।

विचारसृष्टि

४

[काशी हिन्दू विश्वविद्यालयकी स्थापनाके मौके पर ता० ४-२-'१६ को काशीमें दिये हुअे भाषणसे।]

मैं आशा रखता हूं कि यह विश्वविद्यालय पढ़ने आनेवाले विद्यार्थियोंको अुनकी मातृभाषामें शिक्षा देनेकी व्यवस्था करेगा। हमारी भाषा हमारा अपना प्रतिबिम्ब है। और कभी आप यह कहें कि हमारी भाषाअें अच्छेसे अच्छे विचार प्रगट करनेके लिअे बहुत कंगाल हैं, तो मैं कहूंगा कि हमारा जितना जल्दी नाश हो जाय अुतना अच्छा है। हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा अंग्रेजी बने, अैसा सपना देखनेवाला कोअी है? जनता पर यह बोझ लादना किसलिअे जरूरी है? घड़ी भर सोचकर देखिये कि हमारे बच्चोंको अंग्रेज बच्चोंके साथ कैसी विषम होड़ करनी पड़ती है! मुझे पूनाके कुछ प्रोफेसरोंके साथ गहराअीसे बात करनेका मौका मिला था। अुन्होंने मुझे विश्वास दिलाया था कि हरअेक भारतीय युवकको अंग्रेजी द्वारा शिक्षा पानेके कारण अपने जीवनके कमसे कम ६ अमूल्य वर्ष खो देने पड़ते हैं। हमारे स्कूलों और कॉलेजोंसे निकलनेवाले विद्यार्थियोंकी संख्यासे अिसका गुणा करें, तो आपको मालूम होगा कि राष्ट्रको कितने हजार सालका नुकसान हुआ! हम पर यह आक्षेप किया जाता है कि हममें कोअी काम शुरू करनेकी शक्ति नहीं। हमारे जीवनके कीमती वर्ष अेक विदेशी भाषा पर अधिकार पानेमें बिताने पड़ें तो हममें यह शक्ति कहांसे हो? अिस काममें भी हम सफल नहीं होते। कल और आज हिगिन्बॉटम साहबके लिअे अपने श्रोताओं पर जितना असर डालना संभव था, अुतना और किसी भी बोलनेवालेके लिअे संभव था? मुझसे पहले बोलनेवाले लोग श्रोताओंका दिल न जीत सके तो अिसमें अुनका दोष नहीं था। अुनके बोलनेमें जितना चाहिये अुतना सार था। किन्तु अुनका बोलना हमारे दिलमें नहीं घुस सकता था। मैंने यह कहते सुना है कि कुछ भी हो, भारतमें जनताको रास्ता दिखाने और जनताके लिअे सोचनेका काम अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग ही करते हैं। अैसा न हो तब तो बहुत बुरी बात ही कही जायगी। हमें जो शिक्षा मिलती है, वह सिर्फ अंग्रेजीमें ही मिलती है। बेशक, अिसके बदलेमें हमें कुछ करके दिखाना चाहिये। किन्तु पिछले पचास बरसमें हमें देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा दी गयी होती, तो आज हमारे पास अेक आजाद हिन्दुस्तान होता, हमारे पास अपने शिक्षित आदमी होते, जो अपनी ही भूमिमें विदेशी जैसे न रहे होते, बल्कि जिनका बोलना जनताके दिलों पर असर कर रहा होता। वे गरीबसे गरीब लोगोंके बीच जाकर काम करते होते और पिछले पचास

शासनमें अुन्होंने जो कुछ कमाया होगा, वह जनताके लिये अेक कीमती विरासत साबित होगा। आज हमारी शिक्षा भी हमारे अुत्तम विचारोंमें शरीक नहीं हो सकती। प्रोफेसर बोस और प्रोफेसर रामन और अुनकी अुत्तम खोजोंका विचार कीजिये। क्या यह शर्मकी बात नहीं कि अुनकी खोजें आम जनताकी सार्वजनिक संपत्ति नहीं बन सकीं?

अब हम दूसरे विषयकी तरफ मुड़ें।

कांग्रेसने स्वराज्यके बारेमें अेक प्रस्ताव पास किया है और मैं आशा रखता हूं कि आल अिण्डिया कांग्रेस कमेटी और मुस्लिम लीग अपना फर्ज अदा करेंगी और कुछ व्यावहारिक सुझाव पेश करेंगी। किन्तु मुझे खुले दिलसे मंजूर करना चाहिये कि जो कुछ वे करेंगी, अुसमें मुझे अितनी दिलचस्पी नहीं होगी, जितनी विद्यार्थी लोग या आम जनता जो कुछ करेगी अुसमें होगी। दोनोंसे हमें कभी स्वराज्य नहीं मिलेगा। हम कितने ही नारे दें, परंतु वे भी हमें स्वराज्यके लायक नहीं बनायेंगे। हमारा चरित्र ही हमें स्वराज्यके योग्य बनायेगा। हम अपने आप पर राज्य करनेके लिये क्या प्रयत्न करते हैं? मैं चाहता हूं कि आज शामको हम सब मिलकर अिस पर विचार करें। . . . कल शामको मैं विश्वनाथ महादेवके मंदिरमें गया था। जब मैं वहांकी गलियोंमें से गुजर रहा था, तब मेरे मनमें अिस तरहके विचार आये : अिस बड़े भारी मंदिरमें कोअी अनजान आदमी अूपरसे अुतर आये और अुसे यह सोचना पड़े कि हिन्दूकी हैसियतसे हम कैसे हैं और वह यदि हमें फटकारे, तो क्या अुनका अैसा करना ठीक नहीं होगा? क्या यह महामंदिर हमारे चरित्रका प्रतिबिंब नहीं है? हिन्दूकी हैसियतसे मुझे यह बात चुभती है, अिसीलिअे मैं बोलता हूं। क्या हमारे पवित्र मंदिरकी गलियां आज जैसी गन्दी होनी चाहियें? अुनके पास मकान जैसे-तैसे बना दिये गये हैं। गलियां बांकी, टेढ़ी और तंग हैं। हमारे मंदिर भी विशालता और स्वच्छताके नमूने न हों तो फिर हमारा स्वराज्य कैसा होगा? जिस घड़ी अंग्रेज अपनी मर्जीसे या मजबूर होकर अपना बोरिया-बिस्तर लेकर भारतसे चले जायेंगे, अुसी घड़ी क्या हमारे मंदिर पवित्रता, शुद्धता और शांतिके स्थान बन जायेंगे?

कांग्रेसके अध्यक्षके साथ अिस बातमें मैं बिलकुल सहमत हूं कि स्वराज्यका विचार करनेसे पहले हमें अुसके लिअे जरूरी मेहनत करनी पड़ेगी।

हर शहरके दो हिस्से होते हैं, अेक छावनी और दूसरा खुद शहर। बहुत हद तक शहर दुर्गन्धवाली गुफाकी तरह होता है। हम शहरी जीवनसे अपरिचित हैं। किन्तु हम शहरी जीवन चाहते हों, तो अुसमें मनमाने देहाती जीवनके तत्त्व दाखिल नहीं कर सकते। बम्बअीके देशी मुहल्लोंमें चलनेवालोंको हमेशा यह डर रहता है कि कहीं अूपरकी मंजिलमें रहनेवाले हम पर थूक न दें। यह विचार कुछ अच्छा नहीं लगता। मैं रेलमें बहुत सफर करता हूं। तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंकी मुश्किलें मैं देखता हूं। परंतु वे जो तकलीफें अुठाते हैं, अुन सबके लिअे मैं रेलवालोंकी व्यवस्थाको किसी भी तरह दोष नहीं दे सकता। सफाअीके पहले नियम भी हम नहीं जानते। रेलका फर्श बहुत बार सोनेके काम आता है। अिसका खयाल किये बिना हम डब्बेमें हर कहीं थूक देते हैं। हम डब्बेका कैसा भी अुपयोग करनेमें जरा भी नहीं हिचकिचाते। नतीजा यह होता है कि अुसमें अितनी गदगी हो जाती है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। अूंचे दरजेके कहलानेवाले मुसाफिर अपने कमनसीब भाअियोंको डरा देते हैं। मैंने विद्यार्थियोंको भी अैसा करते देखा है। कभी-कभी तो वे औरोंसे जरा भी अच्छा बरताव नहीं करते। वे अंग्रेजी बोल सकते हैं और कोट पहने होते हैं; अिसी पर वे डब्बेमें जबरदस्ती घुसने और बैठनेकी जगह लेनेका दावा करते हैं। मैंने चारों तरफ अपनी नजर दौड़ाअी है और आपने मुझे अपने सामने बोलनेका मौका दिया है, अिसलिअे मैं अपना दिल खोल रहा हूं। हमें स्वराज्यकी तरफ प्रगति करनी हो, तो अिन बातोंमें सुधार करना चाहिये।

अब मैं आपके सामने दूसरा चित्र पेश करता हूं।

कलके हमारे अध्यक्ष माननीय महाराजा साहब हिन्दुस्तानकी गरीबीके बारेमें बोले थे। दूसरे वक्ताओंने भी अिस पर बहुत जोर दिया था। किन्तु माननीय वाअिसरॉय साहबने अिस मंडपमें स्थापनक्रिया की, अुसमें हमने क्या देखा? बेशक, वह अेक तड़क-भड़कका दिखावा था, जवाहरातका प्रदर्शन था। और वे जवाहरात भी अैसे जो पेरिससे आनेवाले सबसे बड़े जौहरीकी आखोंमें भी चकाचौंध पैदा कर दें। मैं अिन कीमती शृंगार करनेवाले अमीरोंकी लाखों गरीबोंके साथ तुलना करता हूं और मुझे अैसा लगता है कि मैं अिन अमीरोंसे कह रहा हूं: 'जब तक आप अपने जवाहरात नहीं अुतारेंगे और अपने देशवासियोंके खातिर अुन्हें बचाकर नहीं रखेंगे, तब तक भारतका अुद्धार

नहीं होगा।' मुझे भरोसा है कि माननीय सम्राट या लार्ड हार्डिंजकी यह अिच्छा नहीं कि सम्राटके प्रति पूरी वफादारी दिखानेके लिअे हम अपना जवाहरातका खजाना खाली करके सिरसे पैर तक सजे-धजे बाहर निकलें। मैं अपनी जान जोखिममें डाल कर भी सम्राट जार्जसे यह संदेश ला देनेको तैयार हूं कि वे अैसी कोअी बात नहीं चाहते। जब मैं सुनता हूं कि भारतके किसी भी बड़े शहरमें, भले ही वह ब्रिटिश भारतमें हो या देशके दूसरे हिस्सेमें जिसमें कि देसी राजा राज्य करते हैं, कोअी बड़ा महल बन रहा है, तब मुझे तुरन्त अीर्षा होती है और यह लगता है कि अुसके लिअे रुपया तो किसानोंसे लिया गया है। भारतकी आबादीके ७५ फी सदीसे भी ज्यादा किसान हैं। . . . अुनकी मेहनतका लगभग सारा फल हम ले लें या दूसरोंको ले जाने दें, तो हममें स्वराज्यकी भावना बहुत नहीं हो सकती। ब्रिटिश गुलामीसे हमारा छुटकारा किसानोंके जरिये ही हो सकेगा। वकील, डाक्टर या बड़े जमींदार अुसे नहीं मिटा सकेंगे।

अन्तमें जिस महत्त्वकी बातने दो-तीन दिनसे हमें परेशान कर रखा है, अुसके बारेमें बोलना मैं अपना जरूरी फर्ज समझता हूं। जिस समय वाअिसराय साहब काशीके रास्तोंमें गुजर रहे थे, अुस समय हम सबको चिन्ता हो रही थी। कअी जगह खुफिया पुलिसका अिन्तजाम था। हम सब घबरा रहे थे। हमको अैसा लगता है कि अितना ज्यादा अविश्वास किसलिअे है? लार्ड हार्डिंजको अिस तरह मौतके जबड़ोंमें रहनेके बजाय मौत ज्यादा अच्छी लगनी चाहिये। किन्तु शायद समर्थ सम्राटके प्रतिनिधि अैसा न मानें। अुन्हें हमेशा मौतके मुंहमें भी रहनेकी जरूरत हो सकती है। किन्तु हमारे पीछे यह खुफिया पुलिस लगानेकी क्या जरूरत थी? हम नाराज हों, चिढ़ जायं या विरोध करें, परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि आजके भारतने अपनी अधीरताके कारण विद्रोहियोंकी अेक खूनी फौज पैदा कर दी है। मैं खुद भी विद्रोही हूं, किन्तु दूसरी तरहका, परंतु हम लोगोंमें विद्रोहियोंका अेक अैसा दल है; और यदि मैं अुन लोगोंसे मिल सका तो अुनसे कहूंगा कि भारतके विजेताओंको जीतना हो, तो यहां विद्रोहके लिअे गुंजाअिश नहीं है। विद्रोह डरकी निशानी है। यदि हम अीश्वर पर विश्वास रखें और अीश्वरसे डरते रहें, तो राजा-महाराजा, वाअिसराय, खुफिया पुलिस और सम्राट जार्ज किसीसे भी डरनेकी जरूरत नहीं। मैं विद्रोहियोंके देशप्रेमके लिअे अुनका आदर

करता हूं। अपने देशके खातिर जान देनेकी अुनकी अिच्छामें जो बहादुरी है, अुसका भी मैं आदर करता हूं। किन्तु मैं अुनसे पूछता हूं कि मारना क्या कोअी आदरके योग्य बात है? आदरके साथ मरनेके लिअे खूनीका खंजर कोअी अच्छा हथियार है? मैं अिससे साफ अिनकार करता हूं। किसी भी धर्मग्रंथमें अिस तरीकेके लिअे अिजाजत नहीं है। यदि मुझे अैसा जान पड़े कि भारतके छुटकारेके लिअे अंग्रेजोंको चला जाना चाहिये, अुन्हें यहांसे निकाल देना चाहिये, तो मैं यह घोषणा करनेमें आनाकानी नहीं करूंगा कि अुन्हें जाना पड़ेगा; और मैं समझता हूं कि अपने अिस विश्वासके खातिर मैं मरनेको भी तैयार रहूंगा। मेरी रायमें वह आदरकी मौत होगी। बम फेंकनेवाले छिपे षड्यंत्र करते हैं, वे खुले तौर पर बाहर आनेसे डरते हैं और जब पकड़े जाते हैं तो वे गलत रास्ते ले जानेवाले अपने अुत्साहके लिअे सजा भोगते हैं। . . .

* * *

२

विद्यार्थी-जीवन*

विद्यार्थियोंकी अवस्था संन्यासीकी अवस्था जैसी है। अिसलिअे वह दशा पवित्र और ब्रह्मचारीकी होनी चाहिये। आजकल विद्यार्थियोंको वरमाला पहनानेके लिअे दो सभ्यताअें आपसमें होड़ कर रही हैं — प्राचीन और अर्वाचीन। प्राचीन सभ्यतामें संयमका मुख्य स्थान है। प्राचीन सभ्यता हमें कहती है कि जैसे-जैसे मनुष्य ज्ञानपूर्वक अपनी जरूरतें कम करता है, वैसे-वैसे वह आगे बढ़ता है। अर्वाचीन सभ्यता यह सिखाती है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताअें बढ़ा कर अुन्नति कर सकता है। संयम और स्वेच्छाचारमें अुतना ही भेद है, जितना धर्म और अधर्ममें। संयममें बाहरी प्रवृत्तियोंको भीतरी प्रवृत्तियोंसे नीचा दरजा दिया गया है। संयमवाली पुरानी अवस्थाके बजाय स्वेच्छाचारपूर्ण नअी सभ्यता अपनानेका डर रहता है। अिस डरको दूर करनेमें विद्यार्थी बहुत मदद दे सकते हैं। विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंकी परीक्षा अुनके

* हिन्दू विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंको दिया हुआ भाषण।

नहीं होगा।' मुझे भरोसा है कि माननीय सम्राट या लार्ड हार्डिंग
अिच्छा नहीं कि सम्राटके प्रति पूरी वफादारी दिखानेके लिअे हम
जवाहरातका खजाना खाली करके सिरसे पैर तक सजे-धजे बाहर
मैं अपनी जान जोखिममें डाल कर भी सम्राट जार्जसे यह संदेश
तैयार हूं कि वे अैसी कोअी बात नहीं चाहते।

किसी भी बड़े शहरमें, भले ही वह ब्रिटिश भारतमें हो या देशी
हिस्सेमें जिसमें कि देशी राजा राज्य करते हैं, कोअी बड़ा महल ब
है, तब मुझे तुरन्त अीर्ष्या होती है और यह लगता है कि अुसके लिअे
तो किसानोंसे लिया गया है। भारतकी आबादीके ७५ फी सदीसे भी
किसान हैं। . अुनकी मेहनतका लगभग सारा फल हम ले
दूसरोंको ले जाने दें, तो हममें स्वराज्यकी भावना बहुत नहीं हो स
ब्रिटिश गुलामीसे हमारा छुटकारा किसानोंके जरिये ही हो सकेगा। व
डाक्टर या बड़े जमींदार अुसे नहीं मिटा सकेंगे।

अन्तमें जिस महत्त्वकी बातने दो-तीन दिनसे हमें परेशान कर
है, अुसके बारेमें बोलना मैं अपना जरूरी फर्ज समझता हूं। जिन
वाअिसराय साहब काशीके रास्तोंसे गुजर रहे थे, अुस समय हम सबको
हो रही थी। कअी जगह खुफिया पुलिसका अिन्तजाम था। हम सब
रहे थे। हमको अैसा लगता है कि अितना ज्यादा अविश्वास किसलिअे
लार्ड हार्डिजको अिस तरह मौतके जबड़ोंमें रहनेके बजाय मौत ज्यादा
लगनी चाहिये। किन्तु शायद समर्थ सम्राटके प्रतिनिधि अैसा न मानें।
हमेशा मौतके मुहमें भी रहनेकी जरूरत हो सकती है। किन्तु हमारे पीछे
खुफिया पुलिस लगानेकी क्या जरूरत थी? हम नाराज हों, चिढ़ जायें,
विरोध करें, परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि आजके भारतने अ
अधीरताके कारण विद्रोहियोंकी अेक खूनी फौज पैदा कर दी है। मैं
भी विद्रोही हूं, किन्तु दूसरी तरहका, परंतु हम लोगोंमें विद्रोहियोंका
अैसा दल है; और यदि मैं अुन लोगोंसे मिल सका तो अुनसे कहूंगा
भारतके विजेताओंको जीतना हो, तो यहां विद्रोहके लिअे गुंजाअिश नहीं।
विद्रोह डरकी निशानी है। यदि हम अीश्वर पर विश्वास रखें और अीश्वर
डरते रहें, तो राजा-महाराजा, वाअिसराय, खुफिया पुलिस और सम्राट या
किसीसे भी डरनेकी जरूरत नहीं। मैं विद्रोहियोंके देशप्रेमके लिअे अुनका आद

करता हूं। अपने देशके खातिर जान देनेकी अुनकी अिच्छामें जो बहादुरी है, *अुसका भी मैं आदर करता हूं। किन्तु मैं अुनसे पूछता हूं कि मारना क्या* कोअी आदरके योग्य बात है? आदरके साथ मरनेके लिअे खूनीका खंजर कोअी अच्छा हथियार है? मैं अिससे साफ अिनकार करता हूं। किसी भी धर्मग्रंथमें अिस तरीकेके लिअे अिजाजत नहीं है। यदि मुझे अैसा जान पड़े कि भारतके छुटकारेके लिअे अंग्रेजोंको चला जाना चाहिये, अुन्हें यहांसे निकाल देना चाहिये, तो मैं यह घोषणा करनेमें आनाकानी नहीं करूंगा कि अुन्हें जाना पड़ेगा; और मैं समझता हूं कि अपने अिस विश्वासके खातिर मैं मरनेको भी तैयार रहूंगा। मेरी रायमें वह आदरकी मौत होगी। बम फेंकने-*वाले छिपे षड्यंत्र करते हैं, वे खुले तौर पर बाहर आनेसे डरते हैं और जब* पकड़े जाते हैं तो वे गलत रास्ते ले जानेवाले अपने अुत्साहके लिअे सजा भोगते हैं। . . .

* * *

२

विद्यार्थी-जीवन*

विद्यार्थियोंकी अवस्था सन्यासीकी अवस्था जैसी है। अिसलिअे वह दशा पवित्र और ब्रह्मचारीकी होनी चाहिये। आजकल विद्यार्थियोंको वरमाला पहनानेके लिअे दो सभ्यताअें आपसमें होड़ कर रही हैं — प्राचीन और अर्वाचीन। प्राचीन सभ्यतामें संयमका मुख्य स्थान है। प्राचीन सभ्यता हमें कहती है कि जैसे-जैसे मनुष्य ज्ञानपूर्वक अपनी जरूरतें कम करता है, वैसे-वैसे वह आगे बढ़ता है। अर्वाचीन सभ्यता यह सिखाती है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताअें बढ़ा कर अुन्नति कर सकता है। संयम और स्वेच्छाचारमें अुतना ही भेद है, *जितना धर्म और अधर्ममें। संयममें बाहरी प्रवृत्तियोंको भीतरी प्रवृ-*त्तियोंसे नीचा दरजा दिया गया है। संयमवाली पुरानी अवस्थाके बजाय स्वेच्छाचारपूर्ण नअी सभ्यता अपनानेका डर रहता है। अिस डरको दूर करनेमें विद्यार्थी बहुत मदद दे सकते हैं। विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंकी परीक्षा अुनके

* हिन्दू विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंको दिया हुआ भाषण।

ज्ञानसे नहीं होगी, बल्कि अुनके धर्माचरणसे ही होगी। अिस विद्यालय धर्मकी शिक्षा और धर्मके आचरणको प्रधान पद देना चाहिये। अैसा होने विद्यार्थियोंकी पूरी मदद चाहिये। मुझे भरोसा है कि राजनीतिक सुधारोंक लाभ हमें धर्मका विचार किये बिना कभी नहीं मिल सकेगा। धर्मक संस्थापना अिन सुधारोंसे नहीं होगी, बल्कि धर्मसे ही अिन सुधारोंके दो दूर किये जा सकेंगे।

नवजीवन, २९–२–'२०

३

'मैं विद्यार्थी बना'

['आत्मकथा'में गांधीजीने अपने अिंग्लैण्डके विद्यार्थी-जीवनके बारेमें जो दो प्रकरण लिखे हैं, अुनमें से मोटी-मोटी बातें लेकर यह हिस्सा यहां दिया जाता है। वे पहले भागके १५ और १६ प्रकरण हैं। जिज्ञासु पाठक ज्यादा वर्णनके लिअे मूल देखें। —संपादक]

१

मेरे विषयमें अुन मित्रकी चिन्ता दूर नहीं हुअी। अुमने प्रेमके वश होकर मान लिया कि मैं मांस नहीं खाअूंगा तो कमजोर हो जाअूंगा; अितना ही नहीं, मैं 'मूर्ख' भी रह जाअूंगा। क्योंकि अंग्रेजोंके समाजमें घुलमिल ही न सकूंगा। अुन्हें पता था कि मैंने निरामिष भोजनके बारेमें पुस्तक पढ़ी है। अुन्हें यह डर लगा कि अिस तरहकी पुस्तकें पढ़नेसे मेरा मन भ्रममें पड़ जायगा, प्रयोगोंमें मेरी जिन्दगी बरबाद हो जायगी, मुझे जो कुछ करना है वह भूल जाअूंगा और मैं पठितमूर्ख हो जाअूंगा।

* * *

मैंने अैसा निश्चय किया कि मुझे अुनका डर दूर करना चाहिये। मैं [illegible] रहूंगा, सभ्य लोगोंके लक्षण सीखूंगा और दूसरी तरह समाजमें [illegible] अपनी निरामिषाहारकी विचित्रताको ढंक दूंगा। [illegible] सभ्य बननेका बाहरका और छिछला रास्ता लिया।

बम्बअीके सिले हुअे कपडे अच्छे अंग्रेज समाजमें शोभा नही देंगे, अैसा
ाचकर 'आर्मी अेण्ड नेवी स्टोर' में कपडे बनवाये। अुन्नीस शिलिंग (यह
ामत अुस जमानेमें तो बहुत मानी जाती थी) की 'चिमनी' टोपी सिर पर
हनी। अितनेसे संतोष न करके बाड स्ट्रीटमें, जहा शौकीन लोगोंके कपड़े
ाये जाते थे, शामकी पोशाक दस पौण्ड फूककर बनवा ली और भले व
ाही दिलवाले बड़े भाअीसे दो जेबोंमें डालकर लटकानेकी खास सोनेकी
ंजीर मंगाअी और वह मिल भी गअी। तैयार टाअी लेना सभ्यता नही
ानी जाती थी, अिसलिअे टाअी लगानेकी कला सीखी। देशमें तो आअीना
ामतके दिन देखनेको मिलता था। किन्तु यहा बडे शीशेके सामने
ेकर टाअी ठीक तरहसे लगाने और बालोको ठीकसे सजानेके लिअे रोज
ेक मिनट तो बरबाद होते ही थे। बाल मुलायम नही थे, अिसलिअे
ुन्हें ठीक तरहसे मुडे हुअे रखनेके लिअे ब्रश (यानी झाड़ू ही तो?) के
ाथ रोज लडाअी होती थी। और टोपी पहनते-अुतारते समय हाथ तो मानो
ागको संभालनेके लिअे सिर पर पहुंच ही जाता था। फिर समाजमें बैठे हों
ो बीच-बीचमें माग पर हाथ फेरकर बालोको जमे हुअे रखनेकी निराली
ौर सभ्य क्रिया भी होती ही रहती थी।

परंतु अितनी-सी टीमटाम ही काफी न थी। सिर्फ सभ्य पोशाकसे ही
ोड़े सभ्य बना जाता है? सभ्यताके कुछ बाहरी गुण भी जान लिये थे और
े सीखने थे, — जैसे गृहस्थको नाचना आना चाहिये और फ्रेंच भाषा ठीक-
ीक जानना चाहिये। क्योकि फ्रेंच अिंग्लैण्डके पडोसी फ्रासकी भाषा थी
और सारे यूरोपकी राष्ट्रभाषा भी थी। और यूरोपमें घूमनेकी मेरी अिच्छा थी।
अिसके सिवा सभ्य आदमीको लच्छेदार भाषण देना आना चाहिये। मैंने
नाच सीख लेनेका निश्चय किया। अेक वर्गमें भरती हुआ। अेक सत्रकी तीनेक
पौण्ड फीस दी। तीनेक हफ्तेमें छह पाठ लिये होंगे। किन्तु तालके साथ ठीक
तरहसे पैर नही पडता था। पियानो बजता था परन्तु यह पता नही चलता
था कि वह क्या कह रहा है। 'अेक, दो, तीन' की ताल लगती थी, किंतु
अुनके बीचका अन्तर तो वह बाजा ही बताता था। वह कुछ समझमें नहीं
आता था। तब क्या किया जाय? अब तो 'बावाजीकी बिल्ली' वाली बात
हुअी। चूहेको दूर रखनेके लिअे बिल्ली, बिल्लीके लिअे गाय, अिस तरह
जैसे बाबाजीका परिवार बढ़ा, वैसे ही मेरे लोभका परिवार भी बढ़ा।

हूं; और जितने काम मेरे हाथसे हुअे हैं, अुनमें कभी कर्ज नहीं करना पड़ा, बल्कि हर काममें कुछ न कुछ बचत ही रही है। हर नवयुवक अपनेको मिलनेवाले थोड़ेसे रुपयेका भी होशियारीसे हिसाब रखेगा, तो अुसका लाभ जैसे मैंने आगे चलकर अुठाया और जनताको भी मिला वैसे वह भी अुठायेगा।

मेरा अपने रहन-सहन पर अंकुश था। अिसलिअे मैं देख सका कि मुझे कितना खर्च करना चाहिये। अब मैंने खर्च आधा कर डालनेका विचार किया। हिसाबकी जांच करने पर मैंने देखा कि मुझे गाड़ीभाड़ेका काफी खर्च होता था। साथ ही, कुटुम्बमें रहनेसे अेक खास रकम तो हर हफ्ते लगती ही थी। कुटुंबके आदमियोंको किसी दिन खिलाने-पिलानेके लिअे बाहर ले जानेकी तमीज रखनी चाहिये। अिसके सिवा किसी समय अुनके साथ दावतमें जाना पड़ता, तब गाड़ीभाड़ेका खर्च होता ही था। लड़की होती तो अुसे खर्च नहीं करने दिया जा सकता था। और बाहर जाने तो खानेके समय घर नहीं पहुंच सकते थे। वहां तो दाम दिये हुअे ही होते थे, बाहर खानेका खर्च और करना पड़ता था। मैंने देखा कि अिस तरह होनेवाला खर्च बचाया जा सकता है। यह भी समझमें आया कि सिर्फ शर्मके मारे जो खर्च होता था वह भी बच सकता है।

अब तक कुटुम्बोंके साथ रहा था। अुसके बजाय अपना ही कमरा लेकर रहनेका निर्णय किया, और यह भी तय किया कि कामके अनुसार और अनुभव लेनेके लिअे अलग अलग मुहल्लोंमें बदल-बदल कर मकान लिया जाय। मकान अैसी जगह पसन्द किया, जहांसे पैदल चलकर आध घंटेमें कामकी जगह पहुंचा जा सके और गाड़ीभाड़ा बचे। अिससे पहले जब कभी बाहर जाना होता, तो गाड़ीभाड़ा देना पड़ता था और घूमने जानेका समय अलग निकालना पड़ता था। अब अैसी व्यवस्था हो गअी कि कामके लिअे जानेके साथ ही घूमना भी हो जाता और अिस व्यवस्थासे मैं आठ-दस मील तो सहज ही रोज चल लेता था। खास तौर पर अिस अेक आदतसे मैं शायद ही कभी विलायतमें बीमार पड़ा हूंगा। शरीर काफी कस गया। कुटुम्बमें रहना छोड़कर दो कमरे किराये पर लिये, अेक सोनेका और अेक बैठकका। यह फेरबदल दूसरा काल माना जा सकता है। अभी तीसरा परिवर्तन अिसके बाद होनेवाला था।

वायोलिन बजाना सीखा, जिससे ताल-स्वरका ज्ञान
खरीदनेमें फूंके और कुछ सीखनेमें खर्चे ! भाषण
शिक्षकका घर ढूंढा। अुसे भी अेक गिनी तो दी।
निस्ट' नामक पुस्तक खरीदी। शिक्षकने पिटका भा

अिन बेल साहबने मेरे कानमें घण्टा बजाया।

मुझे कहां अिंग्लैण्डमें जीवन बिताना है? लच्छेदार
कर मुझे क्या करना है? नाच-नाचकर मैं कैसे सभ्य बनूं,
देशमें भी सीखा जा सकता है। मैं विद्यार्थी हूं। मुझे विद्याधन
मुझे अपने पेशेसे संबंध रखनेवाली तैयारी करनी चाहिये।
चरणसे सभ्य माना जाअूं तो ठीक है, नहीं तो मुझे यह
चाहिये।

अिन विचारोंकी धुनमें अिन अुद्गारोंवाला पत्र भाषण
शिक्षकको मैंने भेज दिया। अुससे मैंने दो या तीन ही पाठ लिये थे
सिखानेवालीको भी मैंने अैसा ही पत्र लिख भेजा। वायोलिन शिक्षि
वायोलिन लेकर गया। जो दाम मिले अुतनेमें ही बेच डालनेकी अुसे
दी। क्योंकि अुसके साथ कुछ मित्रता-सा संबंध हो गया था, अिसलिअे
अपनी मूर्छाकी बात की। नाच वगैराके जंजालसे छूटनेकी मेरी बात
पसन्द आअी।

सभ्य बननेका मेरा पागलपन कोअी तीन महीने रहा होगा। पोशाककी
टीमटाम बरसों तक कायम रही, परंतु मैं विद्यार्थी बन गया।

२

कोअी यह न माने कि नाच वगैराके मेरे प्रयोग मेरी स्वच्छंदता
समय बताते हैं। पाठकोंने देखा होगा कि अुसमें कुछ न कुछ समझदारी
थी। अिस मूर्छाके समयमें भी मैं अेक हद तक सावधान था। पाअी-पाअीका
हिसाब रखता था। हर महीने १५ पौण्डसे ज्यादा खर्च न करनेका निश्चय
किया था। बस (मोटर) में जानेका और डाक व अखबारका खर्च भी
हमेशा लिखता था और सोनेसे पहले सदा जोड़ लगा लेता था। यह आदत
तक बनी रही। अिसलिअे मैं जानता हूं कि सार्वजनिक जीवनमें मेरे हाथसे
जो लाखों रुपयेका खर्च हुआ है, अुसमें मैं अुचित कंजूसीसे काम ले

अिस तरह आधा खर्च बचा, किन्तु समयका क्या हो? मैं जानता था कि बैरिस्टरीकी परीक्षाके लिअे बहुत पढ़नेकी जरूरत न थी; अिसलिअे मुझे धीरज था। मुझ अपना अंग्रेजीका कच्चा ज्ञान दुःख देता था। लेली साहबके ये शब्द कि 'तू बी० अे० हो जा, फिर आना' मुझे खटकते थे। मुझे बैरिस्टर होनेके अलावा और भी पढ़ाओी करनी चाहिये। आक्सफोर्ड-केम्ब्रिजका पता लगाया। कुछ मित्रोंसे मिला। देखा कि वहां जाने पर खर्च बहुत बढ़ जायगा और वहांकी पढ़ाओी भी लंबी थी। मैं तीन सालसे ज्यादा रह नहीं सकता था। किसी मित्रने कहा: "तुम्हें कोओी कठिन परीक्षा ही देनी हो तो लंदनका मैट्रिक्युलेशन पास कर लो; अुसमें मेहनत खासी करनी पड़ेगी और साधारण ज्ञान बढ़ेगा। खर्च बिलकुल नहीं बढ़ेगा।" यह सूचना मुझे अच्छी लगी। परीक्षाके विषय देखे तो चौंक गया। लेटिन और अेक दूसरी भाषा अनिवार्य थी! लेटिनका क्या किया जाय? किन्तु किसी मित्रने सुझाया: "लेटिन वकीलके बहुत काम आती है। लेटिन जाननेवालेके लिअे कानूनकी किताबें समझना आसान होता है। अिसके सिवा रोमन-लॉकी परीक्षामें अेक प्रश्न तो सिर्फ लेटिन भाषामें ही होता है। और लेटिन जाननेसे अंग्रेजी भाषा पर अधिकार बढ़ता है।" अिन सब दलीलोंका मुझ पर असर पड़ा। कठिन हो या न हो, लेटिन सीखना ही है। फ्रेंच ले रखी थी; अुसे पूरा करना था। अिस तरह दूसरी भाषाके तौर पर फ्रेंच लेनेका निश्चय किया। अेक खानगी मैट्रिक्युलेशन वर्ग चलता था। अुसमें भर्ती हो गया। परीक्षा हर छह महीने होती थी। मुझे मुश्किलसे पांच महीनेका समय मिला। यह काम मेरे बूतेके बाहर था। फल यह हुआ कि सभ्य बननेके बजाय मैं अेक बहुत ही मेहनती विद्यार्थी बन गया। टाअिम टेबल बनाया। अेक-अेक मिनट बचाया। किन्तु मेरी बुद्धि या स्मरण-शक्ति अैसी नहीं थी कि मैं दूसरे विषयोंके अलावा लेटिन और फ्रेंच भी पूरी कर सकता। परीक्षामें बैठा। लेटिनमें फेल हो गया। दुःख हुआ किन्तु हिम्मत न हारी। लेटिनमें रस आ गया था। सोचा फ्रेंच ज्यादा अच्छी हो जायगी और विज्ञानका नया विषय ले लूंगा। अब देखता हूं कि जिस रसायनशास्त्रमें खूब रस आना चाहिये था, वह प्रयोगोंके न होनेसे अुस समय मुझे अच्छा ही नहीं लगता था। देशमें तो यह विषय पढ़ना था ही, अतः लंदन मैट्रिकके लिअे भी अुसीको पसन्द किया। अिस बार रोशनी और गरमी (लाअिट और हीट)का विषय लिया। यह विषय आसान माना जाता था। मुझे भी आसान लगा।

दुबारा परीक्षा देनेकी तैयारीके साथ ही रहन-सहनमें ज्यादा सादगी
खेल करनेका बीडा अुठाया। मुझे लगा कि अभी तक मेरा जीवन अपने
ुवकी गरीबीके लायक सादा नहीं बना है। भाअीकी तंगी और अुदारताका
याल मुझे सताता था। जो पंद्रह पौण्ड और आठ पौण्ड माहवारी खर्च
रते थे, अुन्हें छात्रवृत्ति मिलती थी। मुझसे भी ज्यादा सादगीसे रहने-
लोंको भी मैं देखता था। अैसे गरीब विद्यार्थियोंसे काफी काम पड़ता था।
क विद्यार्थी लंदनकी गरीब बस्तीमें दो शिलिंग हफ्तेवार देकर अेक कोठरी-
रहता था और लोकार्टकी सस्ती कोकोकी दुकानमें दो पेनीका कोको
ौर रोटी खाकर गुजर करता था। अुसकी बराबरी करनेकी तो मुझमें
क्ति नहीं थी, किन्तु मुझे अैसा लगा कि मैं दोके बजाय अेक कमरेमें रह
कता हू और आधी रसोअी हाथसे भी बना सकता हू। अिस तरह करके
चार-पांच पौण्डमें अपना माहवारी खर्च चला सकता हू। सादगीसे रहनेके
ारेमें पुस्तकें भी पढ़ी थी। दो कमरे छोडकर हफ्तेके आठ शिलिंगवाली
ेक कोठरी किराये पर ली। अेक अंगीठी खरीदी और सुबहका खाना हाथसे
नाना शुरू किया। खाना बनानेमें मुश्किलसे बीस मिनट लगते थे। ओट-
ीलके दलियेमें और कोकोके लिअे पानी अुबालनेमें क्या देर लगे? दुपहरको
ाहर खा लेता और शामको फिर कोको बनाकर रोटीके साथ ले लेता। अिस
तरह अेकसे सवा शिलिंगमें रोज खानेका काम चलाना सीख लिया। यह समय
ज्यादासे ज्यादा पढाअी करनेका था। जीवन सादा हो जानेसे समय ज्यादा
बचता था। दूसरी बार परीक्षामें बैठा और पास हो गया।

पाठक यह न मानें कि सादगीसे जीवन रसहीन हो गया। अुलटे, फेर-बदल करनेसे मेरी बाहरी और भीतरी स्थितिमें अेकता हो गयी। घरकी स्थितिके साथ अिस जीवनका मेल बैठा; जीवन अधिक सत्यमय बना। अिससे मेरी आत्माके आनन्दका पार नहीं रहा।

नवजीवन, २१-३-'२६

४

मुमुक्षुका पाथेय*

हम यहां अेक नया ही प्रयोग करना चाहते हैं। यह प्रयोग अैसा है कि मैं बीचमें न होअूं, तो राष्ट्रीय शालाके शिक्षकोंकी अपने आप यह प्रयोग करनेकी हिम्मत न हो।

हम यहां लड़के-लड़कियोंकी शिक्षा साथ-साथ चलाना चाहते हैं। अेक बार मुझे शिक्षकोंने पूछा कि 'अब शालामें लड़कियोंकी संख्या बढ़ गयी है और अिसमें बड़ी लड़कियां भी हैं। तो क्या थोड़े दिनों बाद लड़कियोंका वर्ग अलग खोला जाय?' मैंने अुस समय तो तुरन्त अिनकार कर दिया और कह दिया कि लड़कियोंका वर्ग अलग करनेकी कोअी जरूरत नहीं।

किन्तु बादमें मुझे तुरन्त अिसकी गंभीरता समझमें आ गअी और अिस बातका खयाल हो आया कि अिसमें कितनी जोखिम भरी है। मुझे अैसा लगा कि अिस बारेमें मैं तुम सब लड़कोंको, स्त्रियोंको और आश्रममें रहनेवाले सभी लोगोंको कुछ नियम बता दूं तो ठीक हो। मैं यहां जो कुछ कहूं, अुस सबको कानून ही मत समझना। मैं सिर्फ अपने विचार बताअूंगा। शिक्षक लोग बादमें चर्चा करके फेरबदल कर सकते हैं।

लड़के और लड़कियां अेक वर्गमें बैठें, परन्तु वहां अुन्हें अुचित मर्यादामें बैठना चाहिये। लड़के अेक तरफ और लड़कियां दूसरी तरफ बैठ जायं। बड़े लड़के और बड़ी लड़कियां घुल-मिलकर न बैठें, क्योंकि अिसमें स्पर्शदोष होनेकी संभावना होती है। अभी अिनमें से कुछ लड़कियां बड़ी हो रही हैं और कुछ थोड़े समयमें हो जायंगी। अिस तरह लड़कियां बड़ी होती जा रही हैं और लड़के तो हमारे यहां बड़े हैं ही। अिनका अेक-दूसरेके साथ स्पर्शदोष नहीं होना चाहिये। स्पर्शदोष होनेसे ब्रह्मचर्यको नुकसान पहुंचता है। वर्गसे बाहर निकलनेके बाद लड़के आपसमें मिले-जुलें, अेक-दूसरेके साथ

* यह प्रवचन सत्याग्रह आश्रमकी शालाके विद्यार्थियोंके सामने किया गया था। विद्यार्थी-जीवनकी पवित्रता और जिम्मेदारीके बारेमें गांधीजीके विचार जानना जरूरी होनेके कारण वे 'साबरमती' मासिक (१९२२) से यहां दिये जाते हैं।

बातें करें, अेक-दूसरेके साथ हंसी-मजाक करें, खेलें-कूदें; और लडकिया भी आपसमें वैसा ही बरताव करें। किन्तु लडके और लडकिया अेक-दूसरेके साथ अिस तरहका व्यवहार नही कर सकते। वे अेक-दूसरेके साथ बातें नही कर सकते, हंसी-मजाक नही कर सकते और अेक-दूसरेके साथ खानगी पत्रव्यवहार तो हरगिज नही कर सकते। बच्चोंके लिअे कोअी बात खानगी होनी ही नही चाहिये। जो आदमी अच्छी तरह सत्यका पालन करता है, अुसके पास खानगी रखनेके लिअे क्या होगा? बड़ोंमें भी अैसा किसी तरहका पत्रव्यवहार होना अेक तरहकी कमजोरी ही मानी जायगी। तुम्हें अपने बडोंकी अिस कमजोरीकी नकल नही करनी चाहिये, बल्कि बडोंके कहे अनुसार तुम्हें अपनी कमजोरी दूर कर लेनी चाहिये। आम तौर पर माता-पिता अपनी कमजोरी अपने बच्चोंको नही बताते और अैसे मामलोंमें तो अेक शब्द भी नही कहते। किन्तु यह अुनकी गहरी भूल है। अैसा करके वे अपने बच्चोंको विनाशके गहरे खड्डेमें ढकेलते हैं। यदि सब माता-पिता यह खयाल रखें कि हमारी की हुअी भूलको हमारे बच्चे न दोहरावें, *तो अिससे बच्चोंको जितना लाभ होगा अुसकी कल्पना* भी नही की जा सकती। मैं कहता हू कि किसीको कोअी बात गुप्त नही रखनी चाहिये; अिसका यह मतलब नही कि तुम्हें दूसरोंकी खानगी बातें भी जाननेका प्रयत्न करना चाहिये। यह तुम्हारा काम नही। यदि हम बडे कही बैठे बातें कर रहे हों और तुमसे वहांसे चले जानेको कहें तो तुम्हें चले ही जाना चाहिये। हमारी बातें जानकर तुम हमारी कमजोरी नही मिटा सकते। किन्तु तुम्हारा तो कोअी भी पत्र या बात अैसी न होनी चाहिये, जिसे तुम बडोंके सामने बेधड़क होकर न रख सको। सबसे अच्छा तो यह है कि लड़के और लड़कियोंके बीच वर्गमें या वर्गसे बाहर किसी भी जगह बड़ोंकी गैरहाजिरीमें बातचीत ही न हो। लडकोंके निजी कमरेमें जैसे कोअी दूसरा लड़का जाकर बैठता है, पढता है, चर्चा करता है, बातें करता है, वैसे लडकी जाकर बातचीत, चर्चा या पढ़ाअी नही कर सकती। बड़ोंकी मौजूदगीमें —जैसे प्रार्थनामें— लड़किया लड़कोंको पानी पिलायें, अुनसे बातें करें, तो अिसमें किसी भी तरहकी रुकावट नहीं हो सकती। वहा तो लड़कियोंका सबको पानी पिलाना फर्ज है। किन्तु वहा भी मर्यादा जरूर रखनी चाहिये। वहा यह सावधानी रखनी चाहिये कि स्पर्शदोष न होने पाये। बड़े लड़कोंके साथ बड़ी लड़कियोंके स्पर्शसे विषय-वासना जाग्रत हो अुठनेकी बड़ी संभावना

रही है। अिसलिअे यह सावधानी रखनेकी बड़ी जरूरत है कि अिन वस्तुका दुरुपयोग कभी न होने पावे।

हमें यदि देशसेवा करनी ही है, तो मैं दिन-दिन यह अनुभव करता जा रहा हूं कि वीर्यकी रक्षा बहुत जरूरी है। तुम्हारे अिन निर्माल्य जैसे शरीरोंसे मैं क्या काम ले सकता हूं? किसीके शरीर पर मांस तो मानो है ही नहीं। वीर्यकी रक्षा न करनेके कारण ही तुम्हारे शरीर अितने निर्बल हैं। तुम सब अपने वीर्यकी रक्षा करके अपना शरीर बनाओ। जब तक शरीर कमजोर है, तब तक ज्ञान ग्रहण नहीं किया जा सकता, तब फिर अुसका अुपयोग तो हो ही क्या सकता है? रोगी मनुष्य ज्ञान प्राप्त कर सकता है, बूढ़ा आदमी भी कर सकता है, किन्तु जो ब्रह्मचर्य नहीं पालता, वह कभी ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। हम पुराणोंसे जान सकते हैं कि जो बड़े-बड़े राक्षस बादमें हो कामके पुतले ही बन गये थे, अुन्हें भी ज्ञान-प्राप्तिके लिअे ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी जरूरत पड़ी थी। ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे शरीर बढ़िया होना चाहिये, अिसमें सिद्ध करने जैसी कोअी बात ही नहीं। अिसलिअे तुम्हारे शरीर तो मैं राक्षसों जैसे ही बनाना चाहता हूं। तुम्हारे शरीर सुधारनेका सब प्रयत्न करते हुअे भी मैं तुम्हारे शरीर शौकतअली जैसे नहीं देख सकूंगा, क्योंकि अिसमें हमारे बाप-दादोंका दोष है। परन्तु अब भी वीर्यकी रक्षा की जाय, तो फिर अेक बार हनुमान पैदा हो सकते हैं। जिनका शरीर लकड़ी जैसा है, वह क्षमाका गुण क्या धारण कर सकता है? अैसा आदमी तो डरके मारे दब जायगा। मुझे अभी शौकतअली तमाचा मारें तो मैं अन्हें क्या माफी दूं? यदि अुन्हें कुछ न कहूं तो मैं दब गया कहा जाअूंगा। मैं माफी तो रसिकको दे सकता हूं। अिसलिअे मैं तुमसे कहूंगा कि यदि तुम्हें क्षमावान और सत्यवादी वीर बनना हो, तो तुम्हें वीर्यकी अच्छी तरह रक्षा करनी चाहिये। मैं जो अभी अिक्कावन बरसका बूढ़ा होने पर भी अितना जोर दिखा रहा हूं, अुसका कारण सिर्फ वीर्यरक्षा ही है। यदि मैं पहलेसे ही वीर्यकी रक्षा कर सका होता, तो मेरी कल्पनामें भी नहीं आ सकता कि आज मैं कहां अुड़ता होता। मैं यहां बैठे हुअे सब माता-पिता … अभिभावकोंसे कहता हूं कि आप अपने लड़के-लड़कियोंको वीर्यकी रक्षा … पूरी सुविधा दें। अुनसे न रहा जाय और वे आपसे आकर कहें कि … नहीं रहा जाता, आप हमारी शादी कर दीजिये, तभी आप अुनकी

शादी करें। यह बात नही है कि मनुष्य प्राचीन समयमें ही ब्रह्मचारी रह सकते थे। लार्ड किचनर ब्रह्मचारी था — अविवाहित था। मैं यह नही मानता कि वह और कहीं अपनी विषय-वासना तृप्त कर आता होगा। अुसने अैसा निश्चय कर लिया था कि फौजमें सब ब्रह्मचारी और अविवाहित लोग ही आयें — यानी गठे हुअे शरीरके आदमी आयें, अविवाहित किन्तु व्यभिचारी नहीं। अिसलिअे मैं आप सब बड़ोंसे प्रार्थना करता हूं कि अिस डरके मारे कि बादमें जोड़ी नही मिलेगी, आप अपने लड़के-लड़कियोंकी शादी जल्दी न कर देना। वे स्वयं आपसे कहने आयें तब तक राह देखना। मुझे भरोसा है कि अुस समय अीश्वर बैठा होगा और वह वरको योग्य कन्यासे और कन्याको योग्य वरसे मिला देगा।

लड़के-लड़कियोंको अेक बात और कह देना चाहता हूं। और वह यह कि जिन लड़के-लड़कियोंने अेक गुरुको माना है, अेक गुरुके पास विद्याभ्यास किया है, वे भाअी-बहन हैं। अुन दोनोंको भाअी बहन होकर ही रहना चाहिये। अिन दोनोंके बीच भाअी-बहनके सिवा और किसी भी तरहका व्यवहार या संबंध नही हो सकता। अिस शाला और आश्रममें रहनेवाले तुम सब भाअी-बहन हो। जिस दिन यह सम्बन्ध या नाता टूट जायगा, अुस दिन मुझे यह आश्रम या शाला समेट लेनेमें अेक क्षणकी भी देर नहीं लगेगी, अुस समय मैं लोकलाजकी भी परवाह नही करूंगा। तुम मुझे विश्वास दिला दोगे कि तुम लोगोंमें भाअी-बहनका नाता बना रहेगा, तो ही मैं यह प्रयोग निडर होकर चलाअूंगा; और तभी मैं दूसरी लड़कियोंको यहां लाअूंगा। अभी अेक सज्जन यहां आना चाहते हैं। अुनकी अेक बारह सालकी लड़की है। अितनी बड़ी लड़की तो हममें काफी अुम्रकी मानी जाती है और अुसका ब्याह कर दिया जाता है। अिसलिअे तुम मुझे निर्भय बना दो, तो ही मैं अिन सज्जन-को निर्भय कर सकता हूं और कह सकता हूं कि यहां आपकी लड़कीके शीलकी रक्षा होगी और आप अुसे जैसी शिक्षा देना चाहेंगे वैसी दे सकेंगे। यह प्रयोग अैसा है कि मैंने जो नियम बताये हैं, वे अक्षरशः पाले जायं, तो ही लड़कियोंके माता-पिता या अभिभावक निश्चिन्त रह सकते हैं और आश्रममें रहनेवाले बड़े आदमी और शिक्षक निडर होकर यह प्रयोग कर सकते हैं। ये लोग शंकित रहकर लड़कियोंके पीछे-पीछे फिरते रहें, तो यह दोनोंके लिअे बुरा ही होगा।

जिसे अैसा लगता हो कि अब मुझसे नहीं रहा जाता, मेरी विषय-वासना अितनी ज्यादा भड़क अुठी है कि मैं अुसे काबूमें नहीं रख सकता, अुसे तुरन्त यहांसे चला जाना चाहिये; *परन्तु आश्रमको कलंक नहीं लगाना चाहिये और अैसे पवित्र प्रयोगको खतम नहीं करना चाहिये।* बाअिबलमें तो यहां तक कहा है कि 'तुम्हारी आंख वशमें न रहे, तो तुम अुसमें सुअी घुसेड़ देना।' मुझे असा नहीं लगता कि मेरी अैसी नौबत आयेगी। किन्तु मेरी अैसी हालत हो जाय, तो मैं हूं और यह साबरमती है।

किसीकी विषय-वासना जाग गअी हो या न जागी हो, सबको जो कुछ मैंने कहा अुसका अच्छी तरह मनन करके पालन करना चाहिये। अीश्वरने जो भेद कर दिया है, अुसे हम मिटा नहीं सकते। *अिस भेदको कायम रखनेसे ही जिनकी विषय-वासना जाग्रत हो गअी हो अुनकी* — और जिनकी न हुअी हो अुनकी तो और भी आसानीसे — विषय-भोगकी अिच्छा काबूमें रह सकती है। मैंने कअी बार कहा है, फिर भी अेक बार अुसे यहां दोहरा देता हूं कि मुझे ब्रह्मचर्य पालनेमें बड़ा परिश्रम करना पड़ा है। अितना परिश्रम करके ब्रह्मचर्य पालनेवाला दूसरा कोअी आदमी मेरे देखनेमें अभी तक नहीं आया। जिसने अेक बार भी विषय-भोग कर लिया है, अुसके लिअे फिर वीर्यकी रक्षा करना बहुत ही कठिन हो जाता है। *अिसलिअे तुम शुरूसे ही विषय-भोगमें न पड़ना।* जिन्हें अैसा लगता हो कि हमारी अिन्द्रियां जाग गअी हैं, अुन्हें वहींसे अुनको दबा देना चाहिये। और जिनकी नहीं जागी हों, अुन्हें अिसके लिअे कोअी खास परिश्रम नहीं करना पड़ेगा। अुन्हें सचेत रहना चाहिये कि अिन्द्रियां जागने न पायें। जो वीर्यकी रक्षा करेंगे, वे ही देशसेवक बन सकेंगे; और लड़कियां भी अुत्तमसे अुत्तम गृहिणी तो ब्रह्मचर्यका पालन करके ही बन सकेंगी। *जो अेक पतिकी ही नहीं बल्कि सारी देशकी, गरीब और दुःखी लोगोंकी सेवा करती है, अुसे कौन अच्छीसे अच्छी गृहिणी नहीं कहेगा?*

दूसरी बात यह भी तुमसे कह देना चाहता हूं कि सादी पोशाक ब्रह्मचर्यके पालनमें मददगार होती है। किन्तु यह मदद बहुत थोड़ी होती है। सादीसे कपड़े पहनकर भी कोअी आदमी खूब पाप करनेवाला हो सकता है, और यह भी हो सकता है कि खूब तड़क-भड़ककी पोशाक पहननेवाला मनुष्य शुद्ध ब्रह्मचारी हो। मैं अैसे आदमीकी पूजा करूंगा, किन्तु सादीके

कपड़े पहनकर कोओी आदमी पाप करता हो और मेरे पास आवे तो मैं अुसे फटकारकर निकाल दूंगा। परन्तु हम भड़कीली पोशाक पहनकर सुन्दर दीखनेका प्रयत्न हरगिज नहीं कर सकते। ब्रह्मचारीको यदि अपना बाहरी स्वरूप बताना है, तो सिवा अीश्वरके और किसीको नहीं बताना है। और अीश्वर हमें नंगी हालतमें भी देखता है। तो फिर अच्छे कपड़े पहनकर हमें सुन्दर दीखनेका क्यों प्रयत्न करना चाहिये? असली रूप तो अपने गुणोंसे ही झलकता है। अपनी छाप गुणवान होकर डालनी चाहिये, रूपवान होकर नहीं। कपड़े सिर्फ शरीरको ढंकनेके लिअे ही पहने जाने चाहिये; और शरीर मोटी खादीसे अुत्तमसे अुत्तम ढंगसे ढंक सकता है। बड़े यदि खुद खादीके कपड़े न पहन सकते हों, तो भी अुन्हें बच्चोंको तो खादी ही पहननेकी आदत डलवानी चाहिये। जो मा यह मानकर खुश होती है कि बच्चोंको अच्छेसे अच्छे कपड़े पहनानेसे वे सुन्दर दीखते हैं, वह मा मूर्ख है। अच्छे कपड़ेसे अितना ज्यादा रूप क्या निखरता है? और निखरता भी हो तो अुससे फायदा क्या? मेरी लड़कीका रूप देखकर ही कोओी अुससे शादी करने आये, तो मैं अुसे धिक्कार कर निकाल दूंगा। जो मेरी लड़कीके गुण देखकर शादी करने आयेगा, अुसीसे मैं अुसकी शादी करूंगा। यदि सुन्दर दिखाओी देना है तो तुम्हें भड़कीले कपड़े नहीं पहनना चाहिये, बल्कि अपने गुणोंको बढ़ाना चाहिये। यदि तुम सद्‌गुणी बनोगे तो जरूर सुन्दर दिखोगे और जहां जाओगे वहीं तुम्हारा मान होगा।

अब मुझे नहीं लगता कि मेरे कहने लायक कोओी बात रह गयी है। मुझे जो कुछ तुम्हें कहना था वह मैंने कह दिया। जो कहा है वह अमूल्य है। मैंने तुम्हें जो कुछ कहा है वह तुम न समझे हो, तो बड़ोंसे या शिक्षकोंसे समझ लेना। क्योंकि मैंने जो कुछ कहा है, वह छोटे बच्चोंको भी अच्छी तरह समझकर ध्यानमें रखना है। तुम सब अुस पर खूब विचार करो, विचार करके जितना हो सके अुस पर अमल करो और मुझे अैसी सुविधा कर दो कि मैं निर्भय होकर लड़के-लड़कियोंको साथ-साथ पढ़ानेका प्रयोग सफल कर सकूं।

(मूल 'मधपूडा' से)

५

स्वाभिमान और शिक्षा

['जूनागढ़का पागलपन' शीर्षक लेखसे।]

जूनागढ़के बहाअुद्दीन कॉलेजके सिंधी विद्यार्थियोंको वहांके नवाब साहब द्वारा निकलवा देनेकी खबर पुरानी हो गओी है। . . . किन्तु यह बड़ा सवाल खड़ा होता है कि काठियावाड़ी विद्यार्थियोंका अपने साथियोंके प्रति क्या कर्तव्य है। काठियावाड़के लोग शरीरसे मजबूत हैं, बहादुर भी कहलाते हैं। अुनकी सहनशक्तिकी सराहना की जाती है। अैसी हालतमें क्या काठियावाड़ी विद्यार्थी अपने सिंधी भाअियोंका अपमान सहकर बैठ सकते हैं? मुझे लगता है कि यदि सिंधी विद्यार्थियोंको वापस न बुला लिया जाय, तो काठियावाड़ी विद्यार्थियोंका यह स्पष्ट कर्तव्य है कि वे कॉलेज छोड़ दें।

वे अैसा करें तो शायद यह कहा जायगा कि बेचारे विद्यार्थियोंकी पढ़ाअी खराब होगी। किन्तु मैं कहूंगा कि अैसे समय वे कॉलेज छोड़ें अिसीमें अुनकी सच्ची पढ़ाअी है। जो पढ़ाअी स्वाभिमान न सिखाये वह पढ़ाअी कैसी? मौका पड़ने पर दुःख अुठाकर भी अपने साथियोंका मान बचाना चाहिये। अुन्हें अन्यायसे बचाना पुरुषार्थ है।

हम मनुष्य बनें, यह पहली पढ़ाअी है। मनुष्य ही अक्षरज्ञानके लायक है। जो मनुष्यत्व खो बैठा है, वह पढ़कर क्या करेगा? अक्षरज्ञानसे मनुष्यत्व नहीं आता। अिसके सिवा, कॉलेजके विद्यार्थी बच्चे नहीं कहे जा सकते। यह नहीं माना जा सकता कि वे स्वतंत्र विचार करनेके लायक नहीं। अिसलिअे मैं आशा करता हूं कि यदि सिंधी विद्यार्थियोंके साथ न्याय न हो, तो हरअेक काठियावाड़ी विद्यार्थी कॉलेज छोड़ देगा।

यह प्रश्न होगा कि फिर क्या किया जाय। सम्भव है अिन विद्यार्थियोंको दूसरे कॉलेजोंमें न लिया जाय। ले लिया जाय तो सम्भव है अुनके पास फीस देनेके लिअे रुपया न हो। यह मुसीबत सहनेमें ही कॉलेज छोड़नेकी कीमत है। यदि कॉलेज घासकी तरह अुग जाते, तो अुनकी कोअी कीमत न होती और न सिंधी विद्यार्थी निकाले ही जाते।

त्यागी विद्यार्थी मेहनत करके अपनी पढ़ाअी घर पर कर सकते हैं। अुनके लिअे मुफ्त शिक्षाका प्रबन्ध हो सकता है। आजकल अैसे परोपकारी

शिक्षक मिलना मुश्किल नहीं, जो अैसे विद्यार्थियोंको मदद देना अपना फर्ज समझें। यदि विद्यार्थी अपना पहला फर्ज अदा करेंगे, तो अुसीमें से अिस अन्यायसे निपटनेका रास्ता निकल आयेगा। अपने सामने आये हुअे फर्जको पूरा करते समय आगेका विचार न करनेका नाम ही निष्काम कर्म है और वही धर्म है।

नवजीवन, ११–७–'२०

६

कसौटी

रौलेट कानूनका विरोध करनेके आन्दोलनके समय विद्यार्थियोंके विषयमें जो कुछ हुआ, वह दोहराया जा रहा है। अुन अमूल्य दिनोंमें अेक विद्यार्थीने मुझे पत्रमें लिखा था कि मुझे पाठशालासे निकाल दिया गया है, अिसलिअे आत्महत्या करनेको जी चाहता है। अिस बार अेक विद्यार्थी लिखता है:

> " . . . के विद्यार्थियोंने जन्मभूमिकी पुकार सुनी और अुसे मान दिया। ३ तारीखको हमने हड़ताल रखी। हमारी अिस हिम्मतके लिअे हममें से हरअेकको दो-दो रुपया जुर्माना हुआ है। गरीब विद्यार्थियोंकी फीसकी माफी, आधी माफी और छात्रवृत्तियां बन्द होने लगी हैं। *कृपा करके आचार्य श्री . . . को अिस बारेमें पत्र लिखकर या* 'यंग अिण्डिया' के जरिये समझाअिये। अुन्हें कहिये कि हम कोअी चोर और षड्यंत्रकारी नहीं और न हमने कोअी अैसा काम किया है। हमने भारतमाताकी पुकार सुनकर अुसे मान दिया है और माताको बदनामीसे बचानेके लिअे हमसे जो कुछ हो सकता था सो किया है। अुन्हें बताअिये कि हम नामर्द नहीं हैं। कृपया हमारी मदद कीजिये।"

आचार्यको लिखनेकी सलाह अैसी नहीं जिसे मैं मान सकूं। यदि अुन्हें अपनी जगह पर रहना है, तो अुन्हें कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा न? जब तक शिक्षाकी संस्थायें सरकारके आश्रय पर आधार रखेंगी, तब तक वे सरकारको मजबूत करनेके ही काम आयेंगी। और जो विद्यार्थी या शिक्षक सरकारके खिलाफ जनताकी हलचलोंमें भाग लें, अुन्हें अिसका नतीजा समझ लेना चाहिये और स्कूलसे निकाल दिये जानेकी जोखिम अुठानेके लिअे तैयार

रहना चाहिये। देशसेवाकी दृष्टिसे विद्यार्थी लोग जनताकी रायके साथ अेक हुअे। यह अुन्होंने ठीक ही किया और यह अुनकी बहादुरी है। यदि भारत-माताकी पुकार अुन्होंने न सुनी होती, तो वे देशभक्तिसे खाली होते या अिससे भी बुरे आक्षेपके पात्र ठहराये जाते। सरकारकी दृष्टिसे अुन्होंने जरूर बुरा किया और अुसका गुस्सा अपने सिर पर लिया। विद्यार्थी दो घोड़ों पर अेक-साथ सवार नहीं हो सकते। यदि अुन्होंने जनताके दर्दको अपना दर्द बना लिया है, तो अिन स्कूलोंमें मिलनेवाली विद्वत्ताकी देशके कामके सामने कोअी गिनती न होनी चाहिये, और जब वह देशके मकसदके खिलाफ जाती हो, तो बेशक अुसका त्याग कर देना चाहिये। १९२० में ही मैंने यह चीज साफ देख ली थी और अुसके बादके अनुभवसे मेरी यह राय पक्की हो गयी है। अिसके बराबर दूसरा कोअी सही-सलामत और गौरवभरा रास्ता है ही नहीं कि विद्यार्थी अिन सरकारी स्कूलोंको किसी भी कीमत पर छोड़ दें। अिसके बाद दूसरे दरजेका रास्ता यह है कि सरकार और जनताके रास्तेमें विरोध खड़ा हो, अैसे हर मौके पर स्कूल या कॉलेजसे अलग किये जानेके लिअे तैयार रहें। दूसरी जगहोंके विद्यार्थियोंकी तरह सरकारके खिलाफ बगावत करनेमें वे अगुआ न बनें, तो अुन्हें अन्त तक पक्के और सच्चे सिपाही तो बने ही रहना चाहिये; भारतमाताकी आज्ञा माननेमें अुन्होंने जो हिम्मत दिखाअी, वैसी ही हिम्मत अुसका फल भोगनेमें भी दिखानी चाहिये। जिन स्कूलोंने अुन्हें निकाल दिया गया है, अुनमें भरती होनेका प्रयत्न करके शर्म और स्वाभिमान-भंगके भागी कोअी न बनें। यदि पहली ही कसौटी पर वे पूरे न अुतरे, तो अुनकी दिखाअी हुअी बहादुरी बहादुरी नहीं, बल्कि झूठी वाहवाही लूटना होगा।

मुझे कहा जाता है कि हड़तालसे पहलेके दिनोंमें विद्यार्थियोंने विलायती कपड़ा छोड़ दिया और बड़ी तादादमें खादी धारण की। 'यह दो घड़ीका तमाशा था' — अैसा कहनेका या बाहरके दबाव या भीतरी लालचके वश होकर जैसे अेक पलमें विलायती कपड़ा छोड़ा वैसे ही पल भरमें खादी भी छोड़ दी, अैसा कहनेका मौका न आने देना। मेरे विचारसे अिस देशके लिअे विलायती कपड़ेका मतलब विदेशी राज्यका जुआ ही है। अितनी-सी बात स्वयंसिद्ध सिद्धान्तके रूपमें मान ली जाय, तो कितने सुन्दर परिणाम निकलें?

नवजीवन, १९-२-'२८

७

चेतो

१

अेक सज्जनने मुझे अेक अखबारकी कतरन भेजी है। अुसमें अमेरिकामें लड़कोंके बढ़े हुअे अपराधोंके बारेमें और लड़कियोंमें फैली हुअी अनुचित वासना-तृप्तिके बारेमें बड़ी ही कंपकंपी पैदा करनेवाली हकीकतें दी हैं।

अिनमें से अेक हकीकत यह है कि चार बरसके अेक लड़केको अुसकी माने दियासलाअीसे खेलने न दिया, अितने पर ही अुसने माको गोलीसे मार डाला। पुलिस जब पकड़ने आयी, तो वह जरा भी नहीं घबराया। 'अुसे भी गोलीसे अुड़ा देनेकी' धमकी दी और जब डॉक्टर अुससे सवाल पूछने लगा, तब अुसका दिमाग अितना फिर गया कि अुसने अदालतके सामने पेश की हुअी चीजोंमें से अेक छुरी अुठायी और डॉक्टरको मारनेको लपका। कहते हैं कि अमेरिकामें शायद ही कोअी दिन अैसा जाता होगा, जब किसी लड़के या लड़कीने कोअी अपराध न किया हो। यह भी कहा जाता है कि अमेरिकाके अधिकतर कॉलेजोंमें आत्महत्या-समितियां या अपराधी टोलियां होती हैं। और अिस हकीकतका ज्यादा दुःखदायी भाग यह है कि बहुतसी लड़कियां — लड़कियोंके खास कॉलेजोंमें पढ़नेवाली भी — अितनी भटक गयी हैं कि बाहर कहीं अपनी वासना पूरी करनेकी तलाशमें भाग तक जाती हैं।

अिस जमानेमें अखबार पढ़नेवालोंको तेज और सनसनीदार खुराक देनेके लिअे, किस्से गढ़नेके लिअे, सच्ची हकीकतें न मिलने पर कल्पित बातें जोड़ लेते हैं। अैसी हालतमें अखबारोंमें मिलनेवाली जिन हकीकतोंका सार मैंने अूपर बताया है, अुनको पूरी तरह सच्ची मान लेना मुश्किल है। किन्तु अतिशयोक्ति सौ फीसदी निकाल दें, तो भी अिसमें कोअी शक नहीं कि अमेरिकामें लड़के और लड़कियोंमें बाल-अपराध और स्वच्छन्दता अितने बढ़ गये हैं कि अिन अपराधों और स्वच्छन्दताके लिअे जो सभ्यता जिम्मेदार है, अुस सभ्यतासे हमें सावधान ही रहना चाहिये। अितने ज्यादा बाल-अपराध होने पर भी पश्चिमका जीवन टिका हुआ है — यह भी कहा जा सकता है कि अेक तरहकी प्रगति कर रहा है — यह बात तो माननी ही पड़ेगी। और यह भी मानना होगा कि पश्चिमके सयाने लोग अिस बुराअीसे अपरिचित नहीं हैं। अितना ही

नहीं, जिसका मुकाबला करनेका प्रयत्न भी कर रहे हैं। फिर भी हमें जिसका निर्णय करना है कि अैसी सभ्यताकी अंधी नकल करना चाहिये या नहीं। समय-समय पर पश्चिमकी जो हकीकतें हम तक पहुंचती हैं, अुन्हें देखकर जरा ठहरना चाहिये और अपने दिलसे पूछकर देख लेना चाहिये कि अैसी हालतमें क्या यह अच्छा नहीं होगा कि हम अपनी ही सभ्यतासे चिपटे रहें और हमें जो थोड़ा ज्ञान मिला है, अुसके प्रकाशमें हमारी सभ्यतामें रहे दोषोंको दूर करके अुसका रूपान्तर कर दें? क्योंकि यह तो निर्विवाद है कि यदि पश्चिमके पास अुसकी सभ्यतासे पैदा होनेवाले कअी भयंकर प्रश्न हल करनेको मौजूद हैं, तो हमारे पास भी हल करनेके लिअे कोअी कम गंभीर प्रश्न नहीं हैं।

अिस जगह अिन दो सभ्यताओंके गुण-दोषोंकी तुलना करना शायद बेकार नहीं तो गैरजरूरी अवश्य है। हो सकता है कि पश्चिमने अपने वातावरणके अनुसार अिस सभ्यताका निर्माण किया हो और अिसी तरह हमारी सभ्यता हमारी परिस्थितिके अनुकूल हो, और दोनों सभ्यतायें अपनी-अपनी जगह अच्छी हों। फिर भी अितना तो निडर होकर कहा जा सकता है कि जिन अपराधों और स्वच्छंदताका मैंने वर्णन किया है, वे हमारे यहां लगभग असंभव है। मैं मानता हूं कि अिसका कारण हमारी शान्तिपरायण शिक्षा और हम पर बचपनसे रहनेवाला आसपासका अंकुश है। शान्तिपरायण शिक्षासे बहुत बार जो नामर्दी पैदा होती है और पीढ़ी दर पीढ़ी चले आनेवाले अंकुशसे जो दास्यवृत्ति पैदा होती है, अुनसे किसी भी तरह बचना चाहिये। नहीं तो हमारी प्राचीन सभ्यता अिस जमानेके पागलपनकी बाढ़में बह जायगी और खतम हो जायगी। आधुनिक सभ्यताकी खास निशानी यह है कि अुसने मनुष्यकी जरूरतें बेहद बढ़ा दी हैं। प्राचीन सभ्यताका लक्षण यह है कि अिन जरूरतों पर वह कड़ा अंकुश लगाती है और अुन्हें कड़ी मर्यादामें रखती है। आधुनिक या पाश्चात्य सभ्यताके अिस लक्षणकी सच्ची जड़ परलोकके विषयमें और अिसलिअे अीश्वरके विषयमें जीती-जागती श्रद्धाके अभावमें रही है। प्राचीन या पूर्वकी सभ्यताका मूल स्वर्गके प्रति और अीश्वरी शक्तिकी हस्तीके प्रति हमारे रोम-रोममें रमी हुअी श्रद्धा है। जिन हकीकतोंका सार मैंने अूपर दिया है, वे पश्चिमके अंधी नकलके खिलाफ हमें (लें तो) मिली हुअी चेतावनी हैं। अैसी अंधी नकल हम भारतके शहरी जीवनमें और खास तौर पर पढ़े-लिखे लोगोंमें देखते हैं। आजकलकी खोजबीनके कुछ तात्कालिक और चमकते हुअे

परिणाम अितने मादक हैं कि अुनका विरोध करना असंभव हो जाता है। किन्तु मनुष्यकी जीत अिनके खिलाफ लड़नेमें ही है, अिस बारेमें मुझे जरा भी शक नहीं। यह खतरा हमारे सामने हर समय मौजूद रहता है कि हम घड़ी पल भरके भोगके खातिर शाश्वत कल्याणको न छोड़ दें।

नवजीवन, ५–६–'२७

२

मैं हजारों विद्यार्थियोंके सम्पर्कमें आया हूं। मैं विद्यार्थियोंका दिल पहचानता हूं, विद्यार्थियोंकी मुश्किल सदा मेरे सामने रहती है, किन्तु मैं विद्यार्थियोंकी कमजोरी भी जानता हूं। अुन्होंने मुझे अपने हृदयमें घुसनेका अधिकार दिया है। जो बातें वे अपने माता-पितासे कहनेको तैयार नहीं वे मुझसे कहते हैं। मैं नहीं जानता कि अुन्हें किस तरह आश्वासन दूं। मैं तो सिर्फ अुनका मित्र बन सकता हूं, अुनके दुःखमें हिस्सा बटानेका प्रयत्न कर सकता हूं और अपने अनुभवसे अुन्हें कुछ मदद दे सकता हूं। वैसे अिस दुनियामें मनुष्यके लिअे अीश्वर जैसा कोअी सच्चा सहायक नहीं। और अीश्वरमें श्रद्धा न रहने जैसी, यानी नास्तिक बन जाने जैसी दूसरी कोअी भी सजा नहीं। मुझे सबसे बड़ा दुःख यह है कि हमारे विद्यार्थियोंमें नास्तिकता बढ़ती जाती है और श्रद्धा घटती जाती है। जब मैं हिन्दू विद्यार्थीसे मिलता हूं, तब कहता हूं कि तुम द्वादशमंत्र जपो, अिससे तुम्हारी चित्तशुद्धि होगी। किन्तु वह कहता है: मुझे मालूम नहीं कि राम कौन है, विष्णु कौन है। जब मैं मुसलमान विद्यार्थीसे कहता हूं कि तुम कुरान पढ़ो, खुदासे डरो, घमण्ड न करो, तो वह कहता है कि मैं नहीं जानता खुदा कहां है, कुरानको मैं समझता नहीं। अैसे लोगोंको मैं कैसे समझाअूं कि तुम्हारे लिअे पहला कदम चित्तशुद्धि है। हमें जो विद्या मिलती है वह यदि हमें अीश्वरसे विमुख करती है, तो वह विद्या हमारा क्या भला करेगी? और दुनियाका क्या भला करेगी?

नवजीवन, ७–८–'२७

८

ज्ञानका बदला दो

१*

"मैं यह सोच रहा हूं कि अिस बड़े भारी कारबारमें मेरी जगह कहां है," अितना कहकर गांधीजी जरा रुके। फिर कहने लगे, "मेरे जैसा देहाती तो यहां आकर दांतों तले अुंगली दबाने लगेगा। मैं तुम्हारे सामने क्या बात कहूं? ये जो बड़ी प्रयोगशालाअें और बिजलीकी मशीनें यहां दिखाअी देती हैं, वे किसके प्रतापसे चल रही हैं? ये करोड़ों आदमियोंकी बेगारके सहारे चलती हैं। टाटाके ३० लाख रुपये कहीं बाहरसे नहीं आये। मैसूरके राजा जो अपार धन दे रहे हैं, वह भी प्रजाका ही धन है। 'बेगार' शब्दका मैं जान-बूझकर अुपयोग करता हूं, क्योंकि जो लोग कर देकर अिस संस्थाका खर्च चला रहे हैं, अुन्हें तुम पूछो कि 'क्या हम अैसी संस्था बनानेके लिअे तुम्हारा रुपया खर्च करें? अिससे अभी तो तुम्हें कोअी लाभ न होगा, परन्तु आगे चलकर तुम्हारे बाल-बच्चोंको लाभ होगा,' तो क्या वे तुमसे हां कहेंगे? हरगिज नहीं। अिसलिअे अुनकी मजदूरी बेगार है। परन्तु हमने किस दिन लोगोंका मत लेनेकी परवाह की है? हम तो मत देनेके हकके बिना कर न देनेका नारा पुकारते हैं, किन्तु अुसे अिन लोगोंके लिअे लागू नहीं करते। यदि तुम अपनी जिम्मेदारी समझो और तुम्हें अैसा लगे कि अिन लोगोंको कोअी हिसाब देना है, तो तुम्हें मालूम होगा कि अिस आलीशान मकानका अुपयोग करनेके बाद भी विचार करनेके लिअे अेक और पक्ष रह जाता है। तब तुम गरीबोंके लिअे अपने दिलमें अेक छोटासा नहीं, बल्कि लंबा-चौड़ा कोना रखोगे; और अुसे पवित्र तथा स्वच्छ रखोगे, ताकि जिन गरीबोंकी मेहनतसे यह सब अपार खर्च चलता है, अुनकी भलाअीके लिअे तुम अपने ज्ञानका अुपयोग कर सको।

* * *

"तुमसे मैं मामूली अपढ़ और नासमझ आदमीकी अपेक्षा कहीं ज्यादा आशा रखता हूं। तुमने जो कुछ दिया है, वही देकर संतोष न कर लेना और यह कहकर निश्चिन्त न हो जाना कि 'अब हमें कुछ भी करना बाकी

*बंगलोरकी विज्ञानशालाके विद्यार्थियोंने जो थैली भेंट की थी, अुसके जवाबमें दिया गया भाषण।

नही रहा। चलो टेनिस-बिलियर्ड खेलें।' किन्तु बिलियर्ड या टेनिस खेलनेसे तुम्हारे खातेमें नामेकी रकमका जोड़ जो रोज बढ़ता जा रहा है अुसका ध्यान रखना।

"किन्तु धर्मकी गायके कही दात पूछे जाते है? अिसलिअे धन्यवाद-सहित तुमने जो कुछ दिया है, अुसे स्वीकार करता हू। मैंने जो प्रार्थना की है, अुसे दिलमें रखना और अुस पर अमल करनेका प्रयत्न करना। गरीब स्त्रियोंकी बनायी हुअी खादी पहननेसे न डरना। अिसका भी डर न रखना कि तुम्हें तुम्हारे सेठ निकाल देंगे। सेठसे कहना कि 'मेरे पहनावेकी तरफ न देखकर मेरे कामकी तरफ देखिये; और यदि आपको न जंचे तो मैं चला जाअूगा, परन्तु मेरे जैसा वफादार और अीमानदार आदमी आपको नही मिलेगा।' मैं चाहता हूं कि तुम अपने आग्रह पर डटे रहकर दुनियाके सामने स्वाभिमानसे खड़े रहो। धनकी खोजमें गरीबोंकी सेवाकी गतिको ठण्डी न होने देना। तुम जो वायरलेस या बेतारके तारका यंत्र देख रहे हो अुससे बड़ी बड़ा वायरलेस दिलके भीतर बनाओ, जिससे करोड़ों लोगोंके साथ तुम्हारा सबंध अपने आप हो जाय। यदि तुम्हारी सारी खोजोका अुद्देश्य देशकी और गरीबोंकी भलाअी न हो, तो तुम्हारे सारे कारखाने, श्री राजगोपालाचार्य तो मजाकमें ही कहते थे, सचमुच शैतानके कारखाने ही बन जायंगे।"

नवजीवन, २४-७-'२७

२

[कराचीके विद्यार्थियोंके सामने दिया गया भाषण।]

विद्यार्थियो और विद्यार्थिनियोंसे मैं कहता हू कि सीखनेकी पहली चीज नम्रता है। जिनमें नम्रता नही आती, वे विद्याका पूरा सदुपयोग नही कर सकते। फिर भले ही अुन्होंने डबल फर्स्ट क्लास या पहला नम्बर लिया हो तो भी क्या हुआ? परीक्षा पास कर लेनेसे ही पार नही अुतरा जाता। अुससे अच्छी नौकरी मिल सकती है, अच्छी जगह शादी भी हो सकती है। किन्तु विद्याका सदुपयोग करना हो, विद्याधनको सेवाके ही लिअे खर्च करना हो, तो नम्रताकी मात्रा दिन-दिन बढनी चाहिये। अुसके बिना सेवा नही हो सकती। बी० अे० आनर्स या अिंजीनियरीका घमंड करनेवाले बहुतेरे विद्यार्थियोंको मैं जानता हूं। गावके लोग अैसे लोगोंकी तरफ आख अुठाकर भी

और यह जिम्मेदारी ज्यादा स्पष्ट तौर पर दिखाओ। विद्यार्थी-दशामें बहुत ज्यादा विद्यार्थी अपनेमें अुदात्त भावनायें पैदा कर लेते हैं, किन्तु यह जानने लायक और दुःखकी बात है कि पढ़ाओी पूरी हो जानेके बाद ये भावनायें गायब हो जाती हैं। अुनका बहुत बड़ा भाग पेट भरनेका साधन ढूंढ़ता फिरता है। अिसमें कुछ न कुछ खराबी जरूर है। अेक कारण तो साफ ही है। जिन जिन शिक्षाशास्त्रियोंका विद्यार्थियोंसे कुछ भी काम पड़ा है, वे सब समझ गये हैं कि हमारी शिक्षा-पद्धति दूषित है। अुसका देशकी जरूरतोंके साथ मेल नहीं है। कंगाल भारतके साथ तो अुसका मेल बैठता ही नहीं। पाठशालाओंमें जो शिक्षा दी जाती है, अुसका घरके जीवन और देहाती जीवनके साथ कोओी मेल नहीं। किन्तु यह सवाल अितना बड़ा है कि मुझे डर है *कि तुम और मैं अिसे अैसी सभामें हल नहीं कर सकते।*

हमें विचार यह करना है कि आज जो वस्तुस्थिति है, अुसमें देश-सेवाके लिअे विद्यार्थी क्या कर सकते हैं और हम क्या ज्यादा कर सकते हैं। अिस सवालका जवाब जो मुझे मिला है, और अिस बारेमें जिन विद्यार्थियोंको चिन्ता है अुन्हें भी मिला है, वह यह है कि विद्यार्थियोंको अन्तरशुद्धि करके अपने चरित्रकी रक्षा करनी है। चरित्रशुद्धि ठोस शिक्षाकी बुनियाद है। मैं हजारों विद्यार्थियोंसे मिला हूं। विद्यार्थियोंके साथ मेरा हमेशा पत्रव्यवहार होता रहता है, *जिसमें वे अपनी गहरीसे गहरी भावनायें मेरे सामने रखते हैं* और मेरे पास अपने दिल खोलते हैं। अिन सब बातोंसे मैं साफ तौर पर देख पाया हूं कि अभी अिसमें बड़ी मंजिलें तय करनी हैं। मुझे भरोसा है कि तुम पूरी तरह समझ गये होंगे कि मैं क्या कहना चाहता हूं। हमारी भाषाओंमें 'विद्यार्थी' के लिअे दूसरा सुन्दर शब्द 'ब्रह्मचारी' है। विद्यार्थी शब्द तो नया गढ़ा हुआ है। वह 'ब्रह्मचारी' की कुछ भी बराबरी नहीं कर सकता। मुझे आशा है कि तुम 'ब्रह्मचारी' शब्दका अर्थ पूरी तरह समझते होंगे। अिसका अर्थ है अीश्वरकी खोज करनेवाला, अैसा आचरण करनेवाला कि जिससे जल्दीसे जल्दी अीश्वरके पास पहुंचा जाय। दुनियाके सारे बड़े-बड़े धर्मोंमें चाहे जितने भेद हों, परंतु अिस तात्त्विक वस्तुके बारेमें सभी अेक बात कहते हैं; और वह यह कि मैला दिल लेकर अेक भी स्त्री या पुरुष अीश्वरके सिंहासनके सामने खड़ा नहीं हो सकेगा, परमधामको नहीं पहुंच सकेगा। हमारी सारी विद्वत्ता, वेदपाठ, संस्कृत, लेटिन और ग्रीक भाषाओंका

शुद्ध ज्ञान हमारे हृदयोंको प्रकाशित करके पूरी तरह शुद्ध न कर सके तो वह सब बेकार है। चरित्रकी शुद्धि ही सारे ज्ञानका ध्येय होना चाहिये।

शिमोगामें अेक अंग्रेज मित्र, जिन्हें मैं पहले नहीं जानता था, मुझसे मिलने आये। अुन्होंने मुझसे पूछा कि '*यदि भारत सचमुच अध्यात्म-परायण* देश है, तो विद्यार्थियोंमें अीश्वरके ज्ञानके लिअे सच्ची लगन क्यों नहीं पाअी जाती? बहुतसे विद्यार्थियोंको तो यह भी पता नहीं कि भगवद्गीता क्या है? यह कैसे?' अिन मित्रकी बताअी हुअी स्थितिका जो असली कारण और बहाना मुझे सूझा वह मैंने अुन्हें बता दिया। किन्तु वह कारण मैं तुम्हारे सामने नहीं रखना चाहता, और न अिस बड़े और गहरे दोषके लिअे बहाने ही ढूंढ़ना चाहता हूं। यहां मेरे सामने बैठे हुअे विद्यार्थियोंसे मेरी पहली और हार्दिक विनती यह है कि तुम सब अपने दिलको टटोलो; जहां-जहां तुम्हें अैसा लगे कि मेरा कहना ठीक है, वहां-वहां तुम अपनेको सुधारकर जीवनकी अिमारत नये सिरेसे बनाओ। तुममें जो हिन्दू हैं — और मैं जानता हूं कि तुममें हिन्दू बहुत ज्यादा हैं — वे गीताजीका अत्यन्त सादा, सुन्दर और मेरी दृष्टिसे हृदयस्पर्शी आध्यात्मिक सन्देश समझनेका प्रयत्न करें। हृदयको पवित्र बनानेके लिअे जिन साधकोंने अिस सत्यकी सच्ची खोज की है, अुनका अनुभव — निरपवाद अनुभव — यह है कि जब तक अिस प्रयत्नके साथ सर्वशक्तिमान अीश्वरकी हार्दिक प्रार्थना नहीं होती, तब तक यह प्रयत्न बिलकुल असंभव है। अिसलिअे तुम कुछ भी करना परन्तु अीश्वर पर की श्रद्धा न छोड़ना। यह चीज मैं तुम्हारे सामने बुद्धिसे साबित नहीं कर सकता, क्योंकि यह सत्य बुद्धिसे परे है, बुद्धि वहां तक पहुंच नहीं सकती। मैं तो तुमसे यही चाहता हूं कि तुम अपनेमें सच्ची नम्रता पैदा करो और दुनियाके अितने सारे धर्मशिक्षकों, ऋषियों और दूसरे लोगोंके अनुभवको अेकदम फेंक न दो और न अिन सबको वहमी आदमी ही समझ बैठो।

यदि तुम अितना भी कर लोगे, तो बाकी जो कुछ मैं तुमसे कहना चाहता वह तुम्हें स्फटिककी तरह स्पष्ट समझमें आ जायगा। तुम्हें यदि अीश्वर पर सच्ची श्रद्धा होगी, तो अुसके बनाये हुअे छोटेसे छोटे जीवके लिअे भी तुममें *प्रेम और सहानुभूति पैदा हुअे बिना नहीं रह सकती।* और चरखा व खादी हो, अस्पृश्यता-निवारण हो, शराबबन्दी हो, बाल-विधवाओं और बाल-विवाहों संबंधी सुधार हो या अिसी तरहकी और बहुतसी चीजें हों, परन्तु तुम देखोगे

कि अिन सबकी जड़ अेक ही है। . . . अिस अेक ही शिक्षण-संस्थामें तुम चौदह सौसे ज्यादा विद्यार्थी हो। तुम चौदह सौ विद्यार्थी रोज आधा घण्टा भी कातनेके लिअे दे सको, तो विचार करो कि देशकी सम्पत्ति कितनी बढा सकते हो। यह सोचो कि चौदह सौ विद्यार्थी अछूत कहलानेवाले लोगोंके लिअे कितना काम कर सकते हैं। और यदि तुम चौदह सौ युवक अैसा पक्का निश्चय कर लो — और जरूर कर सकते हो — कि तुम बाल-विवाहके फन्देमें नहीं फंसोगे, तो खयाल करो कि तुम अपने आसपासके समाजमें कितना भारी सुधार करोगे। तुम चौदह सौ — या खासी अच्छी संख्या भी — अपना फुरसतका समय या रविवारके कुछ घण्टे शराब पीनेवालोंके पास जानेमें खर्च करो और अत्यन्त दयाभावसे बरताव करके अुनके दिलोंमें घुसो, तो अिसकी कल्पना करो कि तुम अुनकी और देशकी भी कितनी सेवा करोगे। ये सब बातें तो तुम आजकी दूषित शिक्षा पाते हुअे भी कर सकते हो। यह बात भी नहीं कि यह सब करनेमें तुम्हें बडा भारी प्रयत्न करनेकी जरूरत है। तुम्हें सिर्फ अपने दिल बदलने हैं, या प्रचलित राजनीतिक शब्द काममें लूं तो, तुम्हें अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ेगा।

नवजीवन, ११–९–'२७

२

[पचिअप्पा कॉलेजके विद्यार्थियोंको दिये हुअे भाषणसे।]

दरिद्रनारायणके लिअे मुझे तुमने जो दान दिया है, अुसके लिअे मैं हृदयसे तुम्हारा आभार मानता हूं।

यह सावधानी रखना कि चरखेके लिअे तुम्हारे प्रेमका आदि और अन्त अिस थैलीसे ही न हो जाय; क्योंकि भूखों मरनेवाले करोड़ों लोगोंमें बंटकर अिस रुपयेकी जो खादी तैयार होगी अुसे यदि तुम काममें न लो, तो तुम्हारा यह रुपया मेरे किस कामका? चरखेमें श्रद्धा होनेके जबानी अिकरारसे और आश्रयदाताके भावसे मेरी तरफ थोड़ा-सा रुपया फेंक देनेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा; और मेहनत करके भी भूखों मरनेवाले करोड़ों लोगोंकी हमेशा बढ़ती जानेवाली गरीबीकी समस्या हल नहीं होगी। मुझे अपना बयान सुधारना चाहिये। मैंने 'मेहनत करनेवाले करोड़ों' अिन शब्दोंका अुपयोग किया है। मैं चाहता हूं कि यह बयान सच हो। किन्तु दुर्भाग्यसे हमने

गोशालके बारेमें अपने शौकको नहीं सुधारा है, अिसलिअे अिन भूखों मरने-वाले करोड़ों आदमियोंके लिअे बारहों महीने मेहनत करना असंभव बना दिया है। हम अुन्हें साल भरमें कमसे कम चार महीनेको जबरन् छुट्टी देते हैं जिसकी अुन्हें जरूरत नहीं। यह कोअी मेरी कल्पनाकी बनावटी बात नहीं, यह सच्ची हकीकत है। आम जनतामें घूमनेवाले अपने देशभाअियोंकी अिन गवाहीको तुम न मानो, तो राजकाज चलानेवाले बहुतसे अंग्रेज अफसरोंने भी अिसे बार-बार कबूल किया है। अिसलिअे यह थैली ले जाकर अुनमें बांट देनेसे अुनका सवाल हल नहीं हो सकता। अिससे वे लोग भिखमंगे बन जायेंगे और अुन्हें दान पर गुजर करनेकी आदत पड़ जायगी। जो स्त्री, पुरुष या राष्ट्र दान पर गुजारा करना सीख जाता है, अुसे अीश्वरके सिवा और कौन बचा सकता है? परमात्मा अैसा न होने दे। तुम और मैं जो करना चाहते हैं, वह तो यह है कि अपने घरमें सुरक्षित रहनेवाली बहनोंको पूरा काम मिले। अिन्हें जो काम दिया जा सकता है, वह है सिर्फ चरखेका। यह अिज्जत और अीमानदारीका काम है। और साथ ही पूरी तरह टिकाअू भी है। तुम्हारे मन अेक आनेकी कोअी गिनती न हो। तुम दो-चार मील पैदल न चलकर ट्रामवालेको अेक आनेके पैसे देकर अपना समय आलसमें बिता सकते हो। किन्तु जब वह अेक आना अेक गरीब बहनकी जेबमें जा पहुंचता है तब मददगार बन जाता है। अुसके लिअे तो वह मजदूरी करती है और अपने पवित्र हाथोंसे सुन्दर सूत कातकर मेरे हाथमें देती है। अिस सूतके पीछे अितिहास है। अिस सूतसे राजा-महाराजाओंके भी कपड़े बनने चाहिये। मिलकी छीटके टुकड़ेके पीछे अैसा कोअी अितिहास नहीं होता। यह विषय मेरे लिअे बहुत बड़ा है और व्यवहारतः मेरा सारा समय अिसीमें जाता है। परन्तु मुझे तुम्हें अिस बारेमें और ज्यादा नहीं रोकना चाहिये। यदि तुम्हारी यह थैली अबसे — यदि अबसे पहले तुमने अैसा निश्चय न कर लिया हो तो — खादी ही पहननेके निश्चयका सच्चा नतीजा न हो, तो मेरे अिससे मदद नहीं मिलेगी, बल्कि रुकावट ही होगी।

तुम मेरी प्रशंसा करते हो और मुझे थैली देते हो, अिसलिअे खादीकी अिस 'अच्छी बात'को मानते हो, अैसा भ्रमपूर्ण विश्वास पैदा न करना। मैं यह चाहता हूं कि तुम जैसा कहो वैसा ही करो। राष्ट्रके नवनीत हो। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे बारेमें यह कहा जाय

तुमने यह रुपया मुझे धोखा देनेके लिअे दिया है, तुम खादी पहनना नहीं चाहते और खादीमें तुम्हारा विश्वास नही है। तामिलनाडके अेक प्रसिद्ध व्यक्ति और मेरे मित्रने जो भविष्यवाणी की है, अुसे तुम सच साबित मत करना। अुन्होंने मुझे कहा है कि जब आप मरेंगे तब आपकी लाशको जलानेके लिअे दूसरी लकडी नही लानी पडेगी, बल्कि आप जो चरखे बाट रहे हैं अुन्हींकी अिकट्ठी हुअी लकडी आपकी देहको जलानेके काम आयेगी। अिनका चरखे पर बिलकुल विश्वास नही और वे समझते हैं कि जो लोग चरखेका नाम लेते हैं, वे सिर्फ मेरा मान रखनेके लिअे ही अैसा करते हैं। यह अुनकी सच्ची राय है। यदि खादीकी हलचलका यह परिणाम निकले, तो यह राष्ट्रकी अेक बहुत बडी करुण कथा होगी, और तुम अुसमें सीधा हिस्सा लेनेके गुनहगार माने जाओगे। यह राष्ट्रीय आत्महत्या होगी। यदि तुम्हें चरखे पर जीती-जागती श्रद्धा न हो, तो तुम अुसे स्वीकार न करो। अिसे मैं तुम्हारे प्रेमका ज्यादा सच्चा सबूत मानूंगा। तुम मेरी आखें खोल दोगे और मैं यह अरण्यरोदन करते-करते अपना गला बैठ जायगा कि तुमने चरखेको अस्वीकार करके दरिद्रनारायणको भी अस्वीकार कर दिया है। किन्तु अिस बारेमें किसी भी तरहका धोखा या भ्रमजाल था, अैसा सिद्ध होनेसे जो दुख, जो शर्म और जो पतन हमें घेर लेगा, अुससे तुम मुझे और अपने आपको बचाना। यह अेक बात है। परंतु तुम्हारे मानपत्रमें और बहुतसी बातें है।

अिसमें तुमने बाल-विधवाओ और बाल विवाहोका अुल्लेख किया है। अेक विद्वान तामिल-भाषीने मुझे लिखा है कि बाल-विधवाओंके बारेमें विद्यार्थियोको दो शब्द कहियेगा। अुन्होंने कहा है कि अिस हिस्सेमें भारतके दूसरे हिस्सोंसे छोटी अुम्रकी विधवाओंका दुख बहुत ज्यादा है। अिस कथनके सत्यको मैं जाच नही सका। तुम अिसे मुझसे ज्यादा अच्छी तरह जानते होगे। किन्तु मेरे आसपास बैठे हुअे नौजवानो, मैं तुमसे जो चाहता हूं, वह यह है कि तुममें कुछ न कुछ बहादुरी होनी चाहिये। यदि वह तुममें है तो मुझे अेक बड़ी बात तुम्हें सुझानी है। मैं आशा रखता हू कि तुममें से ज्यादातर कुंवारे है और तुममें काफी विद्यार्थी ब्रह्मचारी हैं। मैंने 'काफी विद्यार्थी' शब्द अिसलिअे कहे हैं कि मैं विद्यार्थियोंको जानता हू। जो विद्यार्थी अपनी बहन पर कामी दृष्टि डालता है वह ब्रह्मचारी नही है। मैं तुमसे यह प्रतिज्ञा कराना चाहता हू कि शादी करोगे तो विधवा कन्यासे

ही करेंगे, नहीं तो जन्मभर कुंवारे रहेंगे। तुम अैसी प्रतिज्ञा करो। अपने माता-पिता (यदि हों तो) या अपनी बहनोंके और सारी दुनियाके सामने यह घोषणा करो। *मैं विधवा कन्याओं अिसलिअे कहता हूं कि जो प्रथा* चल पड़ी है अुसकी भूल सुधर जाय। क्योंकि मैं मानता हूं कि दस-पंद्रह बरसकी लड़की, जिसकी अपने तथाकथित विवाहमें राय नहीं ली गयी हो, जो शादीके बाद कथित पतिके साथ कभी रही न हो और जिसे अेकाअेक विधवा घोषित कर दिया गया हो, विधवा है ही नहीं। अुसे विधवा कहना विधवा शब्दका और भाषाका दुरुपयोग करना है, पाप है। 'विधवा' शब्दके आसपास पवित्रताकी सुगंध है। रमाबाअी रानडे जैसी सच्ची विधवाओंका मैं पुजारी हूं। अुन्हें अिस बातका ज्ञान था कि विधवा क्या होती है। *किन्तु अेक नौ सालकी बच्चीको यह बिलकुल मालूम नहीं होता कि पति* क्या होता है। यदि यह कहना सच नहीं हो कि अिस देशमें अैसी विधवाअें हैं, तो मेरा मुकदमा खारिज हो जाता है। किन्तु अैसी बाल-विधवाअें हों और तुम अिस शाप जैसे रिवाजसे छूटना चाहते हो, तो विधवा कन्यासे ब्याह करना तुम्हारा पवित्र कर्तव्य हो जाता है। मैं यह मानने जितना वहमी तो जरूर हूं कि जो राष्ट्र अैसे पाप करता है, अुसे अुन सब पापोंकी शारीरिक सजा भोगनी पड़ती है। मैं मानता हूं कि हम अिन सारे पापोंके कारण ही गुलामीकी हालतमें पहुंचे हैं। ब्रिटिश पार्लियामेंटकी तरफसे तुम्हारे हाथोंमें तुम्हारी कल्पनाका सुन्दरसे सुन्दर शासन-विधान आ जाय तो भी यदि अुसका अमल करनेवाले योग्य स्त्री-पुरुष तुम्हारे देशमें न हों तो वह किसी कामका नहीं रहेगा। क्या तुम यह समझते हो कि जब तक अपनी प्राथमिक जरूरतें पूरी करनेकी अिच्छा रखनेवाली अेक भी विधवाको अैसा करनेसे जबरन् रोका जाता है, तब तक हम अपनेको आजाद मान कर या दूसरों पर राज्य करने लायक या ३० करोड़के राष्ट्रके भावी विधायक बनने लायक कह सकते हैं? हिन्दू धर्मकी भावनासे ओतप्रोत मनुष्यकी हैसियतसे मैं कहता हूं कि यह धर्म नहीं, अधर्म या पाप है। यह बात मुझसे न कहना कि मेरे भीतरसे जो भावना बोल रही है, वह पश्चिमकी भावना बोल रही है। मैं भारतभूमिकी पवित्र भावनासे भरा होनेका दावा करता हूं। मैंने पश्चिमकी बहुतसी चीजें अपनाओ हैं, किन्तु यह अुनमें शामिल नहीं है। हिन्दू धर्ममें अिस तरहके विधवापनके लिअे कोअी आधार नहीं है।

मैंने बाल-विधवाओंके लिअे जो कुछ कहा है, वह बाल-पत्नियोंके लिअे भी जरूर लागू होता है। सोलह वर्षसे नीचेकी लड़कीके साथ तुम्हें शादी हरगिज न करनी चाहिये। विषय-वासना पर अितना काबू रखनेकी शक्ति तुममें जरूर होनी चाहिये। यदि मेरा बस चले तो मैं शादीके लिअे कमसे कम अुम्र बीस बरसकी रखूं। भारतमें भी बीस बरसकी अुम्र काफी जल्दीकी है। लड़कियोंके समयसे पहले जवान होनेकी जिम्मेदारी भी हमारी ही है, भारतकी आबहवाकी नहीं। कारण, मैं अैसी बीस-बीस सालकी लड़कियोंको जानता हूं, जो शुद्ध और निर्मल हैं और चारों तरफसे तूफान आने पर भी अडिग रह सकती हैं। यह जरूरी है कि हम अिस अकाल यौवनको छातीसे लगाकर न रखें। कुछ ब्राह्मण विद्यार्थी मुझे कहते हैं कि 'हम अिस सिद्धान्त पर नहीं चल सकते। हममें सोलह साल तक लगभग कोअी भी लड़कीको कुंवारी नहीं रखता। माता-पिता दस, बारह या ज्यादासे ज्यादा तेरह वर्ष तक ज्यादातर लड़कियोंकी शादी कर ही देते हैं।' अैसा कहनेवाले ब्राह्मण युवकोंसे मैं कहता हूं कि 'तुम अपने आप पर काबू न रख सको तो ब्राह्मण बनना छोड़ दो। बचपनमें विधवा हुअी १६ सालकी लड़कीको पसन्द करो। अिस अुम्र तक पहुंची हुअी ब्राह्मण विधवा न पा सको, तो जाओ तुम अपनी पसन्दकी किसी भी लड़कीसे शादी कर लो। मैं कहता हूं कि बारह बरसकी लड़की पर बलात्कार करनेके बजाय दूसरी जातिकी लड़कीके साथ विवाह करनेवाले लड़केको हिन्दुओंका अीश्वर क्षमा कर देगा। तुम्हारा दिल साफ न हो और तुम अपनी वासनाओं पर काबू न रख सको तो तुम शिक्षित नहीं रह जाते। . . . चरित्रहीन शिक्षा और आत्मशुद्धिहीन चरित्र किस कामका है?'

* * *

कालीकटके अेक अध्यापककी विनतीके जवाबमें अब मैं सिगरेट और चाय-कॉफी पीनेकी आदतोंके बारेमें कुछ कहूंगा। ये चीजें जीवनकी जरूरतें नहीं। कुछ लोग दिन भरमें दस-दस कप कॉफी पी जाते हैं। क्या स्वास्थ्य बढ़ाने और अपना कर्तव्य पूरा करने जितना जागनेके लिअे यह जरूरी है? यदि जागते रहनेके लिअे कॉफी या चाय लेना जरूरी हो, तो अुसे न लेकर सो जाना ज्यादा अच्छा है। हमें अिन चीजोंके गुलाम नहीं बनना चाहिये। चाय-कॉफी पीनेवालोंका बहुत बड़ा भाग अिन चीजोंका गुलाम बन जाता है। सिगार या सिगरेट देशी हो या विदेशी अुससे दूर

ही रहना चाहिये। धूम्रपान नशेकी दवा जैसा है। और तुम जो सिगार पीते हो अुसमें कुछ अफीमका पुट लगा रहता है। यह तुम्हारे ज्ञानतंतुओं पर असर करता है और बादमें तुम अुसे छोड़ नहीं सकते। अेक भी विद्यार्थी अपने मुंहको धुआंदान बनाकर किस तरह गन्दा कर सकता है? यदि तुम तबाकू और चाय-कॉफी पीनेकी आदत छोड़ दो, तो तुम्हें पता चलेगा कि तुम अपना कितना ज्यादा रुपया बचा सकते हो। टॉल्स्टॉयकी कहानीमें अेक शराबी खून करनेकी अपनी योजना पर अमल नहीं कर सका, तब वह सिगारके कुछ कश खींचता है, हंसते-हंसते खड़ा होता है और यह कहकर कि 'मैं कैसा नामर्द हूं!' खंजर हाथमें लेता है और खून कर डालता है। टॉल्स्टॉयने यह अनुभवसे कहा है। व्यक्तिगत अनुभवके बिना अुन्होंने कुछ भी नहीं लिखा। वे शराबसे भी सिगार और सिगरेटका ज्यादा विरोध करते हैं। किन्तु तुम यह माननेकी भूल न करना कि शराब और तबाकूके बीच चुनाव करना हो, तो तम्बाकूमें शराब कम बुरी है। अिन दोनोंमें तुलना करके पसन्द करने जैसा कुछ भी नहीं है।

यंग अिंडिया, १५-९-'२७

३

सच्चा प्रेम स्तुतिसे प्रकट नहीं होता, सेवासे प्रकट होता है। अिसके लिअे आत्मशुद्धि चाहिये; वह सेवाकी अनिवार्य शर्त है।

. . . हमारी स्वराज्य-साधनाके अिस अमूल्य वर्षमें हमने अपनी आत्मशुद्धिकी साधना पूरी की होगी तो भी काफी है।

नवजीवन, १७-३-'२९

१०

विद्यार्थी-परिषदोंका कर्तव्य

छठी सिंध विद्यार्थी-परिषदके मंत्रीने मेरे पास अेक छपा हुआ परिपत्र भेजा था और मेरा संदेश मांगा था। . . . नीचेका हिस्सा मैंने अिस परि[illegible] है। अिस परिपत्रके बारेमें मैं अितना कहूंगा कि यह [illegible] हुआ है और अिसमें जो भूलें रह गअी हैं, वे विद्यार्थियोंकी [illegible] क्षम्य नहीं मानी जा सकती:

"अिस परिषदके व्यवस्थापक परिषदको यथासंभव रसप्रद और ज्ञानवर्धक बनानेका भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। . . . शिक्षाके बारेमें अेक व्याख्यानमाला रखनेका हमारा अिरादा है और हमारी प्रार्थना है कि आपका लाभ भी हमें आप दें। . . . यहा सिंधमें स्त्री-शिक्षाके सवाल पर खास तौर पर विचार करनेकी जरूरत है। . . . विद्यार्थियोंको दूसरी जरूरतोंकी तरफ भी हमारा दुर्लक्ष्य नही है। खेल-कूदकी होड़ रखी गअी है, और यह तथा भाषण-प्रतियोगिता परिषदमें और ज्यादा रस पैदा करेगी अैसी आशा है। अिसके सिवा नाटक और सगीतको भी हमने अपने कार्यक्रममें स्थान दिया है। . . . अुर्दू और अग्रेजी नाटक भी खेले जायेंगे।"

अैसा अेक भी वाक्य मैंने नही छोडा है, जिससे यह खयाल आ सके कि परिषदमें क्या-क्या करनेका विचार है। फिर भी विद्यार्थी लोगोके हमेशा काम आनेवाली चीजोंमें से अेकका भी अिसमें अुल्लेख नही मिलता। अिसमें मुझे शंका नही कि नाटक, सगीत और कसरतके खेल 'बड़े पैमाने' पर रखे गये होंगे। अवतरण चिह्नवाले शब्द मैंने परिपत्रमें से ही लिये है। अिसमें भी मुझे शका नही कि स्त्री-शिक्षाके बारेमें आकर्षक निबंध परिषदमें पढे गये होगे। किन्तु अिस परिपत्रको देखें तो अिसमें 'देती-लेती' (दहेज) के अशुभ शर्मनाक रिवाजका कही जिक्र नही। विद्यार्थी अिस कुरीतिसे छूटे नहीं हैं। यह कुरीति कअी तरहसे सिंधी लडकियोकी जिन्दगीको नरकके समान बना डालती है, और लड़कियोंके माता-पिताका जीवन भी दुखी कर देती है। अिस परिपत्रमें यह भी कहीं नही दीखता कि विद्यार्थियोंकी नैतिकताके सवालकी चर्चा करनेका परिषदका अिरादा था। अिसी तरह अिसमें अैसा भी कुछ नहीं जान पड़ता कि विद्यार्थियोको निडर राष्ट्रनिर्माता बनानेका रास्ता दिखानेके लिअे परिषद कुछ करना चाहती है। . . . पश्चिमकी बेहूदी नकलसे या शुद्ध और लच्छेदार अग्रेजी लिखना-बोलना आनेसे स्वतंत्रताके मंदिरकी अिमारतमें अेक भी अीट नही जुडेगी। आज विद्यार्थी लोगोको जो शिक्षा मिलती है, वह भूखसे छटपटाते हुअे भारतके लिअे बेहद खर्चीली है। अिस शिक्षाको कभी भी पानेकी आशा रखनेवाले लोगोकी संख्या 'दरियेमें खसखस' के बराबर है। अैसी शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियोंको योग्य साबित होना हो, तो अुन्हें राष्ट्रके चरणों पर अपना खून और पसीना —

अपना जीवनरस अर्पण करना चाहिये। विद्यार्थियोंको सच्चे संरक्षणको ध्यानमें रखकर सभ्यताके अगुआ बनना चाहिये। राष्ट्रमें जो कुछ अच्छा है अुसका संरक्षण करते हुअे समाजमें जो बेशुमार बुराअियां घुस गअी हैं अुन्हें नेस्तनाबूद करना चाहिये।

अैसी परिषदोंका कर्तव्य यह है कि वे विद्यार्थियोंके सामने जो सच्ची हालत है, अुसके बारेमें अुनकी आंखें खोलें। शालाके वर्गोंमें विदेशी वातावरण होनेके कारण विद्यार्थियोंको जो चीजें सीखनेका मौका वहां नहीं मिलता, अुन चीजोंके बारेमें ये परिषदें अुन्हें विचार करना सिखायें। अिन परिषदोंमें वे निरे राजनीतिक माने जानेवाले सवालों पर भले ही चर्चा न कर सकें। परन्तु सामाजिक और आर्थिक सवालोंका अध्ययन और चर्चा तो वे कर ही सकते हैं, जो हमारी पीढ़ीके लिअे बड़ेसे बड़े राजनीतिक सवालोंके बराबर ही महत्त्व रखते हैं। राष्ट्र-संगठनके कार्यक्रममें राष्ट्रके अेक भी अंगको अछूता छोड़नेसे काम नहीं चल सकता। विद्यार्थियोंको करोड़ों बेजबान लोगों पर अपनी छाप डालनी है। अुन्हें प्रांत, गांव, वर्ग या जातिकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि करोड़ों लोगोंकी दृष्टिसे सोचना सीखना चाहिये। अिन करोड़ोंमें अछूत शराबी, गुंडे और वेश्यायें तक शामिल हैं। समाजमें अिन वर्गोंकी हस्तीके लिअे हममें से हरअेक आदमी जिम्मेदार है। पुराने जमानेमें विद्यार्थी 'ब्रह्मचारी' कहलाते थे। ब्रह्मचारीका अर्थ है अीश्वरके रास्ते और अीश्वरसे डरकर चलनेवाला। अिन ब्रह्मचारियोंकी राजा और बड़े लोग अिज्जत करते थे। समाज खुशीसे अिनका पोषण करता था और बदलेमें ये समाजको सौ-गुनी बलवान आत्मायें, बलवान मगज और बलवान भुजायें अर्पण करते थे। आजकी दुनियामें गिरी हुअी जातियोंकी शुभ आशायें अपने विद्यार्थियों पर लगी हुअी हैं। ये विद्यार्थी हर मामलेमें आत्मत्याग करनेवाले अगुआ सुधारक हुअे हैं। हमारे देश भारतमें अैसे अुदाहरण न हों सो बात नहीं, किन्तु वे अंगुलियों पर गिने जा सकते हैं। मेरा कहना यह है कि विद्यार्थी-परिषदोंको अिस तरहका व्यवस्थित काम हाथमें लेना चाहिये, जो ब्रह्मचारीको [illegible] दे सके।

[illegible] १-६-'२३

११

विद्यार्थी क्या कर सकते हैं?

१

जैसे स्वराज्यकी कुंजी विद्यार्थियोंकी जेबमें है, वैसे ही समाज-सुधार और धर्मरक्षाकी कुंजी भी वे अपनी जेबमें लिये फिरते हैं। यह हो सकता है कि लापरवाहीसे अपनी जेबमें पड़ी हुअी अनमोल चीजका अुन्हें पता न हो। . . . मैं आशा करता हूं कि विद्यार्थी अपनी शक्तिका अन्दाज लगा लेंगे।

नवजीवन, २६–२–'२८

२

तीन विद्यार्थी लिखते हैं : "हम देशकी सेवा करना चाहते हैं, पढ़ाअी करते हुअे और अपनी जगह रहते हुअे हम देशकी सेवा किस तरह कर सकते हैं, यह हमें 'नवजीवन' के जरिये बताअिये।" अिन विद्यार्थियोंने अपना नाम, पता और अुम्र लिखी है। वे कहते हैं : "हमारा नाम-पता जाहिर न कीजिये। हमें पत्र भी न लिखियेगा। हमारी अैसी हालत भी नहीं कि हम पत्र भी मंगा सकें।" अैसे विद्यार्थियोंको सलाह देना मैं मुश्किल मानता हूं। जो अपने लिखे हुअे पत्रका जवाब भी न पा सकें, अुन्हें क्या सलाह दी जा सकती है? फिर भी अितना तो कहा ही जा सकता है: आत्मशुद्धि ही अुत्तम देशसेवा है। क्या अिन विद्यार्थियोंने आत्माकी शुद्धि कर ली है? अुनके मन पवित्र हैं? विद्यार्थियोंमें फैली हुअी गदगीसे वे दूर रह सके हैं? वे सत्य वगैराका पालन करते हैं? पत्रका अुत्तर पानेमें अुन्हें डर है, जिस हालतमें ही कहीं न कहीं दोष है। विद्यार्थियोंको अिस डरमें से निकलना आना चाहिये। अुन्हें अपने विचार बड़ोंके सामने हिम्मत और दृढ़ताके साथ रखना सीखना चाहिये। ये विद्यार्थी खादी पहनते हैं? कातते हैं? यदि वे कातते हों और खादी पहनते हों, तो भी देशसेवामें भाग लेते हैं। फुरसत मिलने पर बीमार पड़ोसीकी सेवा करते हैं? अपने आसपास गंदगी रहती हो, तो अवकाश निकालकर स्वयं मेहनत

करके अुसे साफ करते हैं? अैसे कअी सवाल पूछे जा सकते हैं अ
जिनके जवाब विद्यार्थी संतोषजनक दे सकते हों, तो आज भी अुनकी
देशसेवकोंमें बड़ी मानी जायगी।

नवजीवन ८–७–'२८

३

विरोधके डरके बिना यह कहा जा सकता है कि चीन जैसे बड़े
आजादीकी लड़ाअीके अगुआ वहांके विद्यार्थी ही थे और मिस्रकी
स्वतंत्रताके संग्राममें विद्यार्थी ही सबसे आगे हैं। भारतके विद्यार्थियों
अैसी ही आशा रखी जाती है। पाठशालाओं या विद्यालयोंमें यदि वे
हैं या अुन्हें जाना चाहिये, तो स्वार्थके लिअे नहीं बल्कि सेवाके f
राष्ट्रका नवनीत विद्यार्थियोंको ही बनना चाहिये।

*विद्यार्थियोंके रास्तेमें जो बड़ीसे बड़ी रुकावट होती है, वह अ
काल्पनिक परिणामोंके डरकी होती है। अिसलिअे अुन्हें जो पहला पाठ सी
है, वह डर छोड़नेका है। जो विद्यार्थी स्कूलसे निकाल दिये जा
गरीबीका और मौतका भी डर रखते है, अुनसे कभी आजादी नहीं ली
सकती। सरकारी संस्थाओंके विद्यार्थियोंको बड़ेसे बड़ा डर अिस बातका
है कि वे निकाल दिये जायेंगे। अुन्हें समझना चाहिये कि बिना हिम्म
शिक्षा अैसी ही है जैसे मोमका पुतला। दीखनेमें सुन्दर होते हुअे भी f
गरम चीजके जरा छू जानेसे ही वह पिघल जाता है।**

४

सारे देशकी तरह विद्यार्थियोंमें भी अेक तरहकी जागृति और अशां
फैल गअी है। यह शुभ चिह्न है, किन्तु आसानीसे अशुभ बन सकता है
भापको काबूमें रखकर अुसका भापयंत्र बनाते हैं और वह प्रचण्ड शक्ति
बनकर जितना बोझ ढो लेता है जो हमने कभी सोचा भी न हो। प
अुसे अिकट्ठी न करें, तो वह या तो बेकार जाती है या नाश करती है
अिसी तरह आज विद्यार्थी आदि वर्गोंमें पैदा हुअी भापको जमा न कि

* यंग अिंडिया, १२–७–'२८; 'Awakening among Students
नामक लेखसे।

जायगा, तो वह व्यर्थ जायगी या हमारा ही नाश करेगी। यदि समझदारीके साथ अुसे संग्रह किया जायगा, तो अुसीसे अेक प्रचंड शक्ति पैदा हो जायगी।

* * *

मुझे आजकी ब्रिटिश राज्यपद्धतिके लिअे न अिज्जत है और न प्रेम। मैंने अुसे शैतानका-काम कहा है। मैं अिस पद्धतिका हमेशा नाश चाहता हूं। यह नाश भारतके नवयुवकों और नवयुवतियोंके हाथों हो तो सब तरहसे अच्छा है। यह नाश करनेकी शक्ति पैदा करना विद्यार्थियोंके हाथमें है। यदि वे अपनेमें पैदा होनेवाली भापको जमा करके रखें तो यही वह शक्ति पैदा कर सकती है।

* * *

जहां तक मैं समझ पाया हूं, विद्यार्थी शान्तिमय युद्धमें आहुति देना चाहते हैं। *किन्तु मेरे समझनेमें भूल हो, तो भी अूपरकी बात दोनों तरहकी* — आत्मबलवाली और पशुबलवाली — लड़ाअीके लिअे लागू होती है। हमें गोला-बारूदसे लड़ना हो, तो भी संयम रखना पड़ेगा, भापको अिकट्ठा करना पड़ेगा। अेक हद तक दोनों रास्ते अेक ही हैं। अिस्लामके खलीफाओंने, अीसाअी क्रूसेडरों या धर्मवीरोंने और राजनीतिमें क्रामवेल और अुसके सिपाहियोंने अपूर्व बलिदान किया था। आजकलके अुदाहरण लें तो लेनिन, सनयात सेन आदिने *सादगी, दुःख सहनेकी शक्ति, भोगत्याग, अेकनिष्ठा और सतत* जागृतिका योगियोंको भी शरमानेवाला नमूना दुनियाके सामने पेश किया है। अुनके अनुयायियोंने भी वफादारी और नियम-पालनका अैसा ही अुज्ज्वल नमूना पेश किया है।

अैसा ही किये बिना हमारा काम भी नहीं चलेगा। हमारा त्याग अभी न कुछ-सा है। हमारी नियम-पालनकी शक्ति भी थोड़ी ही है; हमारी सादगीकी मात्रा कम है; हमारी अेकनिष्ठा नाममात्रकी ही मानी जायगी। हमारी दृढ़ता और अेकाग्रता आरम्भकी स्थितिमें ही है। अिसलिअे नौजवान लोग याद रखें कि अुन्हें अभी बहुत कुछ करना बाकी है। अुन्होंने जो कुछ किया है वह मेरे ध्यानमें है। मुझसे प्रशंसा करानेकी अुन्हें जरूरत न होनी चाहिये। मित्र मित्रकी बड़ाअी करे, तो वह मित्र न रहकर भाट बन जाता है और मित्रका दरजा खो देता है। मित्रका काम कमियां दिखाकर अुन्हें दूर करनेका प्रयत्न करना है।

नवजीवन, ३-१-'२९

बहिष्कार और विद्यार्थी

अेक कॉलेजके प्रिन्सिपाल लिखते हैं:

"बहिष्कार आन्दोलनको चलानेवाले लोग विद्यार्थियोंको अुसमें खींच रहे हैं। यह साफ है कि अिस राजनीतिक प्रचारके काममें विद्यार्थी जो हिस्सा लेते हैं, अुसे कोअी जरा भी महत्त्व नहीं दे सकता। जब विद्यार्थी अपने स्कूल-कॉलेज छोड़कर किसी भी प्रदर्शनमें शरीक होते हैं, तब वे स्थानीय फसादियोंके साथ मिल जाते हैं, बदमाशोंकी तमाम बुराअियोंके लिअे अुन्हें जिम्मेदार बनना पड़ता है और अकसर पुलिसके डंडोंकी पहली मार अुन्हीं पर पड़ती है। अिसके सिवा, अुनके स्कूल और कॉलेजके अधिकारी अुन पर नाराज होते हैं और वे जो सजा देते हैं, वह भी अुन्हें भोगनी पड़ती है। और अपनी आज्ञा भंग होनेके कारण माता-पिता या पालक लोग रुपया रोक देते हैं और विद्यार्थियोंकी जिन्दगी बरबाद होती है सो अलग। छुट्टीके दिनोंमें अपढ़ देहातियोंको शिक्षा देना, जनस्वास्थ्यके ज्ञानका प्रचार करना वगैरा युवकोंके कामोंको मैं समझ सकता हूं। किन्तु अुन्हें अपने ही माता-पिता और शिक्षकोंका विरोध करते, रास्तों पर संदिग्ध लोगोंकी सोहबतमें घूमते और कानून और व्यवस्थाको तोड़नेमें मदद देते देखकर बड़ा दुःख होता है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप राजनीतिक पुरुषोंको यह सलाह दें कि वे अपने प्रदर्शनोंको ज्यादा असरवाले बनानेके लिअे विद्यार्थियोंको अुनके योग्य कार्यमें से खींचकर न ले जायं। असलमें अैसा करके वे अपने प्रदर्शनोंकी कीमत घटाते हैं, क्योंकि अैसे प्रदर्शनोंको स्वार्थी और मूर्ख आन्दोलनकारियों द्वारा बहकाये हुअे अविचारी लड़कोंका काम मान लिया जा सकता है।

"विद्यार्थी आधुनिक राजनीतिमें पड़ें, अिसके मैं विरुद्ध नहीं। शिक्षक रोजमर्राके सवालोंके बारेमें पक्ष और विपक्षके अखबारोंमें प्रगट होनेवाले विचार अिकट्ठे करके विद्यार्थियोंके आगे रखें और अुस परसे अपना-अपना फैसला कर लेना अुन्हें सिखायें तो यह बड़ी अच्छी बात है। मैंने यह योजना सफलताके साथ आजमायी है। सचमुच विद्यार्थियोंके लिअे किसी भी विषयकी मनाही नहीं, क्योंकि बर्ट्रॉण्ड रसल

और दूसरे लोग यह कहते हैं कि काम-मीमांसाके प्रश्नोंके बारेमें भी अुन्हें पढ़ाना चाहिये। विद्यार्थियोंको अैसे अुद्देश्योंके लिअे हथियार बनाया जाता है, जो न अुनके कामके हैं और न अुनका अुपयोग करनेवालोंके कामके हैं। मैं अिसी चीजका कट्टर विरोधी हूं।"

पत्र लिखनेवालेने अिसी आशासे मुझे लिखा है कि मैं विद्यार्थियोंके सक्रिय राजनीतिमें भाग लेनेकी निन्दा करूंगा। किन्तु मुझे दुःख है कि मुझे अुन्हें निराश करना पड़ रहा है। अुन्हें यह जानना चाहिये था कि १९२०–२१ में स्कूल-कॉलेज छोड़कर कैदकी जोखिमवाले राजनीतिक फर्ज अदा करनेमें लग जानेके लिअे अुन्हें ललचानेमें मेरा हाथ कम नहीं था। मैं मानता हूं कि देशके राजनीतिक आन्दोलनमें अगुआ बनकर भाग लेना विद्यार्थियोंका स्पष्ट कर्तव्य है। दुनियामें सब जगह ये लोग अैसा ही कर रहे हैं। भारतमें तो, जहां राजनीतिक भान कल तक अधिकतर अंग्रेजी शिक्षा पाये हुअे वर्ग तक ही मर्यादित था, अुनका अैसा करनेका और भी ज्यादा फर्ज है। चीनमें और मिस्रमें राष्ट्रीय प्रवृत्तिको संभव बनानेवाले वहांके विद्यार्थी लोग ही थे। अुनसे भारतके विद्यार्थी कैसे पीछे रह सकते हैं?

प्रिंसिपाल साहब जिस बातका आग्रह रख सकते हैं, वह यह हो सकती है कि विद्यार्थियोंको अहिंसाके नियम पालने चाहिये और फसादी लोगोंके असरमें न आकर अुन पर काबू रखना चाहिये।

यंग अिंडिया, २९–३–'२८

१३

विद्यार्थियोंकी हड़ताल

अुचित हो या अनुचित, मजदूरोंकी हड़ताल काफी बुरी चीज है, और विद्यार्थियोंकी हड़ताल तो अुससे भी बुरी है — अेक तो अुसके आखिरी परिणामोंके कारण और दूसरे अुसका पक्ष करनेवालोंकी हैसियतके कारण। मजदूर अपढ़ या अशिक्षित होते हैं, जबकि विद्यार्थी शिक्षा पाये हुअे होते हैं। मजदूरोंको हड़तालसे कुछ भौतिक स्वार्थ साधने होते हैं और अुन्हें रखनेवाले पूंजीपतियोंके स्वार्थसे वे अलग होते हैं या विरुद्ध भी हो सकते हैं, जबकि विद्यार्थियों या शिक्षा-संस्थाओंके अधिकारियोंकी बात अैसी नहीं होती।

अिसलिअे विद्यार्थियोंकी हड़ताल अैसे दूरके परिणाम लानेवाली होती है कि असाधारण परिस्थितियोंमें ही अुसे ठीक माना जा सकता है।

यद्यपि अच्छी तरह चलाये जानेवाले स्कूल-कालिजोंमें विद्यार्थियोंकी हड़तालके विरले ही मौके आने चाहियें, फिर भी अैसे मौकोंकी कल्पना की जा सकती है जब अुन्हें भी हड़ताल करनी पड़े। जैसे कोअी प्रिंसिपाल लोकमतके खिलाफ होकर सार्वजनिक आनन्द-अुत्सवके दिनको — जिसे माता-पिता और विद्यार्थी दोनों मनाना चाहते हों — त्यौहारके तौर पर न माने, तो सिर्फ अुस दिनके लिअे हड़ताल रखना विद्यार्थियोंके लिअे ठीक समझा जायगा। जैसे-जैसे विद्यार्थी अपना स्वरूप ज्यादा-ज्यादा समझते जायेंगे और राष्ट्रके प्रति अपनी जिम्मेदारीकी भावनाके बारेमें ज्यादा-ज्यादा जाग्रत होते जायेंगे, वैसे-वैसे अिस तरहके प्रसंग ज्यादा आते रहेंगे।

* * *

जब शिक्षक वचन-भंगका अपराधी पाया जाता है, तब अपने प्रतिष्ठित धंधेके कारण जिस अमर्यादित मानका वह अधिकारी होता है, वह मान अुसे देना असम्भव होता है।

आगे बढ़े हुअे राजनीतिक विचार रखनेवाले विद्यार्थियों या सरकारको नापसन्द होनेवाली राजनीतिक सभाओंमें कुछ भी भाग लेनेवाले विद्यार्थियों पर सरकारी स्कूलों और कालिजोंमें बहुत ज्यादा जासूसी की जाती है और अुन्हें बहुत ज्यादा सताया भी जाता है। यह बेजा दखल अब तुरन्त बन्द होना चाहिये। विदेशी राज्यके जुअेके नीचे दुःखसे चीखनेवाले भारत जैसे देशमें राष्ट्रीय आजादीके आन्दोलनमें विद्यार्थियोंको भाग लेनेसे रोकना असंभव है। जो कुछ हो सकता है, वह अितना ही कि अुनके अुत्साहको अितना संयत रखा जाय कि वह अुनकी पढ़ाअीमें रुकावट न डाले। वे लड़ने-झगड़नेवाले दलोंके हिमायती न बनें, किन्तु अुन्हें अपनी पसन्दकी राजनीतिक राय रखने और अुसका सक्रिय प्रचार करनेके लिअे स्वतंत्र रहनेका अधिकार है। शिक्षा-संस्थाओंका काम अुनमें भरती होना पसन्द करनेवाले लड़के-लड़कियोंको शिक्षा देना और अुसके जरिये अुनका चरित्र बनाना है; संस्थाके बाहरकी अुनकी राजनीतिक या नैतिक प्रवृत्तियोंको छोड़कर दूसरी प्रवृत्तियोंमें दखल देनेका अुनका काम कभी नहीं है।*

---

* यंग अिंडिया, २४-१-'२९; 'Duty of Resistance' नामक लेखसे।

१४

युवकवर्गसे

अेक कॉलिजका विद्यार्थी लिखता है :

"कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार अिस साल हमें औपनिवेशिक स्वराज्य मिलना चाहिये। किन्तु वर्तमान परिस्थितिको देखते हुअे अैसा नहीं जान पड़ता कि सरकार अैसी कोअी चीज देगी; और यह निश्चित है कि नहीं देगी।

"तो फिर कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार अगले सालसे संपूर्ण असहयोग शुरू हो जायगा। हम युवकोंको तो अुसमें सबसे पहले भाग लेना पड़ेगा। तो क्या हमें स्कूल-कॉलेज छोड़ने पड़ेंगे? और यदि अैसा ही हो तो आप अभीसे क्यों नहीं चेतावनी देते? स्कूलोंकी बात तो खैर ठीक है, पर कॉलेजोंका मामला ध्यान देने लायक है। सत्रकी जो भारी फीस विद्यार्थी चुका देंगे, वह क्या अुन्हें कॉलेज छोड़ते समय वापस मिल जायगी? यदि नहीं तो विद्यार्थियोंका बहुतसा रुपया अिस तरह चला जायगा। अुसमें रुपयेवालोंको तो हर्ज नहीं, परन्तु गरीब विद्यार्थी बड़े परेशान होंगे।

"अिसलिअे यदि कॉलेजोंका भी बहिष्कार करना निश्चित हो या संभव हो, तो विद्यार्थियोंको अभीसे चेतावनी दे देना चाहिये, जिससे अुनकी मेहनत और अुनका धन बेकार न जाय।

"आशा है अिन सवालोंका जवाब जरूर मिलेगा।"

अिस पत्रमें मुझे जवानीका अुछलता हुआ आशावाद नहीं दिखायी देता, अुसकी बहादुरी भी नहीं दीखती। अिसमें मौतके किनारे बैठे हुअे मेरे जैसेकी निराशा और कंजूस बनियेकी कंजूसी दीखती है। अिस नवयुवकने यह निश्चय किसलिअे किया है कि "वर्तमान परिस्थितियोंको देखते हुअे" सरकार औपनिवेशिक स्वराज्य देगी ही नहीं। यह नवयुवक भूल जाता है कि सरकार कुछ नहीं देगी, तो जो कुछ मिलेगा वह हमें अपने संघबलसे, त्यागबलसे लेना पड़ेगा। कौड़ी-कौड़ीका हिसाब करनेवालेको जो असंभव दीखता हो, वह नवयुवकके साहसको बिलकुल संभव मालूम होना चाहिये। असंभवको संभव बनानेमें ही नवयुवककी वीरता और शोभा है।

किन्तु मैं मानता हूं कि जैसा अभी हो रहा है, वैसा ही नवयुवक और जनताके दूसरे भाग होने दें, तो वर्षके अन्तमें हमारी जीत नहीं हो सकती। जैसा ही हो तो भी बहादुर आदमियोंके लिअे वह स्वागत करने लायक प्रसंग ही होगा, क्योंकि असमें लड़ाअीका अवसर आयेगा। लड़ाअीका अवसर आयेगा तो 'मेरी जमीन लूट जायगी', अैसा समझकर क्या योद्धा अपनी जमीन छोड़ देता है?

विद्यार्थियोंके लिअे घबरानेका कोअी भी कारण मुझे तो दिखायी नहीं देता। लड़ाअी आ जाय तो भी वे विश्वास रखें कि छोड़ा हुआ कॉलेज आखिर अनका ही है। स्वराज्यके मतका विचार करते समय फीसका सवाल तो बहुत ही तुच्छ चीज हो जाती है। जब बहुतोंको अपना सब कु छोड़नेका मौका आ जायगा, तब फीस किस गिनतीमें हो सकती है?

अितना कहनेके बाद अब असली सवाल पर आता हूं। सरकारी स्कू कॉलिजोंका बहिष्कार करना या न करना यह तो आखिरमें कांग्रेस ही त करेगी। मेरी चले तो मैं जरूर सरकारी स्कूल-कॉलिजोंका बायकाट करवाउं यह दीयेकी तरह साफ दीखता है कि सरकार अिन स्कूल-कॉलिजोंके जरि ही राज्य करती है। आचार्य रामदेवने विद्यापीठमें व्याख्यान देते हुअे बड़े गवाहोंके जरिये साबित कर दिया था कि आजकलकी शिक्षाका आकार तैया करनेमें सरकारकी मन्शा राज्यके लिअे नौकर पैदा करनेकी थी। हजा नौजवान जो सरकारी मुहर (डिग्री) चाहते हैं, वह नौकरीके लिअे ही चाहते हैं। मुहर पानेमें ज्ञानसिद्धि नहीं। ज्ञानसिद्धि पढ़नेसे मिलती है मुहरकी जड़में नौकरी पानेकी लगन होती है। यह लगन स्वराज्य मिलने रुकावट डालती है। युवकोंमें मैं नया तेज देखता हूं। जिससे मुझे खुश होती है। किन्तु अिससे मैं अंधा नहीं बन सकता। यह तेज अभी तो प भरका और कुछ हद तक यांत्रिक और बनावटी है। जब सच्चा तेज आवेग तब वह सूर्यकी किरणोंकी तरह दुनियाको चकाचौंधमें डाल देगा। जब व तेज आवेगा, तब किसी विद्यार्थीको स्कूल या कालेजकी गरज नहीं रहेगी किन्तु अभी तो सरकारके कागजी नोटोंकी तरह अुसके स्कूल-कॉलिज चलनका पैसा हैं। अुनके मोहसे कौन बच सकता है?

नवजीवन, १४-४-'२१

२

[आगरा कॉलेज और सेण्ट जान कालेजके विद्यार्थी आगरा कॉलेजके हॉलमें गांधीजीको मानपत्र देनेके लिअे अिकट्ठे हुअे थे। मानपत्रमें विद्यार्थियोंने बताया था : "हम गरीब हैं अिसलिअे हम सिर्फ अपने हृदय आपको अर्पण कर देते हैं। आपके आदर्शोंको हम मानते हैं, किन्तु अुन्हें अमलमें लानेकी हममें शक्ति नहीं है।" यह लाचारी और कमजोरीका प्रदर्शन युवकोंको शोभा दे सकता है? गांधीजीको अुससे दुःख हुआ। अुसे प्रकट करते हुअे अुन्होंने कहा :]

"मैं युवक लोगोंसे अैसी अश्रद्धा और निराशाकी बातें सुननेके लिअे बिलकुल तैयार न था। मेरे जैसा मौतके किनारे पर पहुंचा हुआ आदमी अपना बोझ हलका करनेके लिअे युवकवर्गसे आशा न रखे तो किससे रखे? और जब आगरेके युवक मुझसे आकर कहते हैं कि वे मुझे अपना हृदय देते हैं किन्तु कुछ कर नहीं सकते तो अिसका क्या अर्थ है? 'दरियामें लगी आग बुझा कौन सकेगा?'"

यह बात कहते-कहते गांधीजीका हृदय भर आया : "यदि तुम चरित्रबल पैदा नहीं करोगे, तो तुम्हारा सब पढ़ना और शेक्सपीयर और वर्ड्सवर्थका अध्ययन बेकार साबित होगा। जब तुम अपने मन पर काबू कर सकोगे, विकारोंको वशमें करने लग जाओगे, तब तुम्हारे प्रकट किये हुअे विचारोंमें जो अश्रद्धा और निराशाकी ध्वनि भरी है वह जाती रहेगी।"

नवजीवन २२-९-'२९

१५
छुट्टियोंका सदुपयोग

[अेक विद्यार्थीने कअी सवाल करके पूछा है कि छुट्टियोंका अच्छेसे अच्छा अुपयोग क्या हो सकता है। नीचेका भाग अुसे दिये हुअे जवाबमें से लिया गया है।]

विद्यार्थी यदि अुत्साहके साथ काम हाथमें लें तो जरूर बहुतसी बातें कर सकते हैं। अुनमें से कुछ यहां देता हूं :

(१) रात और दिनकी पाठशालाअें चलाना। अुनके लिअे छुट्टीके दिनोंमें पूरा हो जाने लायक अभ्यासक्रम तैयार करना।

बागडोर मेरे हाथमें हो तो मैं विद्यार्थियोंको न तो अिसके लिअे आमंत्रण दूं और न अुत्तेजित करूं कि वे स्कूलों और कॉलिजोंसे निकलकर लड़ाअीमें भाग लें। अनुभवसे कहा जा सकता है कि विद्यार्थियोंके दिलोंमें सरकारी स्कूल-कॉलिजोंका मोह कम नहीं हुआ है। अिसमें शक नहीं कि स्कूलों और कॉलिजोंकी पहले जो प्रतिष्ठा थी वह अब कम हो गयी है। मगर अिसको मैं ज्यादा महत्त्व नहीं देता। और अगर सरकारी स्कूल-कॉलिजोंको कायम रहना है, तो विद्यार्थियोंको लड़ाअीके लिअे बाहर निकालनेसे कोअी फायदा नहीं होगा और न लड़ाअीको कोअी मदद मिलेगी। विद्यार्थियोंके अिस प्रकारके त्यागको मैं अहिंसक नहीं मानता। अिसलिअे मैंने कहा है कि जो भी विद्यार्थी लड़ाअीमें कूदना चाहे, अुसे चाहिये कि स्कूल-कॉलिज हमेशाके लिअे छोड़ दे और भविष्यमें देशसेवामें लगे। अिग्लैंडके विद्यार्थियोंकी स्थिति बिलकुल अलग है। वहां तो सारे देश पर बादल छाये हुअे हैं। वहांके संचालकोंने स्कूल-कॉलिज खुद बन्द कर दिये हैं। लेकिन यहां जो भी विद्यार्थी निकलेगा वह संचालककी मर्जीके खिलाफ निकलेगा।

हरिजनसेवक, १४-९-'४०

१८

अेक अीसाअी विद्यार्थीकी शिकायत

बंगालके अेक मिशनरी कॉलेजका अेक भारतीय अीसाअी विद्यार्थी लिखता है:

"मिशनरी कलिज अीसाअी धर्मके अुपदेश और धर्मान्तरके केन्द्रोंकी तरह हिन्दुस्तानमें चलाये जाते हैं। मिशनरी लोग बाअिबल, अीसा और अीसाअी धर्मकी बातें तो करते हैं, परन्तु जब हिन्दुस्तानके लिअे कोअी राष्ट्रीय महत्त्वकी बात आती है, तब वे अितने राष्ट्रविरोधी बन जाते हैं कि सबको आश्चर्य होता है। हमारे कॉलेजमें हर साल स्नेह-सम्मेलन होता है। ७ सितंबरको हमारे कॉलेजमें अैसा सम्मेलन हुआ था। कार्यक्रममें सबसे पहले कुछ छात्रों द्वारा 'वन्देमातरम्' गानेकी योजना था। प्रिन्सिपालने अुसका विरोध किया और विरोधका कारण यह बताया कि हिन्दुस्तानी राष्ट्रगीतके सम्मानमें १० मिनट

तक खड़े रहना यूरोपियनोंके लिअे अशक्य है; और यदि 'वन्देमातरम्' गानेकी प्रथा चलने दी जाय, तो अुसका मतलब यह होगा कि कॉलिजके अधिकारियोंने अुसे राष्ट्रगीतके रूपमें मान्यता प्रदान की है। अैसी मान्यता देनेकी अुनकी अिच्छा नहीं थी। विद्यार्थियोंने अुन्हें समझानेमें कोओ कोशिश अुठा न रखी, लेकिन समझौता नहीं हो सका। अब विद्यार्थियोंने हड़ताल कर दी है। अिसी तरह कांग्रेसको भी सत्याग्रह और असहयोगका आश्रय लेना चाहिये, क्योंकि साम्राज्यवादी ब्रिटेन हमारा दृष्टिकोण नहीं समझ सकता।"

अभी-अभी मैंने विद्यार्थियोंकी हड़तालोंके खिलाफ बहुत कुछ लिखा है। अूपरके पत्रमें जिस कॉलेजकी बात है, अुसका नाम मैं नहीं जानता। यदि जानता होता तो मैं कॉलेजके अधिकारियोंको लिखकर जरूर पूछता कि यह बात सही है या नहीं। अिसलिअे मैं यह मानकर कि पत्रलेखक विद्यार्थीका वर्णन सही है अपनी राय पेश कर रहा हूं। और अगर यह सच हो तो मुझे कहते खुशी होती है कि यह हड़ताल शत प्रतिशत सकारण और अुचित थी। मैं आशा करता हू कि यह हड़ताल विद्यार्थियोंने बिलकुल स्वेच्छापूर्वक की होगी और अुसका परिणाम भी अनुकूल आया होगा। 'वंदेमातरम्' वस्तुतः राष्ट्रीय गीत है या नहीं, अिस बातका निर्णय करना मिशनरियोंका काम नहीं। यदि कॉलिजके अध्यापकों और शिक्षकोंको विद्यार्थियोंका प्रेम संपादन करना हो, तो अुन्हें अुनकी प्रवृत्तियों और आकांक्षाओंमें — जहां तक वे हानिकर या अनीतिमय न हों वहां तक — पूरा पूरा भाग अवश्य लेना चाहिये।

हरिजनबन्धु, १२-१०-'४०

१९
विद्यार्थी-जीवन

लाहौर और लखनअूके अखबारोंसे खबर मिली है कि वहांके विद्यालयोंके लड़कोंमें मारपीट हुअी। झगड़ेका कारण झंडा फहराना था। कांग्रेसके प्रेमियोंको तिरंगा झंडा फहराते देख लीगके प्रेमियोंने लीगका झंडा फहराया। कांग्रेसके प्रेमी अिसे सहन न कर सके और मारपीट हुअी। यह प्रकरण यदि दुःखद न हो तो हास्यजनक कहा जायगा। सौभाग्यसे लाहौरमें मौलाना साहब मौजूद थे। अुनके पास यह खबर पहुंची। अुन्होंने फैसला दिया कि विद्यार्थियोंको अिस तरह तिरंगा झंडा फहरानेका कोअी हक न था। अिस तरह अुस समय तो झगड़ा मिट गया। मगर झगड़ेकी जड़ तो बनी रही। जड़में तो अराजकता, अनाचार और स्वेच्छाचार है। विद्यालयोंके मकान विद्यार्थियोंके नहीं होते। मकान तो मालिकोंके होते हैं। झंडा फहरानेका अधिकार भी मालिकोंको ही है। विद्यार्थियोंको अिसमें हस्तक्षेप करनेका कोअी अधिकार नहीं।

और अिस तरह झगड़ा खड़ा करना विद्यार्थी-जीवनके लिअे शर्मकी बात है। विद्यालय तो संयम, सभ्यता, अेकता और सद्व्यवहार सीखनेका स्थान है। वहां पहला पाठ नियम पालनेका होना चाहिये। अैसा न हो तो वहांका विद्याभ्यास निरर्थक चीज है।

हरिजनसेवक, १७-२-’४६

२०
पढ़कर क्या किया जाय?

अेक विद्यार्थी गंभीरतासे यह सवाल पूछता है कि वह पढ़ाअी खतम कर लेनेके बाद क्या करे?

आज हम गुलाम हैं। जिन्होंने हमको पराधीन कर रखा है, अुन्हींके फायदेकी दृष्टिसे हमारी आजकलकी पढ़ाअीका कार्यक्रम रखा गया है। बिना लालच दिखाये कोअी अपना मतलब साध ले, अैसा दुनियामें कहीं नहीं होता। अिसलिअे हमारे शासकोंने आजकलकी शिक्षाके सिलसिलेमें अनेक प्रलोभन पैदा कर रखे हैं। अिसके सिवा, अैसे शासन-तंत्रके सभी आदमी

अेक सरीखे नहीं होते। अुनमें कुछ 'सद्‌वृत्तिवाले भी होते हैं। वे अुदार दिलसे विचार करते हैं। अिसमें संदेह नहीं कि आजके सरकारी शिक्षणमें भी कुछ अच्छाअी है। तो भी कुल मिलाकर, हम चाहें या न चाहें, अुसका अुपयोग अनिष्टकारी हो जाता है। यानी लोग अुसे अधिकसे अधिक धन अिकट्ठा करने और अूचेसे अूचा पद पानेका साधन समझते हैं। धन और पदके लोभमें गुलामी प्यारी लगने लगती है! अिस वातावरणमें से हम निकल जायें तो 'सा विद्या या विमुक्तये'— यानी विद्या वही है जो मुक्त करे —अिस प्राचीन मंत्रको सिद्ध कर लें। विद्या यानी केवल आध्यात्मिक ज्ञान और मुक्ति यानी छुटकारा, अितना ही अिसका अर्थ न करे। विद्याका अर्थ है लोकोपयोगी सारा ज्ञान प्राप्त करना और मुक्तिसे मतलब है अिस जीवनमें सब तरहकी गुलामीसे छुटकारा पाना। गुलामीका अर्थ है किसी दूसरेके अधीन होना या अपने-आप पैदा की हुअी बनावटी जरूरतोंका गुलाम बनना। अिस प्रकारकी मुक्ति जिसके द्वारा मिले वही असली शिक्षा है। अैसी शिक्षा मिले तो 'पढ़-लिखकर क्या करे?' यह सवाल ही नहीं अुठे।

विदेशी सरकारके द्वारा शुरू की गअी शिक्षा-प्रणाली अुसके अपने मतलबके लिअे है, अैसा मानकर ही सन् १९२० में कांग्रेसने सरकारी मदरसोंका बहिष्कार करनेका अैलान किया था। मगर वह जमाना तो अब बीत-सा ही गया है। सरकारी मदरसों और सरकारकी योजनाके अनुसार शिक्षा देनेवाली संस्थाओंकी संख्या रोज-रोज बढ़ती ही जाती है, तो भी अुनमें विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियोंकी माग पूरी नहीं होती। परीक्षा देनेवालोंकी संख्या भी खूब बढ़ रही है। यह सब होते हुअे भी मैं कहता हूं कि सच्ची तालीम तो वही है जो मैंने बताअी है। अिस मंत्रके अूपर-अूपरके अर्थमें आकर्षित होकर जो विद्यार्थी अपनी चलती हुअी पढ़ाअी छोड़ेंगे, अुन्हें बादमें कभी पछताना पड़ सकता है। अिसीलिअे मैंने विद्यार्थियोंको अेक सुगम रास्ता बताया है। वह यह है कि वे अपने मदरसोंमें पढ़ते हुअे भी वहां मिलनेवाली शिक्षाको सेवाके लिअे ही प्राप्त करे और सेवाके काममें ही अुनका अुपयोग करें, रुपया पैदा करनेके लिअे नहीं। वर्तमान शिक्षामें जो कमी है अुसे स्कूलसे बाहरके समयमें ज्ञान प्राप्त करके दूर करें; यानी अपने विद्यार्थी-जीवनमें जितना रचनात्मक कार्य वे कर सकते हैं करे।

हरिजनसेवक, १०-३-'४६

२१
विद्यार्थी और हड़ताल

बंगलोरसे अेक विद्यार्थी लिखता है:

"'हरिजन'का आपका लेख पढ़ा। अब आपसे प्रार्थना है कि विद्यार्थी अंडमान-दिवस, पंजाब हत्याकांड विरोध-दिवस जैसे मौकों पर हड़तालमें शरीक हों या न हों, अिस बारेमें आप अपनी राय बतायें।"

मैंने यह कहा है कि विद्यार्थियोंके बोलने और चलने-फिरने पर लगी हुआी पाबन्दियां दूर होनी चाहिये। किन्तु राजनीतिक हड़तालों और प्रदर्शनोंका समर्थन मैं नहीं कर सकता। राय बनाने और अुसे जाहिर करनेके मामलेमें विद्यार्थियोंको पूरी आजादी होनी चाहिये। वे अपनी पसन्दके किसी भी राजनीतिक दलके साथ अपनी सहानुभूति दिखा सकते हैं। किन्तु मेरी राय है कि पढ़ाआीके समयमें अुन दूसरा काम करनेकी स्वतंत्रता अुन्हें नहीं हो सकती। यह नहीं हो सकता कि विद्यार्थी सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता भी हों और साथ-साथ पढ़ता भी हो। बड़ी भारी राष्ट्रीय अुथल-पुथलके समय अिस बारेमें बारीकीसे मर्यादा बांधना कठिन है। अैसे समय वे हड़ताल नहीं करते; या अुन परिस्थितियोंके लिअे भी 'हड़ताल' शब्द काममें लें, तो वे हमेशाके लिअे हड़ताल करते हैं — पढ़ाआी बन्द कर देते हैं। यानी अपवाद जैसा लगने पर भी सच पूछें तो अैसा प्रसंग अपवाद नहीं होता।

असलमें, सवाल करनेवालेकी बताआी हुआी नौबत कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों-वाले प्रान्तोंमें तो आनी ही नहीं चाहिये, क्योंकि जिन पाबन्दियोंको समझदार विद्यार्थी खुशीसे मंजूर न कर सकें वे तो वहां लगाआी ही नहीं जा सकतीं। अधिकतर विद्यार्थी कांग्रेसवादी हैं — होने चाहिये। अिसलिअे कांग्रेसी मंत्रि-योंको मुश्किलमें डालनेवाला कोआी काम वे नहीं करेंगे। वे यदि हड़ताल करें तो अुसी हालतमें जब मंत्री लोग चाहें। किन्तु मंत्री अैसी हड़ताल चाहें अैसा मौका तो मेरे खयालसे अेक वही हो सकता है, जब कांग्रेसने मंत्रिमंडल छोड़ दिये हों और अुस समय जो सरकार हो अुसके विरुद्ध सक्रिय असहयोग छेड़ दिया हो। अुस समय भी हड़तालोंके कारण विद्या-र्थियोंको तुरंत पढ़ाआी छोड़ देनेके लिअे कहना तो मुझे लगता है अपना

दिवाला निकालनेके बराबर होगा। यदि आम जनता काग्रेसकी बात मानकर हड़तालें जैसे प्रदर्शन करे, तो विद्यार्थियोंको अुस समय तक न छेड़ा जाय, जब तक आखिरी कदम अुठानेका निश्चय न कर लिया गया हो। पिछली लड़ाअीके समय विद्यार्थियोंको पहले नहीं बुलाया गया था, किन्तु जहां तक मुझे याद है आखिरमें बुलाया गया था, और वह भी कॉलेजके विद्यार्थियोंको ही।

मैं चाहता हूं कि १८ सितम्बरके 'हरिजन' में अेक शिक्षकके पत्र पर लिखी हुअी मेरी टिप्पणी* यह प्रश्नकर्ता पढ़े — दुबारा पढ़ जाय। शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी राजनीतिक आजादीके बारेमें मैं क्या मानता हूं यह अुसमें मिलेगा।

किन्तु अेक दूसरे प्रश्नकर्ता अिस बारेमें यों लिखते हैं:

"यदि सरकारी नौकरों, शिक्षकों और दूसरे लोगोंको राजनीतिमें भाग लेने दिया जाय तो स्थिति बड़ी कठिन हो जाय। जिन अफसरोंका काम सरकारी नीतिको अमलमें लाना है, वही अुसकी टीका करने लगें तो राज्य ही नहीं चल सकते। यह ठीक है कि राष्ट्रकी आशाओं और देशाभिमानकी भावनाओंका आजादीके साथ विकास हो सकना चाहिये। परन्तु मुझे डर है कि आपके लेखसे गलतफहमी पैदा होगी। अिसलिअे आप अपना विचार बिलकुल स्पष्ट कर दीजिये।"

मैंने मान रखा है कि अुस टिप्पणीमें मैंने अपना विचार अच्छी तरह स्पष्ट कर दिया है। जहां राष्ट्रीय सरकार होती है, वहां अुसके अफसरों और विद्यार्थियोंके साथ अुसे शायद ही किसी कठिनाअीका सामना करना पड़ता हो। मैंने अपनी टिप्पणीमें किसी भी प्रकारके अविनय या अनुशासनके अभावको जगह न देनेकी सावधानी रखी है। वह शिक्षक जिस बातका विरोध करता है, और अुचित विरोध करता है, वह यह है कि विचारोंकी आजादी पर दबाव या जासूसी नहीं होनी चाहिये; और अैसा होना आज तक तो मामूली रिवाज ही था। कांग्रेसी मंत्री जनताके और जनतामें से ही हैं। अुन्हें कुछ छिपाकर नहीं रखना है। अुनसे यह आशा रखी जाती है कि

* अिस पुस्तकमें वह टिप्पणी मूल पत्रके बिना पृष्ठ ५५ पर दी गअी है।

वे जनताकी हरअेक हलचलके साथ (जिसमें विद्यार्थियोंके विचार भी आ जाते हैं) अपना व्यक्तिगत सम्बन्ध रखेंगे। कांग्रेसका सारा संगठन अुनके पास मौजूद है। यह संगठन राष्ट्रकी अभिलाषाओंका प्रतिनिधि होनेके कारण कानून, पुलिस या फौजसे भी जरूर बढ़िया है। जिन्हें अिस संगठनका सहारा नहीं, वे फूटे हुअे बादामकी तरह हैं। जिन मंत्रियोंका यह सहारा है, अुनके लिअे कानून, पुलिस और फौज बेकारकी झंझट ही होगी। और यदि कांग्रेस विनय और अनुशासनकी मूर्ति न हो तो वह कांग्रेस नहीं। अिसलिअे जहां कांग्रेसका शासन हो वहां सब जगह अनुशासन खुशीसे पाला जाना चाहिये, जबरन् नहीं।

हरिजन, २–१०–'३७

२२

विद्यार्थियोंकी हड़ताल

अन्नामलाओी युनिवर्सिटीके अेक शिक्षकका पत्र मुझे मिला है। वे लिखते हैं:

"गत नवम्बरकी बात है, पांच या छह विद्यार्थियोंके अेक समूहने संगठित रूपसे युनिवर्सिटी-यूनियनके सेक्रेटरी — अपने ही अेक साथी विद्यार्थी — पर हमला किया। युनिवर्सिटीके वाअिस-चांसलर श्री श्रीनिवास शास्त्रीने अिस पर सख्त अेतराज किया और अुस समूहके नेताको युनिवर्सिटीसे निकाल दिया तथा बाकीको युनिवर्सिटीके अिस तालीमी सालके अन्त तक पढ़ाअीमें शामिल न करनेकी सजा दी।

"सजा पानेवाले अिन विद्यार्थियोंसे सहानुभूति रखनेवाले अिनके कुछ मित्रोंने अिस पर क्लासोंसे गैरहाजिर रहकर हड़ताल करना चाहा। दूसरे दिन अुन्होंने अन्य विद्यार्थियोंसे सलाह की और अुन्हें भी अिसके विरोध-स्वरूप हड़ताल करनेके लिअे समझाया-बुझाया। लेकिन अिसमें अुन्हें सफलता नहीं मिली, क्योंकि विद्यार्थियोंके बहुमतको लगा कि छह विद्यार्थियोंको जो सजा दी गअी है वह ठीक ही है। और अिसलिअे अुन्होंने हड़तालियोंका साथ देने या अुनके प्रति किसी तरहकी कोअी हमदर्दी जाहिर करनेसे अिनकार कर दिया।

"अिसलिअे दूसरे दिन कोअी बीस फीसदी विद्यार्थी पढ़ने नहीं आये, बाकी ८० फीसदी हस्बमामूल हाजिर रहे। यहां यह बता देना ठीक होगा कि अिस युनिवर्सिटीमें कुल ८०० के करीब विद्यार्थी हैं।

"अब वह निकाला हुआ विद्यार्थी होस्टेलमें आया और हड़तालका संचालन करने लगा। हड़तालको नाकामयाब होते देख शामके वक्त अुसने दूसरे साधनोंका सहारा लिया। जैसे, होस्टेलके चार मुख्य रास्तों पर लेट जाना, होस्टेलके कुछ दरवाजोंको बन्द कर देना और कुछ छोटे लड़कोंको, खासकर निचले दर्जेके बच्चोंको, जिनको कि अपनी बात माननेके लिअे डराया-धमकाया जा सकता है, कमरेमें बन्द कर देना आदि। अिससे तीसरे पहर कोअी पचास-साठ व्यक्ति बाकी विद्यार्थियोंको होस्टेलके बाहर आनेसे रोकनेमें सफल हो गये।

"अधिकारियोंने अिस तरह दरवाजे बन्द देखकर 'फेन्सिंग'को खोलना चाहा। जब युनिवर्सिटीके नौकरोंकी मददसे वे फेन्सिंगको हटाने लगे, तो हड़तालियोंने अुससे बने हुअे रास्तों पर पहुंचकर दूसरोंको अुधरसे निकलकर कॉलेज जानेसे रोका। अधिकारियोंने धरना देनेवालोंको पकड़कर हटाना चाहा, लेकिन वे कामयाब न हो सके। तब परिस्थितिको अपने काबूसे बाहर पाकर अुन्होंने अिस सब गड़बड़की जड़ अुस निकाले हुअे विद्यार्थीको होस्टेलकी हदसे हटानेकी पुलिससे प्रार्थना की, जिस पर पुलिसने अुसे वहांसे हटा दिया। अिस पर स्वभावतः कुछ और विद्यार्थी भी खीज अुठे और हड़तालियोंके प्रति सहानुभूति दिखाने लगे। अगले सवेरे हड़तालियोंको होस्टेलकी सारी फेन्सिंग हटाअी हुअी मिली। तब वे कॉलेजकी हदमें घुस गये और पढ़ाअीके कमरोंमें जानेवाले रास्तों पर लेटकर धरना देने लगे। तब श्री श्रीनिवास शास्त्रीने डेढ़ महीनेकी लम्बी छुट्टी करके २९ नवम्बरसे १६ जनवरी तकके लिअे युनिवर्सिटीको बन्द कर दिया।

"अखबारोंको अुन्होंने अेक वक्तव्य देकर विद्यार्थियोंसे अपील की कि वे छुट्टीके बाद घरसे शिष्ट और सुखद भावनाओंके साथ पढ़नेके लिअे आयें।

"लेकिन कॉलेजके फिरसे खुलने पर अिन विद्यार्थियोंकी हल-चल और भी तेज हो गअी। क्योंकि छुट्टियोंमें अिन्हें . . . से और सलाह

मिल गयी थी। मालूम पड़ता है कि वे राजाजीके पास भी गये थे, लेकिन अुन्होंने हस्तक्षेप करनेसे अिनकार करके वाअिस-चांसलरका हुक्म माननेके लिये कहा। अुन्होंने वाअिस-चांसलरके मारफत हड़तालियोंको दो तार भी दिये, जिनमें अुनसे हड़ताल बन्द करके शांतिके साथ पढ़ाअी शुरू कर देनेकी प्रार्थना की।

"अच्छे विद्यार्थियोंके सामान्य बहुमत पर अिन तारोंका अच्छा असर पड़ा। मगर हड़तालिये अपनी बात पर अड़े रहे।

"धरना देना अभी भी जारी है। यह तो लगभग मामूली हो गया है। अिन हड़तालियोंकी तादाद ३५–४५ के करीब है। और लगभग ५० अिनसे सहानुभूति रखनेवाले अैसे हैं, जो सामने आकर हड़ताल करनेका साहस तो नहीं रखते, पर अन्दर ही अन्दर गड़बड़ मचाते रहते हैं।

"ये रोज-रोज अिकट्ठे होकर आते हैं और क्लासोंके दरवाजों पर व पहली मंजिलकी क्लासों पर जानेवाले जीने पर लेट जाते हैं और अिस तरह विद्यार्थियोंको क्लासोंमें जानेसे रोकते हैं। लेकिन शिक्षक दूसरी अैसी जगह जाकर पढ़ाअी शुरू कर देते हैं कि वहां धरना देनेवाले अुनसे पहले नहीं पहुंच पाते। नतीजा यह होता है कि हर घंटे पढ़ाअीका स्थान यहांसे वहां बदलना पड़ता है। और कभी कभी तो खुली जगहमें पढ़ाना पड़ता है, जहां कि धरना देनेवाले लेट नहीं सकते। अैसे अवसरों पर वे शोरगुल मचा कर पढाअीमें विघ्न डालते हैं और कभी कभी अपने शिक्षकोंका व्याख्यान सुनते हुअे विद्यार्थियोंको परेशान करते हैं।

"कल अेक नअी बात हुअी। हड़तालिये क्लासोंके अन्दर घुस आये और लेटकर चिल्लाने लगे। और कुछ हड़तालियोंने तो मैंने सुना शिक्षकोंके आनेसे पहले ही बोर्डों पर लिखना भी शुरू कर दिया था। कमजोर शिक्षक अगर कहीं मिल जाते हैं तो अिनमें से कुछ हड़तालिये अुन्हें भी डराने-फुसलानेकी कोशिश करते हैं। सच तो यह है कि अुन्होंने वाअिस-चांसलरको भी यह धमकी दी थी कि अगर अुन्होंने हमारी मांगें मंजूर नहीं कीं, तो 'हिंसा और रक्तपात' का सहारा लिया जायगा।

"दूसरी महत्वपूर्ण बात जो मुझे आपको कहनी चाहिये यह है कि हड़तालियोंको नगरसे कुछ बाहरी आदमी मिल जाते हैं — जो युनिवर्सिटीके अन्दर घुमनेके लिअे गुण्डोंको भाड़े पर लाते हैं। असलियत तो यह है कि मैंने बहुतसे अैसे गुंडों और दूसरे आदमियोंको, जो कि विद्यार्थी नहीं हैं, बरामदेके अंदर और दूसरी क्लासोंके कमरोंके पास भी घूमते हुअे देखा है। जिसके अलावा, विद्यार्थी वाअिस-चान्सलरके बारेमें अपशब्दोंका भी व्यवहार करते हैं।

"अब जो कुछ मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि हम सब यानी कभी शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी भी अेक बड़ी तादाद यह महसूस कर रहे हैं कि ये प्रवृत्तियां सम्पूर्ण और अहिंसात्मक नहीं हैं और जिसलिअे सत्याग्रहकी भावनाके विरुद्ध हैं।

"मुझे विश्वस्त रूपसे मालूम हुआ है कि कुछ हड़तालिये विद्यार्थी जिसे अहिंसा ही कहते हैं। अुनका कहना है कि अगर महात्माजी यह घोषणा कर दें कि यह अहिंसा नहीं है, तो हम अिन प्रवृत्तियोंको बन्द कर देंगे।"

यह पत्र १७ फरवरीका है और काका कालेलकरको लिखा गया है, जिन्हें वह निजी अच्छी तरह जानते हैं। जिसके जिस अंशको मैंने नहीं छापा अुसमें अिस बारेमें काकासाहबकी राय पूछी गयी है कि विद्यार्थियोंके अिस आचरणको क्या अहिंसामय कहा जा सकता है; और भारतके कितने ही विद्यार्थियोंमें अराजकी जो भावना आ गयी है, अुस पर अफसोस जाहिर किया गया है।

पत्रमें अुन लोगोंके नाम भी दिये गये हैं, जो हड़तालियोंको अपनी बात पर डटे रहनेके लिअे अुत्तेजन दे रहे हैं। हड़तालके बारेमें मेरी राय प्रकाशित होने पर किसीने, जो स्पष्टतया कोअी विद्यार्थी ही मालूम पड़ता है मुझे अेक लम्बा तार भेजा, जिसमें लिखा था कि हड़तालियोंका व्यवहार पूर्ण अहिंसक है। लेकिन अूपर जो विवरण मैंने अुद्धृत किया है, वह अगर सच हो तो मुझे यह कहनेमें कोअी संकोच नहीं है कि विद्यार्थियोंका व्यवहार स्पष्टरूप हिंसात्मक है। अगर कोअी मेरे घरका रास्ता रोक दे, तो जिसका ही रूपमें हिंसा वैसे ही बराबर होगी, जैसे दरवाजेमें बल-प्रयोग द्वारा मुझे रुकावट देनेसे होगी।

विद्यार्थियोंको अगर अपने शिक्षकोंके खिलाफ सचमुच कोअी शिकायत है, तो अुन्हें हड़ताल ही नहीं बल्कि अपने स्कूल या कॉलेज पर धरना देनेका भी हक है; लेकिन अिसी हद तक कि पढ़नेके लिअे जानेवालोंसे विनम्रताके साथ न जानेकी प्रार्थना करें। बोलकर या पर्चे बंटवाकर वे अैसा कर सकते हैं। लेकिन अुन्हें रास्ता नहीं रोकना चाहिये, न अुन पर कोअी अनुचित दबाव ही डालना चाहिये, जो कि हड़ताल नहीं करना चाहते।

और हड़ताल भला विद्यार्थियोंने की किसके खिलाफ है? श्री श्रीनिवास शास्त्री भारतके अेक सर्वश्रेष्ठ विद्वान हैं। शिक्षकके रूपमें अुनकी तभीसे ख्याति रही है जब कि अिनमें से बहुतेरे विद्यार्थी या तो पैदा ही नहीं हुअे थे या अपनी किशोरावस्थामें ही थे। अुनकी महान विद्वत्ता और अुनके चरित्रकी श्रेष्ठता दोनों ही अैसी चीजें हैं कि जिनके कारण संसारकी कोअी भी युनिवर्सिटी अुन्हें अपना वाअिस-चांसलर बनानेमें गौरवका अनुभव ही करेगी।

काकासाहबको पत्र लिखनेवालेने अगर अन्नामलाअी युनिवर्सिटीकी घटनाओंका सही विवरण दिया है, तो मुझे लगता है कि शास्त्रीजीने जिस तरह परिस्थितिको संभाला वह बिलकुल ठीक है। मेरी रायमें विद्यार्थी अपने आचरणसे खुद अपनी ही हानि कर रहे हैं। मैं तो अुस मतका माननेवाला हूं जो शिक्षकोंके प्रति श्रद्धा रखनेमें विश्वास करता है। यह तो मैं समझ सकता हूं कि जिस स्कूलके शिक्षकोंके प्रति मेरे मनमें सम्मानका भाव न हो अुसमें मैं न जाअूं, लेकिन अपने शिक्षकोंकी बेअिज्जती या अुनकी अवज्ञाको मैं नहीं समझ सकता। अैसा आचरण तो असज्जनोचित है। और असज्जनता सभी हिंसा है।

हरिजनसेवक, ४-३-'३९

२३

विद्यार्थियोंकी कठिनाअी

प्र० — हम पूनाके विद्यार्थी हैं और निरक्षरता दूर करनेके आन्दोलनमें भाग ले रहे हैं। जिन हिस्सोंमें हम काम करने जाते हैं वहां अैसे गिरोह रहते हैं, जो लोगोंको पढ़ाने जाने पर हमें धमकी देते हैं। हम जहां काम कर रहे हैं वे लोग हरिजन हैं। ये बेचारे अुनकी धमकियोंसे डर जाते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि अिन गिरोहोंके खिलाफ कानूनी कार्रवाअी करनी

चाहिये। कुछका कहना है कि अुनको जीतनेके लिअे हमें आपके मार्गका अनुसरण करना चाहिये। क्या आप कुछ सलाह देंगे?

अु०—आप लोग अच्छा काम कर रहे हैं। साक्षरता-प्रसार तथा अिस तरहके दूसरे काम आधुनिक कालके महान, सम्भवतः महानसे महान सुधारके गौण अंग हैं। जहां तक पियक्कड़ोंकी बात है, अुनके साथ रोगी आदमियोंकी तरह बर्ताव किया जाना चाहिये, जो हमारी सहानुभूति और सेवाके पात्र हैं। अिसलिअे जब वे शान्तावस्थामें हों तब आप लोगोंको अुन्हें समझाना चाहिये और वे मारें-पीटें तो अुसे भी शालीनतापूर्वक सहन करना चाहिये। मैं कानूनी कारंवाअीकी मनाही नहीं करता, पर वैसा करना अिस बातका प्रमाण होगा कि आपमें पर्याप्त मात्रामें अहिंसा नहीं है। लेकिन आप अपनी प्रकृतिके विरुद्ध नहीं जा सकते। अगर प्रेमपूर्वक समझाने और पुचकारने पर भी अुनके रुखमें कोअी अनुकूलता नहीं आती, तो फिर आपने अूपर जो बाधा बताअी है अुसके कारण आपका काम बन्द नहीं होना चाहिये। अुस अवस्थामें कानूनी कारंवाअीका सहारा लिया जा सकता है। लेकिन कानूनकी मदद लेनेसे पहले आप लोगोंको सचाअीके साथ सब तरहकी कोशिश करके देख लेना चाहिये।

हरिजन, ८-६-'४०

२४
साहित्यमें गंदगी

त्रावणकोरके अेक हाअीस्कूलके हेडमास्टर लिखते हैं:

"यह तो आप जानते ही हैं कि त्रावणकोरका राजनैतिक वातावरण अिस समय बहुत दुःखपूर्ण हो गया है। हाअीस्कूल तकके छात्र हड़ताल कर रहे हैं और दूसरोंको स्कूल जानेसे रोक रहे हैं। अिन लोगोंमें कुछ अैसी भावना काम कर रही है कि आप विद्यार्थियोंकी हड़तालके पक्षमें हैं। मैं यह पसंद करूंगा कि अिस विषय पर आप अपनी राय आम विद्यार्थियोंको लिखनेकी कृपा करें। अिससे स्थिति साफ हो जायगी।"

मेरा खयाल है कि विद्यार्थियोंकी हड़तालोंके खिलाफ मैंने काफी मौकों पर लिखा है, बहुत ही कम प्रसंग मैंने छोड़े होंगे। मैं यह मानता हूं कि विद्यार्थियोंका राजनीतिक प्रदर्शनों और दलगत राजनीतिमें हिस्सा लेना बिलकुल गलत चीज है। अिस किस्मका जोश अुनके गंभीर अध्ययनमें हस्तक्षेप करता है और अुन्हें होनहार नागरिकोंके रूपमें काम करनेके अयोग्य बना देता है।

अलबत्ता अेक चीज अैसी जरूर है कि जिसके लिअे हड़ताल करना विद्यार्थियोंका फर्ज है। लाहोरके 'यूथ वेलफेअर अेसोसियेशन' के अवैतनिक मंत्रीका अेक पत्र मुझे मिला है। अिस पत्रमें अश्लीलता और कामुकतासे भरे काफी नमूने पाठ्यपुस्तकोंसे अुद्धृत किये गये हैं, जिन्हें कि विभिन्न विश्व-विद्यालयोंने अपने पाठ्यक्रमोंमें रखा है। ये अैसे गंदे अवतरण हैं कि पढ़नेमें घिन मालूम होती है। हालांकि ये पाठ्यक्रमकी पुस्तकोंसे लिये गये हैं, अुन्हें अुद्धृत करके मैं 'हरिजन' के पृष्ठोंको गंदा नहीं करूंगा। मैंने जितना भी *साहित्य पढ़ा है, अुसमें अितनी गंदगी कभी मेरी नजरसे नहीं गुजरी।* अिन अवतरणोंको निष्पक्ष रीतिसे संस्कृत, फारसी और हिन्दीके कवियोंकी रचनाओंमें से लिया गया है। मेरा ध्यान अिस ओर सबसे पहले वर्धाके महिला-श्रमकी लड़कियोंने आकर्षित किया था और हालमें मेरी पुत्रवधूने, जो कि देहरा-दूनके कन्या-गुरुकुलमें पढ़ रही है, अिन अश्लील कविताओंकी तरफ मेरा ध्यान खींचा है। अुसकी कुछ पाठ्यपुस्तकोंमें जैसी अश्लीलता भरी हुअी है, वैसी कभी अुसकी नजरसे नहीं गुजरी थी। अुसने मेरी अिसमें सहायता चाही। मैं हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके अधिकारियोंसे अिस संबंधमें लिखा-पढ़ी कर रहा हूं। पर बड़ी-बड़ी संस्थाअें धीरे-धीरे ही कदम आगे रखती हैं। लेखकों और प्रकाशकोंका स्वार्थ सुधार नहीं होने देता। अुनका अेकाधिकार आड़े आ जाता है। साहित्यकी वेदी तो खास धूप-दीपकी अधिकारिणी है। मेरी पुत्रवधूने मुझे यह सुझाया और मैं तुरन्त अुसके साथ सहमत हो गया कि वह अपनी परीक्षामें अनुत्तीर्ण होनेकी जोखिम ले लेगी, पर अश्लील और कामुकतापूर्ण साहित्य नहीं पढ़ेगी। असकी यह अेक नर्म-सी हड़ताल है, पर है अुसके लिअे यह बिलकुल हितकर और प्रभावकारी। पर यह अेक अैसा प्रसंग है जो विद्यार्थियों द्वारा की हुअी हड़तालको न सिर्फ अुचित ही ठहराता है, बल्कि मेरी रायमें अुनका यह फर्ज हो जाता है कि अैसा साहित्य अगर अुनके अूपर लादा जाय तो अुसके खिलाफ वे विद्रोह भी करें।